SDO-1584-T13846

"चित्रा मुद्गल : व्यक्तित्व एवं कृतित्व"

शिवाजी विश्वविद्यालय, कोल्हापुर की पीएच्.डी. (हिन्दी)
उपाधि के लिए प्रस्तुत शोध-प्रबन्ध

शोधछात्रा
मीना जाधव
एम्.ए., एम्.फिल्.

शोध-निर्देशक
डॉ. इरेश स्वामी
एम्.ए., पीएच्.डी.
प्रपाठक एवं अध्यक्ष, स्नातक तथा स्नातकोत्तर हिन्दी विभाग
संगमेश्वर महाविद्यालय, सोलापुर.

३० जून २००१

संस्तुति

मैं संस्तुति करता हूँ कि, **मीना जाधव** द्वारा लिखित

"चित्रा मुद्गल : व्यक्तित्व एवं कृतित्व"

शोध -प्रबंध परीक्षणार्थ अग्रेषित किया जाए।

29.06.01

29 JUN 2001

(डॉ. श्री अर्जुन चव्हाण)
अध्यक्ष
हिन्दी विभाग,
शिवाजी विश्वविद्यालय,
कोल्हापुर-४१६ ००४.

शिवाजी विश्वविद्यालय हिंदी विभाग कोल्हापुर

प्रमाण-पत्र

मैं प्रमाणित करता हूँ कि, **मीना जाधव** ने शिवाजी विश्वविद्यालय, कोल्हापुर की पीएच.डी. (हिन्दी) उपाधि के लिए प्रस्तुत शोध-प्रबंध **"चित्रा मुद्‌गल : व्यक्तित्व एवं कृतित्व"** मेरे निर्देशन में सफलतापूर्वक, परिश्रम के साथ पूरा किया है। जो तथ्य प्रबंध में प्रस्तुत किये गये हैं, मेरी जानकारी के अनुसार सही हैं। मीना जाधव के इस अनुसंधान कार्य के प्रति मैं पूरी तरह संतुष्ट हूँ।

स्थान : सोलापुर

तिथि : ३० जून २००१

26.3.01

(डॉ.इरेश स्वामी)
शोध निर्देशक

प्रख्यापन

प्रस्तुत शोध-प्रबंध मेरी मौलिक कृति है, जो पीएच.डी.(हिन्दी) उपाधि के लिए प्रस्तुत की जा रही है। यह कृति इससे पहले शिवाजी विश्वविद्यालय, कोल्हापुर तथा अन्य किसी विश्वविद्यालय की उपाधि के लिए प्रस्तुत नहीं की गयी हैं।

स्थान : सोलापुर

तिथी : ३० जून २००१

(मीना जाधव)

शोध-छात्रा

प्राक्कथन

संभवत: १९८६ या ८७ में 'धर्मयुग' में चित्राजी का उपन्यास 'एक जमीन अपनी' का कुछ अंश धारावाहिक रूप से प्रकाशित हुआ था। उस समय उपन्यास की नायिका अंकिता ने मेरे मन-मस्तिष्क पर गहरा प्रभाव अंकित किया था। तत्पश्चात सन् १९९१ में जब मैं विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन के हिंदी विभाग में एम.फिल्. की उपाधि प्राप्त कर रही थी तब द्वितीय सत्र के अध्ययन काल में जब शोध-अधिनिबन्ध के लिए विषय निर्वाचन की समस्या सामने आयी तो मैंने चित्रा मुद्‌गल जी के कथा-साहित्य पर कार्य करने की इच्छा मेरे निर्देशक आदरणीय डॉ. भगीरथ बडोलेजी के समक्ष व्यक्त की। तब तक चित्राजी का उपन्यास प्रकाशित हो चुका था और बहुत चर्चित हो रहा था। डॉक्टर साहब द्वारा सहमती प्राप्त होते ही मैंने चित्रा जी को पत्र लिख भेजा कि मैं आपके साहित्य का विश्लेषणात्मक अनुशीलन करना चाहती हूँ, कृपया अपनी स्वीकृति भेजें। लेकिन उनका पत्रोत्तर प्राप्त होने में बहुत-सा अवकाश चला गया और मुझे सीमित समय में, सीमित पृष्ठों में अपना शोध अधिनिबन्ध प्रस्तुत करना था। अत: आदरणीय डॉ. बडोलेजी के परामर्श से मैंने अपनी रूचि के लेखक रेणुजी की कहानियों पर अपना अधिनिबन्ध प्रस्तुत किया।

चूकिं चित्राजी ने अपने स्वीकृति-पत्र के साथ उनकी सभी प्रकाशित कृतियों और उनके प्रकाशकों की सूचि भेज दी थी। अत: मैंने उनके कहानी संग्रह और उपन्यास खरीद कर क्रमश: पढना आरंभ कर दिये थे। जैसे-जैसे मैं उनकी रचनाएँ पढ रही थी, वैसे-वैसे निरन्तर सम्मोहित और चमत्कृत हो रही थी। इस अवधी में मेरा मानस पीएच.डी. करने के लिए बन चुका था। मैंने शीघ्र ही आदरणीय डॉ. इरेश स्वामीजी से संपर्क किया। डॉ. साहब से यह भेंट बहुत लाभप्रद सिद्ध हुयी। उन्होंने मेरी इच्छा और रूचि को देख कर मुझे शोध कार्य के लिए प्रोत्साहित किया। मैने आदरणीय डॉ. स्वामीजी से मुझे मार्गदर्शन देने का निवेदन किया। सौजन्य की प्रतिमूर्ति आदरणीय सर ने न केवल मुझे स्वीकृति प्रदान की अपितु विषय निर्धारण के लिए अपना अमूल्य समय भी शीघ्र ही दे दिया।

मैंने पुन: चित्रा जी को सन् १९९१ में लिखे पत्र का स्मरण दिलाते हुए पत्र लिखा और उनका पत्रोत्तर प्राप्त होने पर आश्चर्य के साथ ही सुखद आनंदानुभूति भी हुई कि चित्राजी को मेरे पत्र का अब तक स्मरण था। चित्रा जी की पुन: अनुमति प्राप्त होने के पश्चात आदरणीय डॉ. स्वामीजी के निर्देशन में 'चित्रा मुद्गल : व्यक्तित्व एवं कृतित्व' विषय का निर्धारण कर शिवाजी विश्वविद्यालय, कोल्हापुर में विधिवत विषय का पंजीकरण करवाया।

चित्रा मुद्गलजी से प्राप्त जानकारी के अनुसार उनके साहित्य पर अब तक चार-पांच एम्.फिल. के शोध अधिनिबन्ध प्रस्तुत हो चुके है एवं पीएच.डी. हेतु मेरा दुसरा प्रबंध प्रस्तुत हो रहा है।

प्रस्तुत शोध प्रबन्ध 'चित्रा मुद्गल : व्यक्तित्व एवं कृतित्व' को मैंने सात अध्यायों में विभक्त किया है।

प्रथम अध्याय में चित्राजी के जन्म, शिक्षा, परिवार, व्यक्तित्व निर्माण के उत्स, साहित्य जगत में प्रवेश एवं उनके कृतित्व पर प्रकाश डाला गया है।

द्वितीय अध्याय का विषय से सीधा सम्बन्ध नहीं है लेकिन चित्राजी ने कथात्मक साहित्य की रचना की है। अत: कथा-साहित्य के विकासक्रम पर दृष्टिक्षेप डालना आवश्यक प्रतीत हुआ। अत: द्वितीय अध्याय में कहानी एवं उपन्यास साहित्य का ऐतिहासिक विकासक्रम प्रस्तुत किया है।

तृतीय अध्याय शोध प्रबन्ध के सन्दर्भो से प्रत्यक्षत: सम्बन्ध है। इस अध्याय के अन्तर्गत मैंने कथ्य के धरातल पर चित्रा मुद्गलजी के कथा साहित्य का अनुशीलन करने का प्रयत्न किया है। चित्रा जी ने अपने कथ्य के माध्यम से प्रस्तुत की सामाजिक, पारिवारिक, नारी की, आर्थिक एवं राजनीतिक समस्याओं को विश्लेषित करने का प्रयास किया है।

चतुर्थ अध्याय में चित्रा मुद्गलजी के कथा साहित्य को पात्र एवं चरित्र चित्रण के आधार पर विश्लेषित करने का प्रयत्न किया है। उनकी रचनाओं के महत्वपूर्ण स्त्री एवं पुरुष पात्रों को उनके आर्थिक स्तर के आधार पर उच्च वर्ग, मध्यवर्ग एवं निम्न वर्ग में वर्गीकृत कर विश्लेषित करने का प्रयत्न किया है।

पंचम अध्याय में शिल्प के आधार पर चित्रा मुद्‌गलजी के कथा साहित्य को विवेचित करने की कोशीश की है चित्राजी की रचनाओं के शिल्प को भाषा पक्ष एवं विधान पक्ष के आधार पर विश्लेषित किया गया है।

षष्ठं अध्याय में चित्राजी के कथा साहित्य का अन्य लेखिकाओं के कथा साहित्य से तुलनात्मक अध्ययन प्रस्तुत किया गया है। विषय विस्तार के भय से हमने केवल चुनी हुई लेखिकाओं के कथा साहित्य का तुलना के लिए चयन किया है।

सप्तम् अध्याय अंतिम अध्याय है, जिसमें चित्राजी के कथा साहित्य के संपूर्ण अध्ययन का निष्कर्ष प्रस्तुत किया गया है। इस अध्याय में चित्राजी की रचनाओं की विशिष्टताओं को स्पष्ट करने का प्रयास निहित है।

इस प्रकार मैंने अपनी क्षमता भर चित्राजी के साहित्य का विश्लेषण करने का प्रयास किया है। यदि मेरे इस तुच्छ प्रयास से शोध-छात्र-छात्राओं, समीक्षकों, सुधी पाठकों एवं विद्वानों को अल्प-सा भी सहयोग एवं संतोष प्राप्त होता हैं तो मेरा परिश्रम सार्थक हो गया ऐसा समझूगीं ।

...

कृतज्ञता - ज्ञापन

प्रस्तुत शोध-प्रबन्ध के लेखन में मुझे अनेक गुरुजनों और सहवर्तियों से सहयोग मिला है। पूर्णता के इस अवसर पर उन सब के प्रति आभार व्यक्त न करना अनुचित होगा। अत: सर्वप्रथम मैं ज्ञान भागीरथी गुम्फित डॉ. इरेश स्वामीजी के प्रति कृतज्ञता ज्ञापित करती हूँ। मेरा यह प्रयास उन्हीं के कुशल निर्देशन का प्रसाद है। संपूर्ण दिशा निर्देश के दौरान उनसे जो सौजन्य, स्नेह एवं वात्सल्य प्राप्त हुआ, उसके लिए मैं श्रद्धा से नतमस्तक हूँ। डॉक्टर साहब की सहधर्मिणी श्रीमती वसुधाजी एवं चिरंजीव श्री विवेक एवं विश्वास के प्रति भी कृतज्ञता व्यक्त करना चाहती हूँ, जिन्होंने अपने सौजन्यपूर्ण व्यवहार से व समयानुसार उचित सहयोग प्रदान कर मुझे अनेक परेशानियों में उबार लिया।

इसी क्रम में शिक्षण प्रसारक मंडळ, अणदूर के सचिव आदरणीय श्री सि.ना. आलुरेजी का भी आभार व्यक्त करती हूँ, जिन्होंने इस शोध कार्य को करने के लिए अनुमति प्रदान कर प्रोत्साहित किया। साथ ही जवाहर कला, वाणिज्य एवं विज्ञान महाविद्यालय के प्राचार्य डॉ. श्री सहस्रबुद्धेजी, सभी सहयोगी प्राध्यापक, शिक्षकेतर कर्मचारियों के प्रति भी आभार व्यक्त करती हूँ जिनकी सदिच्छाएँ सदैव साथ थी।

रा.प. महाविद्यालय, उस्मानाबाद के हिन्दी विभाग के प्रमुख श्री बी.आर. जाधव, प्रा. बी.बी. जाधव, तेरणा महाविद्यालय के प्राध्यापक डॉ. श्री काझी 'जर्रा', झाडबुके महाविद्यालय बार्शी की प्राध्यापिका कु. चित्रा चव्हाण, स्नेही श्री रवीन्द्र आपसिंगकर, श्रीमती शशीकला पाटील, आदरणीय मंगल मौसी आदि के प्रति भी कृतज्ञता व्यक्त करती हूँ।

प्रात: स्मरणीय माता-पिता सौ. पुष्पाजी एवं श्री बब्रुवान जाधवजी के प्रति आभार व्यक्त कर मैं उऋण नहीं होना चाहती, जिन्होंने स्नेह, शील-संस्कार के साथ ही ज्ञान के प्रति अभिरूचि भी प्रदान की। साथ ही श्वसुर श्री विष्णू क्षीरसागरजी एवं सासूमाँ सौ. सुभद्राजी, जेठ-जेठानी श्री अभिमन्यू एवं सौ. सुहासिनीजी के प्रति भी आभार व्यक्त करती हूँ, जिन्होंने मुझे पारिवारिक दायित्वों से मुक्त कर शोध कार्य के लिए समय उपलब्ध कराया। छोटी बहन कु. रेखा एवं भांजे

अतुल को स्नेहाशिष देती हूँ जिन्होंने पाण्डूलिपि जाँचने में अमूल्य सहयोग दिया। साथ ही अन्य परिजनों के प्रति भी कृतज्ञता व्यक्त करती हूँ, जिन्होंने जाने अनजाने मुझे प्रोत्साहन प्रदान किया।

शिवाजी विश्वविद्यालय, कोल्हापुर की प्रमुख ग्रंथपाल श्रीमती जाधव मॅडम एवं उनके सहयोगियों ने यथासमय पुस्तकें उपलब्ध करा कर शोध-सामग्री संचय करने में सहयोग दिया। इसी क्रम में संगमेश्वर महाविद्यालय, सोलापुर के ग्रंथपाल श्री तानवडेजी तथा श्रीमती सुचरिता भोगीशियनजी तथा अन्य ग्रंथालयीन कर्मचारियों की भी आभारी हूँ। जयकर ग्रंथालय, पूना के सभी ग्रंथलयीन कर्मचारियों के प्रति भी आभार व्यक्त करती हूँ जिन्होंने शोध हेतु पुस्तकें उपलब्ध करवा कर सहयोग दिया।

सुनील झेरॉक्स् के संचालक श्री सुनील शेटे एवं उनके कर्मचारी श्री विनोद देशपांडे, श्री सुधाकर पतंगे, श्री सोमनाथ दळवी, श्री वैभव देशपांडे का मैं मन:पूर्वक आभार व्यक्त करती हूँ, जिन्होंने प्रस्तुत प्रबन्ध को सुन्दर एवं शुद्ध रूप में टंकित करने के लिए अथक प्रयास किये। मैं उन सभी रचनाकारों एवं समीक्षको के प्रति भी आभार व्यक्त करती हूँ जिनकी कृतियों से मुझे प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष सहयोग मिलता रहा है।

चि. गौरव और कु. भक्ति का सहयोग इस रूप में सदैव याद रहेगा कि उन्होंने अपनी बालक्रिडाओं से मुझे व मेरी पाण्डूलिपि को मुक्त रखा।

अंतत: मेरे पति श्री सुधीरजी के प्रति कुछ भी कहने के स्थान पर मौन रह जाना ही श्रेष्ठ होगा क्योंकि उनके प्रोत्साहन, सक्रिय सहयोग और यथासमय दिये गये उपालम्भ भी मुझे सतत कार्यरत रहने को प्रेरित करते रहे और संशोधन कार्य संपूर्णता को प्राप्त हो सका।

मीना जाधव
एम्.ए., एम्. फिल.

प्रथम अध्याय

चित्रा मुद्गल : व्यक्तित्व एवं कृतित्व

१) **प्रस्तावना**

२) **चित्राजी का व्यक्तित्व**

२.१ चित्राजी का जन्म

२.२ चित्राजी के परिवार का संक्षिप्त परिचय

२.२.१. चित्राजी के दादाजी
२.२.२. चित्राजी की दादीजी
२.२.३. चित्राजी के पिताजी
२.२.४. चित्राजी की माताजी
२.२.५. चित्राजी के भाई बहन
२.२.६. चित्राजी के पति महोदय
२.२.७. चित्राजी का छोटा परिवार : पुत्र - पुत्री

२.३ चित्राजी का शालेय जीवन

२.४ चित्राजी का महाविद्यालयीन जीवन

२.५ चित्राजी का विवाह

२.६ चित्राजी के लेखकीय जीवन का आरंभ

२.७ चित्राजी के व्यक्तित्व निर्माण के उत्स

२.७.१. ठाकुर घराने की सामंती विचार धारा
२.७.२. लकीरों और रंगों की दुनियाँ
२.७.३. 'जागरण' की घाटकोपर विंग
२.७.४. वैचारिक चेतना

२.८ चित्राजी : पत्नी, माँ और गृहिणी

३) **चित्राजी का कृतित्व**

३.१ उपन्यास - एक जमीन अपनी

३.२ कहानी संग्रह

३.२.१. जहर ठहरा हुआ
३.२.२. लाक्षागृह
३.२.३. ग्यारह लम्बी कहानियाँ
३.२.४. इस हमाम में
३.२.५. जगदंबा बाबू गांव आ रहे है
३.२.६. जिनावर
३.२.७. चर्चित कहानियाँ

३.३ बाल साहित्य
३.३.१. बाल उपन्यास - माधवी कन्नगी
३.३.२. बाल कहानी संग्रह
३.४ संपादित संकलन
३.५ कविताएँ
३.६ नाटक
३.७ कहानियों पर बनी टेलीफिल्म
३.८ विविध
४) समाज सेवा
५) पुरस्कार
६) सम्मान
७) निष्कर्ष

द्वितीय अध्याय

हिन्दी कथा साहित्य का संक्षिप्त परिचय

१) भूमिका

२) आधुनिक काल में हिन्दी कहानी का विकास : दशा और दिशाएँ

२.१ हिन्दी कहानी आंदोलनों की पृष्ठभूमि और परिस्थितियाँ

२.१.१ राजनीतिक परिस्थितियाँ

२.१.२ सामाजिक परिस्थितियाँ

२.१.३ आर्थिक परिस्थितियाँ

२.१.४ सांस्कृतिक परिस्थितियाँ

२.२ विभिन्न कहानी आंदोलन

२.२.१ नई कहानी आंदोलन

२.२.२ अकहानी आंदोलन

२.२.३ सचेतन कहानी आंदोलन

२.२.४ सहज कहानी आंदोलन

२.२.५ समांतर कहानी आंदोलन

२.२.६ जनवादी कहानी आंदोलन

२.२.७ सक्रिय कहानी आंदोलन

३) हिन्दी उपन्यास का विकासक्रम

३.१ सर्वप्रथम मौलिक उपन्यास

३.२ प्रेमचन्द पूर्व उपन्यास साहित्य

३.३ प्रेमचन्दयुगीन उपन्यास साहित्य

३.४ प्रेमचन्दोत्तर उपन्यास साहित्य

३.४.१ सामाजिक उपन्यास

३.४.२ मनोवैज्ञानिक उपन्यास

३.४.३ साम्यवादी या प्रगतिवादी उपन्यास

३.४.४ राजनैतिक उपन्यास

३.४.५ ऐतिहासिक उपन्यास

३.४.६ आंचलिक उपन्यास

४) निष्कर्ष :

तृतीय अध्याय

चित्रा मुद्‌गल के कथा साहित्य का कथ्य के आधार पर अनुशीलन

१) प्रस्तावना

१.१ कथावस्तु की विशेषताएँ

२) चित्रा मुद्‌गल की कहानियों के वर्ण्य विषय

२.१ सामाजिक समस्या के सम्बन्धित कहानियाँ :

२.१.१ झुग्गी झोपडी का जीवन : विवाहेतर सम्बन्ध - 'केंचुल'

२.१.२ लघु व्यवसायी: अपराधी वृत्ति निर्मित करता समाज-'बेईमान'

२.१.३ भिखारियों की समस्या - 'चेहरे'

२.१.४ वेश्या समस्या :

२.१.४.१ मजबूरी और नरक की दास्तान - 'फातिमाबाई कोठे पर ही नहीं रहती'

२.१.४.२ देह व्यापारियों का जाल - 'सौदा'

२.१.५ महानगर में आवासीय समस्या - 'जरीया'

२.१.६ नौकरानी की समस्या - 'सुख'

२.१.७ साम्प्रदायिकता :

२.१.७.१ दंगे : सामान्य आदमी की दुर्दशा- 'बंद'

२.१.७.२ खोती मानवीयता - 'बाघ'

२.१.८ पत्रकारिता एवं विज्ञापन जगत :

२.१.८.१ बढती प्रतियोगिता और सामाजिक सम्बन्ध - 'पेशा'

२.१.८.२ स्त्री की अस्मिता - 'एक जमीन अपनी'

२.१.९ दूरदर्शन के दुष्परिणाम - 'अढाई गज की ओढनी'

२.१.१० लघुकथाएँ

२.१.१०.१ 'राक्षस'

२.१.१०.२ 'गरीब की माँ'

२.१.१०.३ 'रिश्ता'

२.१.१०.४ 'व्यावहारिकता'

२.१.१०.५ 'रक्षक-भक्षक'

२.१.१०.६ 'ऐब'

२.१.१०.७ 'मानदण्ड'

२.१.१०.८ 'पहचान'

२.२ **पारिवारिक समस्याओं से सम्बन्धित कहानियाँ :**

२.२.१ द्विभार्या समस्या - 'पाली का आदमी'

२.२.२ पति-पत्नी : सेक्स के नये आयाम- 'अपने अपने गिरेबान'

२.२.३ पत्नी से पीडित पति - 'पत्नी'

२.२.४ अपंगत्व : शरीर का और मन का भी- 'अग्निरेखा'

२.२.५ पिता-पुत्र : नये संबंधों की तलाश-'दशरथ का वनवास'

२.२.६ माँ-बेटी : संबंधों में दरार - 'एंटीक पीस'

२.२.७ भाई-भाई : टूटते-जुडते रिश्ते - 'अनुबन्ध'

२.२.८ बुआ-भतिजी : नये संबंधो की तलाश - 'रूना आ रही हैं'

२.२.९ परिवार नियोजन : वैचारिक मतभेद - 'दुलहिन'

२.२.१० खोए हुए बालक के परिजनों की व्यथा - 'शिनाख्त हो गयी है'

२.३ **नारी समस्याओं से सम्बन्धित कहानियाँ :**

२.३.१ पत्नी का नया रूप - 'बावजूद इसके'

२.३.२ पत्नी की त्रासदी : 'होना संपादक की पत्नी - एक लेखिका का'

२.३.३ प्रौढावस्था की समस्या - 'अपनी वापसी'

२.३.४ पति-पत्नी-प्रेमिका और संतान-'शून्य'

२.३.५ दुसरा विवाह - बच्चों की समस्या - 'ताशमहल'

२.३.६ दहेज के नये आयाम :

२.३.६.१ 'लाक्षागृह'

२.३.६.२ 'अभी भी'

२.३.७ वैधव्य की व्यथा - 'मोर्चे पर'

२.३.८ पुरुषी अहंकार : दोहरे मानदण्ड

२.३.८.१ 'मुआवजा'

२.३.८.२ 'प्रमोशन'

२.३.९ नारी की समान नियती : शिक्षित हो या अशिक्षित - 'इस हमाम में'

२.३.१० नौकरानी की समस्या - 'स्टेपनी'

२.३.११ नारी मुक्ति :

२.३.११.१ नारी मुक्ति : एक शोध-'हस्तक्षेप'

२.३.११.२ परिजनों के छद्‌म रूप से मुक्ति - 'प्रेतयोनी'

२.४ आर्थिक समस्याओंसे सम्बन्धित कहानियाँ :

२.४.१ बाल मजदूर :

२.४.१.१ 'मामला आगे बढेगा अभी'

२.४.१.२ 'त्रिशंकु'

२.४.२ गरीबी की यातना : अमानवीय हत्या को विवश - 'भूख'

२.४.३ जायदाद की हवस - 'लकडबग्घा'

२.४.४ अर्थ प्राप्ति हेतु पशु की बलि - 'जिनावर'

२.४.५ आर्थिक समझौता - 'लेन'

२.४.६ आर्थिक दबाव : अपराध की ओर झुकाव - 'ब्लेड'

२.४.७ भिखारियों का अर्थतंग - 'बोहनी'

२.४.८ आर्थिक स्तर से जुडे सम्बन्ध - 'प्राथमिकता'

२.५ राजनीतिक समस्या से सम्बन्धित कहानी :

२.५.१ विकलांगों के प्रति दिखावटी सहानुभूति - 'जगदंबाबाबू गाँव आ रहे है'

३) निष्कर्ष :

चतुर्थ अध्याय

चित्रा मुद्‌गल के कथा साहित्य का पात्र एवं चरित्र चित्रण की दृष्टि से अनुशीलन

१) प्रस्तावना

२) पात्रों का वर्गीकरण

- २.१ प्रमुख और सहायक पात्र
- २.२. स्त्री और पुरूष पात्र
- २.३ खल पात्र
- २.४ यथार्थवादी पात्र
- २.५ व्यक्तिवादी पात्र
- २.६ आदर्शवादी पात्र
- २.७ ऐतिहासिक और पौराणिक पात्र
- २.८ सामाजिक पात्र
- २.९ धार्मिक पात्र
- २.१० मनोवैज्ञानिक पात्र
- २.११ राजनैतिक पात्र

३) चित्रा मुद्‌गल के कथा साहित्य के पात्रों का चरित्र चित्रण

- ३.१ चित्राजी की कहानियों के स्त्री पात्र
  - ३.१.१ उच्चवर्गीय स्त्री पात्र
    - ३.१.१.१ प्रीति (बावजूद इसके)
    - ३.१.१.२ अंकिता (एक जमीन अपनी)
    - ३.१.१.३ नीता (एक जमीन अपनी)
  - ३.१.२ मध्यवर्गीय स्त्री पात्र
    - ३.१.२.१ सुन्नी(लाक्षागृह)
    - ३.१.२.२ सरला (शून्य)
    - ३.१.२.३ मनू (अग्निरेखा)
    - ३.१.२.४ शिल्पा (अभी भी)
    - ३.१.२.५ शोभना (ताशमहल)
    - ३.१.२.६ अनी की सास (दुलहिन)
  - ३.१.३ निम्नवर्गीय स्त्री पात्र
    - ३.१.३.१ फूली (सुख)
    - ३.१.३.२ बताशा (स्टेपनी)
    - ३.१.३.३ कमलाबाई (केंचुल)
    - ३.१.३.४ अंजा (इस हमाम में)
    - ३.१.३.५ लक्ष्मी (भूख)

३.२ चित्रा मुद्‌गल की कहानियों के पुरूष पात्र
३.२.१ मध्यवर्गीय पुरूष पात्र
३.२.१.१ रवि (पाली का आदमी)
३.२.१.२ बाबूजी (दशरथ का वनवास)
३.२.२. निम्नवर्गीय पुरूष पात्र
३.२.२.१ मोट्या (मामला आगे बढेगा अभी)
३.२.२.२ छटंकिया (बेईमान)
३.२.२.३ बंडू (त्रिशंकु)
३.२.२.४ रामखिलावन (ब्लेड)
३.२.२.५ असलम मियाँ (जिनावर)

४) **चरित्र चित्रण के साधन**
४.१ वर्णन
४.२ अन्तर्द्वन्द्व
४.३ कथोपकथन
४.४ घटना

५) **निष्कर्ष**

पंचम अध्याय

चित्रा मुद्‌गल के कथा साहित्य का भाषा व शैलीगत अध्ययन

१) **प्रस्तावना**

२) **चित्रा मुद्‌गल की कहानियों का शिल्प**

२.१ भाषा पक्ष

२.१.१ चित्राजी के कथा साहित्य में प्राप्त भाषा के गुण

२.१.१.१ प्रवाहात्मकता

२.१.१.२ चित्रात्मकता

२.१.१.३ प्रतीकात्मकता

२.१.१.४ व्यंग्यात्मकता

२.१.१.४.१ विनोदपूर्ण भाषा

२.१.१.४.२ व्यंग्यात्मकभाषा

२.१.१.५ नाटकीयता

२.१.१.६ भावात्मकता

२.१.२ चित्राजी के कथा-साहित्य में भाषा के विविध रूप

२.१.२.१ परिनिष्ठित हिन्दी के शब्द प्रयोग

२.१.२.२ उर्दू भाषा के शब्द

२.१.२.३ अंग्रेजी भाषा के शब्द

२.१.२.३.१ संपूर्ण अंग्रेजी वाक्य

२.१.२.३.१ हिन्दी-अंग्रेजी मिले-जुले वाक्य

२.१.२.४ मराठी भाषा के शब्द

२.१.२.५ अवधी बोली के शब्द

२.१.२.६ अन्य भाषाओं और बोलियों के शब्द

२.१.३ उक्तियाँ-सूक्तियाँ

२.१.४ कहावतें एवं मुहावरें

२.१.५ गीत या काव्य प्रयोग

२.१.६ कोरस का प्रयोग

२.१.७ लेखिम स्तर

२.१.८ विचलित वाक्य प्रयोग

२.१.९ नवीन मौलिक प्रयोग

२.१.१० उपमाओं का सार्थक प्रयोग

२.१.११ विशेषणों का प्रयोग

२.१.१२ ध्वनियों का प्रयोग

२.२ विधान पक्ष

२.२.१ वर्णनात्मक शैली

२.२.२ विश्लेषणात्मक शैली

२.२.३ आत्मकथनात्मक शैली

२.२.४ पूर्व दीप्ति शैली

३) **निष्कर्ष**

षष्ठं अध्याय

चित्रा मुद्‌गल के कथा साहित्य का अन्य महिला रचनाकारों के कथा साहित्य से तुलनात्मक अनुशीलन

१) प्रस्तावना

२) महिला रचनाकारों की परम्परा
- २.१ श्रीमती राजेन्द्रबाला घोष
- २.२ उषा देवी मित्रा
- २.३ सुभद्राकुमारी चौहान
- २.४ कमला चौधरी
- २.५ आशापूर्णा देवी
- २.६ अमृता प्रीतम
- २.७ चन्द्रकिरण सौनरेक्सा

३) चित्रा मुद्‌गल एवं अन्य लेखिकाओं के साहित्य का तुलनात्मक अनुशीलन
- ३.१ शिवानी
- ३.२ कृष्णा सोबती
- ३.३ मन्नू भंडारी
- ३.४ उषा प्रियंवदा
- ३.५ मालती जोशी
- ३.६ राजी सेठ
- ३.७ मंजूल भगत
- ३.८ चन्द्रकांता
- ३.९ मृदुला गर्ग
- ३.१० मणिका मोहिनी
- ३.११ ममता कालीया
- ३.१२ सिम्मी हर्षिता
- ३.१३ दीप्ति खण्डेलवाल
- ३.१४ निरूपमा सेवती
- ३.१५ कृष्णा अग्निहोत्री
- ३.१६ शशीप्रभा शास्त्री
- ३.१७ सूर्यबाला
- ३.१८ मेहरून्निसा परवेज
- ३.१९ नासीरा शर्मा
- ३.२० सुधा अरोडा

४) निष्कर्ष

सप्तम अध्याय

उपसंहार

परिशिष्ट - १

साक्षात्कार

पत्र

कविताएँ

परिशिष्ट - २

चित्रा मुद्‌गल की मौलिक कृतियाँ

मौलिक कृतियाँ

आलोचनात्मक कृतियाँ

शब्दकोश एवं व्याकरण ग्रंथ

पत्र एवं पत्रिकाएँ

<u>प्रथम अध्याय</u>

चित्रा मुद्गल : व्यक्तित्व एवं कृतित्व

प्रथम अध्याय

चित्रा मुद्गल : व्यक्तित्व एवं कृतित्व

१. प्रस्तावना :

जब भी किसी रचनाकार के व्यक्तित्व के विश्लेषण एवं मूल्यांकन की चर्चा की जाती है तब तत्कालीन युग की परिस्थितियों का वर्णन पहले किया जाता है। हमें भी इस शोध-प्रबन्ध में इसी परिपाटी का निर्वाह करना था लेकिन हमने इस पद्धति को किन्हीं कारणों से नहीं अपनाया। प्रथम तो यह कि हिन्दी के कथा-साहित्य सम्बन्धि अब तक प्रस्तुत अनेक शोध प्रबन्धों में उन्नीसवीं और बीसवीं शताब्दी की सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक एवं सांस्कृतिक परिस्थितियों का विस्तार से वर्णन मिलता है। कुछ ऐसे भी स्वतंत्र ग्रंथ उपलब्ध हैं जिनमें इन परिस्थितियों का ही विश्लेषण-विवेचन किया गया है । अत: इस प्रबन्ध में पुन: उन्हीं की चर्चा करना पिष्टपेषण ही कहा जाता। द्वितीय यह कि आलोच्य विषय की दृष्टि से इसमें कोई मौलिक या नूतन सामग्री प्रस्तुत होने की संभावना भी नहीं थी। अत: लेखिका के व्यक्तित्व के संदर्भ में युगीन परिस्थितियों का उल्लेख अलग से न कर व्यक्तित्व की चर्चा में ही यथास्थान आवश्यकतानुसार किया गया है। साथ ही हमारा द्वितीय अध्याय हिन्दी कथा-साहित्य के विकास के संदर्भ में युगीन परिस्थितियों का संक्षेप में विवेचन है अत: कुछ बातें केवल दोहरायी ही जाती, नूतन सामग्री न होती।

२. चित्राजी का व्यक्तित्व :

संसार में प्रत्येक व्यक्ति अपने आप में अलग होता है। प्रत्येक व्यक्ति का व्यक्तित्व दूसरे व्यक्ति के व्यक्तित्व से भिन्न होता है। एक ही परिवेश, परिवार में समान स्थितियों में रहकर भी दो व्यक्तियों के व्यक्तित्व का गठन भिन्न होता है। उनमें अपवादात्मक समानता हो सकती है। अन्यथा प्रत्येक व्यक्ति अपने आप में अनूठा और बेजोड होता है। व्यक्ति के व्यक्तित्व के निर्माण में सामाजिक शक्तियाँ प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप में कारणीभूत होती हैं। व्यक्ति और सामाजिक शक्तियों में होने वाली क्रिया-प्रतिक्रिया का प्रति फलन होता है- व्यक्ति का व्यक्तित्व। इसीलिए किसी भी रचनाकार के कृतित्व का

अनुशीलन करने के लिए उसके व्यक्तित्व को जान लेना अनिवार्य हो जाता है। रचनाकार का संक्षिप्त जीवन - परिचय जान लेना इसी क्रम की एक कडी है।

२.१ चित्राजी का जन्म :

चित्राजी का जन्म १० दिसम्बर १९४४ में मद्रास में हुआ। उनके पिता श्री प्रतापसिंहजी उन दिनों आई.एन.एस. अश्विनी, मद्रास में नेवी में कमांडर के पद पर कार्यरत थे।

२.२ चित्राजी के परिवार का संक्षिप्त परिचय :

चित्राजी उन्नाव जिले के निकट अवस्थित निहालीखेडा गाँव से सम्बन्धित है। ठाकुर निहालसिंह तालुकेदार थे। उन्हीं के नाम पर उस गाँव का नाम निहालीखेडा पडा था। उन्हीं के खानदान से चित्राजी भी सम्बन्धित है। अर्थात चित्राजी क्षत्रिय परिवार से सम्बन्धित है। चित्राजी के व्यक्तित्व निर्माण में उनके पूरे परिवार और उसकी विचारधारा का प्रभाव पडा है।

२.२.१ चित्राजी के दादाजी :

चित्राजी के दादाजी ठाकुर बजरंगसिंह अंग्रेजों के जमाने में विक्टोरिया क्रास विजेता डॉक्टर थे। वे अपने आस-पास के इलाके में एक अच्छे डॉक्टर के रूप में प्रसिद्ध थे। उस जमाने में आवागमन के साधन के रूप में जीप-कार तो थी नहीं । इसलिए वे गंभीर रूप से बीमार मरीज को देखने के लिए हाथी पर बैठ कर जाया करते थे। ठाकुर बजरंगसिंहजी को अंग्रेजों ने 'राय' की पदवी भी प्रदान की थी।

चित्राजी बताती है कि उन दिनों की धुंधली स्मृतियों में यह दर्ज है कि घर में सांमती विचारधारा के बावजूद भी स्वतंत्रता सेनानियों को आर्थिक मदद दी जाती थी, भूमिगत स्वंतत्रता सेनानियों को आश्रय दिया जाता था लेकिन ऊपरी तौर पर अंग्रेजों को सहयोग दिया जाता - जैसे लगान वसूली के लिए आनेवाले अंग्रेज कर्मचारियों की खूब आवभगत की जाती। चित्राजी के दादाजी, जिन्हें वे 'बडे बप्पा 'कहकर बुलातीं थी, अनुशासन प्रिय व्यक्ति थे। बचपन की एक घटना चित्राजी के मन पर गहरें अंकित है जब रामसेवक बारी के बेटे भीखू ने गेहूँ की बोरी की चोरी की थी और पकडा

गया था। ''दुआर के विशाल सघन नीम के तने से उसे बांध दिया गया। बडे बप्पा हाथ मे हंटर लिये अपने बंगले से बाहर निकलते है। हंटर हवा में लपलपाने लगता है। तने से भीखू की बंधी देह आर्तनाद के साथ कसमसाने लगती है .... बारी काका और बारीन काकी बडे बप्पा के पांवों पर लोट रहे है - 'क्षमा करि देव मालिक ! तुम्हार प्रजा हन ... बहिकगा बचुआ ... एक मौका अउर दै देव ... अब जो मुट्ठी भूसिंव हिंयां से हुआं कीन्हिस तौ दहिजार के खाल खींचि के भूसा भरि दीन्हेऊ मालिक !' लेकिन बडे बप्पा का हाथ तब तक नहीं रूकता जब तक वह स्वयं थककर चूर नहीं हो जाते।''[१] चित्राजी के बाल-मन में तभी सवाल उठे थे कि एक बोरी गेहूँ के पीछे इतनी पिटाई होने पर वह आदमी डकैतों में शामिल न होगा तो क्या करेगा? नीम के पेड से बंधे भीखू की छवि उनके मन पर ऐसा गहरा प्रभाव छोडती है कि 'दशरथ का वनवास' कहानी में वह प्रसंग कुछ अलग ढंग से उभर कर आता है। ठाकुर केदारसिंह का बेटा पिता की साइकिल चुपचाप चलाने के लिए ले जाता है और लौटकर आने पर- 'दुआरे के बीचों-बीच खडे बूढे नीम से उसे बांध दिया गया था। दरवाजे की आड से लगी माँ उसे पिटता देखती रही और गुहार-गुहार कर रोती रही।'[२] ठाकुर केदारसिंह में उनके दादाजी ठाकुर बजरंगसिंहजी की छवि मिलती है।

२.२.२. चित्राजी की दादीजी :

चित्राजी की दादीजी रींवा रियासत की थी। वे बहुत बौद्धिक किस्म की महिला थी। वे बडी धार्मिक और अध्यात्मिक रूचि की थी। रामायण, भजन गाना, 'कल्याण' (धार्मिक पत्रिका) पढना आदि किया करतीं थी। घर में उन्हीं के कारण धार्मिक वातावरण था। उस सामंती परिवार में चरखा कातने का क्रांतिकारी काम उन्होंने किया। पास के गाँव भरतीपुर से शिक्षिकाजी आकर उन्हें सूत कातना सिखाती थी। दादाजी को उनका चर्खा कातना कतई पसंद न था। लेकिन उन्होंने दादाजी से पूछे बगैर ही चरखा चलाना सीखा था यानि की आजादी की भावना घर के बाहर ही नहीं घर के भीतर भी आ रही थी।

---

१. मेरी रचना प्रक्रिया - जगदंबाबाबू गाँव आ रहे है - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ ३
२. दशरथ का वनवास - ग्यारह लम्बी कहानियाँ - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ ८७

२.२.३ चित्राजी के पिताजी :

ठाकुर बजरंगसिंहजी के तीन पुत्र थे। बडे बेटे ठाकुर लाल बहादुर सिंह, जो देश स्वतंत्र होने से पूर्व बर्मा में कार्यरत थे और स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद मुंबई में फिल्मोद्योग से जुड गये। मंझले बेटे ठाकुर प्रतापसिंह सिंहजी जो नेवी मे कमांडर थे और बाद में सफल व्यवसायी रहे। सबसे छोटे बेटे ठाकुर अम्बिका प्रसाद सिंह, जो मुंबई के पुलिस कमिश्नर की हैसियत से रिटायर हुए थे।

ठाकुर प्रतापसिंहजी चित्राजी के पिता थे। ठाकुर प्रतापसिंहजी स्नातक थे। सामंती घराने के पुत्रों में पाये जाने वाले सभी गुण-अवगुण उनमें थे । चित्राजी कहती हैं -'वे अच्छे घुडसवार थे, अचूक निशानेबाज। उनकी निशानेबाजी के कौशल की मैं घोर प्रशंसक रही हूँ । अपने जीवन में उन्होंने चार चीतों का शिकार किया।'[१] ठाकुर प्रतापसिंहजी अपने बच्चों को भी शिकार, घुडसवारी सिखाना चाहते थे। लेकिन चित्राजी का संवेदनशील मन शिकार करना न सीख पाया। शिकार करना सीखते समय - 'उसकी किशोर उंगलियाँ कांप रही थीं - क्यों यह आदमी उससे एक चिडिया की हत्या करवा रहा है?... '[२] यह प्रश्न उन्हे बार-बार व्याकुल करता।

चित्राजी के पिता कलासक्त मन के व्यक्ति थे। गीत-संगीत में उन्हें रूचि थी। 'संगीत में वे बडे गुलाम अली खाँ के प्रशसंक थे। गीत सुरैया के सुनना पसंद करते थे। उनके मित्र मण्डली में सुरैया भी थी और स्वर्गीय तस्कर हाजीमस्तान भी । शिकार करना और उसे अपने हाथों पकाना, खिलाना - दोनो ही उनके शौक थे।'[३] लेकिन स्वभाव से वे भी अपने पिता के समान ही कठोर थे। सामंती विचार उनमें भी कूट-कूट कर भरे थे। यद्यपि शिक्षा के कारण वे आधुनिक विचारों को मानते थे। लेकिन अपने परिवार में वे स्वयं अपने विचारों को ही प्रश्रय देते थे। यूँ दीन-गरीब लोगों को आर्थिक मदद भी देते थे। चित्राजी को अपने पिता के जीवन का एक अनजाना पहलू उनकी मृत्यूपरान्त ज्ञात हुआ। 'पिता की मृत्यूपरान्त मुझे उनका एक रजिस्टर प्राप्त हुआ। जिसमें हिन्दी में एक नाटक लिखा हुआ था। अंग्रेजी में रोमांटिक कविताएँ ... उनके कठोर, दुस्साहसी, आकर्षक, छबीले व्यक्तित्व का यह संवेदनशील रचनात्मक पक्ष मेरे लिए सर्वथा अनजाना था ... ।'[४]

---

१. नवभारत - १८ दिसम्बर १९९४
२. मेरी रचना प्रक्रिया - जगदंबाबाबू गाँव आ रहे है - चित्रा मुद्‌गल, पृष्ठ ४
३. नवभारत - १८ दिसम्बर १९९४
४. नवभारत - १८ दिसम्बर १९९४

२.२.४ चित्राजी की माताजी :

चित्राजी की माताजी, जिन्हे वे 'अम्मां' कहती है, प्रतापगढ के बयालीस गाँव के तालुकेदार की बेटी थी। उनका गाँव अमीशकरपुर था। उनका नाम देवराज कुंवर था। उनकी शिक्षा केवल अक्षर ज्ञान तक ही सीमित थी। इसलिए उनके पति ठाकुर प्रतापसिंह उनके प्रति सदैव कठोर बने रहे और चित्राजी के जन्म के पश्चात लगभग चार वर्ष तक वे उन्हें गाँव छोडकर आ गये थे। चित्राजी की माताजी अत्यन्त सुस्वभावी, पाककला निपूण, सहनशील महिला थी। अम्मां के प्रति पिता का कठोर व्यवहार चित्राजी को अक्सर विद्रोह के लिए उकसाता। घुडसवारी सीखते समय चित्राजी के घुटनों पर गहरी चोट लग गयी थी। तब पिता ने क्रोध में कहा था कि अनपढ जाहिल माँ के समान ही वह भी आगे नहीं बढ सकेगी। तब पहली बार उन्हें पप्पा पर गुस्सा आया था कि 'अम्मा को क्या कभी उन्होंने कुछ बनाने की सोची ? ग्यारह साल की बच्ची जो देहरी के भीतर से पालकी में विदा होकर फिर एक देहरी में कैद हो गयी, उससे क्या अपेक्षा करते हैं वह ? ... नहीं सोचा कि कुछ देने का कर्तव्य भी बनता है, और उस लडकी की भी कुछ मामूली अपेक्षाएं हो सकती है अलावा खानसामागिरी के ?'[१] माँ की इन परिस्थितीयों ने चित्राजी को प्रश्नों के दायरे मे घेरना शुरू कर दिया। संभवत: तभी से स्त्री की अस्मिता को खोजने के बीज उनमें पडे होंगे। अब तक अपनी माँ को वे अत्यन्त सहज रूप में लेती रहीं लेकिन धीरे-धीरे उन्होंने न केवल माँ के बल्कि संपूर्ण नारी जाति के प्रश्नों को गंभीरता से देखना, समझना और सुलझाना शुरू कर दिया। इसी प्रसंग से उनके और पिता के मध्य में विरोध की दीवार खडी हो गयी थी।

२.२.५ चित्राजी के भाई-बहन :

श्री प्रतापसिंहजी की चार संताने हैं। दो बेटे, दो बेटियाँ। सबसे बडे बेटे श्री कमलेश बहादुर सिंह, दूसरी बेटी श्रीमती चित्रा मुद्‌गल, तीसरी बेटी श्रीमती केशा सिकरवाल और सबसे छोटे बेटे श्री कृष्ण प्रतापसिंह। श्री कमलेश बहादुरसिंहजी देवीदयाल कंपनी में प्रोडक्शन मैनेजर के पद पर

१. मेरी रचना प्रक्रिया - जगदंबाबाबू गाँव आ रहे है - चित्रा मुद्‌गल, पृष्ठ ५

कार्यरत है । श्रीमती केशा सिकरवाल गृहिणी है। उनका विवाह ग्वालियर के व्यापारी परिवार में हुआ है। श्री कृष्णप्रताप सिंहजी के स्वत: के कारखाने हैं - मुंबई और अहमदाबाद के पास सिलवासा में । स्वयं चित्राजी स्वतंत्र पत्रकार और ख्यात कथा लेखिका हैं। पिताजी के लेखन के जो सुप्त गुण थे वे चित्राजी में साकार हो गये।

२.२.६ चित्राजी के पति महोदय :

श्री अवध नारायण मुद्‌गलजी आगरा के बाह कस्बे के पास के गाँव के साधारण किसान परिवार के पुत्र हैं। इनके पिताजी श्री पंडित गणेश प्रसादजी मुद्‌गल प्राथमिक शिक्षक थे। अवधजी के दो भाई और एक बहन है। इनमें से एक भाई का बचपन में ही स्वर्गवास हो गया। उनके बडे भाई श्री श्यामबिहारीजी मुद्‌गल भी प्राथमिक शिक्षक थे। सबसे बडी बहन श्रीमती पार्वतीजी थी। पिताजी और भाई साहब नौकरी के साथ अपनी पुश्तैनी खेती भी संभालते थे।

अवधजी के पिताजी उनके हायस्कूल तक की शिक्षा के बाद चाहते थे कि वे अब प्राथमिक शिक्षकी पेशे में आ जाये और खेती-बाडी संभाले। लेकिन अवधजी आगे पढना चाहते थे। एक दिन वे माँ की पेटी से पैसे चुरा कर भाग लिये। कुछ दिन वे मैनपुरी जिले के करहर गाँव में अपनी बहन के यहाँ रहे। उन दिनों वे कथावाचक का काम करते थे। मंदिर में कथा वाचन के बाद जो दक्षिणा मिलती उससे आगे पढने के सपने देखते। वास्तव में वे बनारस जाना चाहते थे। तभी उन्हें ज्ञात हुआ कि कानपूर में संस्कृत विद्यापीठ है, जो ब्राह्मण विद्यार्थीयों के लिए ही है। वे कानपूर आ गये। जहाँ विद्यार्थी स्वपाकी थे। उनकी लगन और मेहनत से प्रभावित होकर उन्हे दस रूपये की स्कॉलरशिप मिलने लगी। वहाँ उन्होंने शास्त्री की पदवी ग्रहण की। उन्होंने इंटर की परिक्षा भी पास कर ली थी।

आगे के अध्ययन के लिए वे लखनऊ आ गये । साथ ही नौकरी की तलाश भी थी। उपजीविका के लिए उन्होंने कुछ ट्यूशन करनी शुरू कर दी थी। बाद में वे यशपालजी, अमृतलाल नागरजी के यहाँ भी रहे। यशपालजी और नागरजी डिक्टेशन देते थे जो अवधजी लिख लेते थे। अवधजी कहते है कि मैं यशपालजी, नागरजी, वर्माजी आदि के स्नेह और सहयोग को भूल नहीं

सकता। इस बीच अनुवाद का कार्य भी करते रहे और एम.ए. का अध्ययन कर पदवी भी प्राप्त की। तब तक उनकी 'कबन्ध' आदि कहानियाँ धर्मयुग जैसी पत्रिकाओं में छप चुकी थी। कविताएँ भी खूब किया करते थे और 'माध्यम' और 'लहर' में कविताएँ नियमित रूप से छपती भी थी। सत्यकाम विद्यालंकारजी उन दिनों 'सारिका' के संपादक थे। नागरजी ने विद्यालंकारजी को पत्र भेज कर अवधजी की खूबियों से अवगत कराया था। तत्पश्चात वे 'सारिका' के संपादक विभाग में चुन लिये गये। 'सारिका' के संपादक पद का भार जब श्री कमलेश्वरजी ने लिया तब वे सब एडीटर हो चुके थे। धीरे-धीरे प्रगति का ग्राफ चढता ही गया और एक दिन वे 'सारिका' के संपादक हो गये।

अवध नारायण मुद्‌गलजी अब तक के ऐसे अकेले संपादक हैं जिन्होंने लगातार दस वर्ष तक 'सारिका ' का संपादन किया। एक समय तो ऐसा भी आया जब वे एक साथ तीन पत्रिकाओं का संपादन कर रहे थे। महिलाओं की पत्रिका 'वामा' को मृणाल पाण्डेजी छोड चुकी थी और बाल पत्रिका 'पराग' के संपादक श्री देवसरेजी भी चले गये थे। तब मुद्‌गलजी को ही तीनों पत्रिकाओं के संपादन का उत्तरदायित्व दिया गया था। इस बीच उनका लेखन थोडा बाधित हुआ अन्यथा वे निरंतर लिख रहे हैं।

२.२.७ चित्राजी का छोटा परिवार :

चित्राजी का छोटा-सा परिवार है। बडा बेटा राजीव और छोटी बेटी अर्पणा। राजीव और अर्पणा दोनों में माता-पिता की लेखन अभिरूचि आयी है। राजीव माँ के समान स्केच भी बनाते हैं। राजीव की स्कूली शिक्षा मुंबई में हुई। इंटर उन्होंने मॉडर्न स्कूल, दिल्ली से किया। महाविद्यालयीन शिक्षा उन्होंने 'हिन्दू कॉलेज', दिल्ली से प्राप्त की। राजीव बेडमिंटन भी बहुत अच्छा खेलते हैं। मुंबई में वे सय्यद मोदी के साथ खेला करते थे लेकिन दिल्ली आने पर उनका खेल-जीवन राजनीति के चलते नष्ट हो गया। राजीव की दर्शन और अध्यात्म में रूचि है। वे अंग्रेजी में लिखते हैं। 'पायोनियर' पत्रिका में उनकी कविताएँ पहले अल विराज नाम से छपा करती थी। अब वे राजीव मुद्‌गल नाम से ही लिखते हैं।

अर्पणा की महाविद्यालयीन शिक्षा 'करोडीमल कॉलेज', दिल्ली से पूरी हुई। वे पढने में बहुत होशियार थी। महाविद्यालयीन शिक्षा पाने के पश्चात वे एक दूरदर्शन कंपनी से जुड गयी। उन्हें मॉडेलिंग का भी शौक था। अर्पणा ने बच्चों के लिए कविताएँ आदि लिखी हैं। लेकिन विधि का विधान बडा क्रुर होता है। अल्पायु में ही अर्पणा सब कुछ छोड कर अनंत की यात्रा पर निकल गयी। विवाह के छह महिने बाद ही कार दुर्घटना में चित्राजी ने अपनी बेटी और दामाद को खो दिया। यह उनके जीवन का सबसे दुखद पहलु है। उन्होंने इस शोध छात्रा से कहा था - 'मुझे मेरा प्रतिरूप नहीं मिलता। 'एक जमीन अपनी' की अंकिता जैसी स्त्री गढना चाहती है, मैने उसे वैसा गढा था लेकिन ...' अर्पणा को वे भुला नहीं पा रही ।

२.३ चित्राजी का शालेय जीवन :

चित्राजी के पिता नेवी में थे अत: उनकी आरंभिक शिक्षा गाँव और शहर में थोडे व्यवधानों को झेलती सी हुई। प्रथम मुंबई के उपनगर विले पारले में अंग्रेजी माध्यम के स्कूल में पढाई हुई। फिर लगभग चार वर्ष तक वे गाँव भरतीपुर की पाठशाला में पढती रही और पुन: वे मुंबई आ गयी। उनके अध्ययन में इस तरह के व्यवधान आने का एक और कारण भी है जिसका चित्राजी संकेत देती है। वह है - माता-पिता में बेबनाव । श्री प्रतापसिंहजी अपनी अनपढ पत्नी को तब अपने 'स्टेटस्' के लायक नहीं समझते थे।

चित्राजी जिस जमींदार परिवार में जन्मी थी वहाँ लडकियों की शिक्षा-दिक्षा पर बडी पाबंदियाँ थी। उस परिवार में चिट्ठी-पत्री बांच लेने, रामायण, कल्याण आदि पढ लेने तक ही अक्षरज्ञान दिया जाता था लेकिन श्री प्रतापसिंहजी अपने बेटों के साथ ही बेटियों को भी उच्च शिक्षा देना चाहते थे। वे चाहते थे कि उनके बच्चे हर क्षेत्र में पारंगत हों। तैराकी, घुडसवारी, शिकार, खेल-कूद सभी क्षेत्रों में वे उन्हें निपूण बनाना चाहते थे।

बंबई आने पर उन्हे सेंट्रल स्कूल में प्रवेश नहीं मिल पाया था अत: 'हिन्दी हायस्कूल' घाटकोपर में आगे की शिक्षा प्राप्त की। स्कूली-जीवन में उन्होंने खेलकूद में और चित्रकला में अनेक

परितोषिक प्राप्त किये। वे अपने चित्रकला शिक्षक श्री जोशीजी को बडे आदर के साथ याद करती है, जिन्होंने उनके रूझान को दिशा देने का कार्य किया। ''पराग' की 'रंगभरें' प्रतियोगिता और 'शंकर्स वीकली' के कई पुरस्कार जीते उसने । महाराष्ट्र की चित्रकला परिक्षाएँ भी उत्तीर्ण की। जोशी सर ने उसे खूब प्रोत्साहित किया। और किसी दिन उसने मन-ही-मन तय कर लिया कि वह बडी होकर चित्रकार बनेगी, ठीक बेन्द्रे और बी.प्रभा की तरह। चित्रों की खूब प्रदर्शनियां लगायेगी ...'[१]

अपने स्कूली जीवन से ही उन्होंने कविता लिखना आरंभ कर दिया था। अपने पिता के निरकुंश स्वभाव पर उन्होंने कविता लिखी थी जो उन्होंने विद्यालय की हस्तलिखित पत्रिका के लिए लिखी थी। उनके शिक्षक उस कविता को पढ कर चौंक उठे थे।

तात्पर्य यह कि विद्यालयीन जीवन से ही उन्होंने गलत बातों का विरोध करना शुरू कर दिया। तभी से वे वादविवाद प्रतियोगिताओं, भाषण प्रतियोगिताओं में भाग लेने लगी। उन्होंने प्रसिद्ध नृत्यांगना सुधा डोरास्वामीजी से 'भरत-नाट्यम' भी सीखा। उनके नृत्य सिखने पर भी दादीजी ने विरोध किया था। क्योंकि नाचना-गाना ठाकुरों के यहाँ निम्न दर्जे का समझा जाता था। घर के उत्सवों में नाच-गाने के लिए बाहर से नर्तकियाँ बुलवाईं जाती थीं। अच्छे घरों की लडकियाँ नाचती न थी। पिताजी भी उनके इस शौक को पसंद नहीं करते थे लेकिन वे दृढ थी। नेवल डाकयार्ड के एक कार्यक्रम में उन्होंने अपना नृत्य प्रस्तुत किया था। उस कार्यक्रम में उनके पिताजी के साथ कमोडोर श्री नंदा और रीयर एडमीरल श्री कटारियाजी भी थे। कार्यक्रम समाप्त होने पर वे घर लौटी तो घबरा रहीं थी कि अब पिताजी डाँटेगें लेकिन उस नृत्य की श्री नंदाजी और श्री कटारियाजी सहित सभी ने इतनी प्रशंसा की कि उनका विरोध ही समाप्त हो गया। घर आकर उन्होंने चित्राजी को शाबाशी दी। यह अपने आप में चमत्कार ही लगा उन्हें। क्योंकि चित्राजी ने अपने पिता को केवल अपनी ही कहने और करने वाले रूप में अधिक देखा था। धीरे-धीरे उन्होंने पिता की पाबंदियों में छूट लेनी शुरू कर दी।

---

१. मेरी रचना प्रक्रिया -जगदंबाबाबू गाँव आ रहे है - चित्रा मुद्‌गल, पृष्ठ ५

२.४ चित्राजी का महाविद्यालयीन जीवन :

चित्राजी ने अपना महाविद्यालयीन जीवन सोमैया कॉलेज, घाटकोपर में शुरू किया। सोमैया कॉलेज ने उनके जीवन को एक नई दिशा दी। राम त्रिपाठीजी, प्रो. राधेश्याम शर्माजी, प्रो. पंडाजी, अनंतरामजी जैसे प्राध्यापक मिले। उनके लेखन के आरंभिक दौर में इन प्राध्यापकों का मार्गदर्शन बहुत ही लाभकारी सिद्ध हुआ। उनकी वक्तृत्व प्रतिभा को पहचान कर उनके प्राध्यापकों ने उन्हे बहुत प्रोत्साहित किया। अपने महाविद्यालय के साथ ही अंतर महविद्यालयों की प्राय: सभी कहानी-कविता प्रतियोगिता, भाषण, वाद-विवाद प्रतियोगिता में वे हिस्सा लेती थी। वे बताती हैं कि -'पंडाजी की सदैव यही कामना होती कि मैं प्रतियोगिता में प्रथम स्थान प्राप्त कर अपने कॉलेज का नाम रोशन करूँ। बहुत भरोसा था उन्हें मेरी प्रतिभा पर। उनके भरोसे को मैं पूरी लगन और आत्मविश्वास के साथ पूरा करने में जुट जाती।'[१] प्रो. अनंतरामजी उनकी रचनाओं को प्रकाशित करवाने का यत्न करते। जैसे ही उन्हे किसी प्रतियोगिता में पुरस्कार प्राप्त होता या किसी अखबार या पत्रिका में उनके पुरस्कृत होने की सूचना या चित्र छपता तुरंत ही वह सूचना महाविद्यालय के सूचना पट्ट पर आ जाती। उन्होंने 'सेण्ट जेवियर्स' कॉलेज द्वारा स्थापित 'भारतेंन्दू ट्राफी' जब अन्तर महाविद्यालयीन वाद-विवाद में जीती, तब 'उस प्रतियोगिता के निर्णायक मंडल में 'सेण्ट जेवियर्स' में ही पढा रहे 'मुर्दाघर' जैसे ख्यात उपन्यास के लेखक प्रो. जगदंबा प्रसाद दीक्षित निर्णायक के रूप में उपस्थित थे।'[२] यह बात वे गर्व से बताती हैं।

महाविद्यालय में पढते हुए ही वे 'जागरण' स्वयंसेवी संस्था के साथ जुड गयी थी। वे 'जागरण' की घाटकोपर विंग में थी, जो हनुमान टेकडी, गोदरेज कंपनी के पिछे पहाडियों पर बसी झोपडपट्टी में काम करती थी। इस दौरान उन्होंने महानगर के नासूर कहलाने वाली झोपडपट्टी को बहुत नजदीक से देखा। अनुभव का एक नया अध्याय उनके जीवन से जुड गया। गरीब, दलित, शोषित व्यक्तियों के रिसते जख्म उन्हें भीतर तक उद्वेलित कर गये। यही सब बाद में उनके लेखन का विषय भी बना। वैसे उन दिनों कहानी से अधिक वे कविताएँ रचती थी।

---

१. लोकशासन - १९ जुलाई ९५
२. लोकशासन - १९ जुलाई ९५

सौमेया कॉलेज से इंटर करने के पश्चात उन्होंने 'जे.जे.स्कूल ऑफ आर्टस्' से फाइन आर्टस् में डिप्लोमा किया। बचपन से ही वे रंगों की दुनियाँ में खोयी रहती थी। लेकिन इंद्रधनुषी रंगों ने चित्राजी का दूर तक साथ नहीं दिया। यूँ वे अपने स्तर पर वॉटर कलर में चित्राकृति और स्केच आदि बनाया करतीं थीं।

एक लम्बे अरसे के बाद उन्होंने एस.एन.डी.टी. महिला विश्वविद्यालय से स्नातक और स्नातकोत्तर की पदवियाँ ग्रहण की।

२.५ चित्राजी का विवाह :

चित्राजी का विवाह श्री अवध नारायण मुद्‌गलजी के साथ १९६५ में हुआ। यह प्रेम विवाह था जो कुछ मित्रों की उपस्थिती में एक आर्य समाज मंदिर में अत्यन्त सादगी से हुआ था। उनकी अवधजी से मुलाकात जिसे वे 'मुठभेड' कहती हैं, बडी मजेदार ढंग से हुयी। वे अपने प्रोफेसर श्री अनन्त राम त्रिपाठीजी के कहने पर कहानी प्रतियोगिता के लिए लिखी गयी कहानी जो वे अस्वस्थतावश प्रतियोगिता ने पढ नहीं पायीं थी 'सारिका' में प्रकाशित करवाने हेतु संपादन विभाग गयी थी। अवध नारायणजी उन दिनों 'सारिका' में थे और अनंतरामजी के मित्र थे। चित्राजी स्वयं अपनी कहानी 'दुर्वा' लेकर टाइम्स ऑफ इंडिया' के चौथे माले पर स्थित 'सारिका' के कार्यालय गयी थी। 'सारिका' के कार्यालय के बाहर ही मिले युवक से उन्होंने मुद्‌गलजी के बारे में पूछा। उस युवक ने कार्यालय में बैठे श्री आनंद प्रकाश सिंह की और संकेत किया। जब उन्होंने मुद्‌गल जीं के सम्बोधन से उन्हें पुकारा तो वे चौंक पडे। दूसरे दिन ज़ब सर के सामने उन्होंने सारा वाकया बयान किया और गलत सूचना देने वाले युवक का हुलिया बताया तो सर बोले कि वही मुद्‌गल था। चित्राजी को उस युवक पर बहुत क्रोध आया।

कहानी तो वे 'सारिका' में छोड ही आयीं थी। कुछ दिनों बाद उनकी इस टिप्पणी के साथ कहानी वापस आ गई कि 'आप अभी कहानी के क, ख, ग से भी परिचित नहीं हैं। कुछ पढिये देश के, विदेश के महत्वपूर्ण लेखकों को।' यही कहानी बाद में नवभारत टाइम्स मे छपी। उनकी अवधजी

से दूसरी मुलाकात भी बडे नाटकीय ढंग से हुई। वे सेंट जेवियर्स में वाद-विवाद प्रतियोगिता में प्रतिभागी के रूप में गयी थीं। वहाँ निर्णायक के रूप में अवधजी बैठे थे। उस प्रतियोगिता में उन्हें द्वितीय स्थान प्राप्त हुआ और उन्होंने स्पष्ट अनुभव किया कि 'अगर वह दुष्ट नौजवान निर्णायक के रूप में सामने न हुआ होता तो निश्चित ही वह अपना स्थान न खोती। हो सकता है उसने जान-बूझकर कम नंबर दिये हों।'[१]

तत्पश्चात उनकी मुलाकातें बढने लगी। अवधजी की विद्वता ने उन्हें प्रभावित किया और सबसे अधिक वे आकर्षित हुयीं उनके निमर्मता से कमियों को व्यक्त करने के गुण से । दस महिनों का परिचय एक दिन विवाह-सूत्र में बंध गया। चित्राजी के परिवार ने इस विवाह का खूब विरोध किया। पिता श्री प्रतापसिंहजी ने साफ लफ्जों में सुनाया था कि सूर्यवंशी ठाकुर निहालसिंह के खानदान में किसी भी लडकी को यह छूट नहीं है। उन्हें आपत्ति थी कि मुद्‌गल विजातीय है और उनके ड्राइवर की हैसियत का चार सौ रूपये कमाने वाला है। चित्राजी की अम्मा ने चित्राजी से कहा था -'तुम नहीं जानतीं, बैसवाडा के इन सूर्यवंशियों के खानदानों की ... लडकी का पांव तनिक भी अनुशासन से बाहर हुआ नहीं कि उसे अझाला (एक और आंगन) के कुएँ में बलात् ढकेलकर प्रचारित कर दिया जाता है कि पानी खींचते हुए अचानक कुएं की जगत पर से बिटिया का पांव फिसल गया ...'[२]

लेकिन चित्राजी अपने परिवार के सामंती आतंक से मुक्त होने का निर्णय ले चुकी थी। विवाह के बाद उनके पिताजी ने उन्हें अवधजी से अलग करने की बहुत कोशिश की। यहाँ तक कि बंदूक - पिस्तौल तक बात पहुंच गयी। लेकिन, जीत चित्रा जी-अवधजी की हुई ।

२.६ चित्राजी के लेखकीय जीवन का आरंभ :

चित्राजी ने स्कूली जीवन से ही लिखना आरंभ कर दिया था। पहले वे वाद-विवाद और भाषण प्रतियोगिताओं के लिए लिखा करती थी। विद्यालय में ही कविता-कहानी प्रतियोगिताओं के लिए उन्होंने लिखना शुरू किया। उनकी पहली कविता उन्होंने 'पिता' पर लिखी थी, जिसमें उन्होंने

---

१. मेरी रचना प्रक्रिया - जगदंबाबाबू गाँव आ रहे है - चित्रा मुद्‌गल, पृष्ठ ७
२. मेरी रचना प्रक्रिया - जगदंबाबाबू गाँव आ रहे है - चित्रा मुद्‌गल, पृष्ठ ७

पिता के कठोर व्यवहार का वर्णन जल्लाद के समान किया था। यह कविता उन्होंने स्कूल की पत्रिका के लिए लिखी थी। लेकिन जब उस कविता को सर ने देखा तो उन्हें समझाया कि हम विद्यार्थियों के लिए पत्रिका निकाल रहे है। यदि पिता के प्रति ऐसी अनादर युक्त कविता प्रकाशित होगी तो विद्यार्थी क्या आदर्श लेंगे ? बेहतर हो तुम यह लिखो कि तुम जीवन में क्या करना चाहती हो वगैरह .... तब 'हिन्दी हायस्कूल', घाटकोपर की पत्रिका में उन्होंने कविता लिखी -

जीवन के शूल भरे पथ पर चलते-चलते -
आ जाये ना प्राणों की अंतिम शाम कहीं -
मंजिल है मेरी दूर अभी !

जब वे गंभीरता से लेखन की ओर बढी तब भी आरंभ कविता से ही किया। 'लहर' पत्रिका में सन् १९६६ के अगस्त माह के अंक में 'कैसे जियेंगे वे' तथा १९६९ में 'जब तुम' आदि कविताएँ महत्वपूर्ण ढंग से छपी । १९६६ में ही 'ज्ञानोदय' के अंक में 'एक अगरबत्ती की गंध' कविता प्रकाशित हुयी। नवभारत में भी उनकी कविताएँ छपती थी। उन दिनों कविताओं के विषय-मुहब्बत, दु:ख, टूटन, जुदाई इत्यादि-इत्यादि ही थे। यद्यपि उन्हें तब तक मुहब्बत- वुहब्बत हुई नहीं थी।

चित्राजी की पहली कहानी 'सफेद सेनारा' थी। 'नवभारत टाइम्स' द्वारा आयोजित कथा प्रतियोगिता में यह कहानी पुस्कृत एवं प्रकाशित हुयी थी। यद्यपि उन्होंने अपने भीतर की बैचेनी को अभिव्यक्त करने के लिए इन्द्रधनुषी रंगो और कूँचियों को चुना था तथापि उन्होंने महसूस किया कि केवल रंग ही उनके अभिव्यक्ति के सार्थक साधन नहीं है। 'उसे काली स्याही की जरूरत है। उस स्याही की कालिख को इतना तराशना होगा, उसे इतनी धार देनी होगी कि एक ऐसा मुकाम आए कि वह अपने अंधेरों से लडने में स्वयं समर्थ हो।'[१] और उन्होंने कविता को अभिव्यक्ति का माध्यम चुना लेकिन फिर भी वे असंतुष्ट ही रही। उन्हे 'कहीं गहरे अनुभव होने लगा था कि अनवरत प्रश्नाकुलता और क्षुब्ध बैचेनी की गहरी सघन अभिव्यक्ति के लिए कविता अनुकूल माध्यम नहीं है। ... तभी तो 'राम की शक्ति पूजा' लिखने वाले महाप्राण निराला को 'बिल्लेसूर बकरिहा' लिखना पडा। नरेश

१. नवभारत - १८ दिसम्बर १९९४

मेहता, नागार्जुन, रघुवीर सहाय, महादेवी वर्मा, बच्चन आदि ने भी समय-समय पर गद्य को अभिव्यक्ति का माध्यम चुना ।'[1]

तत्पश्चात उन्होंने कथात्मक साहित्य को अपनी अभिव्यक्ति के लिए उचित पाकर लिखना शुरू किया। उनका अनुभव विश्व कहानी और उपन्यास के माध्यम से साकार रूप लेने लगा।

२.७ चित्राजी के व्यक्तित्व निर्माण के विभिन्न उत्स :

किसी भी व्यक्ति के व्यक्तित्व का निर्माण धीरे-धीरे समय की धूप, धूल और पानी सहते निर्मित होता है। घर से लेकर समाज तक सभी उसे विकसित करते है। चित्रा के व्यक्तित्व निर्माण के स्रोत भी अलग-अलग है, जिनसे उनका गठन हुआ।

२.७.१ ठाकुर घराने की सामंती विचारधारा :

चित्राजी का जन्म सामंती विचारधारा वाले जमींदार परिवार में हुआ। उस परिवार और सामंती परिवेश में उन्होंने कई शोषित, पीडित, दयनीय व्यक्ति देखे जो सारी व्यथाओं को सहमें हुए से मौन रह कर सहते जाते थे। बचपन के कुछ भयानक दृष्य उनके मानस पर चित्रित है - 'एक बोरी गेहूं चुराने के पीछे नीम के पेड से बंधा हुआ भिखू ... ! सुबह कलेवा के अलावा दोपहर के भोजन की मांग करने पर हंटर खाता हुआ जन पियारे ! '[2] बालिका चित्रा का मन तभी प्रश्नों से अकुलाने लगा था कि नर्दवा (नाली) साफ करने आने वाली डोमिन को आदर पूर्वक 'डोमिन काकी' पुकारना चाहिये। लेकिन प्यास लगने पर उनके घर से पानी मांग कर पीने पर झन्नाटेदार चांटा खाना पडा था क्योंकि वे शुद्र है। प्रश्न यह भी उठता कि घर के सभी पुरूष यहाँ तक कि छोटे लडके भी सामाजिक उत्सव के समय, मुण्डन, छेदन, ब्याह के अवसर पर आयोजित 'पतुरिया' का नृत्य देख सकते है लेकिन महिलाएँ और बच्चियाँ नहीं देख सकती।

घर के मुख्य दरवाजे से स्त्रियों और लडकियों का आना-जाना मना था। डोली और अरथी

---

१. लोकशासन - १९ जुलाई ९५
२. मेरी रचना प्रक्रिया - जगदंबाबाबू गाँव आ रहे है - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ ८

के अतिरिक्त महिलाएँ मुख्य द्वार से नहीं निकल सकती थी। बालिका चित्रा ने मुख्य दरवाजे से पाठशाला जाना चाहा था लेकिन बडे बप्पा की दहाड से सहम गयी-प्रश्न फिर कुलबुलाने लगे।

बंबई के विशाल बंगले में पूरी आधुनिकता के साथ रहते हुए भी सामंति विचार उसी तरह पीछा कर रहे थे। माँ दिन भर घर के कामों में व्यस्त रहती। पति की हर आज्ञा को झेलती, उनके नेवी के मित्रों की फरमाइश पर भोजन पकाती और अनपढ -जाहिल के विशेषणों से पति द्वारा सम्मानित होती। प्रश्न शूल से उठने लगते-मायके और ससुराल की 'खानदानी परंपरा' में बंधी तेरह वर्ष की आयु में ब्याह कर केवल दहलीज बदल कर आयी माँ से पिता कैसी अपेक्षाएँ रखते हैं? और स्वयं उन्होंने माँ को क्या नया दिया ? घर के बाहर रहते ठाकुर साहब किसी गरीब की बेटी ब्याहने के लिए आर्थिक मदद कर सकते हैं? किसी की हारी-बिमारी में सहायता कर सकते हैं ? लेकिन घर में वे वैसे ही कठोर और अनुशासन बद्ध, उनकी अपनी और अपनी ही कहते चले जाने की हुमक !

सवाल तब भी उठ खडे हुए थे जब चित्राजी ने ब्राह्मण युवक से प्रेम-विवाह करना चाहा। ब्राह्मण देवता-स्वरूप हैं अत: पूजनीय भी हैं लेकिन उनसे विवाह - सम्बन्ध संभव नहीं क्योंकि - विजातीय है संपन्न नहीं है। लेकिन अब निर्णय हो चुका था। दृढ सामंती परम्परा के आतंक से मुक्त होने का निर्णय। और वह परम्परा तोडने का कार्य तो स्वयं पिताजी ने ही शुरू किया था-परम्परा के विरूद्ध निहालसिंह के खानदान की बेटियों को उच्च शिक्षा देकर, शिकार, तैराकी, घुडसवारी सिखाकर, आधुनिक वस्त्र पहनने की छूट देकर और जब वे अखबारों में लिखने लगी तो विरोध का स्वर पुन: उठा था। लेकिन नरम रूख अपनाया था। लिखो मगर परिवार की ओर उंगली मत उठाना। उस पर नहीं लिखना। लेकिन वे नहीं जानते थे कि लिखने की पहली शर्त ही होती है निर्भीकता। दबाब मुक्त हो, निर्द्वन्द्व लिखना होता है।

परिवार की इस सामंतवादी विचारधारा की अग्नि में चित्राजी सोने के समान तप कर निकली। उनकी कहानियों में पुरूष की निरकुंश सत्ता, दोहरी मानसिकता, उसका दंभ, खानदानी परंपरा के नाम पर स्त्री का शोषण और स्त्री की प्रतिक्रिया साकार होने लगी। जो काम इंद्रधनुषी रंग नहीं कर पाये वही काम काली स्याही करने लगी और जीवन के हजारों-हजार रंग कागज पर उतरने लगे।

सोमैया कॉलेज के साहित्यीक और सांस्कृतिक वातावरण में लेखन की कोशिशें संवारी गयी और कथाकार चित्राजी का निर्माण होने लगा।

२.७.२ लकीरों और रंगो की दुनियाँ :

बचपन में चित्राजी चित्रकारी में रूचि लेंती थीं। 'वह सोचती थी, कैनवास के किसी सिरे पर वह कूंची की कुदाल और फावडे से अपनी इमारत की नींव खोदना शुरू करेगी। जिसकी गहराई में उसकी अपनी इमारत की चिनाई शुरू होगी और उस इमारत की खिडकियाँ, रोशनदान उन सभी दिशाओं की ओर खुलती होंगी, जहाँ अपने-अपने कैनवास में अपनी दुनिया का संघर्ष जीता हुआ प्रत्येक व्यक्ति अपनी इमारत की नींव खोद रहा होगा।'[१]

चित्रकारी सिखने के लिए उन्होंने माँ से चुपचाप पैसे लेकर ट्युशन लगायी थी। पाठशाला से घर आने में देरी होने लगी। पिता ने जांच-पडताल की, और ट्यूशन बंद कर दी। चित्रों की प्रदर्शनी का स्वप्न उनके कठोर वाक्य से टूट गया - 'यही सब करोगी ...?' लेकिन इंटर के बाद चित्राजी ने जे.जे.आर्टस् में फाइन आर्ट का डिप्लोमा किया। लेकिन चित्रों की प्रदर्शनी का स्वप्न फिर भी पूरा नहीं हो पाया। उनके जीवन में यथार्थ के कई-कई रंग आ गये थे-अवधजी से मुलाकात, फिर प्रेम और विवाह भी। रंगों की दुनियाँ संघर्ष के दिनों मे पीछे छूट गयी। आर्थिक दबावों में कागज-कलम का साथ बुरा नहीं था? यह भी महसूस हुआ कि जिस तरह से वे अभिव्यक्त करना चाहती है उसके लिए कागज और कलम ही आवश्यक है और कविताओं के स्थान पर कथात्मक साहित्य ही अधिक उचित है।

२.७.३ 'जागरण' की घाटकोपर विंग :

जब चित्राजी हिन्दी हायस्कूल, घाटकोपर में पढती थी तभी उन्होंने समाज सेवी संस्था 'जागरण' में जाना शुरू कर दिया था। सोमैया कॉलेज में आने के बाद तो वे सक्रिय रूप से कार्य करने लगी। 'जागरण' की घाटकोपर विंग का कार्यक्षेत्र था - भांडुप, हनुमान टेकडी और गोदरेज कंपनी के

---

१. मेरी रचना प्रक्रिया - जगदंबाबाबू गाँव आ रहे है - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ १

पिछे की और पहाडियों पर बसी झुग्गी-झोपडियाँ। 'चालों' [1] का जीवन वे देख ही रही थी। क्योंकि अवधजी से विवाह के बाद आर्थिक तंगी के कारण उन्हें मुंबई की चाल का दस बाई दस का कमरा ही मिल सकता था। वहाँ भी वे मुसिबतों में फंसे सामान्य लोगों के बीच रहती थी लेकिन 'जागरण' के साथ जो दुनियाँ उन्होंने देखी उसने पिता के सारी सुख-सुविधाओं से युक्त घर के छूट जाने का दुःख भुला दिया और टूट चूके सारे रिश्तों को नये रिश्तों के रूप में पा लिया।

'जागरण' महिलाओं की वह सामाजिक संस्था थी जो शोषितों-पीडितों को न्याय दिलाने के लिए कार्यरत थी। घर-घर झाडू बर्तन करने वाली बाईयाँ, मजदूर, भिक्षुक, छोटे-छोटे धंधे करने वाले, वेश्या व्यवसाय में संलग्न, चोरी, पॉकेटमारी जैसे अलग-अलग धंधो में लिप्त लोगों में जागरण लाने का कार्य 'जागरण' करती थी। उनके बच्चों की शिक्षा-दीक्षा, स्वास्थ्य और घरेलू झगडों को भी निपटाने का दायित्व उनका था। ऊपरी तौर पर अपराधी दिखने वाले झुग्गीवासी उतने ही निश्च्छल थे कि- 'ममता पाते ही सुधरने की कस्में खाने लगते और मुसीबत पडने पर किसी के लिए भी अपनी जान जोखिम में डालने से नहीं चूकते।'[2]

दत्ता सामंत, पाटील और मृणाल गोरे, जो बंबई में 'पानीवाली बाई ' के नाम से जानी जाती है, के साथ मिलकर उन्होंने इन अति-साधारण लोगों के बीच कार्य किया। और वहीं उन्हे मिले ऐसे अनगिनत पात्र, प्रसंग, व्यथा की कथाएँ जो उनकी कहानियों में कहीं मोट्या बनकर विद्रोह पर उतर आते तो कभी छटंकी को बेईमान बनने के गुर सिखाते, कही 'भूख' की लक्ष्मी की बेबसी तो कभी 'केंचुल' की कमलाबाई की व्यथा कह जाती। उनकी कहानियों में झोपडपट्टी की यातनामय जिंदगी मुखर हुयी है तो इसकी वजह उनका स्वतः का देखा हुआ वह नारकीय जीवन है। चित्राजी कहती है - 'मेरा हाड-मांस का जन्म निहाल सिंह के खानदान में जरूर हुआ लेकिन मानसिक जन्म भूख, बदहाली, तंगी, रोगों में जी रहे इन्हीं लोगों के बीच हुआ।'[3]

पिताजी श्री प्रतापसिंहजी चाहते थे कि चित्राजी समाजसेवा के माध्यम से लोगों में अपनी मजबूत छवि बना लें, अपने लिए राजनीतिक पृष्ठभूमि का निर्माण कर लें ताकि नगरपालिका के लिए

---

१ चाल - एक दूसरे से सटकर बने पक्के मकानों की बस्ती, जहाँ प्रायः निम्न या निम्न मध्यवर्गीय किरायेदार रहते है।
२. मेरी रचना प्रक्रिया - जगदंबाबाबू गाँव आ रहे है - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ १०
३. नवभारत - १८ दिसम्बर १९९४

उन्हें चुनाव में खडा किया जा सके। लेकिन 'राजनीति के इस्तेमाल' की विरोधी चित्राजी पिता की इच्छा को मान नहीं दे पायीं।

२.७.४ वैचारिक चेतना :

व्यक्तित्व का बनना कोई एक दिन की क्रिया नहीं होती। वह इस समाज में धीरे धीरे आकार ग्रहण करता है। समय-समय पर उसे राजनीति, समाज और साहित्य में प्रवाहित विभिन्न विचारधाराएँ प्रभावित करती है। यह प्रभाव कभी प्रत्यक्ष तो कभी परोक्ष रूप में होता है। यही प्रत्यक्ष-अप्रत्यक्ष प्रभाव किसी व्यक्ति को एक निश्चित वैचारिक दृष्टिकोण प्रदान करते है। कभी यूँ भी होता है कि मलंग किस्म के व्यक्ति किसी खास विचारधारा को नहीं मानते बल्कि समय के अनुसार अपनी प्रकृति और प्रवृत्ति के अनुरूप आचरण करते है।

चित्राजी पर भी अलग-अलग व्यक्तियों का प्रभाव पडा। प्राय: लोग और विशेषकर समीक्षक 'प्रभाव ' को रचना में 'अनुकरण' के रूप में लेते है जबकि सचाई यह नहीं है। चित्राजी जब स्कूली छात्रा थी तब 'ब्लिट्स' (हिन्दी) अखबार पढा करती थी। श्री अब्बास साहब उसमें शोषित और मजदूरों के पक्ष में एक कॉलम 'आजाद कलम' शीर्षक से लिखा करते थे, जो उन्हें प्रेरणा देता था। आर.के. करंजिया साहब और बी.के. करंजियाजी के संपादकीय बहुत पसंद आते थे। लेकिन कोई खास वैचारिक दृष्टि नहीं आ पायी थी। उन दिनों अधिकांश प्रतियोगिताओं में पुरस्कार स्वरूप अच्छे लेखकों की पुस्तकें प्रदान की जाती थी। 'म.गांधी प्रतिष्ठान' की निबन्ध प्रतियोगिता में उन्हें पांच सौ रूपयों का पुरस्कार मिला था। उस समय यह राशी बहुत बडी थी, शिक्षकों ने उन्हें अच्छे लेखकों की पुस्तक सूची दी थी। उस समय उन्होंने कई भारतीय श्रेष्ठ रचनाकारों की रचनाएँ पढी। 'मैला आँचल', 'गोदान', 'सेवाश्रम', 'मानस का हँस', 'पथ के दावेदार', 'गली आगे को मुडती है', 'राग दरबारी', 'सूरज का सँातवा घोडा', 'जिन्दगीनामा', 'सोनामाटी', 'वोल्गा से गंगा तक', 'मृगनयनी', 'काला जल', 'कब तक पुकारूँ', 'शेखर एक जीवनी', 'चित्रलेखा', 'झूठा-सच', 'तमस', 'पानी के प्राचीर', 'ढाई घर', 'लाल-पीली जमीन', 'किस्सा गुलाम', आदि ऐसी रचनाएँ है, जिन्होंने उनकी चेतना जगायी।

अवधजी से मुलाकात ने उन्हें विश्व के श्रेष्ठ रचनाकारों को पढने के लिए प्रेरणा दी। देश-विदेश के श्रेष्ठ रचनाकारों को उन्होंने पढा है। कामू, काफ्का, गोर्की, फ्योदोर दोस्तोवस्की को उन्होंने पढा। चित्राजी कहती है- 'ग्रेटमास्टर्स' की कालजयी रचनाओं की भूमिका मेरी रचनाशीलता के संदर्भ में उन गुरूओं के सदृष्य है जो अपने ज्ञान से कक्षा दर-कक्षा विद्यार्थी को जीवन पर्यन्त विद्यार्थी बने रहने की अंर्तशक्ति से पूरते हैं।'[१] हेमिंग्वे ने उन्हें सर्वाधिक प्रभावित किया।

महात्मा गांधी की आत्मकथा पढकर वे उनके विचारों से बहुत प्रभावित हुई। वे उन्हें 'आदमी के रूप में चमत्कार' मानती है। गांधीजी बहुत ही सहज और सरल भाषा में जीवन का गुरू मंत्र देते है कि किसी के बारे में सोचने से पहले तुम स्वयं अपने विषय में सोचो। अपने चेहरे की तहों को पहचान लोगे, पा लोगे तो औरों को पहचानने समझने में दिक्कत नहीं होगी। चित्राजी की समाजोन्मुखी सोच को डॉ. लोहिया ने अत्यन्त प्रभावित किया। डॉ. लोहियाजी की समाजवादी चिन्तन धारा, जो जमीन से जुडी हैं, ने उन्हे वैचारिक पृष्ठभूमि प्रदान की। डॉ. लोहियाजी भी महात्मा गांधी से काफी हद तक प्रभावित थे। वे डॉ. लोहियाजी के सम्बन्ध में कहती हैं कि - 'देश की समस्याओं की, आम लोगों के दुख-दर्द की उन्हे गहरी जानकारी थी। उनके समाधान भारतीय स्थितियों के अनुकूल थे। अन्य समाजवादियों जैसे मधु लिमये जी, मृणाल गोरेजी से मेरा सम्पर्क रहा। मृणाल जी, जो बंबई में पानी वाली बाई के नाम से विख्यात है, के साथ मैने कुछ सामाजिक कार्य भी किये।'[२]

२.८ चित्राजी – पत्नी, माँ और गृहिणी :

चित्राजी जितनी सफल लेखिका है उतनी ही सफल पत्नी, माँ और गृहिणी भी है। अपने संघर्ष के दिनों में उन्होंने स्वतंत्र रूप से पत्रकारिता की, बीच-बीच में छोटी-मोटी नोकरियाँ भी की लेकिन अपने दायित्वों को निभाते हुए उन्होंने अपना लेखन क्रम भी जारी रखा। अवधजी के साथ विवाह के पश्चात उन्हें आर्थिक कठीनाइयों का सामना करना पडा तब उन्होंने पति के साथ मिलकर अनेक अनुवाद के कार्य किये। विज्ञापन एंजेसी 'लिन्टास' में स्वतंत्र कॉपी लेखन का कार्य किया।

---

१. लोकशासन - १९ जुलाई, १९९५
२. मनोरमा - जुलाई प्रथम ९४, पृष्ठ ७३

चूकिं अवधजी स्वयं पत्रकार, साहित्यकार एवं संपादक रहे हैं इसलिए पत्नी की प्रतिभा को विकसित करने की सुविधा उन्होंने दी। उनकी रचनाओं के प्राय: वे पहले पाठक होते। उस पर वे अपनी प्रतिक्रिया भी देते। चित्राजी कहती है कि यदि वे लिख रही होती तो वे कभी भोजन आदि की मांग भी नहीं करते बल्कि खुद ही कुछ बना लेते और उन्हें भी खाने के लिए बुला लेते। वैसे वे मूलत: गावठी किस्म के व्यक्ति है, खाने के शौकिन। चित्राजी ने बाजरे का पुआ आदि बनाना उन्हीं के लिए सीखा। चूकिं वे शहर में रहती थी तो अक्सर ससुराल पक्ष के भांजे-भतिजे उनके यहाँ अध्ययन के लिए रहा करते थे। लेकिन सभी ध्यान रखते कि वे लिखने के लिए समय पा सकें। लेकिन चिंतन प्रक्रिया में अवश्य इससे खलल पडता।

अपने बच्चों के प्रति उनमें कर्तव्य भावना थी। उन्होंने बच्चों को नजर अंदाज कर कुछ भी नहीं किया। दरअसल उन्होंने अपने लेखन में सबसे पहले बच्चों की ही समस्याओं को स्थान दिया। अपने दोनों बच्चों के हँसने, रूठने-मनाने, शरारतें करने, गलतियाँ करने पर ही उन्होंने बाल कथा और कविता लिखी। बच्चों के लिए वे 'चिमू दीदी' नाम से लिखा करती थी। बच्चों का गृहपाठ आदि करवाने का दायित्व चित्राजी पर ही था। कभी-कभी थकान, कार्य की व्यस्तता के कारण वे बच्चों को बुरी तरह डांट देती और कभी-कभी तो गुड्डू-बिट्टू पिट भी जाते। बाद में उन्हें पश्चाताप होता। अवधजी भी नाराज होते कि पढलिख कर भी वे बडी बेहूदगी से बच्चों को डांटती है। राजीव और अर्पणा को उन्होंने वे सारी सुविधाएँ दी जो वे पाना चाहती थी, उन सभी बंधनों से मुक्त रखा जिनमें वे बचपन में बंधी रहीं थी।

भोजन आदि बनाने में विशेष रूचि न होने पर भी वे भोजन बडा स्वादिष्ट बनाती हैं। रसोई में काम करने की बजाय उन्हें घर की साज-सज्जा करना अधिक पसंद हैं । फूल पौधों से उन्हे बेहद लगाव हैं। अपने घर में उन्होंने कई प्रकार के पौधे सजा रखे है। उनकी देखभाल वे परिजनों के समान ही करती है। प्रकृति का सानिध्य उन्हें बहुत अच्छा लगता है- जैसे शक्ति से पूरता हुआ कोई आत्मीय जन हो।

चित्राजी दिल्ली-बम्बई जैसे महानगरों मे रही है लेकिन उनमें महानगरीय आकाश विहारी

समाज के छद्म नहीं है। न वे अशालीन, घमंडी महिला है। उनसे मुलाकात होने पर उनके सम्बन्ध में बनी यह पूर्वधारणा टूट जाती है कि लेखिकाएँ होती ही नकचढी है। दामोदर दत्त दीक्षित ने उसके व्यक्तित्व को बडे सटीक ढंग से वर्णित किया हैं- 'चित्राजी में एक और गरीमा है, दूसरी और ऋजुता। वेशभूषा में वह भद्र और सोफिस्टीकेटेड हैं, पर व्यवहार में सरल और अनौपचारिक । उम्र की आधी सदी पार करने की ओर वह अग्रसर तो है, पर उतावली नहीं। उसकी कहानी की तरह उनका कद लम्बा है पर कहानी के ढब पर उन्होंने अपना वजन नहीं बढाया। गोरे गोल चेहरे पर गरिमापूर्ण लावण्य है।'[१] वास्तव में चित्राजी रूप और गुण का सुंदर संगम है।

३. चित्राजी का कृतित्व :

अष्टम दशक की बहुचर्चित रचनात्मक लेखिकाओं में चित्राजी का उल्लेखनीय स्थान है। आरंभिक कहानी लेखन के दौरान संपादक पति श्री अवधनारायण मुद्गल के कारण भी उनकी चर्चा हुयी लेकिन उनकी रचनाओं ने उनकी बहुमुखी प्रतिभा का परिचय दिया। 'महिला लेखन' की चिप्पी को नकारती वे अपनी सर्जनात्मक ऊर्जा से अपनी रचनाओं को पैनेपन से प्रस्तुत करती है। उन्होंने साहित्य की विभिन्न विधाओं पर लेखन किया है। कविता से आरंभ कर कहानी, उपन्यास, निबन्ध, लेख, इंटरव्यू, अनुवाद आदि पर लिखा है।

चित्राजी के लेखन का आरंभ किशोरावस्था में हुआ। स्कूल-कॉलेज की कविता-कहानी प्रतियोगिताओं में लिखते-लिखते उनका लेखन परिपक्व होता रहा। इस बीच वे पत्रकारिता से भी जुड गयी थी। उनका अनुभव विश्व जैसे-जैसे विस्तारित होता गया, उनके लेखन में भी परिपक्वता, गहराई आती गयी। उन्होंने एक ओर जहां समाप्त हो रही मानवीय संवदेना को रेखांकित किया है वहीं दूसरी ओर उन्होंने आधुनिक जीवन की त्रासदियों को भी व्यक्त किया है। चित्राजी के अब तक सात कहानी संग्रह एवं एक उपन्यास प्रकाशित हो चुके है तथा चार कहानी संग्रहों का उन्होंने संपादन किया है। इसके अतिरिक्त उन्होंने बाल साहित्य रचा है तथा भारतीय व विदेशी कहानियों का अनुवाद भी किया है।

---

१. सुजाता - सितम्बर १९९३, पृष्ठ ३९

चित्राजी के साहित्य का समग्र विश्लेषण विवेचन करने के लिए उनके लेखन को विधाओं के आधार पर विभाजित कर परखना अधिक उपयुक्त होगा -

३.१ उपन्यास :

'एक जमीन अपनी'
प्रभात प्रकाशन, चावडी बाजार, दिल्ली - ११०००६
प्रथम संस्करण १९९०

'दु:ख तो यह है कि आज का अधिकांश पढा-लिखा विचारशील होने का दावा करता हुआ स्त्री समाज, स्त्री स्वातंत्र्य, स्त्री समानता और उसके अधिकारों की लडाई लडता हुआ भी नहीं जानता कि वे अधिकार वस्तुत: क्या हैं, कैसे होने चाहिए, किस रूप में होने चाहिए, उसकी सामाजिक छवि कैसी हो ? ...' 'एक जमीन अपनी' की नायिका अंकिता स्त्री के सही रूप की तलाश में है। चित्राजी के उपन्यास का उद्देश्य उपरिलिखित उद्धरण से स्पष्ट हो जाता है। चित्राजी ने अपने अनेक साक्षात्कारों और लेखों के माध्यम से स्पष्ट किया है कि वे 'नारी मुक्ति' जैसी अवधारणा को नहीं मानती। लेकिन इसका यह तात्पर्य नहीं है कि वे स्त्री की स्वतंत्रता, समता की पक्षधर नहीं है। वास्तव्य में वे स्त्री और पुरूष को आमने-सामने लामबंद करने के पक्ष में नहीं है। आवश्यकता इस बात की है कि स्त्री के प्रति पूर्वधारणाओं को खण्डित किया जाय तथा स्त्री को भी पुरातन मनोवृत्तियों से मुक्त कर विषमता के खोह से बाहर लाया जाय।

दरअसल आधुनिक भारतीय स्त्री बहुमुखी समस्या से ग्रस्त है। मनु महाराज की पुरूष सत्ताक संस्कृति में जहाँ स्त्री को मवेशी से ज्यादा या शायद उससे भी कम दरजे का समझा गया था। आधुनिक युग में प्रगति की हवा बहने से राजनैतिक, वैज्ञानिक, आर्थिक, सामाजिक आदि क्षेत्रों में परिवर्तन आया। इस क्रम में कई परम्पराएँ-रूढियाँ टूटी। स्त्री की स्थिती में भी बदलाव आया। घर की चौखट लांघ कर दफ्तरों की जिम्मेदारी भी उसने संभालनी शुरू की। अपनी इस नई भूमिका से आधुनिक स्त्री काफी हद तक खुश भी थी। लेकिन यहीं वह पुरूष के षडयंत्र का शिकार हो जाती है। पुरूष योजनाबद्ध तरीके से उसकी शक्ति का दोहन करता है और वह भी केवल अपनी शर्तो पर।

'एक जमीन अपनी' की 'अंकिता' और 'नीता' के माध्यम से चित्राजी ने विज्ञापन जगत के चकाचौंध भरे छद्मों को तोडने का प्रयास किया है। विज्ञापन जगत, जो बाहरी-तौर पर चमक-दमक भरा है लेकिन भीतर ही भीतर वह दल-दल से भरा है। बडी चतुराई से वह अपने भीतर की गंदगी को चमकदार आवरण में बंद कर अपनी विकृति को पोस्टर्स, होर्डिंग्ज, पत्रिकाओं, अखबारों, फिल्मों, दूरदर्शन स्लाइड्स के माध्यम से समाज में प्रस्तुत कर रहा है। संचार माध्यमों द्वारा प्रस्तुत स्त्री की छवि वास्तव में पुरुष प्रधान संस्कृति को ही प्रचारित कर रही है। बस! चोला बदल गया है।

फिल्म और विज्ञापन के अछूते विषय को केन्द्र में रखकर उसके छद्मों के बीच नारी की भूमिका को लेकर लिखा गया यह संभवत: पहला ही उपन्यास है। अपने कथ्य के लिए यह उपन्यास खासा चर्चित रहा। चित्राजी ने इक्कीसवीं सदी की ओर बढते आधुनिक भारत की दो स्त्रियाँ 'अंकिता' और 'नीता' के माध्यम से नारी मुक्ति, स्त्री की अस्मिता की सही छवि को प्रस्तुत करने का प्रयत्न उपन्यास में किया है। दोनों ही विज्ञापन जगत से जुडी हैं। महत्वाकांक्षी भी है। लेकिन अंकिता ने विज्ञापन जगत के छल-छद्मों को पहचाना। उसने अपनी महत्वाकांक्षाओं को साकार रूप देने के लिए समझोते करने से इंकार कर दिया। उसके संघर्ष का मार्ग अधिक दुस्तर और दीर्घ रहा लेकिन उसने मंजिल पायी। नीता ने अपने सौन्दर्य के बल पर और बुद्धि के बल पर भी पुरूष की रूपलिप्सा को भुनाकर शीघ्रता से यश का शिखर छुआ। उसने परम्परागत नैतिकता के बंधनों को तोडा, समझोते किये। लेकिन पाश्चात्य विचारधारा का बीज भारतीय भूमि में दम तोड गया। श्रेष्ठ और मंहगी मॉडल, कई पुरूष मित्र, मनचाहा करने की स्वतंत्रता पाकर भी वह टूट गयी। अंकिता ने अपनी जमीन को तलाशा इसीलिए वह भविष्य की स्त्री की संरक्षिका है।

स्त्री की सही पहचान कैसी हो? इस मूल समस्या के साथ ही अन्य भी कई सवाल इसमें उठाए गए है, जो विज्ञापन जगत के सुनहले आवरण के नीचे छिपे अंधकार को प्रस्तुत करते है। विज्ञापन जगत में अंग्रेजी भाषा का वर्चस्व है और भारतीय भाषाओं की निजी विशेषताओं को दुर्लक्षित किया जाता है। प्रत्येक भाषा की अपनी शैली होती है। हर भाषा के अपने मुहावरे, अभिव्यक्ति के अंदाज, तेवर, अपनी खुशबू होती है। कभी-कभी तो अंग्रेजी से अनुदित विज्ञापन केवल अनुवाद ही

बन कर रह जाते है, भाव का पता ही नहीं होता। यह भी सवाल है कि अंग्रेजी और हिन्दी कॉपीराइटरों के मानधन में अंतर क्यों होता है ? जबकि हिन्दी अनुवादकों को मेहनत अधिक करनी पडती है। यही बात लेखन में भी है कि अंग्रेजी साहित्यकार को विश्वस्तर का माना जाता है जबकि प्रांतीय भाषाओं के लेखक बेहतर लिख कर भी गुमनाम रहते है।

आधुनिक स्त्री के मानसिक दोहन के साथ ही उसका शारीरिक भोग भी जारी है, इस विज्ञापन की दुनियाँ में । अंकिता को विज्ञापन एंजेसियों में बार-बार अपनी प्रतिभा को कसौटी पर कस कर दिखाना पडता है - क्योंकि वह महिला है, तो नीता स्वतंत्रता से जीने की चाह में पुरूष के समान व्यवहार करते-करते नैतिक स्तर पर गिर जाती है। परित्यक्ता या अकेली स्त्री को आज भी अच्छी दृष्टि से नहीं देखा जाता और विशेषतौर पर तब तो वह और अधिक खतरनाक लगने लगती है जब वह आत्मविश्वासी भी हो। इस प्रकार 'एक जमीन अपनी' अछूते-अनूठे कथ्य और संवेदनशील, प्रवाहमयी भाषा के कारण अपनी अलग पहचान बनाता है।

३.२ कहानी संग्रह :

चित्राजी ने कहानी को अभिव्यक्ती के लिए कविता की तुलना में अधिक महत्व दिया है। चित्राजी कहानी लेखन के प्रति विशेष रूप से समर्पित है। उनकी कहानियाँ न वादों के घेरे में बंधी हुई है और न ही किसी राजनीतिक प्रतिबद्धता से जुडी है। उनकी कहानियाँ केवल मानवीय सरोकारों से जुडी है । उनका अनुभव विश्व बहुत व्यापक है। गांवों और कस्बों की महिलाओं की यथास्थितीपरक नियती को उन्होंने पूरी गहराई के साथ व्यक्त किया है। नगर और महानगरों में रहने वाली अपनी पहचान की खोज में लगी नारी के आसपास के दमघोंटू परिवेश को भी तन्मयता से चित्रित किया है। विशेष बात यह है कि उनके प्राय: सभी कहानियों के पात्र संघर्ष करते है, विशेषतौर पर नारी पात्र । क्योंकि वे स्वयं कहती है कि जब उन्होंने अपने वास्तविक जीवन में गलत रीति-नीति का विरोध कर रूढ़िग्रस्त परंपराओं को तोडा तब उन्हें अपनी स्त्री शक्ति का अहसास हुआ। इसीलिए उनके नारी पात्र अधिक प्रभावित करते है।

उनके कहानी संग्रह इस प्रकार है -

३.२.१. 'जहर ठहरा हुआ' -
अन्यन्य प्रकाशन,
होज काजी, दिल्ली
प्रथम संस्करण, १९८१

'जहर ठहरा हुआ' कहानी संग्रह अनुपलब्ध है। उस कहानी संग्रह की कहानियाँ अन्य कहानी संग्रहों में ले ली गयी हैं।

३.२.२. 'लाक्षागृह ' -
३/११८, पराग प्रकाशन
कर्णगली, विश्वास नगर, शाहदरा, दिल्ली
प्रथम संस्करण १९८२

इस कहानी संग्रह में कुल सात कहानियाँ है।

३.२.३ 'ग्यारह लम्बी कहानियाँ'
प्रभात प्रकाशन,
चावडी बाजार, दिल्ली - ६.
प्रथम संस्करण, १९८६-८७

इस कहानी संग्रह में कुल ग्यारह कहानियाँ है।

१. **'अनुबन्ध'** - कहानी का नायक साहस के साथ संघर्ष करता हुआ सहायकी का काम छोडकर निर्देशक बन जाता है, लेकिन उसकी फिल्म पिट जाती हैं। माँ के न रहने पर वह सौतेली नानी के यहाँ कुछ दिन बडी बुरी हालत में रहा था। अब सौतेली माँ का बेटा पिता के न रहने पर मामा के यहाँ दुरावस्था में रह रहा है। मित्र की सलाह पर वह अपने भाई को समस्या मुक्त करने के लिए पुन: सहायक पद का अनुबन्ध कर लेता है।

२. **'पेशा'** - पत्रकारिता जगत में फ्रीलाँसर को कठीन प्रतियोगिता का सामना करना पडता है। 'प्रणव' ने ही 'नरेन्द्र' को पत्रकार बनने में सहायता की। लेकिन जब बात पेशे में टिकने की होती है तो मैत्री को अलग रख देना पडता है।

३. **'दुलहिन'** - 'दुलहिन' कहानी की अम्मां जिया के रहते नाती-पोतों के होते भी अपनी उम्र

की लम्बाई को भूल 'दुलहिन' ही बनी रहती है। लेकिन जिया के स्वर्गवासी होते ही, वे अपनी बढती उम्र के अनुसार सास, जेठानी, माँ जैसे रिश्तों में बंट कर रह जाती है।

४. **'मोर्चे पर'** – नायिका के पति 'सुदीप' मोर्चे पर शहीद हो जाते हैं। घर में नायिका बच्चों के साथ एक अलग ही मोर्चे पर संघर्ष कर रही है। बच्चों के लिए पिता उनके अहसासों में इतने पास है कि नायिका के लिए उन्हें पिता की मृत्यु की सूचना देना मुश्किल हो जाता है।

५. **'दशरथ का वनवास'** – पिता के कठोर अनुशासन से 'रमानाथ' के बाल मन पर उनकी ऐसी क्रुर छवि बनी की नौकरी लगने के बाद वह कभी गाँव लौटकर नहीं जाता। राम का वनवास पुत्र का था। रमानाथ पिता को अर्थात दशरथ को ही वनवास दे देता है कि वह अपने पुत्र और उसके परिवार को देखने के लिए तरसता रहे।

६. **'अग्निरेखा'** – 'मनु' प्रसवोपरान्त अपंग हो जाती है, बच्चा भी नहीं बचता। उसकी अपंगता शारीरिक से अधिक मानसिक है। सशंयग्रस्त हो वह पति और बहन के बारे में अनर्गल सोचने लगती है और एक दिन आत्महत्या कर लेती है।

७. **'केंचुल'** – 'कमला बाई' नन्दू के प्रेम में धोखा खाकर अपनी बेटी सरना को भैया लोगों से बचा कर रखना चाहती है, जो प्रेम एक से करते है और गाँव में विवाह दूसरी से करते है। लेकिन सरना कल्पू के प्रेम से हिम्मत पाती है। आखिर कमलाबाई को अपनी केंचुल त्याग उनके प्रेम को स्वीकारोक्ति देनी पडती है।

८. **'बावजूद इसके'** – 'प्रीती' 'गोयल' के अमानुषिक व्यवहार के कारण उसे छोड मायके आ जाती है। माँ, भैया-भाभी सभी उसे गोयल के पास लौटने की सलाह देते है। रिसेप्शनिस्ट के पद पर काम करने के लिए वह खुद को कुमारी ही बताती है, लेकिन गोयल होटलवालों को सच बता देता है। वहाँ द्विवेदी जैसे लोग उसका लाभ लेना चाहते है। विवाह-विच्छेद के सवाल पर गोयल भैया को भी घसीट लेते है। वे अपना अपमान सह नहीं पाते और प्रीति को गोयल के पास न लौटने की सलाह देते है। घर और बाहर प्रीति को ही संघर्ष करना है अत: वह चुनौतियों के लिए तैयार हो जाती है।

९. **'रूना आ रही है'** – 'निमा' और 'रूना' हमउम्र बुआ-भतिजी है। निमा परिवार की उपेक्षा के कारण विजातीय शौकत के प्रेम में डूब जाती है लेकिन रूना का रिश्ता इससे टूट जाता है। दोनों के स्नेहपूर्ण सम्बन्ध कटूता में परिवर्तित हो जाते है। लम्बे अंतराल के बाद निमा की बेटी उन दोनों के बीच पुल का काम कर उन्हें निकट लाने का यत्न करती है।

१०. **'बन्द'** – 'बन्द' से आम आदमी की परेशानियाँ बढ जाती है। खासकर ऐसे लोगों को जो रोज कमाते, रोज खाते है,उन्हें बंद के कारण तकलीफ उठानी पडती है।

११. **'शून्य'** – अपनी ब्याहता पत्नी 'सरला' के मनोभावों को न समझ कर 'राकेश', 'बेला' से विवाह कर लेता है। सरला अपने बेटे के साथ रहती है। दुर्घटना में बेला गर्भधारण करने की शक्ति खो देती है। तब अपने जीवन का शून्य भरने के लिए वे सरला से उसका पुत्र मांगते है लेकिन सरला दृढता से इंकार कर देती है।

३.२.४ 'इस हमाम में'
प्रभात प्रकाशन
चावडी बाजार, दिल्ली - ६.
प्रथम संस्करण, १९८७

प्रस्तुत कहानी संग्रह में कुल नौ कहानियाँ है।

१. **'भूख'** – गरीबी और बेरोजगारी से ग्रस्त 'लक्ष्मी' की बेबसी उसे अपने बेटे को भिखारन को किराये पर देने को बाध्य कर देती है। भिखारन लोगो में करुणा पैदा करने के लिए उस छोटे बचे को भूखा-प्यासा रख रुलाती है। जबकि लक्ष्मी आश्वस्त रहती है कि वह उसे दूध-बिस्किट देती होगी जैसा उसने कहा था। एक दिन वह बचा भूख से मर जाता है।

२. **'फातिमाबाई कोठे पर ही नहीं रहती'** – सभ्य पढालिखा समझदार समझा जाने वाला सुशिक्षितों का वर्ग कभी ऐसी संवेदनहीनता और निष्क्रियता का भाव ओढ लेता है कि घर की समस्या से भागी हुई केतकी जैसी लडकिया कोठे तक पहुँच जाती है। ऐसी स्थिती में कोठेवालियों की तरह समाज का सुशिक्षित वर्ग भी उन बाईयों की ही श्रेणी में आ जाता है।

३. **'चेहरे'** – रेल प्रशासन और पुलिस - रेल्वे स्टेशनों को जेबकतरी के अड्डों का रुप दे देती है। स्टेशन पर भीखमंगे अपने साथियों के साथ जेबकतरी करते है और भिखारिनें वेश्या व्यवसाय करती है। लेकिन जब भिखारन इस सच को बताती है कि रेल्वे बाबू उससे हफ्ता लेते है और पुलिस वाले उसे हवस का शिकार बनाते है इसलिए वह वहीं भीख मांगेगी तो सारे प्रवासी स्तब्ध रह जाते है । उनका आक्रोश वहीं समाप्त हो जाता है।

४. **'ब्लेड'** – 'राम खिलावन' ईमानदार है लेकिन जब उसकी आर्थिक आवश्यकताएँ पूरी नहीं हो पाती तो वह भी गैराजवालों से मिली भगत कर कमीशन खाना सीख लेता है।

५. **'अपने–अपने गिरेबान'** – प्रस्तुत कहानी उच्चभ्रू कहलाने वाले वर्ग की पोल खोलती है जो आधुनिकता के नाम पर 'वाइफ-स्वैपी' जैसा खेल खेलते है और घर आकर पति-पत्नी दोनो ही एक दूसरे के प्रति एकनिष्ठ होने की कसमें खाते हैं ताकि घर की शांति बनी रहे।

६. **'इस हमाम में'** – 'दिवा' झाडूवाली बाई 'अंजा' से, उसके आत्मविश्वासी रुप से प्रभावित होती है। जो अपने पति से न बनने पर एक छोड़ तीन शादी करती है, कमा कर खाती हैं। जबकि वह पढीलिखी होकर भी पति 'सोमेश' के पुरुषी अंहकार से सदा आहत होती है। लेकिन 'अंजा' भी एक दिन पुरुष के अहम् के आगे हार जाती है। स्थान और व्यक्ति के बदलने से न पुरुष के दंभ मे परिवर्तन आता है न स्त्री की दुरावस्था में।

७. **'जरिया'** – देश की मायानगरी बंबई में आसरा पाने के लिए स्वार्थी लोग कैसे लेखिका को मंच के प्रति अपनी प्रतिबद्धता और उसकी लेखकिय प्रतिभा की तारिफों के पुल बांध उसी के घर में रहने का इंतजाम कर लेते है और बाद में उसकी रचनाओं पर नाटक, सीरीयल करने का नाम भी नहीं लेते।

८. **'होना संपादक की पत्नी – एक लेखिका का'** - यह व्यंग्यात्मक कहानी है। जिसमें लेखिका ने यह बताने का यत्न किया है कि अपनी रचनाएँ छपवाने के लिए संपादक पत्नी जो लेखिका भी है, को कैसे लोग सम्मान देने के लिए बुला कर अपना स्वार्थ साधते है।

९. **'लेन'** – 'महेन्दरी' अपनी गरीबी के कारण बेवजह उसके पति को छुरा मारने वाले को

पहचानने से इंकार कर उनसे पैसे ले लेती है। क्योंकि कोर्ट कचहरी करने से न पति की हालत सुधरेगी और न ही घर की। इन पैसों से वह घर की आर्थिक सुरक्षा के लिए झाडू मारने के लिए 'लेन' तो खरीद सकेगी।

३.२.५ 'जगदंबाबाबू गाँव आ रहे है'
नेशनल पब्लिशिंग हाऊस,
२३, दरियागंज, नई दिल्ली - ११० ००२.
प्रथम संस्करण १९९१

इस कहानी संग्रह में भी कुल नौ कहानियाँ है।

१. **'मुआवजा'** – 'शैलु' का पति उसकी मृत्यु के बाद मुआवजे की रकम पाना चाहता है। जबकि जब तक शैलु जीवित थी उसे उसने व उसके परिजनों ने मॉडलिंग करने पर उसके आत्मसम्मान को छला था और वे अनौपचारिक रुप से विभक्त हो गये थे।

२. **'सौदा'** – वेश्या व्यवसाय में दलालों के फैले जाल का उद्घाटन यह कहानी करती है। गाँव की लाचार लडकियों को काम दिलाने का लालच देकर देह-व्यापार में लगाया जाता है।

३. **'अभी भी'** – पायलट बेटे की मृत्युपरान्त बिजी चालाखी से उसकी विधवा का ब्याह दूसरे बेटे से कर देती है ताकि बेटे की मृत्यु से मिली राशी बाहर न जाने पाये। लेकिन समय रहते चेत जाने से 'शिल्पा' उनकी क्रूरता से बचने में सफल हो जाती है।

४. **'जगदंबाबाबू गाँव आ रहे है'** – स्वार्थी राजनीतिज्ञ कैसे गरीबों-अपंगो की भावनाओं से खेलते है इसका चित्रण इस कहानी में हुआ है।

५. **'ताशमहल'** – सौतेले बाप की क्रूरता का शिकार होते बचू की कहानी है 'ताशमहल'। एक अच्छा पिता और पति बनने का वचन देने वाला 'निशीथ' अपने बेटे के होते ही 'शुभू' के दोनों बच्चों में भेदभाव करने लगता है। शुभू के घर का सपना ताश के महल सा टूट गया।

६. **'प्रमोशन'** – स्त्री अपनी मेहनत से यदि पदोन्नती पाती है तो भी पुरुष को लगता है कि देह बीच में आये बगैर ऐसा हो नहीं सकता। क्योंकि स्वयं वे प्रमोशन चाहनेवाली स्त्री से देह की मांग करते है।

७. **'हस्तक्षेप'** – स्त्री की सही सामाजिक छवि के निर्माण के लिए दो भिन्न-भिन्न विचारधारा के टकराहट की कहानी है - 'हस्तक्षेप'। एक भारतीय परंपरा से जुडा है तो दूसरा पाश्चात्य विचारधारा पर आधारित है।

८. **'बेईमान'** – पढे-लिखे संपन्न लोग अखबार और पत्रिका रेल्वे स्टेशन पर बेचने वाले छोटे बालक के साथ बेईमानी का व्यवहार करते है। 'छटंकी' धीर-धीरे ऐसे सभ्य लोगों से ही बेईमानी सीखता है।

९. **'लकडबग्घा'** – सामंती विचारधारा वाले घरों में स्त्री को कोई स्थान नहीं होता और यदि पति न हो तो उसकी दशा नौकरानी से भी गयी गुजरी होती है। अपनी बेटी पुनिया के शिक्षा का प्रबन्ध चाहने वाली पछांह बहू लंबरदार के क्रोध का शिकार हो मार डाली जाती है और यह बात प्रचारित कर दी जाती है कि उसे लगडबग्घा उठा ले गया।

३.२.६ **'जिनावर'**
'किताब घर'
२४/८५५ - ५६, अंसारी रोड,
दरियागंज, नई दिल्ली - २.
प्रथम संस्करण, १९९५

इस कहानी में कुल अठ्ठारह कहानियाँ है। जिसमें बारह लघु कथाएँ है।

१. **'प्रेतयोनि'** – 'अनिता गुप्ता' बलात्कारी का साहस से सामना कर बच कर निकल आती है लेकिन परिवार की प्रतिष्ठा का प्रश्न बना कर सारी बातें गुप्त रखने के लिए उसे घरवाले घर में ही कैद कर देते है।

२. **'बाघ'** – 'बाघ' ऐसे स्वार्थान्ध लोगों की कहानी है जो साम्प्रदायिक ताकतों के प्रयोग से स्वयं का लाभ करना चाहते है। ऐसे लोग केवल अपने तक सीमित होते है और मानवीयता की भावना को नष्ट करते है।

३. **'सुख'** – ऐसी नौकरानी की कहानी है 'सुख' जो अपनी दैहिक मांग की पूर्ति के लिए वहीं काम करती है जहाँ पुरुष हो।

४. **'जिनावर'** – तांगा चलाकर जीवन निर्वाह करने वाला 'असलम' तब बेबस हो जाता है जब बूढी घोडी सरवरी गंभीर बीमारी से ग्रस्त हो जाती है। असलम उसकी मौत का भी सौदा कर लेता है। उसे कार से जानबूझ कर टकरा कर उसकी मौत का कार मालिक से पैसा ले वह अपनी गरीबी को पैबंद लगाना चाहता है लेकिन मन अपराध भावना से भर जाता है।

५. **'ऍन्टीक पीस'** – कहानी की माँ अपनी बहन की संपन्नता से अभिभूत लकवाग्रस्त पति की माँ की अंतिम निशानी पानदान भी अपने बहन के बेटे को भेंट स्वरुप दे देती है क्योंकि उसे ऐसे ऍन्टीक पीस बहुत पसंद है। माँ और बेटी के संघर्ष को कहानी में दर्शाया है।

६. **'स्टेपनी'** – नायिका जानती है कि घर की नौकरानी पति पर डोरे डालती है लेकिन घर और कार्यालय के कामों में व्यस्त नायिका को नौकरानी की सख्त आवश्यकता है। लेकिन स्टेपनी स्वरुप ली गयी नौकरानी कब घर का मुख्य चक्का हो जाती है पता ही नहीं चलता।

७. **'अढाई गज की ओढनी'** – दूरदर्शन के हनीमून के दृष्यों के बचों पर पडने वाले प्रभाव को इस कहानी में चित्रित किया है।

८. **'राक्षस'** – घर के बुजुर्ग अपने दोहरे व्यवहार से प्रश्नों को जन्म देते है। यूँ अगर कोई शराब पीये तो वह राक्षस है मगर घर बुलाकर साहब को यदि शराब दी जाती है तो साहब को राक्षस नहीं कह सकते।

९. **'गरीब की माँ'** – व्यंग्यात्मक लघुकथा है कि आर्थिक तंगी के कारण मकान का किराया न चुका पाने के कारण हर बार किसी के मर जाने की सूचना देकर मकान मालिक की सहानुभूति पाने का यत्न किया जाता है। इस फेर में नायिका तीन-तीन माँओं को मरवा देती है।

१०. **'रिश्ता'** – 'रिश्ता' एक ऐसी कर्तव्यदक्ष नर्स की कहानी है जो मानवीयता की भावना से सभी मरीजो का माँ की सी तत्परता से ध्यान रखती है।

११. **'व्यावहारिकता'** – दुनियाँ में व्यावहारिकता ऐसी बढ गयी है कि संपन्न श्रीमति मल्होत्रा पुराने कपडों पर बरतन खरीदती है तो श्रीमति पाण्डे की महरी भी उन्ही के दयावश दिये कपडे को देकर बरतन खरीदती है।

१२. **'रक्षक-भक्षक'** - हम पुण्य कमाने के लिए भिक्षुकों को दान देते है । लोगों की इस भावना को जानकर गुण्डे बच्चों को पकड अंधा, लंगडा, लूला बना उन्हें भिक्षा मांगने पर मजबूर करते है। रक्षक होकर भी हम भक्षक बन जाते है।

१३. **'ऐब'** - दहेज न लेना लोगों की निगाह में लडके के किसी ऐब को बताता है। उसकी आदर्शवादिता धरी रह जाती है।

१४. **'मानदण्ड'** - लोग दोहरे मानदण्ड अपनाते है। खुद के स्वार्थ के लिए नौकरानी की बीमारी छूत फैलाने नहीं लगती लेकिन यदि उस नौकरानी की सुविधा उसके काम में शामिल हो तो छूत-छात मानी जाती है।

१५. **'पत्नी'** - ऐसी पत्नियों पर व्यंग्य करती कहानी है जो अपने बेहुदे व्यवहार से पतियों का जीना हराम कर देती है।

१६. **'पहचान'** - कुछ ऐसी महिलाएँ होती है जो बिना टिकट सफर करती है और चेकर के पूछने पर पर्स चोरी होने का बहाना करती है। इसलिए जब सचमुच किसी के पास पर्स चोरी जाने के कारण टिकट नहीं होता तो चेकर उन्हें उन्हीं चोर महिलाओं सा समझता है।

१७. **'बोहनी'** - भिक्षुकों में भी भीख की बोहनी के प्रति अंधश्रद्धा होती है।

१८. **'प्राथमिकता'** - अर्थ केन्द्रीत समाज में रिश्तों की बजाय पैसा ही महत्वपूर्ण हो गया है। प्राथमिकता अर्थ की है, रिश्तों की नहीं।

३.२.७ 'चर्चित कहानियाँ'
सामयिक प्रकाशन,
३५४३, जटवाडा, दरियागंज, नई दिल्ली - २.
प्रथम संस्करण १९९१

इस कहानी संग्रह में चित्राजी की वे कहानियाँ संकलित की गयी हैं जो पाठकों और आलोचकों में सर्वाधिक चर्चित रही। ये कहानियाँ इस प्रकार से है -

'जगदंबाबाबू गाँव आ रहे है', 'अपनी वापसी', 'भूख', 'प्रेतयोनि', 'जिनावर', 'शिनाख्त हो गयी है', 'लकडबग्घा', 'पाली का आदमी', 'मामला आगे बढेगा अभी', 'दुलहिन', 'त्रिशंकु'।

३.३. बाल साहित्य :

चित्राजी ने बच्चों की सभी श्रेष्ठ पत्रिकाओं में बच्चों के लिए 'चिमू दीदी' नाम से लिखा है। साथ ही विशेष रुप से बच्चों के लिए उपन्यास और कहानी संग्रह लिखे हैं। उनका इस लेखन के पीछे यही लक्ष्य होता है कि इन कहानियों से बच्चों की समझ बढे। अपने बच्चों के लडाई-झगडे, आत्मसम्मान की टकराहट, शिकायतें, कमजोरियों आदि की प्रतिक्रिया स्वरुप उन्होंने बाल साहित्य लिखा।

उनका विधानुसार बाल साहित्य इस प्रकार से है -

३.३.१ बाल उपन्यास :

'माधवी-कन्नगी'
'किताब घर' २४, अंसारी रोड,
दरियागंज, नई दिल्ली - २.
प्रथम संस्करण १९९१

'माधवी-कन्नगी' तमिल महाकाव्य 'शिलप्पधिकारम्' पर आधारित बाल उपन्यास है। इस उपन्यास में नायक कोवलन, उसकी पत्नी कन्नगी और नर्तकी प्रेमिका माधवी के माध्यम से तत्कालीन धर्म, समाज और शासन का चित्रण बाल मनोविज्ञान को ध्यान में रखकर लिखा गया है। उपन्यास की भाषा सरल, सुबोध है।

३.३.२ बाल-कहानी संग्रह :

'जंगल का राज'
प्रभात प्रकाशन, चावडी बाज़ार,दरियागंज, दिल्ली - ६.
प्रथम संस्करण १९८७

इस कहानी संग्रह में बच्चों को मनोरंजन के माध्यम से समझ, आदेश देने का यत्न किया है।

'देश-देश की लोक कथाएँ' :
प्रभात प्रकाशन,
चावडी बाज़ार, दरियागंज, दिल्ली - ६.
प्रथम संस्करण -१९८७

इस कहानी संग्रह में कज़ाकिस्तान, चीन, मंगोलिया, हेन, तिब्बत, कोरिया आदि देशों में प्रचलित लोक कथाओं का संकलन किया गया है। इसमें कुल पन्द्रह कहानियाँ है।

नीति कथाएँ :

एन्.सी.ई.आर.टी. प्रकाशन,
अरविन्दो मार्ग, नई दिल्ली - २
प्रथम संस्करण, १९८८.

३.४. संपादित संकलन :

चित्राजी ने चार कहानी संग्रहों के संपादन का कार्य भी किया है। ये संकलन इस प्रकार है :-

१. 'असफल दाम्पत्य की कहानियाँ'

प्रभात प्रकाशन, चावडी बाज़ार, दिल्ली - ६
प्रथम संस्करण, १९८८

इस संकलन ऐसी कहानियाँ है जो असफल दांम्पत्य जीवन के अलग-अलग कारणों और आयामों को हमारे सामने प्रस्तुत करती है।

२. 'टूटते परिवारों की कहानियाँ'
प्रभात प्रकाशन, चावडी बाज़ार, दिल्ली-६
प्रथम संस्करण, १९८८

असफल दाम्पत्य की कहानियों की अगली कडी है टूटते परिवारों की कहानियाँ। असफल दाम्पत्य जीवन परिवार के विघटन का कारण बनते है। यदि स्त्री जो अबला भी है और पूज्य शक्ति रूपा भी है।वह कोई आवाज नहीं उठाती, मांग नहीं करती तो परिवार के टूटने की नौबत ही नहीं आती है। जब वह केवल 'औरत' के रूप में जीना चाहती है, तो परिवार टूटने लगता है।

३. 'दूसरी औरत की कहानियाँ'
प्रभात प्रकाशन, चावडी बाजार, दिल्ली-६
प्रथम संस्करण, १९८८

प्रस्तुत संकलन में 'दूसरी औरत' के सम्बन्ध में साहित्य की दृष्टि को तलाशने का कार्य किया है। 'दूसरी औरत' हमारे समाज में हमेशा रही है। खासकर अनमेल विवाह, बाल विवाह के कारण 'दूसरी औरत' की उपस्थिती त्रासदी पैदा करती है।

४. **'पुरस्कृत कहानियाँ'**
संतोष प्रकाशन,
जी-१८९ सैक्टर ३२, गाजियाबाद, यू.पी.
प्रथम संस्करण, १९८७

प्रस्तुत संकलन में युवा रचनाकारों की उन रचनाओं को संकलित किया है जो कहानी पत्रिकाओं में पुरस्कृत हुयी हैं। युवा स्पंदनों को, सोच को एक मंच देने का प्रयास यह संकलन है।

३.५ कविताएँ :

चित्राजी ने अपने लेखन का श्री गणेश कविताओं से ही किया था। लेकिन फिर वे कहानी लेखन की ओर मुड गयी। उनकी कविताएँ लहर, ज्ञानोदय, नवभारत टाइम्स आदि में छपती थी। उनका कोई स्वतंत्र कविता संग्रह नहीं है। उन्होंने बच्चों के लिए विशेष रूप से कविताए लिखी है। उनकी बाल कविताओं की कुछेक पक्तियाँ इस प्रकार से है -

१. मुझ से नहीं पूछता कोई ...
चाहे हो पिक्चर जाना
चाहे हो पकाना खाना
चाहे हो कपडे सिलवाना
चाहे हो पिकनिक जाना
मैं अक्सर मन ही मन रोई
मुझसे नहीं पूछता कोई ।

२. एक दोपहर गुड्डू भैया ने
पाया जब घर खाली
टूट पडे मेरी गुल्लक पर
खोज निकाली ताली
....
....
रो-रो कर गुड्डू भैया तब
लगा मांगने माफी
पंतग उडाने के पीछे बस
सबक यही है काफी

३. ‘बिट्टू की शिकायत’
धर्मयुग के संपादक अंकल
गुस्सा नहीं आप पर है कम
हम बच्चों की सामग्री को
देते है क्यों पीछे हरदम?

४. एक रात को बोली चुहिया
लगी है मुझ को कस कर भूख
नहीं मिला जो कुछ खाने को
प्राण जायेंगे मेरे सूख ...

उनकी पत्र पत्रिकाओं में प्रकाशित व कुछ हस्तलिखित कविताओं को परिशिष्ट - १ में दिया है।

३.६ नाटक :

‘एक प्रश्न’ नाटक मुंबई दूरदर्शन के लिए लिखा।

३.७ कहानियों पर बनी टेलीफिल्म :

बावजूद इसके, अभी भी, रूना आ रही है, सौदा कहानियों पर टेली-फिल्म बन चुकी हैं। ‘प्रेतयोनि’ कहानी पर फिल्म ‘आबरू’ का निर्माण किया गया है। दिल्ली दूरदर्शन के लिए परिवार नियोजन पर आधारित ‘वारिस’ का लेखन व निर्माण किया है।

३.८ विविध :

१. मराठी, गुजराती भाषा से कई कहानियों के अनुवाद किये है।

२. हिन्दी, गुजराती और मराठी की प्रमुख पत्रिकाओं जैसे - ‘पराग’, ‘सूर्या इंडिया’, ‘महाराष्ट्र टाइम्स’, ‘जन्मभूमि,’ ‘साप्ताहिक हिन्दुस्थान’, ‘नवभारत टाइम्स’, ‘निखालस’, ‘श्री’, आदि में ‘चिमु’ के नाम से स्तंभ लेखन ।

३. ७८ से ८१ टाइम्स ऑफ इंडिया की फिल्म पत्रिका ‘माधुरी’ की आमुख कथा लेखिका।

४. उनकी लिखी शृखंला ‘तहखानों में बंद आइनों के अक्स ’ बहुत चर्चित रही।

४. समाज सेवा :

लेखन के अतिरिक्त वे समाजसेवा में भी रूचि रखती है। सन् ६३ से ६५ तक वे भांडुप (मुंबई) में दत्ता सामंत की कामगार युनियन से सम्बद्ध थी। सन् १९६८ ते ८२ तक समाज कल्याण में संलग्न संस्था 'स्वाधार' की सक्रिय कार्यकर्ता रही।

५. पुरस्कार :

चित्राजी को कई पुरस्कारों से सम्मानित किया जाता रहा है। उन्हे प्राप्त महत्वपूर्ण पुरस्कार इस प्रकार है :-

१. **'साहित्य कृति पुरस्कार'** – हिन्दी अकादमी, दिल्ली द्वारा 'इस हमाम में' कथासंग्रह को वर्ष १९८६ में ।

२. **'बाल साहित्य कृति पुरस्कार'** : हिन्दी अकादमी, दिल्ली द्वारा 'जंगल का राज' बाल कथा संग्रह को वर्ष १९८७ में ।

३. **'राजाराधिकारमण प्रसाद पुरस्कार '** : बिहार राजभाषा विभाग द्वारा 'ग्यारह लम्बी कहानियाँ' कथा संग्रह को वर्ष १९८७ में।

४. **प्रेक्षा पुरस्कार** : वर्ष १९८६ में

५. **'रेणू पुरस्कार'** : ग्रामीण विकास परिषद द्वारा 'एक जमीन अपनी' उपन्यास को वर्ष १९९४ में ।

६. सम्मान :

१. १९८० में फिल्म, कला, संस्कृति के क्षेत्र में दिया जाने वाला 'आशीर्वाद पुरस्कार' में बतौर जुरी।

२. १९८१ में 'अखिल भारतीय नाट्य स्पर्धा, नागपूर' में बतौर जुरी।

३. ५ सितम्बर १९९० को 'महात्मा गांधी प्रतिष्ठान', मॉरीशस द्वारा भारतीय प्रतिनिधि महिला कथाकार के रूप में आमंत्रित।

४. एन.सी.ई.आर.टी की 'वीमेन्स् स्टैडीज युनिट' में १९८९ से १९९३ तक अनेक प्रोजक्टों में बतौर एक्स्पर्ट जुडी रहीं।

५. 'साहित्य सम्मान १९९३', सर्वहारा आर्टस् की ओर से।

६. 'भारतीय भाषा परिषद की पत्रिका' 'संदर्भ भारती' द्वारा 'भूख' कहानी का चौदह भारतीय भाषाओं में से हिन्दी की प्रतिनिधि कहानी के रूप में चयन।

७. ओसाका विश्वविद्यालय में हिन्दी पाठ्यक्रम में 'ग्यारह लम्बी कहानियों' का चयन १९८९ में।

८. नेशनल बुक ट्रस्ट के 'ऑपरेशन ब्लेक बोर्ड' १९९६ के लिए बतौर एक्सपर्ट इत्यादि।

७. निष्कर्ष :

गरीमा पूर्ण व्यक्तित्व की धनी विदुषी चित्रा मुद्गल सौजन्य की प्रतिमूर्ति है। अपने पिता के घर जहाँ उन्होंने संपन्नता का जीवन जीया वहीं श्री अवध नारायण मुद्गलजी के साथ विजातीय विवाह कर तंगी के दिन भी देखे। जहाँ महलों की शान देखी वहीं चाल के दस बाई दस के कमरे में ही असुविधाओं को भोगते हुए संघर्षमय जीवन बीताया। 'जागरण' और 'स्वाधार' के अनुभवों ने उनकी सोच को व्यापक बनाया। इसलिए उनका लेखन यथार्थ लगता है। वे वातानुकूलित कमरों के कल्पनाजन्य जनवाद की बात नहीं करती। न ही 'आम आदमी' की रट लगा कर शोषण का भयानक चित्र उपस्थित करती है। चित्राजी की रचनाएँ वर्तमान समय के बहुमुखी संदर्भों से जुडी हुई है और मनुष्य की प्राथमिक आवश्यकताओं से जुडी हुई है। वे एक सुलझी हुई, संवेदनशील कथा लेखिका है।

• • •

द्वितीय अध्याय

हिन्दी कथा साहित्य का संक्षिप्त परिचय

द्वितीय अध्याय

हिन्दी कथा साहित्य का संक्षिप्त परिचय

१. भूमिका :

सुनता हूँ बडे गौर से हस्ती का फसाना।

कुछ ख्वाब है कुछ अस्ल है कुछ तर्जे बयाँ है ॥

कहानी के सम्बन्ध में यह कथन बहुत ही सटीक है। कहानी में वास्तविकता, कल्पना और कहने का ढंग यानि शैली तीनों का संतुलित समन्वय होता है। कहानी उतनी ही पुरानी है जितना मनुष्य । कहानी मनुष्य जीवन का अभिन्न अंग है। सृष्टि का प्रत्येक तत्व कहानी का विषय है। राजा-रानी, राजकुमार, जादूगर, पशु-पक्षी, राक्षस-देव, चाँद-सूरज, नौकर-मालिक, परियाँ-देवदूत, अमीर-गरीब, डाकू-लुटेरे, साधू-फकीर, नदी-पर्वत, दोस्त-दुश्मन, ईमानदार-बेईमान, बच्चे-बूढे सभी कहानी से जुडे हैं। घर-परिवार, माया-ममता, स्नेह, प्रेम, श्रध्दा, मित्रता, शत्रुता, लज्जा, ग्लानि, नफरत, नीति-अनीति, हिंसा-अहिंसा, त्याग, विवेक, गर्व-अहंकार आदि-आदि सारे भाव कहानी का विषय बन सकते हैं। संक्षेप में हमारा संपूर्ण जीवन कहानी से घिरा है।

भारत में कहानी का इतिहास सैकडों वर्ष पुराना है। इसका आरंभ उपनिषदों की रूपक कथाओं, महाभारत के उपाख्यानों तथा बौध्द साहित्य की जातक कथाओं में देखा जा सकता है। साहित्यिक कथाओं का मूल लोक कथाओं में है। पंचतंत्र, हितोपदेश जैसे संस्कृत ग्रंथों में पशु-पक्षियों के माध्यम से मानव-नीति के उपदेश दिये गये हैं। इनका उद्देश्य मनोरंजन व उपदेश था।

२. आधुनिक काल में हिन्दी कहानी का विकास : दशा और दिशाएँ :

कहानी का आधुनिक रूप प्राचीन कथा से भिन्न है। आधुनिक कहानियों में वर्तमान को यथार्थता के धरातल पर विश्लेषित किया गया है। हिन्दी की पहली मौलिक कहानी कौन सी है ? यह अब तक भी विवाद का विषय है। आचार्य शुक्ल हिन्दी की पहली मौलिक कहानी किशोरीलाल

गोस्वामी की 'इन्दुमती' को मानते है, जो सन् १९०० में 'सरस्वती' में प्रकाशित हुई थी।[1] पं. माधवराव सप्रे की कहानी 'एक टोकरी भर मिट्टी' को कुछ विद्वान प्रथम मौलिक कहानी मानते है। यह कहानी १९०० में 'छत्तीसगढ मित्र' में छपी थी। आधुनिक हिन्दी कहानी के शुरूआती दौर में मास्टर भगवानदास की १९०२ में रचित 'प्लेग की चुडैल', आचार्य शुक्ल की १९०३ में रचित 'ग्यारह वर्ष का समय', गिरीजादत्त वाजपेयी की १९०३ में रचित 'पंडित और पंडितानी', बंग महिला द्वारा १९०७ में रचित 'दुलाई वाली' आदि कहानियाँ आती हैं। इनके पूर्व भी कहानी लिखी जाती रही थी। जैसे सन् १८०७ में इंशा अल्ला खाँ की 'रानी केतकी की कहानी', सन् १८५६ में राजा शिवप्रसाद सितारे हिंद की 'राजा भोज का सपना', सन् १८५८ में भारतेन्दू की 'एक अद्‌भूत अपूर्व स्वप्न' आदि, लेकिन इन्हें आधुनिक कहानी नहीं कहा जा सकता।

आधुनिक कहानी का आरंभ सन् १९०० से माना जा सकता है। 'सरस्वती' और 'इन्दू' में मौलिक हिन्दी कहानियाँ प्रकाशित होती थी। इस आरंभिक युग के कहानीकारों में चन्द्रधर शर्मा 'गुलेरी', प्रेमचंद, विश्वंभरनाथ शर्मा 'कौशिक', जयशंकर प्रसाद, सुदर्शन, चण्डीप्रसाद हृदयेश, विनोदशंकर व्यास, राजा राधिकारमणप्रसाद सिंह, चतुरसेन शास्त्री, निराला आदि प्रमुख रूप से उल्लेखनिय हैं। इस युग की पत्रिकाओं में सरस्वती, इंदू, सुधा, माधुरी, चाँद, अभ्युदय प्रमुख हैं , जिनमें कहानी को उचित स्थान प्राप्त हुआ।

कहानी के विकास में प्रेमचंद का अपूर्व योगदान रहा। उनका लेखन यथार्थवादी होते हुए भी आदर्श को साथ लेकर चलता था। प्रेमचंद के लेखन का ऐसा प्रभाव था कि विकास काल के लगभग सभी लेखकों पर उनका प्रभाव दिखाई देता है। कहानी जगत में प्रेमचंद के समान ही एक और प्रतिभाशाली व्यक्तित्व प्रसाद जी का था। उनकी कहानी कला भी अपने ढंग की थी। तत्कालीन महिला लेखिकाओं ने भी कहानी के विकास में योगदान दिया। इनमें बंग महिला, उषादेवी मित्रा, होमवतीदेवी, सुभद्राकुमारी चौहान, शिवरानी देवी, कमला चौधरी आदि के नाम उल्लेखनीय हैं।

---

१. हिन्दी साहित्य का विवेचनात्मक इतिहास - राजनाथ शर्मा, पृष्ठ ८५७

प्रेमचंद के पश्चात कहानी का विकास अबाधित रूप से होता रहा। कहानी में कोरा उपदेश या मनोरंजन ही नहीं रहा। उसमें मानव-जीवन की समस्याएँ उद्घाटित होने लगी। पात्र जनसामान्य से चुने जाने लगे। मानव-जीवन को मनोवैज्ञानिक ढंग से देखा परखा जाने लगा। कहानी में बाह्य जगत के चित्रण के साथ ही मानव-मन के मनोजगत को भी उद्घाटित किया जाने लगा। द्वंद्व के चित्रण में सजीवता आने लगी। कहानी में संवेदना, सजीवता, मार्मिकता, गंभीरता, प्रसंगानुरूप व्यंग्य-विनोद के साथ ही शैली की विशिष्टता और भाषा की विविधता और चरित्राकंन की सूक्ष्म दृष्टि आ गयी। सन् १९४० से लेकर स्वतंत्रता प्राप्ति तक का समय संक्रमणकाल कहा जा सकता है। तद्नंतर कहानी में अनेक कहानी आंदोलनों का प्रादुर्भाव हुआ। ये आंदोलन कहानी को वैचारिक दृष्टि से नये आयाम देते रहे।

२.१ हिन्दी कहानी आंदोलनों की पृष्ठभूमि और परिस्थितियाँ :

इन आंदोलनो को जानने से पहले तत्कालिन परिस्थितियों को समझना अत्यंत आवश्यक हो जाता है कि जिनमें ये विभिन्न आंदोलन उभरे। क्योंकि साहित्य का सृजन समाज के बीच रचे बसे लेखक द्वारा समाज के बीच ही होता है। अत: रचनाकार की कृति पर समाज का प्रभाव निश्चित रूप से पडता है। आधुनिक युग के विभिन्न कहानी आंदोलन जिन वैचारिक दृष्टिकोणों को लेकर आये उनके निर्माण में भी तत्कालिन समाज की राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक और सांस्कृतिक परिस्थितियों का योगदान अवश्य रहा होगा। अत: इन आंदोलनों के समय की विभिन्न परिस्थितियों को संक्षेप में जान लेना आवश्यक हो जाता है।

२.१.१ राजनीतिक परिस्थितियाँ :

द्वितीय महायुध्द के पश्चात भारत को स्वतंत्रता प्राप्त हुई। द्वितीय महायुध्द के दुष्परिणामों को भोगने के साथ ही स्वतंत्र भारत विभाजन के दु:ख को भी सहने के लिए अभिशप्त था। हिंदू-मुस्लिम जो आज तक सगे भाइयों की तरह रहते थे, अब एक दूसरे के रक्त के प्यासे हो गये। साम्प्रदायिक तनाव निरंतर बढता रहा। विस्थापितों और शरणार्थियों की समस्या मुँह बाये खडी

13846

थी। 'भाग्य के मारे इन शरणार्थियों में धनी और निर्धन सभी वर्गो के व्यक्ति थे, जो एक दिन में अपना वैभव खोकर लुटे-पिटे, निरीह बना दिये गये थे, जिनका भविष्य अनिश्चित था।'[1] स्वतंत्रता आंदोलन में कॉंग्रेस की भूमिका अहम् रही थी। वही प्रमुख राजनीतिक पार्टी के रूप में राष्ट्रीय कॉंग्रेस के नाम से देश की राजनीतिक धूरा को संभाले थी। देश में जनतंत्र को लाने में उसका महत्वपूर्ण योगदान रहा। उसने विस्थापितों शरणार्थियों की समस्या को हल करने के पूरे प्रयत्न किये। स्वतंत्रता आंदोलन के समाप्ति के साथ ही सामान्य जनता राजनीतिक दृष्टिकोण से जागरूक होने लगी थी। देश में कॉंग्रेस के अतिरिक्त अन्य विचारधाराओं और सिद्धांतो वाले राजनीतिक संगठनों का गठन होने लगा।

स्वतंत्र भारत अभी-अभी ही अपने पैरों पर खडा हुआ था कि सन् १९६२ में चीन ने भारत पर आक्रमण कर दिया। जिसने न केवल भारतीय स्वाभिमान को धक्का पहुँचाया बल्कि उसके मनोबल को भी घटाया। कुछ वर्षो पश्चात सन् १९६५ में पाकिस्तान ने भी भारत पर आक्रमण करने की गुस्ताखी की, लेकिन इस बार भारत विजयी रहा और उसका टूटता मनोबल पुन: बढा। सन् १९७२ में पाक दो हिस्सों में बँट गया जो भारतीय राजनीति की विजय को बताता है। भारत की विदेश नीति मित्रता, सद्‌भाव, शांति,सहअस्तित्व पर आधारित थी। डॉ. ईश्वरी प्रसाद के शब्दों में 'यह तो भारत की परंपरागत,सच्ची,अहिंसक और निर्भीक नीति थी जिसके आदर्शों का शिलान्यास गांधीजी के सिद्धांतों पर हुआ था।'[2]

सन १९४८ में महात्मा गांधीजी की हत्या हुई। गांधीजी के आदर्शों और नीतियों पर चलनेवाले नेतागण अब व्यक्तिगत स्वार्थों में लिप्त हो गये। राजनीति में मूल्यहीनता और आदर्शहीनता बढने लगी। राजनीति जनसेवा न रहकर व्यवसाय और व्यापार में परिणीत हो गयी। देश में अव्यवस्था बढ गयी। फलस्वरूप भाषा, प्रांत, क्षेत्र और सम्प्रदाय के नाम पर आये दिन दंगे होने लगे। 'राजनीति परिवेश में अवसरवादिता, स्वरति, स्वार्थांधता, बेईमानी और भ्रष्टाचार ने

१. नई कहानी - श्री वी.पी. मेनन - मीरा सीकरी, पृष्ठ २४
२. हिन्दी कहानी - उद्‌भव और विकास - डॉ. सुरेश सिन्हा, पृष्ठ ५४७

गहरी अव्यवस्था पैदा कर दी। 'समाजवाद' और 'गरीबी हटाओं' के नारे खोखले हो गये। नेताओं के रूप में नये सामंत पैदा हो गये। चारों ओर अव्यवस्था अनुशासनहीनता, दायित्वहीनता, कार्यअकुशलता, खोखली नारेबाजी ने गांधीजी के रामराज्य को स्वप्न बना दिया।'[१] अर्थात राजनीतिक परिस्थितियाँ स्वार्थ, भ्रष्टाचार और अव्यवस्था से पूरित थी।

२.१.२ सामाजिक परिस्थितियाँ :

स्वतंत्रता के पूर्व ही भारतीय समाज अंग्रेजी संस्कृति के संपर्क और प्रभाव से आधुनिक होने लगा था। सामाजिक स्थितियों को जानने के लिए समाज और उसकी इकाईयाँ जैसे परिवार , ग्राम, नगर, जाति और वर्ण व्यवस्था, समाज व व्यक्ति के पारस्परिक सम्बन्ध आदि का विश्लेषण करना होगा। साथ ही धर्म तथा राजनीति की भूमिका, आधुनिकीकरण और औद्योगिकरण का व्यक्ति और समाज पर होनेवाले प्रभाव को भी विवेचित करना होगा तभी स्पष्ट रूप से सामाजिक स्थितियाँ प्रकट हो पायेंगी।

भारतीय परिवार व्यवस्था परंपरा प्रिय रही है। मूलत: संयुक्त परिवारों की व्यवस्था भारतीय समाज में रही है। किन्तु आधुनिकता के प्रभाव स्वरूप संयुक्त परिवार बिखरने लगे और छोटे परिवारों का निर्माण शुरू हुआ। वस्तुत: संयुक्त परिवारों के विघटन के प्रमुख कारण आर्थिक और शहरीकरण का प्रभाव थे। जैसी विघटन की स्थिति नगरों में थी वैसे ही गाँवो में भी संयुक्त परिवारों का विघटन हो रहा था। 'एम्.एन. श्रीवास्तव ने नेशनल सेंपिल सर्वे को करते हुये कहा है कि भारतीय समाज में एक परिवार के सदस्यों की औसत संख्या ५२ हैं। सामान्य रूप से भूमिहीन श्रमिकों के परिवार छोटे है। यहाँ तक कि उनके सदस्यों की संख्या औसत संख्या से भी न्यून है। अत: इससे स्पष्ट होता है कि ग्रामों में भी, जहाँ संयुक्त परिवार व्यवस्था के स्थायित्व की बात की जाती है, भूमिधर वृहद् परिवारों की संख्या न्यून और भूमिहीन लघु परिवारों की संख्या अधिक है।'[२]

---

१. हिन्दी कहानी : बदलते प्रतिमान - डॉ. रघुवरदयाल वार्ष्णेय, पृष्ठ १२१.
२. स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी कहानी में मानव प्रतिमा - हेतु भारद्वाज, पृष्ठ ४६

स्वातंत्र्योत्तर काल में नारी की स्थिति में भी तेजी से परिवर्तन आया। आर्थिक कारणों से उसे जीविकोपार्जन के लिए घर से बाहर निकलना पडा। उसके दायित्व और भी बढ गये। जहाँ घर और बाहर की जिम्मेदारी उस पर पडी वहीं नये और पुराने संस्कारों और परम्पराओं के संघर्ष को भी उसे झेलना पडा। साथ ही प्रगत समाज में अपने अस्तित्व रक्षा के लिए भी निरंतर संघर्षरत रहना पडा। स्वावलंबन और आधुनिकता के परिणामस्वरूप प्रेम, विवाह, यौन सम्बन्ध आदि के बारे में उसका दृष्टिकोण परिवर्तित होने लगा और यौन सम्बन्धों की पवित्रता और मूल्य जैसे शब्द उसके लिए थोथे हो गये। पति-पत्नि के सम्बन्धों में भी बहुत बदलाव आये। समाज में अब तक वर्ज्य प्रेम-विवाह, विधवा-विवाह, अन्तर्जातिय-विवाह आदि को अब समाज में मान्यता प्राप्त होने लगी।

भारतीय समाज में जातिगत-व्यवस्था में भी लक्षणीय परिवर्तन आया। जाति के आधार पर कर्म का निर्धारण होना समाप्त हो गया। औद्योगिकरण व शहरीकरण के कारण विभिन्न व्यवसायों की उपलब्धता बढी और लोगों ने जातियों की सीमाएँ त्याग कर विभिन्न व्यवसायों को अपनाना आरंभ कर दिया। जातिगत कट्टरता समाप्त होने लगी। अन्तर्जातिय रोटी-बेटी व्यवहार होने आरंभ हो गये। पाश्चात्य विचारधारा, शिक्षा-दिक्षा के फलस्वरूप भारतीय समाज उदार, धर्मनिरपेक्ष और प्रजातांत्रिक मूल्यों का पक्षधर होने लगा। लेकिन यह सामाजिक उदारता अभी तक व्यक्ति स्तर पर थी, पारिवारिक दृष्टि से व्यक्ति अभी भी धर्म तथा जाति से ऊपर नहीं उठा था। अर्थात आज का व्यक्ति द्वंद्व के दौर से गुजर रहा था।

राजनीति में सामान्य जनता को महत्वपूर्ण स्थान मिला। चुनाव प्रक्रिया के दौरान जाति-समुदायों की सक्रियता स्पष्ट रूप से दिखायी देने लगी। जातिगत समुदायों का प्रभाव चुनाव पर पडने से समस्याएँ भी उत्पन्न होने लगी। जहाँ चुनाव में जाति प्रभावशाली थी, वही समाज में वर्ग को मान्यता थी। मध्यवर्ग समाज में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहा था। वही सबसे जागरूक वर्ग रहा। मध्यवर्ग का संघर्ष अस्तित्व रक्षा के लिए था ही साथ ही पूँजीपति और श्रमिक के बीच के असंतुलन के विरोध में भी था।

स्वातंत्र्योत्तर काल में धर्म और नैतिकता के बंधन ढीले हुए। विश्वस्तर पर भी धर्म से अधिक राजनीति को महत्व प्राप्त हुआ क्योंकि राजनीति में मानव मुक्ति की चिंता को प्रमुखता थी। राजनीति धर्म का पर्याय बन गयी थी । लेकिन यह भावना अधिक समय नहीं रही। राजनीति मूल्यहीन होकर व्यवसाय बन गयी तो धर्म अंधविश्वास का पर्याय बन गया। दर्शन और अध्यात्म में लोगों की रूचि कम हुई। भारत-पाक विभाजन के मध्य हुए अमानवीय कृत्यों के कारण मूल्य टूटे, समाज दिशाहीन हो गया। पाश्चात्य जीवन पद्धति को भारतीय समाज ने अनुकरणीय माना क्योंकि 'आज का भारतीय एक लंबी दासता के बाद स्वातंत्र्योत्तर काल में जीवन जीने के बावजूद दास मनोवृत्ति का ही शिकार है और पश्चिमी आचार व्यवहार को अधिक गर्व से देखता है । अपनी उपयोगी भारतीय परंपराएँ भी उसे अपमानजनक प्रतित होती हैं।'[1] इस प्रकार हम देखते हैं कि स्वातंत्र्योत्तर काल का भारतीय मानव विदेशी विचारधारा के प्रभाव से मुक्त नहीं हैं वरन् उस मानसिकता का वह गुलाम है, जिसे त्यागने के लिए ही स्वतंत्रता के पूर्व संघर्ष किये गये थे।

२.१.३ आर्थिक परिस्थितियाँ :

स्वातंत्र्योत्तर युग में आर्थिक दृष्टि से भी बहुत परिवर्तन हुए। स्वतंत्रता के कारण हर क्षेत्र में जागरण आया। परिणाम स्वरूप भारतीय जनता भी आर्थिक दृष्टि से जागृत हुई। नये संविधान ने भारतीय नागरिक को आत्मनिर्भर बनाने के लिए प्रयत्न किये। सोवियत संघ की आर्थिक प्रगति से प्रेरणा पाकर भारत ने भी योजनाबद्ध तरीके से आर्थिक योजनाओं का निर्माण किया। इसी के अन्तर्गत पंचवार्षिक योजनाएँ बनायी गयी। ग्रामोद्योग का विकास किया गया। कृषि के क्षेत्र में विकास हुआ। प्रति व्यक्ति की आय बढी। फलत: राष्ट्रीय संपत्ति की वृद्धि भी हुयी। अत्याचारी जमींदारी प्रथा का उन्मुलन किया गया। भूमि सुधार कानून बने, जिससे किसानों को राहत मिली। अनेक रियासतों में बंटा भारत अब संगठित हो गया। रियासतों का स्वतंत्र भारत में विलय हुआ। राजा-महाराजाओं के अधिकार समाप्त हो गये। सहकारी संगठनों के निर्माण और संरक्षण में सरकार

---

१. आधुनिक कहानी का परिपार्श्व - डॉ. लक्ष्मीसागर वार्ष्णेय, पृष्ठ १९

ने रूचि दिखायी । उन्हें आर्थिक सहायता और अनुदान दिये गये। बैंको का राष्ट्रीयकरण किया गया।

सरकार की सारी सदिच्छाओं और प्रयत्नों के बाद भी देश में आर्थिक समृद्धि नहीं आने पायी। अनेकानेक समस्याएँ सुरसा की तरह मुँह फैलाएँ खडी थी और बेरोजगारी, गरीबी, महंगाई बढ रही थी। अंग्रेजी शिक्षा नीति के परिणाम स्वरूप मजदूरों से ज्यादा इंजिनियर निर्मित हो चुके थे। बढती जनसंख्या के संकट के कारण आर्थिक असंतुलन बढा। भ्रष्ट राजनीति के कारण भी योजनाएँ सफल नहीं हो पायी । 'ग्रामोद्योग के नाम पर औद्योगिकरण प्रारंभ हुआ, पंचवर्षीय योजनाएँ बनी। जिससे पब्लिक सेक्टर का माल प्रायवेट सेक्टर में चला गया। हरिजनों और अछूतों की नियुक्तियाँ निश्चित हुयी। उन्होंने भी दास्य कर्म छोडकर स्वामी कर्म करना शुरू कर दिया और कबीर, तुलसी, गांधी के राम से व्यापक राम की उत्पत्ति हुयी। यह आराम राम बन गये।.... काँग्रेस में प्रजातंत्र का पर्याय समाजवाद आया जो कि बैंको की तिजोरियों से प्रारंभ किया गया।'[१] स्वतंत्रता के पश्चात जो शासन व्यवस्था अपनायी गयी वह पूँजीवाद की पोषक थी जिससे अमीर और अमीर हो रहे थे और गरीब और गरीब। औद्योगिकरण के कारण श्रमिक संघठन के रूप में नया वर्ग सम्मुख आया। पूंजीपति और श्रमिक संघर्ष एक नये वर्ग संघर्ष के रूप में सामने आया। यह सब मार्क्सवादि विचारधारा के प्रभाव से हो रहा था। आर्थिक बदहाली, विषमता और आर्थिक असंतुलन ने व्यक्ति के मन में असुरक्षा की भावना उत्पन्न कर दी। असुरक्षा की इस भावना ने सामाजिक और पारिवारिक सम्बन्धों को भी आहत किया । भारत पाक विभाजन में स्थलांतरित जनता, शरणार्थीयों ने भी भारतीय अर्थव्यवस्था को प्रभावित किया।

२.१.४ सांस्कृतिक परिस्थितियाँ :

भारतीय धर्म और संस्कृति अत्यंत प्राचीन और समृद्ध है। वह उच्च आदर्शों और जीवनमूल्यों पर आधारित हैं। दूसरे महायुध्द ने मनुष्य की जीवननिष्ठा, नैतिकता, आदर्शपरकता,

---

१. नई कविता - रचना प्रक्रिया - ओम प्रकाश अवस्थी, पृष्ठ ९

मानवीयता की भावना को आहत किया। मनुष्य जीवन की क्षणभंगुरता के भय से स्वंय तक सीमित हो गया। यह स्थिति विश्वभर में थी तो भारत इससे कैसे अछूता रहता ? जबकी उसने महायुद्ध की विभीषिका के साथ ही भारत पाक विभाजन के विदारक दु:ख को भी भोगा था। 'वसुधैव कुटुंबकम्' के आदर्श पर चलनेवाले राष्ट्र को ही अपने टुकडे होते देखना पडा और विभाजन की घटनाओं के दौरान भाई-भाई के रक्तसंहार को सहना पडा। 'यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवता:' कहने वाले भारत को नारी की विटंबना देखनी पडी। देश विभाजन, स्थलांतर, नरसंहार, शरणार्थियों की दशा ने भारतीय नैतिकता को तोडकर रख दिया। नैतिक और सामाजिक मूल्यों का तेजी से विघटन हुआ।

भारतीय जनमानस अपनी संस्कृति से दूर होता जा रहा था। पाश्चात्य देशों में हुयी वैज्ञानिक प्रगति ने मनुष्य के दृष्टिकोण को भी वैज्ञानिक और भौतिकवादी बना दिया। भारतीय दर्शन, अध्यात्म, रहस्यभावना तथा अमूर्त विषयों को वह साशंक दृष्टि से देखने लगा। भारतीय ह्रासोन्मुख समाज को पाश्चात्य बाह्य स्वतंत्रता, भौतिकता ने आकर्षित किया। मनुष्य पर बौद्धिकता का प्रभाव तो बढा पर धर्म, ईश्वर पर से उसकी आस्था उठने लगी। अनेक पाश्चात्य विचारों का प्रभाव भारतीय विचारधारा पर पडने लगा। देश में मार्क्स, फ्रायड, सार्त्र, कीर्केगार्द जैसे विचारों के दर्शन पर चिंतन मनन होने लगा। मनुष्य को सर्वाधिक महत्व प्रदान कर उसके मनोजगत का अध्ययन होने लगा।

पश्चिमी विचारकों के प्रभाव स्वरूप भारतीय संस्कृति की प्रासंगिकता निरर्थक-सी लगने लगी। यद्यपि स्वतंत्रता पूर्व ही आधुनिकीकरण आरंभ हो गया था तथापि स्वातंत्र्योत्तर काल में इसमें तीव्रता आयी। औद्योगिकरण ने भारतीय समाज और संस्कृति पर व्यापक प्रभाव डाला। डॉ. धनंजय वर्मा के शब्दों में ''औद्योगिक क्रांति और अणु युग की दुर्दमनीय परिस्थितियों ने प्राचीन संस्कृति और आधुनिकता के प्रति द्वंद्व ने हमारे भावन, चिंतन और आचरण में एक नई संस्कृति उपस्थित कर दी।''[१] भारतीय संस्कृति धीरे-धीरे पश्चिमी संस्कृति से प्रभावित हो रही थी।

---

१. आधुनिकता - टुटती हुई भारतीय संस्कृति - डॉ. धनंजय वर्मा, 'बिंदू' अक्तूबर - दिसम्बर १९६७, पृष्ठ ८६०

औद्योगिकरण ने भी भारतीय संस्कृति को प्रभावित किया। 'उद्योगों के कारण लोग शहरों की ओर आने लगे, उन्हें परिवारों को छोडकर नये जीवन में प्रवेश करना पडा। पूंजीपतियों के अनैतिक हथकंडो का आभास उन्हें मिला। श्रमिक वर्ग ने वह देखा, जो अब तक नहीं देखा था।'[१] फलत: देश के सांस्कृतिक जीवन में निराशा और विषमता दिखाई देने लगी। शहरीकरण और महानगरीयकरण ने पारंपारिक भारतीय संस्कृति पर व्यापक प्रभाव डाला। वहाँ की व्यस्त जीवन शैली ने अपरिचय, भय, संत्रास, कुंठा, एकाकीपन जैसी अनेक त्रासदियों को जन्म दिया। जिसके परिणाम स्वरूप सारा समाज, राष्ट्र और संस्कृति प्रभावित हुई ।

२.२ विभिन्न कहानी आंदोलन :

स्वतंत्रता के पश्चात हिन्दी कहानी के विकास में विभिन्न आंदोलनों का जन्म हुआ। यह विकास आकस्मिक नहीं था। स्वातंत्र्योत्तर काल में भारतीय समाज के तीव्र विकास के साथ कहानीकार भी अपनी अनुभूति और चेतना का विकास करते रहे। विशेष बात यह यह है कि कहानी केन्द्रिय विधा बन गयी । इसके विकास में 'कहानी', 'ज्ञानोदय', 'नई कहानियाँ', 'सारिका', 'लहर', 'विकल्प' जैसी कहानी केन्द्रित पत्रिकाओं का अभूतपूर्व योगदान रहा। 'धर्मयुग' आदि पत्रिकाओं ने 'कथादशक योजना 'के माध्यम से कहानी आंदोलनों को आगे बढाया। अनेक गोष्ठियों, परिचर्चाओं, साहित्यिक समारोहों में भी कहानी पर व्यापक विचार विमर्श हुआ। 'परंपरा के प्रति विद्रोह, प्रयोगशीलता की भावना, परिवर्तित जीवन बोध के साथ गतिशील रहने की कामना तथा कहानिकारों द्वारा अपने गुट के कहानिकारों को स्थापित करने का प्रयास इन आंदोलनों के प्रमुख प्रेरक रहे हैं।'[२]

हिन्दी कहानी के विकास में इन आंदोलनो का महत्वपूर्ण योगदान रहा। संक्षेप में ये विभिन्न आंदोलन इस प्रकार से है -

---

१. वर्तमान कहानी और मुल्यहीनता के आयाम - होतीलाल भारद्वाज, बिंदु - जुलाई १९६७, पृष्ठ ४३

२. हिन्दी कहानी के आंदोलन - उपलब्धियाँ और सीमाएँ - रजनीश कुमार, पृष्ठ १६

नई कहानी आंदोलन
अकहानी आंदोलन
सचेतन कहानी आंदोलन
सहज कहानी आंदोलन
समांतर कहानी आंदोलन
जनवादी कहानी आंदोलन
सक्रिय कहानी आंदोलन

२.२.१. नई कहानी :

सन् १९५० के आसपास हिन्दी कहानी में एक नई पीढी का उदय हुआ। ये नये कहानीकार नूतन दृष्टि से बदलते परिवेश को नये ढंग से अभिव्यक्त कर रहे थे। हाँलाकि नई कहानी के पूर्व ही 'नई कविता' नाम प्रकाश में आ चुका था। लेकिन 'नई कविता' के तर्ज पर 'नई कहानी' शब्द नहीं चला था। क्योंकि सन् ५० तक 'नई कविता' आंदोलन अपनी चरम सीमा पर पहुँचकर एक निश्चित रूप और अर्थ ग्रहण कर चुका था।[१] 'नई कहानी' के नामकरण पर प्रस्थापित लेखकों का एक मत नहीं था। वाद-विवाद के बावजूद 'नई कहानी' नाम प्रचलित हो गया।

आजादी के पश्चात उमंग और उल्लास का साहित्य रचा जाना चाहिये था लेकिन हुआ ठीक विपरीत। कहानी में निराशा, असंतोष, क्षोभ का ही चित्रण अधिक हुआ। 'नई कहानी' आंदोलन संभावनाओं से भरा था। आलोचना के क्षेत्र में 'परिवेश से प्रतिबद्धता', 'अनुभूति की प्रामाणिकता' 'भोगा हुआ यथार्थ'[२] जैसे मानक शब्द प्रचलित हुए। क्योंकि नई कहानी के लेखक कृत्रिम रचना नहीं लिखते। वे कहानी रचते नहीं वरन् अपने अनुभूत सत्य को ही कहानी में उतार देते हैं। इसीलिए उनका लेखन अधिक प्रामाणिक है। 'नई कहानी' का रचनाकार आज के यथार्थ का भोक्ता है। उसने दृष्टा और भविष्यवक्ता की खोल को उतार फेंका है।[३] उदाहरण के तौर पर अमरकांत की 'जिंदगी और जोंक' को लिया जा सकता है। जिसमें रजुआ की जिजीविषा का चित्रण लेखक ने

---

१. बकलम खुद - मोहन राकेश, पृष्ठ ९९
२. नई कहानी की भूमिका - कमलेश्वर, पृष्ठ १६
३. नई कहानी - उपलब्धि और सीमाएँ - डॉ. गोरधनसिंह शेखावत, पृष्ठ ७३

बगैर किसी आदर्श को प्रस्तुत करते हुए किया है।

'नई कहानी' ने 'आरोपित मूल्यों के प्रति उपेक्षा दिखाते हुए व्यक्ति के परिवेशीय जीवन की यथार्थता पर बल दिया। 'नई कहानी' का लेखक तटस्थता और निस्संगता के साथ अपने पात्रों को उनके यथार्थ संदर्भों में उपस्थित करता है।'[१] कहानीकार अपने व्यक्तित्व को कहानी पर हावी नहीं होने देता। वह उपदेशक नहीं वह जीवन का भोक्ता है, जिसे वह अलिप्त भाव से व्यक्त करता है।

'नई कहानी' का कथ्य बहुत वैविध्यपूर्ण है। 'नई कहानी' में ग्राम्य कथाएँ रची गयी, जो बदलते परिवेश की कहानियाँ थीं। रेणु, मार्कण्डेय, कमलेश्वर आदि की कहानियों में चित्रित ग्रामीण पात्रों के प्रति उनकी गहन आत्मीयता और तादात्म्य का भाव प्रकट होता है। इन लेखकों ने ग्रामीण जीवन को संपूर्णता से जाना है इसीलिए ग्राम्य जीवन की समस्याएँ, विसंगतियाँ, विडम्बनाएं सहजता से कहानी में उतार सकें हैं। ग्रामीण जीवन दूर से देखा हुआ नहीं बल्कि जीया हुआ है। इसी कारण उनके अनुभव यथार्थ है और लेखन भी सत्य। ग्रामीण जीवन भी आजादी से बहुत सी अपेक्षाएं लिये हुए था लेकिन उनका स्वप्नभंग ही हुआ। इसी मोहभंग की कहानी 'भूदान' में लेखक मार्कंडेय ने कही है 'ग्राम का पुराना शोषक वर्ग अपने-अपने संकुचित स्वार्थों के कारण आज भी साधारण किसानों के अभावग्रस्त जीवन और उनकी ट्रेजडी का उत्तरदायी है।'[२]

स्वतंत्रता के पश्चात भारतीय जन-जीवन जिस भारत की कल्पना कर रहा था - वह तो यथार्थ में प्रकट नहीं हुआ वरन् अनेक समस्याओं से भारतीय नागरिक त्रस्त हो गया। 'शासन-पद्धती, शिक्षा-~~निती~~, आर्थिक शोषण, भ्रष्टाचार, दुराचार आदि पहले की तुलना में अधिक भ्रष्ट और समाज के लिए घातक हो उठे थे। शासक, उसके कर्मचारी और चाटुकार मजे उडाते थे और सामान्य जन उनके मजे के साधन जुटाने के लिए विवश था। इस नई स्थिती ने हिन्दी - कहानी को गहरे रूप से प्रभावित किया था।'[३] मोहन राकेश द्वारा लिखीत 'परमात्मा का कुत्ता' कहानी

---

१. नई कहानी - उपलब्धि और सीमाएँ - डॉ. गोरधनसिंह शेखावत, पृष्ठ ७३
२. नई कहानी - संदर्भ और प्रकृति - डॉ. धनंजय वर्मा (डॉ. देवीशंकर अवस्थी), पृष्ठ १९३
३. हिन्दी साहित्य का विवेचनात्मक इतिहास - राजनाथ वर्मा, पृष्ठ ६८६

नौकरशाही और लालफिताशाही से त्रस्त आम आदमी की दयनीय दशा को प्रकट करती है। 'नई कहानी' के लेखकों ने पूरी निस्संगता और क्रुरता से भ्रष्टाचार और पाखंड को अभिव्यक्त किया।

स्वातंत्र्योत्तर नई परिस्थिति में पारिवारिक और सामाजिक सम्बन्धों में बदलाव आए। नई कहानी ने बदलते संबंधों को रूपायित किया। नई कहानी में 'सांकेतिकता' अपनी खास पहचान रखती है। अमरकांत की 'दोपहर का भोजन', मोहन राकेश की 'सेफ्टीपीन' आदि की सांकेतिकता इन कहानियों की शिल्पगत विशिष्टता है। प्रतिकात्मक प्रयोग भी हुए है। कहानी को नए प्रतिकों ने अधिक व्यंजक और सशक्त बना दिया है। ये प्रतीक कथ्य को स्पष्ट करते हैं और उसे सहज संप्रेषित करते हैं। प्रतिकात्मक दृष्टि से मार्कण्डेय की 'तारों का गुच्छा', दूधनाथ सिंह की 'रीछ', राजेन्द्र यादव की 'प्रश्नवाचक पेड' आदि श्रेष्ठ कहानियाँ कही जा सकती हैं। नई कहानी में प्रतीक के साथ ही बिम्बात्मक प्रयोग भी हुए। इन सार्थक बिंब प्रयोग से कहानी सशक्त बनी है। 'बिंब' से नई कहानी की भाषानुभूति में सूक्ष्म ऐंद्रियता का विस्तार होता है, साथ ही छिपे हुए आलोक के यथार्थ का उपस्थापन भी।[१]

नई कहानी की भाषा अत्यंत सशक्त है। भाषा की अभिव्यंजना शक्ति में अभूतपूर्व विकास हुआ। नई कहानी की भाषा रचनाकार की रचना प्रक्रिया का ही एक भाग है अत: भाषा सहज, सरल और अकृत्रिम है। मोहन राकेश का कहना है कि - 'शब्दों को एक कृत्रिम अर्थवत्ता देने के बजाय भाषा की ऐतिहासिक अर्थवत्ता की खोज करना और (निजी) अनुभूति की विशिष्टता से उसे एक नया संस्कार देना यह इस पीढी के सभी लेखकों का साझा प्रयत्न रहा है।'[२] नई कहानी ने परम्परागत अभिजात्य से कहानी को मुक्त कर नया भाषिक संस्कार दिया।

नई कहानी साहित्यशास्त्रियों द्वारा निर्धारित कहानी के तत्वों का निर्वाह करने के प्रति कोई मोह नहीं रखती। स्वतंत्रता के पश्चात की मोहभंग की स्थिति को नई कहानी ने परिवेश के साथ गहराई से प्रकट किया है। नई कहानी का कथ्य भी स्वंय अपनी भाषा लेकर उपस्थित हुआ ताकि

---

१. नई कहानी के विविध प्रयोग - पांडेय, शशिभूषण शीतांशु, पृष्ठ १४३
२. बकलम खुद - मोहन राकेश, पृष्ठ ७५

वह वस्तुस्थिती को सर्जनात्मक स्तर पर अर्थवत्ता प्रदान कर सके।'[1] 'नई कहानी' अत्यंत वैविध्यपूर्ण, सृजनात्मक और प्रयोगशील रही।

नई कहानी में रिश्ते के बदलावों को रेखांकित किया है। हर स्तर पर यह बदलाव देखा जा सकता है जैसे माँ-बाप और संतान, भाई-भाई, पति-पत्नि आदि। 'वापसी' (उषा प्रियवंदा) और 'बिरादरी बाहर' (राजेन्द्र यादव) में माता-पिता और संतान के बदलते रिश्ते चित्रित हैं, जो सभी प्रकार के आदर्शों का त्याग कर चुके हैं। 'अब प्रेम का इनके लिए वह आदर्शपरक अर्थ नहीं रहा जो पुरानी पीढी के कहानीकारों के लिए था। राजेन्द्र यादव की 'छोटे-छोटे ताजमहल' के 'विजया' और 'मीरा' (या देव और राका) हो, रामकुमार की 'यात्रा' के 'वह' (नायक संज्ञाहीन हो गया) और 'देवा' हो, मोहन राकेश की 'एक और जिंदगी' या कमलेश्वर की 'राजा निरबंसिया' के नायक नायिका हो, अथवा श्रीकांत वर्मा की 'परिचय' अथवा 'दुसरे के पैर' के प्रेमी-प्रेमिका हो, सभी एंटी हीरोइक है।'[2] नई कहानी में विशेषत: पति-पत्नि और स्त्री-पुरूष सम्बन्धों में आए बदलाव को चित्रित किया है। 'इसका कारण या तो दोनों के बीच किसी तीसरे व्यक्ति की उपस्थिति है या स्त्री की स्वतंत्र व्यक्तित्व की कामना है या आर्थिक दबाव है।' मन्नू भंडारी की 'तीसरा आदमी', मोहन राकेश की 'एक और जिंदगी', तथा राजेन्द्र यादव की 'टूटना' में ये स्थितियाँ क्रमश: देखी जा सकती हैं।'[3]

नई कहानी शिल्प और भाषा के स्तर पर बहुत समृद्ध रही। नई कहानी के लेखकों ने पुरानी पीढी के कहानीकारों से हटकर शिल्प और भाषा के क्षेत्र में प्रयोग किये। भाषा और शिल्प को जिवंत बनाने का यत्न किया। 'नई कहानी के प्रयोग आशय और अभिव्यक्ति, दोनों ही दिशाओं में हुए है। कुल मिलाकर विचार, विषय, शिल्प और भाषा के चतुर्दिक प्रयोग।'[4] यह प्रयोग पुरानी पीढी को भी रास आये। शिल्प के स्तर पर आंचलिक शिल्प प्रयोग महत्त्वपूर्ण माना जाता है। मार्कंडेय,

---

१. नई कहानी - उपलब्धि और सीमाएँ - डॉ. गोरधनसिंह शेखावत, पृष्ठ ३३३
२. नई कहानी - संदर्भ और प्रकृति - डॉ. देवीशंकर अवस्थी, पृष्ठ १५९
३. हिन्दी कहानी के आंदोलन - उपलब्धियाँ और सीमाएँ, रजनीशकुमार, पृष्ठ ३१
४. नई कहानी के विविध प्रयोग - पांडेय शशीभूषण शीतांशु, पृष्ठ २५

फणीश्वरनाथ रेणु, कमलेश्वर आदि की कहानियाँ इस दृष्टि से विशेष स्थान रखती हैं। 'नई कहानी' इस शिल्प के प्रयोग से एक दूरी तक विकसीत, पुष्ट और समृद्ध हुई है।'[1] इन नये प्रयोगों ने कहानी के रूप और प्रभाव को और अधिक प्रभावी, मार्मिक और सशक्त बनाया।

नई कहानी आंदोलन संभावनाओं से भरा आंदोलन था लेकिन धीरे-धीरे यह 'अकहानी' को जन्म देने का कारण बन गया। क्योंकि नई कहानी के रचनाकार अस्तित्ववाद से अत्यंत प्रभावित रहे। उनके लेखन में यौन कुंठाओं, यौन सम्बन्धों और प्रेम त्रिकोणों का ही सर्वाधिक अंकन होने लगा। विदेशी प्रभाव के परिणाम स्वरूप 'अकहानी' के जन्म की भूमिका बन गई। 'नई कहानी' आंदोलन में मार्कण्डेय, शेखर जोशी, अमरकांत, शिवप्रसाद सिंह जैसे कई प्रतिभाशाली लेखक थे लेकिन इस आंदोलन ने व्यक्तिवादी आलोचना को आश्रय दिया। कभी खुले रूप से ये लेखक एक दूसरे की प्रशंसा करते तो कभी छद्म नाम से। राजेन्द्र यादव, मोहन राकेश और कमलेश्वर इस त्रयी ने इस प्रवृत्ती को बढावा दिया। नई कहानी बाद में इन तीनों तक ही सीमटकर रह गयी।

अपनी सीमाओं के बावजूद यह कहानी आंदोलन अपनी उपलब्धियों के लिए याद किया जाएगा। यह आंदोलन भले ही नई कहानीकारों की दृष्टी में सर्वथा मौलिक रहा हो लेकिन वास्तव में यह प्रेमचन्द की ही परम्परा को आगे बढाता रहा।

२.२.२. अकहानी :

फ्रांस के एंटी नावेल या एंटी स्टोरी की तर्ज पर ही हिन्दी कहानी में अकहानी का जन्म हुआ। यह लगभग सन ६० के आसपास हिन्दी में जन्मा आंदोलन था। जिसके समर्थको में डॉ. गंगाप्रसाद विमल, जगदीश चतुर्वेदी, रविन्द्र कालिया, रमेश बक्षी, दूधनाथ सिंह, श्रीकांत वर्मा, विजयमोहन सिंह, प्रयाग शुक्ल, सुधा अरोडा, ज्ञानरंजन, विश्वेश्वर आदि थे। अकहानी आंदोलन

---

१. नई कहानी - संदर्भ और प्रकृति - नेमीचन्द्र जैन (डॉ. देवीशंकर अवस्थी), पृष्ठ १२२

को स्थापित करने के लिए श्याम मोहन श्रीवास्तव तथा सुरेन्द्र अरोडा ने 'अकहानी' शीर्षक पुस्तक प्रकाशित की, जिसमें अकहानी समर्थक कहानीकारों की कहानियाँ प्रकाशित हुई। अकहानी आंदोलन का जन्म नई कहानी की जडता को तोडने के लिए और तत्कालीन जीवन की भयावह स्थितियों को प्रकट करने के लिए हुआ। इस संदर्भ में श्री विश्वेश्वर कहते हैं - 'साठोत्तर कहानी या अकहानी की आवाज पुरानी पडती जा रही पीढी के 'भोगे हुए यथार्थ', 'अनुभव की प्रामाणिकता', 'प्रतिबद्धता' जैसे खोखले नारों के खिलाफ एक सख्त कार्यवाही थी। इस आवाज ने नई कहानी के झंडाबरदारों को उनके पुराने पड जाने का अहसास कराया और उन्हे बिल्कुल उसी तरह बौखला दिया, जैसे अपने जमाने में उन्होने जैनेन्द्र, अज्ञेय आदि को बौखलाया था।'[1]

अकहानी की व्याख्या प्रस्तुत करते हुए श्री गंगाप्रसाद विमल कहते हैं कि - 'अकहानी कहानी की धारणागत प्रतीति के सभी वर्गीकरणों, मूल्यांकन आधारों और पूर्व समीक्षाओं को अस्वीकार करती है।'[2] अर्थात अकहानी परम्परागत अवधारणाओं को नहीं मानती। अकहानी अमूर्त कथा विधा या शिल्पहीन कहानी है। 'अकहानी सभी प्रकार के मूल्यों को अस्वीकार करती है तथा इसके पीछे अस्तित्ववादियों का विश्वबोध है, काम का दर्शन है तथा एब्सर्ड भाव बोध भी है। एब्सर्ड अथवा व्यर्थथता-बोध एक सामंजस्यहीन, अनर्गल एवं रूढ अर्थ से मुक्त विचारसरणी है जो समग्र जीवन के अस्वीकार का आंदोलन कहीं जा सकती है।'[3] वस्तुत अकहानी की मूल्यहीनता देश में व्याप्त सामाजिक - राजनीतिक जीवन में आयी मूल्यहीनता है। सन १९६१ में भारत चीन से पराजित हुआ तथा सन १९६५ में रूपये का अवमूल्यन हुआ। 'यह अवमूल्यन मुद्रागत ही नहीं था, बल्कि इसके साथ गहरे स्तरों पर राष्ट्रीय प्रतिमा की भग्न होती गरिमा और सांस्कृतिक मूल्यों के विघटन भी शामिल थे।'[4] कह सकते है कि अकहानी की मूल्यहीनता देश में व्याप्त मूल्यहीनता ही थी जो देश की मानसिकता को भी व्यक्त कर रही थी।

---

१. मंच - १९७३, स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी कहानी, पृष्ठ १६७-१६८
२. समकालीन कहानी का रचना विधान - डॉ. गंगाप्रसाद विमल, पृष्ठ ६८
३. हिन्दी : कहानी दो दशक की यात्रा - डॉ सूर्यप्रसाद दिक्षीत तथा नरेन्द्र मोहन (सं. डॉ. रामदरश मिश्र), पृष्ठ २०४
४. आलोचना - जुलाई - सितम्बर, १९७६, पृष्ठ १९५

अकहानी कहानी में कथा या घटना को स्वीकार नहीं करती। किसी भी प्रकार के घटनाक्रम या कथानक की आवश्यकता को अकहानी अस्वीकार करती है और केवल मन:स्थिती के क्षण की, मूड की अभिव्यक्ति को पर्याप्त मानती है। स्पष्ट है कि ऐसी स्थिति में उसका रचना विधान जटील और अस्पष्ट हो जाता है। दूधनाथ सिंह की 'कबंध' कहानी में यह रचनात्मक जटीलता और कथाहीनता देखी जा सकती है। अकहानी 'जीवन-मूल्यों को चुनौती देती हुई कुछ नये प्रश्नचिन्ह उपस्थित करती है। यही कारण है कि अकहानी में भावबोध के धरातल पर संत्रास, आत्मपीडन, ऊब, अकेलापन, अजनबीपन और विसंगति का चित्रण होता है।'[१] अकहानी के पात्र व्यक्तिवादी, आत्मकेंन्द्रित हैं। अपने आप में ही सीमटे हुए हैं। 'वे मृत्युकामी हैं तथा आत्म-पीडक हैं।'[२] प्रयाग शुक्ल की 'आदमी', सुधा अरोड़ा की 'मरी हुई चीज', ज्ञानरंजन की 'रक्तपात' में ऐसे ही पात्र चित्रित हैं।

अकहानी के पात्र आत्मलीन और घोर व्यक्तिवादी हैं। 'अकहानी के पात्र प्रतीक रुप में स्थिती का संकेत देते है, कई जगह पात्रों के नाम भी नहीं होते है अपितु स्थिती का अमूर्त प्रभाव पैदा करने के लिए क, ख, ग को संकेत रुप में पात्र मान लेते हैं।[३] अकहानी का सामाजिक सरोकारों से कोई लेना देना नहीं है। सुधा अरोडा की कहानियों के पात्र ऐसे ही खोखले हैं। 'बगैर तराशे हुए' का नायक राम और रामायण से अधिक महत्त्व नायिका की डायरी को देता। उनके लिए नैतिक मूल्य, धर्म या ईश्वर का कोई अस्तित्त्व ही नहीं है।

'अकहानी' की रचनाओं में पुराने मूल्य और पुरानी पीढी के प्रति नफरत का भाव है। कृष्ण बलदेव वैद की 'रात', ज्ञानरंजन की 'पिता', रमेश बक्षी के 'पिता दर पिता', गंगाप्रसाद विमल की 'शीर्षकहीन', दूधनाथ सिंह की 'रक्तपात' तथा 'सुखान्त' ऐसी ही कहानियाँ है जिनमें माता-पिता के प्रति अनादर का भाव है। पति-पत्नि के सम्बन्ध भी अजनबीपन से भरे हैं। सतीत्त्व, विवाह संस्था पर से जैसे इनका विश्वास ही उठ गया है। इनमें स्त्री-पुरुष सम्बन्ध को केवल संभोग के रुप

---

१. नई कहानी - उपलब्धि और सीमाएँ - डॉ. गोरधन सिंह शेखावत, पृष्ठ ८९
२. हिन्दी कहानी के आंदोलन : उपलब्धियाँ और सीमाएँ - रजनीश कुमार, पृष्ठ ४२
३. नई कहानी - उपलब्धि और सीमाएँ - डॉ. गोरधनसिंह शेखावत, पृष्ठ ९०

में दिखाया गया है। रविन्द्र कालिया की 'डरी हुई औरत', विजयमोहन सिंह की 'वे दोनों', श्रीकांत वर्मा की 'ट्युमर', 'साथ', मणिका मोहिनी की 'एक ही बिस्तर', महेन्द्र भल्ला की 'एक पति के नोट्स' आदि में ऐसे ही विचित्र सम्बन्ध जो संभोग स्तर पर चित्रित हैं, चित्रित हुए है। ये कहानियाँ स्वस्थ पात्रों की कहानियाँ नहीं हैं।

अकहानी कहानी का ही निषेध करती है। इसलिए वह कथातत्त्व के साथ ही शिल्प और भाषातत्त्व के पारम्परिक उपकरणों को भी नकारती है। साथ ही नये शिल्प के प्रति भी उदासीन है। वह जीवन के सत्य को जैसा देखती है वैसा ही अभिव्यक्त करती है। वह 'अमूर्त कथा-विधा अथवा शिल्पहीन कहानी है। यह रूपहीनता की कथाहीन विधा है।'[१] यही वजह है कि कहानी का लालित्य, अर्थपूर्ण भाषा और कहानी की कलात्मकता इसमें नहीं मिलती। 'अकहानी में शिल्प विघटन का जहाँ सुन्दर रूप दिखायी देता है, वही अकहानी फेंटेसी, डायरी, मोनोलोग, संस्मरण, आत्मप्रलाप आदि विधाओं की विशेषताएँ भी लिये हुए। कहीं-कहीं पर अकहानी के शिल्प में स्वाभाविकता दिखाई देती है, कहीं पर उसमे समरसता, नाटकीयता, आकस्मिकता आदि का प्रभाव भी दिखाई देता हैं। अकहानी अमूर्त शैली को लेकर चलती है।'[२] अकहानी शिल्पहीन रचनाओं का आंदोलन है।

अकहानी की सबसे बडी उपलब्धि यह रही कि उसने नई कहानी की जडता, लिजलिजी भावुकता, आदर्श के आग्रह को तोडा। सभी पुराने मूल्यों को त्याग कर शिल्प स्तर पर नये प्रतीक, संकेत और बिंबो को अभिव्यक्ती का माध्यम बनाया। अकहानी ने 'नई कहानी' द्वारा स्थापित अभिजात्य को तोडा तथा हिन्दी कहानी को एक नई दिशा प्रदान की। शिल्प के बचकाने दुराग्रह से, कविता के आत्मपरक बिंबों से, क्षण चित्रों और अनुभूति के मीठे और रोमानी उपकरणों से भी उसने छुटकारा पाया है - कहानी अपने इसी रूप में 'व्यापक' और 'विशेष' दोनों बनी है।[३] अकहानी ने

---

१. हिन्दी कहानी : दो दशक की यात्रा - सं. डॉ. रामदरश मिश्र, नरेन्द्रमोहन, पृष्ठ २०४
२. नई कहानी-उपलब्धि और सीमाएँ - डॉ. गोरधनसिंह शेखावत, पृष्ठ ९०
३. आज की कहानी - विजयमोहन सिंह, पृष्ठ १०१

सूक्ष्म मन:स्थितियों के चित्रण को महत्त्व दिया और मानवीय सम्बन्धों में आयी दरार को सचेपन से उजागर किया।

बावजूद इसके अकहानी सीमाओं में बंधी रही। क्योंकि मूल्यों के अस्वीकार ने उसके लेखन को अराजक और नंगा बना दिया। जिससे न कहानी का भला हुआ और न ही जीवन का। वस्तुत: 'अकहानी का सारा अजनबीपन, आत्मपीडन, अलगाव, मृत्यु बोध युरोपिय मानसिकता का प्रभाव मात्र था।'[१] अकहानी के लेखक विदेशी लेखकों से प्रभावित हैं। जिनमें काफ्का, सार्त्र, ज्यांजैने, कालिन विल्सन, कामू का प्रभाव सबसे अधिक पडा है। सतीश जमाली ने तो स्पष्टत: कहा है कि - 'गंगाप्रसाद विमल, रविन्द्र कालिया और ममता कालिया के लिए केवल काफ्का और असाभू रजाई को पढा जाऐ और निर्मल वर्मा तथा श्रीकांत वर्मा के लिए कामू और काफ्का को, ज्ञानरंजन के लिए केवल सार्त्र को और दूधनाथ सिंह के लिए कालिन विल्सन तथा ज्यांजैने को।[२]

संभोग या सेक्स को अधिक महत्त्व देने से यह आंदोलन भटक कर रह गया। इन कहानीकारों का सारा विद्रोह केवल स्त्री-पुरूष सम्बन्धों तक ही सीमित रहा। अकहानी सामाजिकता से जुड ही नहीं पायी। इसमें रचनात्मक प्रवृत्ति के स्थान पर गुट बंदी ही अधिक दिखाई देती है, जो कुछ-एक लेखकों को प्रकाश में तो लायी लेकिन उनकी रचनाएँ कुछ खास चर्चित न हो सकी। इस प्रकार यह आंदोलन अपनी सीमितता और समाज से दूर होने के कारण शीघ्र समाप्त हो गया।

२.२.३ सचेतन कहानी :

नई कहानी जब सीमित कथाकारों तक सिमट गयी और सामाजिक समस्याओं से परे जा खडी हुई तो प्रतिक्रिया स्वरूप सचेतन कहानी आंदोलन प्रारंभ हुआ। 'सन् १९६० तक नई कहानी

---

१. हिन्दी कहानी के आंदोलन-उपलब्धियाँ और सीमाएँ - रजनीशकुमार, पृष्ठ ४६
२. कल्पना - अगस्त १९६८, पृष्ठ ४१

रूढ होने की स्थिती में आ गयी और उसमें एक खास किस्म का मैनरिज़्म पैदा हो गया था।[१] नई कहानी पर यह भी आरोप लगाया गया है कि उसमें वैचारिकता का अभाव है और यह कहानी आंदोलन कुछ कहानीकार मित्रों को स्थापित करने के लिए ही रह गया है। नई कहानी के इस मैनरिज़्म को तोडनें के लिए ही सचेतन कहानी आंदोलन उभरा। डॉ. महिपसिंह द्वारा संपादित 'आधार' पत्रिका में सचेतन कहानी आंदोलन का सूत्रपात हुआ। सन् १९६४ में सचेतन कहानी विशेषांक 'आधार' के माध्यम से डॉ. महिपसिंह ने सचेतन कहानी आंदोलन की संकल्पना सामने लायी। डॉ. महिपसिंह इस आंदोलन के जन्म के सम्बन्ध में कहते है 'सचेतन आंदोलन साहित्यिक संचेतना की सामूहिक प्रतिक्रिया है। इसके सूत्र बंबई में 'रचना' द्वारा आयोजित गोष्ठियों में हैं। गत अप्रेल में 'मनीषा' द्वारा दिल्ली में आयोजित गोष्ठी में यह चर्चा कुछ और मुखर होकर सामने आयी।'[२]

यह सत्य है कि सचेतन कहानी आंदोलन का प्रस्ताव डॉ. महिपसिंह ने रखा। '' 'आधार' के सचेतन कहानी विशेषांक से पूर्व जगदीश चतुर्वेदी, श्याम परमार, राजीव सक्सेना, धर्मेन्द्र गुप्त, वेद राही, सुरेश सिन्हा, राजकुमार भ्रमर आदि की टिप्पणियाँ सचेतन कहानी के सम्बन्ध में 'केन्द्र', 'गल्प भारती' आदि पत्रिकाओं में छप चुकी थी। किन्तु आंदोलन का औपचारिक प्रारंभ 'आधार' इस विशेषांक से ही माना जा सकता है।''[३] सचेतन कहानी आंदोलन में डॉ. महिपसिंह के अतिरिक्त राजीव सक्सेना, उपेन्द्रनाथ अश्क, श्याम परमार, आनंद प्रकाश जैन, कमल जोशी, ममता कालिया, कुलभूषण, धर्मेन्द्र गुप्त, मधुकर सिंह, मनहर चौहान, योगेश गुप्त, वेद राही, राजकुमार भ्रमर, हिमांशु जोशी, जगदीश चतुर्वेदी आदि कहानीकार समीक्षक सम्मिलित थे। डॉ. महिपसिंह ने 'संचेतना' नाम से एक त्रैमासिक पत्रिका का संपादन भी किया जो सचेतन कहानी आंदोलन का प्रमुख मंच रही। 'श्रेष्ठ सचेतन कहानियाँ' शीर्षक से सुदर्शन नारंग के संपादकत्व में एक संग्रह भी प्रकाश में आया।

---

१. समकालीन कहानी - समांतर कहानी - डॉ. विनय, पृष्ठ १०
२. आधार (सचेतन कहानी विशेषांक), नवम्बर १९६४, पृष्ठ१६
३. हिन्दी कहानी के आंदोलन-उपलब्धियाँ और सीमाएँ - रजनीशकुमार, पृष्ठ ४८

सचेतन कहानी के स्वरूप और उसकी वैचारिकता पर मत प्रकट करते हुए डॉ. महिपसिंह कहते हैं कि 'सचेतन आंदोलन मूलत: विचार प्रधान आंदोलन है।' सचेतन कहानी की वैचारिकता को स्पष्ट करते हुए कहते हैं कि - 'सचेतना एक दृष्टि है। वह दृष्टि, जिसमें जीवन जिया भी जाता है और जाना भी जाता है। .... कुछ लोग आज के मानव जीवन की निरर्थकता और निष्क्रियता की बातें (विशेष रूप सें भारतीय संदर्भ में) बडे बौद्धिक अंदाज में करने लगते हैं। निष्क्रियता और सब कुछ की उपलब्धि के पश्चात निरर्थकता का बोध उन्हें हो जो सक्रिय (शायद अतीत सक्रिय) रह चुके हैं, जिन्होने जीवन को जी भर भोग कर लिया है। परन्तु हमारे देश की अवस्था तो इसके विपरित है।'[१] साथ ही वे कहते हैं कि 'जीवन को भोगना मनुष्य की अपरिहार्य नियति है, वह इस जीवन को कैसे जिये? - दृष्टि की सचेतनता शायद इसका उत्तर है।'[२] अर्थात सचेतन कहानी उस प्रक्रिया को महत्त्व देता है जो जीवन को जीने और जानने की है। मानव जीवन को केन्द्र में रखकर सचेतन कहानी चलती है। पाश्चात्य दर्शन और परिवेश से उपजा जीवन की निरर्थकता और निष्क्रियता बोध, जो जीवन से पलायन की शिक्षा देता है, नई कहानी में परिलक्षित होने लगा था। इसी प्रवृत्ति के विरोध में सचेतन दृष्टि को प्रस्तुत करते हुए डॉ. महिप सिंह ने कहा कि 'भारत वर्ष का मानव जीवन भोगने के लिए भी सक्रिय नहीं हो पाया है अत: पलायनवाद की स्थिति भी यहाँ नहीं होनी चाहिये। सचेतन कहानी मानव को जुझारू, सक्रिय और जागरूक बनाने की मानसिकता तैयार करेगी। वस्तुत: 'सचेतन कहानी उस स्वस्थ दृष्टि से संपन्न कहानी है जो जीवन से नहीं, जीवन की ओर भागती है। इसमें नैराश्य, अनास्था और बौद्धिक तटस्थता का प्रत्याख्यान किया जाता है और मृत्यु-भय, व्यर्थता एवं आत्मपराभूत चेतना का परिहार भी।'[३]

सचेतन कहानी पाश्चात्य पलायनवादी दृष्टि का विरोध करती है। उसमें संघर्ष करने की इच्छा शक्ति भी है और सजगता भी। वह व्यक्ति और समाज के बीच टूटती आस्थाओं पर नये मूल्यों के पुल निर्माण करती है। डॉ. महिपसिंह कहते हैं - 'सचेतन कहानी सक्रिय भाव बोध की कहानी है,

---

१. आधार - नवम्बर १९६४, पृष्ठ १२
२. आधार - नवम्बर १९६४, पृष्ठ १२
३ हिन्दी कहानी-दो दशक की यात्रा - डॉ. सूर्यप्रसाद दिक्षीत - सं. रामदरश मिश्र, नरेन्द्रमोहन, पृष्ठ २०६

वह जिंदगी की स्वीकृति की कहानी है। पश्चिम की भोंडी नकल और ओढी हुई मानसिकता से प्रेरित होकर जिंदगी की व्यर्थता, नितान्त अकेलेपन और बनावटी घुटन का प्रदर्शन नहीं करती है।'[१] तात्पर्य यह है कि सचेतन कहानी का मानना है कि मृत्यु, भय, संत्रास, घुटन, ऊब, कुंठा, निराशा, अकेलापन आदि प्रवृत्तियाँ पश्चिम से आयातित हैं और भारतीय परिवेश के चित्रण पर थोपी हुई हैं। अकहानी में यही एब्सर्ड दर्शन है जिसका सचेतन कहानी विरोध करती है। सचेतन कहानी आंदोलन जब प्रारंभ हुआ तब अकहानी स्थापित नहीं हुयी थी लेकिन नई कहानी में अकहानी के चिह्न दिखायी देने लगे थे जो आगे चलकर अकहानी आंदोलन में बदल गये।

सचेतन कहानी का कथ्य बहुआयामी है। भारतीयता से जुडे रहने के कारण मूल्यों के विघटन का मूल कारण वह नगर और महानगर के परिवेश को मानते है। फिर भी विघटन को लेकर 'उसमें न गुस्से का भाव है न आश्चर्य का।'[२] अत्यन्त सहजता के साथ सचेतन कहानी ने इस विघटन को स्वीकार किया है। सचेतन कहानीकारों का मानना है कि यह सहजता यथार्थ की सही पहचान से आती है। जो लेखक को परिवेशजन्य अनुभव और मानवीय विवेक दृष्टि की तलाश करने पर प्राप्त होती है। 'इस कथा आंदोलन ने कृत्रिम यथार्थ के जाल में फँसती जा रही कहानियों को यथार्थ की सही पहचान की दिशा में मोडा और उसे सहजता प्रदान की। सचेत रूप को सहेजकर इसे कहानी का सत्य बनाने की कोशिश की।'[३] 'बीस सुबहों के बाद' (मनहर चौहान), 'धुंधले चेहरे' (महिपसिंह), 'बर्फ' (सुरेन्द्र अरोडा) आदि कहानियाँ मानवीय सम्बन्धों और मूल्यों के विघटन को लेकर लिखी गयीं हैं। इन कहानियों में नगरीय और महानगरीय जीवन के संदर्भ में पिता-पुत्र, माँ-बेटे, मित्र, रिश्तेदार आदि के सम्बन्धों में आये बदलाव को तटस्थता और निस्संगता के साथ प्रकट किया गया है। आनंद प्रकाश जैन की 'लिपस्टिक' कहानी में सामाजिक विसंगति को उभारा है। 'लौ पर रखी हुई हथेली' (राजकुमार भ्रमर), 'और भी कुछ' (महिपसिंह) कहानियाँ काम सम्बन्धों में द्वंद्व उत्पन्न करने वाली विसंगतियों को चित्रित करती है। यौन सम्बन्धों पर ही

---

१. सचेतन कहानी-रचना-विचार - सं. डॉ. महिप सिंह, पृष्ठ १२-१३
२. हिन्दी कहानी-एक अंतर्यात्रा - डॉ. वेदप्रकाश अमिताभ, पृष्ठ ५६
३. साठोत्तरी हिन्दी कहानी और राजनीतिक चेतना - जितेन्द्र वत्स, पृष्ठ ६८

आधारित महिपसिंह की 'कील' की नायिका मोना शादी ठीक होने की खुशी और योग्य वर न पाने की विवशता को अजीब ढंग से झेलती है। काम जीवन पर लेखन करने के बावजूद भी 'सचेतन कहानी सेक्स की अंधी गली में गुम नहीं हुई।'[१] बल्कि सचेतन कहानीकार संभोग चित्रण में रस न लेकर इन सम्बन्धों की तह तक पहुँचने का प्रयास करते हैं। वे अश्लिल कहानियों का विरोध करते हैं। 'कहानियों में जुडी हुई कायर और हतप्रभ व्यक्ति की मानसिकता की अभिव्यक्ति को सचेतन कहानीकार हेय समझते हैं। वे कहानी में समाजपरक दृष्टि का समर्थन करते हैं।'[२]

कथ्य के बहुआयामी फलक के कारण ही कहानी की सभी प्रकार की समस्याओं तथा सामाजिक जीवन की सभी प्रकार की विसंगतियों को सचेतन कहानी में चित्रित किया गया है। 'सामाजिक संक्रमण और उसके यथार्थ को 'एक और नारायण', 'दिवारे और उडनेवाला घोडा', 'रांच', 'एक खुला आकाश', 'सीट', कहानी में भिन्न-भिन्न आयामों को अनुभव के स्तर पर उभारा गया है तो 'दरार' (वेद राही) कहानी में एक ओर वेद ने युद्ध के संदर्भ में मनुष्य के व्यवहार का विश्लेषण किया है तो दूसरी ओर मानवीय संवेदनशीलता की ऊँचाईयों का स्पर्श किया है।'[३] सचेतन कहानी में नारी संघर्षरत चित्रित हुई है। वह पलायन नहीं करती बल्कि समस्याओं का सामना करने के लिए तत्पर दिखायी देती है। सचेतन कहानी में 'नारी को उसके आधुनिक रूप में फालतु वर्जनाओं और रोज की समस्याओं से जुझते हुए दिखाया गया है। उसका विद्रोह अपनी अस्मिता खोजने के लिए है, न कि कपडे उतार फेंकने के लिए।'[४]

सचेतन कहानी आंदोलन कोई शिल्पगत आंदोलन नहीं है। बल्कि वैचारिक आंदोलन है और इसीलिए इसे नई कहानी या आज की कहानी से भिन्न पहचान पाना बडा ही मुश्किल कार्य है। क्योंकि साठोत्तरी कहानी में भी यही सचेतन दृष्टि प्राप्त होती है हाँलाकि उनके लेखकों ने इन कहानियों के संदर्भ में सचेतन कहानी का दावा नहीं प्रस्तुत किया है। सचेतन कहानीकारों ने शिल्प के प्रति आग्रहशील भूमिका इसलिए भी नहीं स्वीकार की क्योंकि 'नई कहानी तथा अकहानी में

---

१. हिन्दी कहानी : एक अंतर्यात्रा - डॉ. वेदप्रकाश अमिताभ, पृष्ठ ५८
२. साठोत्तरी हिन्दी कहानी और राजनीतिक चेतना - जितेन्द्र वत्स, पृष्ठ ६६-६७
३. संचेतना - ३ हेतु भारद्वाज, पृष्ठ ७७
४. हिन्दी कहानी : एक अंतर्यात्रा - डॉ. वेदप्रकाश अमिताभ, पृष्ठ ५८

शिल्प के प्रति बहुत आग्रह रहा, इसलिए वहाँ कई बार कहानी संप्रेषण के स्तर पर अग्राह्य बन गयी किन्तु सचेतन कहानी शिल्प के बोझ के नीचे दब नहीं जाती।'[1] लेकिन सचेतन कहानी शिल्प के प्रति पूर्णत: उदासीन भी नही है क्योंकि 'कोरे वैचारिक आंदोलन के शिल्पहीनता की ओर भटक जाने का खतरा बना रहता है, इसलिए यह आवश्यक है कि सचेतन कहानी शिल्प के प्रति भी उतनी ही जागरुक रहे।'[2] सचेतन कहानीकार कथ्य के साथ ही शिल्प में भी सहजता को प्रश्रय देती है और यह मानती है कि सहज ही पाठकों तक संप्रेषित होने वाली कहानी ही 'सहज कहानी' है। उपेन्द्रनाथ अश्क इसके शिल्प को और अधिक स्पष्ट करते हुए कहते हैं कि - ''दृष्टि अधिकांश सचेतन कथाकारों की सचेतन, स्वस्थ और समाजपरक है और शिल्प अधिकांश का सीधा सरल और कहानी का आकार छोटा है।''[3] शिल्प को महत्त्व देने के बावजूद भी सचेतन कहानी कथ्य के महत्त्व को जरा भी कम नहीं होने देती। महिपसिंह कहते हैं कि - 'शिल्प के नये नये प्रयोगों के बावजूद कहानी में कथातत्त्व होना चाहिये और उसकी मूल संवेदना को जागरूक पाठक तक संप्रेषित होना चाहिये। सचेतन आंदोलन मूलत: विचार प्रधान आंदोलन है, शिल्प प्रधान नहीं क्योंकि शिल्प विचार के पीछे चलता है, विचार के आगे नहीं और जब कथ्य और शिल्प मिलकर एक हो जाते हैं तब शिल्प को कथ्य से अलगाना आसान नहीं होता, विरोध भी नहीं रहता दोनों में।'[4]

सचेतन कहानी आंदोलन भारतीय जीवन से जुडा एक स्वस्थ वैचारिक आंदोलन था। इसमें न पश्चिम की भोंडी नकल थी और न ही नई कहानी या अकहानी की रूग्ण मानसिकता। नई कहानी के समान इसमें शिल्प की सायासता भी नहीं थी। फिर भी यह आंदोलन शीघ्र ही समाप्त हो गया। उपेन्द्रनाथ अश्क ने बहुत पहले ही कहा था कि - 'सचेतन कहानीकार कोई ऐसी बात नही कहते जो पहले न कही गयी हो। अधिकांशत: ये वही बातें हैं जो प्रेमचन्द के समय से कही जाती रहीं हैं और जिन पर प्रगतिशीलों ने भी काफी जोर दिया है।'[5]

---

१. हिन्दी कहानी आंदोलन-उपलब्धियाँ और सीमाएँ - रजनीश कुमार, पृष्ठ ५१
२. आधार (सचेतन कहानी विशेषांक) राजीव सक्सेना, पृष्ठ २४
३. आधार - उपेन्द्रनाथ अश्क, पृष्ठ ३०
४. इतवारी पत्रिका - ५ अगस्त १९८४, पृष्ठ ११
५. आधार - उपेन्द्रनाथ अश्क, पृष्ठ २९

डॉ महिपसिंह ने स्वंय भी स्वीकार किया कि - 'साहित्यिक आंदोलन कोई राजनीतिक आंदोलन नहीं होता जिसे रजत जयंति या स्वर्ण जयंति मनानी चाहिये। इन आंदोलनों के कुछ मूल्य होते है कि वे अपने समय में चली आ रही साहित्यिक प्रवृतियों को गति दे सके और उस गति की ओर लोगों का ध्यान आकर्षित कर सके। साहित्य की जड़ता को तोडना इन आंदोलनों का काम है।'[१] बहरहाल सचेतन कहानी आंदोलन के कुछ कहानीकार इसे त्याग कर अकहानी की ओर मुड गये या इसका विरोध करने लगे। जगदीश चतुर्वेदी ने अकहानी को अपना लिया तो धर्मेन्द्र गुप्त इसके विरोधक हो गये।

सचेतन कहानी की मूल स्थापनाएँ प्राचीन ही थी। केवल नई कहानी के विरोध स्वरूप डॉ. महिपसिंह और उनके कुछ सहयोगियों के साथ यह आंदोलन उभरा और समाप्त भी हो गया। एक ओर तो सचेतन कहानीकार कथ्य के स्तर पर स्वंय को प्रेमचन्द की धारा से जोडते हैं, वही दूसरी ओर उनका शिल्प नई कहानी का है। इन्ही सब कारणों से उन्हे व्यापक समर्थन नहीं मिल सका और यह आंदोलन समाप्त हो गया।

२.२.४ सहज कहानी :

सहज कहानी आंदोलन के रूप में कभी स्थापित ही नहीं हो पायी। वस्तुत: राजकमल, दिल्ली से प्रकाशित होने वाली 'नई कहानियाँ' मासिक पत्रिका का स्वामित्व जब श्री अमृतराय ने खरीद लिया और वे इसे इलाहाबाद से प्रकाशित करने लगे तब इस पत्रिका के संपादकीय वे 'सहज कहानी' शीर्षक के अन्तर्गत लिखने लगे । तथा लगा कि वे सहज कहानी नाम से एक नये आंदोलन को जन्म देने जा रहे हैं । १९६८ के पूर्व तक 'नई कहानियाँ' पत्रिका नई कहानी आंदोलन की विवेचना का एक सशक्त मंच थी । इसके संपादक श्री भैरवप्रसाद गुप्त, श्री कमलेश्वर और श्री भीष्म साहनी नई कहानी आंदोलन से जुडे कहानीकार थे । श्री अमृतराय ने अपनी पत्रिका के संपादकीय में यह घोषणा की कि - 'नई कहानी के आंदोलन की उपलब्धियों का लेखा-जोखा इतिहास अपने

---

१. इतवारी पत्रिका - ५ अगस्त १९८४, पृष्ठ ११

समय से निश्चित करेगा, लेकिन इतना तो साफ है कि नई कहानी की खोज में सहज कहानी कहीं खो गयी है ।'[१] सहज कहानी के महत्व को रेखांकित करते हुए वे आगे कहते हैं कि सहज कहानी को ठीक ढंग से न पकड पाने के कारण ही नई कहानी अकहानी, सचेतन कहानी तथा साठोत्तरी कहानी जैसे आंदोलनों में तब्दील हो गयी जिससे कहानी को नुकसान हुआ। उनकी दृष्टि में 'सहज कहानी न तो हितोपदेश, जातक, अलिफ लैला, एंडरसन की कहानियाँ हैं और न चेखब, मोपासाँ की कहानियाँ । ये शरचंद्र और रविन्द्र की कहानियाँ भी नहीं हैं।'[२]

सहज कहानी की यह परिभाषा बडी ही विचित्र लगती है । बहरहाल अमृतराय इस सहज कहानी के बारे में जो कुछ सोचते हैं उसका निष्कर्ष कुछ इस प्रकार से निकाला जा सकता है कि -

१) सहज कहानी के कथाकार की कथादृष्टी में मूल रस होता है । बिना कथा रस के सफल कहानी की रचना संभव नहीं है ।

२) सहज कहानी के लेखक का विषय ही उसकी रचना का सहज होना है । लेखक के लिए सहज योग की तरह सहज स्थिती भी आवश्यक है तथा रचना की प्रेरणा उसे सहज स्थिति से ही मिलती है । इस सहज स्थिति में स्वानुभूति में कोई विरोध नहीं होता - पिण्ड में ब्रह्माण्ड को देखना भी यही चिज है । यही सहज स्थिति है पर इस सहज को पाना सरल नहीं है । इसे पाने के लिए अमृतराय परम्परा संबद्ध सहज भूमि, सहज संवेदना की भूमि आवश्यक मानते हैं।

३) सरसता ही सहज कहानी का एक मात्र गुण नहीं है, प्रत्युत उसे 'अच्छा','प्राणवान' और 'सशक्त' होना भी आवश्यक है । उनकी दृष्टि में सहज कहानी वह है जो 'हँसा सके, रुला सके।' यह हृदय ग्राहिता की सहज कसौटी है तथा सहज कहानी अनुकरणमूलक नयेपन की समर्थिका है ।[३]

---

१. नई कहानियाँ - अमृतराय (संपादकीय) मार्च १९६८, पृष्ठ ५
२. नई कहानी के विविध प्रयोग - पाण्डेय शशीभूषण शीतांशु, पृष्ठ ३८
३. हिन्दी कहानी आंदोलन-उपलब्धियाँ और सीमाएँ - रजनीशकुमार, पृष्ठ ५५

अमृतराय सहज कहानी की परिभाषा कुछ इस प्रकार प्रकट करते हैं कि - 'सहज वह है जिसमें आडम्बर नहीं है, बनावट नहीं है, ओढी हुई पद्धति (मैनरिज़्म) या मुद्राकोष नहीं है । आइने के सामने खडे होकर आत्म रति के भाव से अपने अंग-प्रत्यंग को अलग-अलग कोणों से निहारते रहने का प्रबल मोह नहीं है ।'[१] वस्तुत: सहज कहानी न ही किसी बंधन में बंधने को तैयार है और न ही अपने लिए कोई विशिष्ट सांचा ही निर्मित करना चाहती है । बल्कि इन सबसे परे हट कर 'नई हवा को अपने फेफडें में बलात् भर लेना, नये भाव को पूरी तरह अपना लेना, सार्त्र, कामू, काफ्का, कीर्केगार्द को पढ नये शिल्प को प्रेरणा है '।[२] अत: सहज कहानी लेखन के लिए किसी भी प्रकार के नये सांचे को अस्विकार किया गया है ।

निष्कर्षत: सहज कहानी आंदोलन 'नई कहानियाँ' के संपादकियों तथा अमृतराय तक ही सीमट कर रह गया । यह उनका नई कहानी के नाम के स्थान पर एक नया नाम चलाने की कोशीश भर थी । वस्तुत: सहज कहानी के जिन गुणों की बात श्री अमृतराय करते रहे वे नई कहानी में भी मौजूद थे। रही बात आयातित या अनुकरण कर लिखी गयी कहानी की तो यह बात सर्व विदित ही है की नई कहानी वही श्रेष्ठ मानी जाती है जो मौलिक हो । अत: सहज कहानी ने 'नई कहानियाँ' पत्रिका का प्रकाशन बंद होते ही दम तोड दिया।

२.२.५ समांतर कहानी :

सातवे दशक के अन्त तक कहानी में एक ठहराव दिखाई देने लगा । सचेतन कहानी आंदोलन समाप्त हो चुका था और अपने सीमित फलक के कारण सहज कहानी आंदोलन कब सीमट गया - यह भी पता न चल सका। हिन्दी कहानी में आये इस ठहराव की स्थिती के बारे में मन्नू भंडारीजी कहतीं हैं - 'सबसे बडा कारण तो यह है - हमारे अनुभव क्षेत्र की सीमितता। आप ही बताइयें क्या लिखे? किस पर लिखे? वही शहर, वही घर, परिचितों का वही दायरा, रोजमर्रा का वही घिसा-पिटा रूटीन। कितना कुछ इसमें से लिखा जा सकता हैं ? इस स्थिति में दो रास्ते बच

---

१. नई कहानियाँ - अमृतराय, अप्रेल १९६८, पृष्ठ ४
२. नई कहानियाँ - अमृतराय, अप्रेल १९६८, पृष्ठ ७

जाते हैं - या तो लिखना बंद कर दो या फिर अपने को दोहराते जाओं ।'[१] कथ्य के दोहराव और अकहानी पर आक्रोश व्यक्त करते हुए मुद्राराक्षस कहते हैं कि, 'लघु पत्रिकाओं की नब्बे फीसदी कहानियाँ शहर की घुटन में जीते लेखक की कहानियाँ कही जा सकती हैं। शहर की पक्की सडकें, इमारतें, कमरें, सिगरेटें, कभी-कभी शराब भी, नायक सिगरेट पीते हुए, हर बात पर ऊब और एक दूसरे को (या किसी लडकी को) गालियाँ देते हुए युवक। समस्याएँ विशेष नहीं, सिर्फ दुनियाँ से गुस्सा।'[२]

इन व्यक्तव्यों से स्पष्ट हो जाता है कि हिन्दी कहानी में एक दोहराव, एकरसता व ठहराव का दौर चल रहा था और यह महसूस किया जाने लगा था कि देश का एक बडा तबका इन कहानियों में उपेक्षित है, जिसकी आवाज इन कहानियों में कहीं नहीं है। वह सबसे अलग-थलग पडा है। और यह उपेक्षित तबका सामान्य आदमी का है। जिसे कहानी में 'आम आदमी' के नाम से पुकारा गया। समांतर कहानी में यह 'आम आदमी' ही केन्द्र में रहा, उसी के आस-पास कहानियों का सृजन हुआ। 'आम आदमी' शब्द का प्रयोग संभवत: सर्वहारा शब्द के विरोध में किया गया क्योंकि सर्वहारा एक विशेष सिद्धान्त से जुडा शब्द है। 'आम आदमी' की जिंदगी गांवो से लेकर, बाजारों, कस्बो, नगरों और महानगरों तक फैली है। आम आदमी में मजदूर, निम्न मध्यवर्गीय, किसान, खेतिहर, मजदूर, कम वेतन पाने वाला शिक्षक, किरानी, चपरासी और अन्य शोषित पीडित लोगो का संसार शामिल है।'[३]

नई कहानी के प्रमुख हस्ताक्षर कमलेश्वर स्वयं अकहानी का विरोध कर रहे थे। कमलेश्वर उस समय 'सारिका' के संपादक थे। वे 'धर्मयुग' में १९६७ में 'ऐयाश प्रेतों का विद्रोह'[४] इस शीर्षक से लेखमाला लिख कर अकहानी के विरूद्ध अपना विरोध प्रकट कर चुके थे। सन् १९७२ के आसपास 'सारिका' के संपादकीय 'मेरा पन्ना' से उन्होंने 'समांतर कहानी' नाम से नये कहानी आंदोलन का प्रारंभ किया।

---

१. सारिका - सितम्बर १९७०, पृष्ठ ८४
२. सारिका - नवम्बर १९७२, पृष्ठ ७
३. साठोत्तरी हिन्दी कहानी और राजनीतिक चेतना - जितेन्द्र वत्स, पृष्ठ ७५
४. धर्मयुग - (२८ मई १९६७, ४ जून १९६७, ११ जून १९६७ एवं २ जुलाई १९६७)

सन् १९७२ में समांतर-१ के प्रकाशन के साथ ही समांतर कथा चेतना का प्रारंभ माना जा सकता है। समांतर -१ संग्रह समान्तर कहानी की औपचारिक घोषणा करता है।[1] इस संकलन के आरंभ में २८ पृष्ठीय विस्तृत भूमिका ने समांतर कहानीकारों के कहानी सम्बन्धी विचार विमर्श प्रस्तुत किये गये हैं। इब्राहिम शरीफ, ललीत मोहन अवस्थी, जितेन्द्र भाटीया, मधुकर सिंह, डॉ. रामवचन राय आदि ने 'सारिका' में स्वतंत्र लेख लिख कर इसकी वैचारिकता को संकेतित करने का प्रयत्न किया। समांतर कहानी पर कई परिचर्चाएँ, गोष्ठीयाँ, सम्मेलन आदि भी आयोजित किये गये, जिनसे संमातर कहानी की रचनाशीलता, लेखकीय प्रतिबद्धता आदि के विविध पक्षों को स्पष्ट किया गया है। श्याम गोविन्द, प्रभातकुमार त्रिपाठी, राजेन्द्र वर्मा, शाहिर अब्बासी, चंद्रकांत मित्तल, एल.एस. व्यास आदि ने संमातर गोष्ठीयों में भाग लिया। 'यह गोष्ठी मात्र लेखकों तक सीमित नहीं रही, अपितु आज के सजग, सचेष्ट पाठकों को भी उसमें भाग लेने का अवसर दिया गया। जिससे कि लेखक और पाठक के बीच जो सोच और अमल की स्थिति है उसे आमने सामने बैठ कर समझा जा सके।'[2] समांतर कहानी लेखकों में कामतानाथ, इब्राहिम शरीफ, मधुकर सिंह, भीष्म साहनी, राम अरोड़ा, जितेन्द्र भाटीया, दिनेश पालीवाल, दामोदर सदन, आशीष सिन्हा, निरूपमा सेवती, मृदूला गर्ग, शीला रोहेकर, सतीश जमाली, विभू कुमार, श्रवण कुमार, सुदीप, से.रा. यात्री, रमेश उपाध्याय आदि प्रमुख है।

समांतर कहानी के स्वरूप को विवेचित करते हुए कमलेश्वर ने प्रतिबद्धता के प्रश्न को व्यापक अर्थों में देखा है। सामान्यत: प्रतिबद्धता को वामपंथी विचारधारा से जोडकर देखा जाता है। लेकिन समांतर कहानीकार प्रतिबद्धता को लेखकीय दायित्व से जोडते हैं। कमलेश्वर कहते हैं, 'प्रतिबद्धता को एक संलग्नता या संपूर्ण सम्बद्धता (इनवाल्वमेंट) ही माना जा सकता है, सामान्य आदमी के प्रति और पक्ष में, जिनमें हम सब शामील हैं, सम्बद्धता ज्यादा व्यापक और सघन होती है। प्रतिबद्धता की तरह आरोपित नहीं, सम्बद्धता समांतर स्थितियों में जीने की शर्त भी है और

१. समकालीन कहानी - समांतर कहानी - डॉ. विनय, पृष्ठ ६३
२. आज की कहानी - डॉ. भेरूलाल गर्ग, पृष्ठ ५९

लेखक के संदर्भ में अनुभव के अर्थों को समाहित करने के लिए रचनात्मक निर्णयों की एक अनिवार्य परिणति भी। इधर की रचना इसका प्रमाण भी है।'[१]

समांतर लेखक यह मानते हैं कि, लेखन को सामयिक संदर्भों से जुडा होना चाहिये। मार्क्सवाद स्वयं को गतिशील रखने के लिए समय और परिस्थिति के अनुरूप स्वयं को परिवर्तित करने पर बल देता है। ठीक ऐसी ही समांतर लेखन की भी दृष्टि है। 'यह विचार ही साहित्य को युगानुकूल और समकालीन स्थितियों से जोडता है क्योंकि प्रतिमान और चिंतन समयसापेक्ष होते हैं। इसीलिए समय के साथ-साथ उनमें परिवर्तन की आवश्यकता अपेक्षीत हैं।[२]

कमलेश्वर का यह कहना कि - 'हम स्वयं सामान्य आदमी हैं। उसी सामान्य जन में शामिल। हमारी सम्बद्धता उसी के प्रति हो सकती है। यह सम्बद्धता हर स्तर पर है क्योंकि मामूली आदमी हर स्तर पर भय, छल, शोषण, अपमान, दमन से आहत है। मूर्त व अमूर्त तकलीफों से ग्रस्त है। हम इसी वर्ग से, इसी वर्ग के प्रति और इसी वर्ग से सम्बद्ध हैं। हमारी यह सम्बद्धता ही हमें वाम बनाती हैं। और यह वाम हमारी जिंदगी, हमारा यथार्थ, हमारा संपूर्ण संघर्ष और हमारा लेखन हमें वैज्ञानिक मार्क्सवाद के स्रोत से जोडता है। ...... हमारी आस्था जीवन से है और उस जीवन को वहन करने वाला केन्द्र हैं मामूली आदमी और उसी से सम्बध्द है हमारा लेखन और जीवन की आकांक्षाएँ।'[३] समांतर कहानी का नायकत्व सामान्य जन को मिला है। वही केन्द्र बिन्दू है। समांतर कहानीकार की प्रतिबद्धता आम आदमी के प्रति है।

समांतर कहानी का यह विचार है कि आम आदमी की संस्कार-ग्रस्तता उसकी दयनीय स्थिति के लिए उत्तरदायी है। वह उन मूल्यों और विचारों को भी नहीं त्याग पाता जो उसके विकास के मार्ग को अवरूद्ध करते हैं। समांतर कहानी ने इस स्थिति को तोडने का प्रयत्न किया। कमलेश्वर की कहानी 'इतने अच्छे दिन' की 'कमली' अपने संस्कारों से बाहर निकल कर यह

---

१. समांतर - ९, पृष्ठ ११
२. आज की कहानी - डॉ. भैरूलाल गर्ग, पृष्ठ ६०
३. समांतर - १, पृष्ठ १२

विचार करती है कि घर बसाकर उसे गाँव की जातिगत व्यवस्था का शिकार होना पडेगा। जहाँ उसे पानी तक के लिए तरसना पडेगा। इससे बेहतर तो यही होगा कि वह शरीर बेचकर उदरनिर्वाह करे। नये विचार या मूल्य समक्ष न होने से भी बदनसीबी का सामना करना पडता है। ऐसी ही दुर्भाग्यशाली स्थिति 'नसीबों' के हिस्से में आती है। जिसे पति की मृत्यू की समाचार सुनने पर भी सेठ को तुष्ट करने के लिए खाद्य होना पडता है।

समांतर कहानी ने अपने दायित्व को निभाने का पूरा प्रयत्न किया है। समांतर कहानी नैतिक मूल्यों की स्थापना के लिए संघर्ष करती है। अरूण मिश्र की 'अंधे कुएँ का रास्ता', जवाहर सिंह की 'चौथा आश्चर्य', वसंत कुमार की 'सुरंग में पहली सुबह' कहानियाँ ऐसे पात्रों की संघर्षशील कथा है जो भ्रष्टाचार से संघर्षरत है। हाँलाकि संघर्ष के इस पथ पर उन्हें नुकसान ही अधिक उठाना पडता है। किन्तु वे निराश-हताश नहीं हैं। दिनेश पालीवाल की 'एक चालू आदमी', कान्हजी तोमर की 'आंदोलन', आशीष सिन्हा की 'आदमी', हिमांशू जोशी की 'जलते हुए डैने' कहानियाँ संघर्षरत पात्रों की कहानियाँ हैं। इन कहानियों में आम आदमी की विवशता उभरी है।

समांतर कहानी आंदोलन के जन्म के साथ ही प्रबुद्ध पाठकों ने यह जान लिया था कि यह कमलेश्वर का स्वयं को पुनर्स्थापित करने का प्रयत्न है। इस आंदोलन के माध्यम से उनके साथी यह सिद्ध करने का प्रयत्न कर रहे हैं कि प्रेमचंद के पश्चात कमलेश्वर ही श्रेष्ठ कहानीकार है। लेकिन स्वत:की स्तुति के लिए उभारा गया कोई भी आंदोलन अल्पजीवी ही होता है। समांतर कहानी ने आम आदमी को कहानी के केंन्द्र में रखने की बात कही थी लेकिन इस आग्रह के चलते 'कहानीकार कहानियों में जबरन खोजा हुआ और गढा हुआ आदमी परोसने लगे।'[१] इन लेखकों ने कहीं बनावटी आम आदमी को प्रस्तुत किया तो कही बनावटी संवेदनाएँ ही कहानी में उभर कर आयी। आम आदमी का संघर्ष बताने के लिए उसके आस-पास की परिस्थितियों और परिवेश का भयावह चित्र

१. हिन्दी कहानी : एक अंतर्यात्रा - डॉ. वेदप्रकाश अमिताभ, पृष्ठ ६९

प्रस्तुत करने में ही इनकी कलम घिसाई होने लगी। श्रवण कुमार की 'मैं', मणि मधुकर की 'विस्फोट', निर्मला ठाकुर की 'इंतजार', सूर्यबाला की 'निर्वासित' ऐसी ही बनावटी संवेदनाओं की कहानियाँ हैं।

समांतर कहानी की एक अन्य त्रुटी यह भी रही कि उसमें कथ्य को तो बल मिला पर शिल्प विधान पर कोई ध्यान नहीं दिया गया। जबकि कथ्य और शिल्प दोनों ही कहानी में समान रूप से महत्वपूर्ण माने गये हैं । यही गलती सचेतन कहानीकारों ने भी की थी। इसीलिए ये आंदोलन जल्द ही समाप्त हो गये।

आठवे दशक में उभरे आंदोलनों में समांतर कहानी आंदोलन ने कहानी को आगे बढाने में मदद की है। आम आदमी के संघर्ष को उन्होंने कहानी के केन्द्र में रखा। आम आदमी की हर स्तर की लडाई को उन्होंने दिखाने का प्रयत्न किया। लेकिन कमलेश्वर की महत्वाकांक्षा ने इसे सीमित कर दिया। आम आदमी का चित्रण बनावटी होकर रह गया। एक अच्छा कहानी आंदोलन संकीर्णताओं में फंस कर समाप्त हो गया।

२.२.६ जनवादी कहानी :

जनवादी कहानी प्रगतिवाद का ही नविन संस्करण है। प्रगतिवाद अपनी कुछ गलत नीतियों के तहत प्रगति के मार्ग पर आगे नहीं बढ पाया। 'जनवादी कहानी का उदय सातवें दशक के अंतिम वर्षों में माना जाता है। लेकिन उसका वास्तविक उभार आठवे दशक में देखने को मिलता है।'[1] जनवादी कहानी वामपंथी विचारधारा से संपन्न है। जनवादी साहित्य सभी प्रकार के शोषण, अन्याय, उत्पीडन का विरोध करते हुए मुक्ति का स्वर मुखरीत करता है।

सन् १९७७ में दिल्ली विश्व विद्यालय में 'जनवादी विचारमंच' की स्थापना हुई। तथा इसी मंच के तत्वाधान में १४-१५ अक्तूबर, १९७८ को दिल्ली में हिन्दी के लेखकों का एक शिविर

---

१. हिन्दी कहानी : एक अंतर्यात्रा - डॉ. वेदप्रकाश अमिताभ, पृष्ठ ७०

आयोजित किया गया जिसमें दिल्ली, उत्तरप्रदेश, राजस्थान, पंजाब, हरियाणा, बिहार, मध्यप्रदेश, पश्चिम बंगाल के लगभग २५० लेखकों ने भाग लिया। शिविर का केंद्रीय विषय था-'१९६७ से १९७७ तक जनवादी साहित्य के दस वर्ष।' सन् १९६२ में 'जनवादी लेखक संघ' की स्थापना हुई, जिसमें जनवादी लेखक संघ का संविधान भी प्रस्तुत हुआ। तभी से यह आंदोलन तीव्रता से विकसीत हुआ।

जनवादी कहानी आंदोलन के पूर्व 'नई कहानी', 'सचेतन कहानी', 'संमातर कहानी', 'अकहानी', आदि में मुख्यत: मध्यवर्ग या निम्नमध्य वर्ग का जीवन ही चित्रीत हुआ है। अपवाद स्वरूप 'समांतर कहानी' में 'आम आदमी' का चित्रण हुआ। लेकिन समांतर कहानी तक शोषणकर्ता या तो दफ्तर का अफसर हुआ करता था या फिर मिल मालिक। लेकिन 'जनवादी कहानी ने वर्ग संघर्ष की चेतना को साफ रूपायित किया। टूटे, थके - हारे पात्रों की जगह इसने संघर्षशील, जीवंत और जुझारू पात्रों की सर्जना की और वर्ग संघर्ष के चित्रण पर जोर दिया।'[१] वैसे प्रेमचंद ने जिस सर्वहारा वर्ग का चित्रण किया था वह निराला, नागार्जुन से लेकर जनवादी लेखकों तक निरंतर कहीं न कहीं चित्रीत हुआ है। यह संघर्ष बहुआयामी है, 'जनवादी कहानी में मध्यम वर्ग के कई आयाम खुलते दिखाई देते हैं - मध्यमवर्गीय संस्कारों के मोह भंग, आत्मालोचन, सामाजिक विसंगतियों के प्रति तीव्र असंतोष और सर्वहारा के निकट जाने की लालसा आदि।'[२] ज्ञानरंजन द्वारा रचित 'फेंस के इधर-उधर' कहानी में मध्यमवर्गीय संस्कारों के टूटने की पीडा व्यक्त हुई।

जनवादी कहानी में संघर्षशील, जुझारू पात्रों का चित्रण हुआ है। ये संघर्षरत पात्र दिशाहीन, भटके हुए नहीं है बल्कि अपनी दिशा की सही पहचान रखते है और निर्णय लेने की क्षमता भी रखते है। नमिता सिंह की कहानी 'समाधान' का राधे धर्म के नाम पर चली गयी चालों के

१. जनवादी साहित्य के दस वर्ष, पृष्ठ ११८
२. जनवादी साहित्य के दस वर्ष - असगर वजाहत, पृष्ठ ६५

खिलाफ लडाई लडता है तो भैरवप्रसाद गुप्त की कहानी 'हनुमान' का नायक पूंजीवादी व्यवस्था से टक्कर लेता है। मजदूरों के अंतर्विरोध के चलते उनका संघर्ष भी कमजोर पड जाता है। हेतू भारद्वाज की 'गलत इतिहास'का रामस्वरूप मजदूरों की मजबूरी जानता है तथा वह हडताल तुडवाने में नेता बस्तीराम की झूठी मध्यस्थता से व्यथित है। इसी तरह रमेश उपाध्याय की 'देवी सिंह कौन?' में भी मजदूरों की लडाई में फूट डालने वालों की साजिश को उद्घाटिक किया है।

जनवादी कहानी के पात्र आत्मविश्वास से भरे हैं। अब वे लाठी का जबाब लाठी से देने के लिए भी तैयार हैं। 'फर्क' (इसराइल) कहानी का विशू ऐसा ही सोचता है। इसका यह अर्थ नहीं है कि वह हिंसक हो गया है लेकिन अब उसकी सहनशक्ति और शोषण नहीं सह सकती। वह सीधी लडाई लडना चाहता है।'लेकिन कुछ अपवादों को छोडकर जनवादी कहानियों में व्यक्त वर्ग संघर्ष हिंसक नहीं है लेकिन वह बिल्कुल अहिंसक भी नहीं है। उसमें उग्रता और आक्रामकता भरपूर है, लेकिन वह बौद्धिक समझ से अनुशासित है।'[१] हेतू भारद्वाज की 'डीझल', आनंद भारती की 'सनीचरा', मार्कण्डेय की 'बीच के लोग', संजीव की 'अपराध' आदि कहानियों में ऐसे ही संघर्षरत, हार न माननेवाले पात्र हैं।

जनवादी कहानी में ग्रामीण वातावरण का चित्रण भी हुआ है। गांवों में चलनेवाला वर्ग संघर्ष कहानियों में चित्रीत हुआ है। गांवों मे जातिय संघर्ष, सत्ता हथियाने के लिए नेताओं के षडयंत्र जनवादी कहानी कथ्य के बने हैं। इनमें कहीं इन समस्याओं से निपटने के लिए एक जूट होते निम्नवर्ग का चित्रण है तो कही निम्न वर्ग के संगठित रूप को देखकर भयभीत शोषक वर्ग का चित्रण है। ग्रामीण जीवन के साथ ही शहरी जीवन का भी चित्रण जनवादी कहानी में हुआ। जनवादी कहानी मार्क्सवाद पर आधारित है। अत: उनकी सहानुभूति श्रमजीवी वर्ग के प्रति है। लेकिन 'यह विचार अपने आप में गलत है कि केवल मजदूरों और किसानों पर लिखी गयी कहानी ही जनवादी कहानी होगी। यदि लेखक के पास समाजवादी, यथार्थवादी दृष्टि है, उसे जीवन का अनुभव है, तो

---

१. हिन्दी कहानी : एक अंतर्यात्रा - डॉ. वेदप्रकाश अमिताभ, पृष्ठ ७४

पूंजीवादी वर्ग के अंतर्विरोधों तथा उनके घृणित रवैये की वह कलात्मक ढंग से अभिव्यक्त कर सकता है और इस तरह जनवादी कहानी ही लिखी जायेगी।'[1]

जहाँ तक जनवादी कहानी का प्रश्न है उसका शिल्प साधारण है क्योंकि यह आंदोलन शिल्पग्रस्त न होकर, वैचारिक है। फिर भी प्रतिकात्मक, फैंटेसीपरक, एब्सर्ड, पंचतन्त्र शैली का प्रयोग हुआ है। जनवादी कहानी 'आम आदमी' की कहानी है अत: भाषा भी जनसाधारण की ही है। यह लोकभाषा के निकट है। उन्होंने 'सबसे पहले जादूगरी भाषा को तिलांजलि दे दी। सीधे-सादे, क्रूर, फूहड और बिलकुल सामान्य भाषा के मुहावरे कहानी में आने लगे।'[2] जनवादी कहानी में आम आदमी के जीवन की कहानी आम बोलचाल की भाषा में कही गयी है।

प्राय: यह मान लिया जाता है कि किसान-मजूरों की कहानी ही जनवादी कहानी है लेकिन इस भ्रामक धारणा के कारण कई बनावटी कहानियाँ भी रची गई। 'मजदूरों के जीवन, उनकी समस्याओं और परिवेश की जानकारी के बिना कुछ लेखक एक बार फिर 'स्टीरियो टाइप' मजदूरों को कहानी में लाने लगे। किसान-जीवन का क-ख-ग न जानने वालों ने भूमिहीन किसानों पर लिखते-लिखते कलम तोड दी।'[3] यह एक वैचारिक आंदोलन था इसीलिए इन कहानीकारों पर विचारधारा का अतिरिक्त प्रभाव है। विचारधारा के प्रभाव के कारण ही जनवादी कहानी का शिल्प कमजोर बना।

अपनी सीमाओं के बाबजूद यह कहानी आंदोलन महत्वपूर्ण है। जनवादी कहानी प्रेमचंद की परम्परा को ही विकसित करता है। अत: कहानी फिर से विशाल जनसमुदाय से जुड गई। 'आम आदमी' को कहानी में प्रतिष्ठा प्राप्त हुई। जनवादी कहानी ने हिन्दी कहानी को विकसित करने में ऐतिहासिक योगदान दिया।

---

१. जनवादी साहित्य के दस वर्ष - अगसर वजाहत, पृष्ठ ६३
२. जनवादी साहित्य के दस वर्ष - अगसर वजाहत, पृष्ठ ६३
३. जनवादी साहित्य के दस वर्ष - अगसर वजाहत, पृष्ठ ६३

२.२.७ सक्रिय कहानी :

श्री. राकेश वत्स ने 'मंच' के माध्यम से सक्रिय कहानी का सूत्रपात किया। लेकिन राकेश वत्स के अनुसार इसकी शुरूआत १९७५ से ही हो गयी थी। १९७९ में राकेश वत्स मे 'मंच' के दो विशेषांक प्रकाशित किये जिनमें सक्रिय कहानी की अवधारणा को प्रस्तुत किया गया। इन विशेषांकों की सामग्री को संपादित कर 'सक्रिय कहानी की भूमिका' शीर्षक से पुस्तक रूप में प्रकाशित किया गया, जिसके संपादक राकेश वत्स थे।

हमारे देश में जब जनता ने जनता सरकार को देश की सत्ता सौंपी तब सक्रिय कहानी आंदोलन पनप रहा था। जनता पार्टी आंतरिक कलह, स्वार्थ और कुछ महत्वाकांक्षी नेतागणों के चुंगल में फंस कर सरकार चलाने में निरन्तर असमर्थ साबित हो रही थी। जनता मोह भंग की स्थिति से सामना करते करते थक गयी थी। स्वतंत्रता प्राप्ति से जन सामान्य को इसके सिवाय कुछ नहीं मिला कि परकीयों के हाथ से सत्ता स्वकीयों के हाथ आ गयी थी जबकि उनके जीवन में कहीं कोई बदलाव नही था। 'साधारण आदमी को पस्त, नपुंसक, विचार शून्य और संवेदनाहीन बनाने के लिए विदेशी ताकतें जिन हाथकंडों और हथियारों का इस्तेमाल कर रही थी, आज भी इन्हीं से काम लिया जा रहा है।...... आजादी गवाह है कि शक्ति किसी खास वर्ग के हाथ से निकलकर दूसरे खास वर्ग के हाथ में चली गयी है।'[१]

आजादी के बाद जनता का आक्रोश उबल रहा था। चारों ओर निराशापूर्ण परिस्थितियाँ थी। राकेश वत्स ने 'मंच' के माध्यम से कहा भी था कि 'आस्था-अनास्था के परस्पर घुलमिल जाने की स्थिति ने हम सबको एक अजीब किस्म की दुविधा, बेचारगी, उदासीनता और ठंडेपन में ला पटका है। इस स्थिति में जी रहा आदमी, विशेषकर युवक, मात्र एक ठंडे विद्रोह और सोते आक्रोश को पीठ पर लादे, नंगा होकर बिना हथियार, छाती पर भूजाएँ रखे या हथेलियों मे चेहरा भरे अपने आपसे लड रहा है।[२] ऐसी परिस्थितियों में लेखक का उत्तरदायित्व बढ जाता है। वही

---

१. हिन्दी कहानी : एक अंतर्यात्रा - डॉ. वेदप्रकाश अमिताभ, पृष्ठ ७६

२. मंच - पैंसठोत्तरी युवालेखन विशेषांक (संपादकीय), पृष्ठ ९

सामान्य व्यक्ति के क्षोभ, क्रोध को प्रकट करता है। राकेश वत्स मानते हैं कि ऐसे में लेखक की 'सक्रियता' अथवा 'संघर्षशीलता' बहुत मायने रखती है। वे रचनाकार में उन मूल्यों की मौजूदगी चाहते हैं, जो उसे व्यक्तिगत तौर पर भी जुझारू बना सके।'[१] उनकी दृष्टि में वही रचनाकार बेहतर है जो व्यावहारिक जोखीम उठा सकता है। इसलिए वे कहानी के पात्रों का सक्रिय होना आवश्यक मानते हैं।

सक्रियता से उनका तात्पर्य है -'चेतनात्मक उर्जा और जीवतंता की कहानी। उस समय और अहसास की कहानी, जो आदमी को बेबसी, निहत्थेपन और नपुंसकता से निजात दिलाकर स्वयं अपने अंदर की कमजोरियों के खिलाफ खडा होने के लिए तैयार करने की जिम्मेदारी अपने सिर लेती है। जो साहित्य की इस सार्थकता के प्रति समर्पित है कि साहित्य संकल्प और प्रयत्न के बीच की दरार को पाटने का एक जरिया है।'[२] क्योंकि साहित्य ही पाठकों में सही समझ, सही दिशा और जागृति पैदा करती है। सक्रिय कहानी अपने पाठकों को विषमता के विरूद्ध लडनेवाले योद्धा के रूप में तैयार करना चाहती है।

सक्रिय कहानी मानवीय मूल्यों की स्थापना करती है। डॉ. वेदप्रकाश अमिताभ कहते हैं राकेश वत्स 'मार्क्सवादियों-विशेषत: किताबी मार्क्सवादियों के बड बोलेपन की अति मानते हैं। वे साधारण जन के लहू को उन व्यापरियों से बचाने की बात करते हैं जो मार्क्सवाद की किताब पर हाथ रख कर पवित्र हो जाने का ढोंग करते हैं।[३] राकेश वत्स प्रवृत्तियों के स्थान पर मूल्यों की और व्यक्तिगत स्वार्थ और लाभ के स्थान पर समाजगत स्वार्थ और लाभ पर बल देते हैं। वे ऐसे लोगों की बात कहना चाहते हैं जो रूढ संस्कारों मे जकडा, बेबस और शोषित है जो निष्क्रियता की मौत मरने पर विवश है।[४]

---

१. हिन्दी कहानी : एक अंतर्यात्रा - डॉ. वेदप्रकाश अमिताभ, पृष्ठ ७६
२. सक्रिय कहानी की भूमिका - सं. राकेश वत्स, पृष्ठ १
३. हिन्दी कहानी : एक अंतर्यात्रा - डॉ. वेदप्रकाश अमिताभ, पृष्ठ ७८
४. सक्रिय कहानी की भूमिका - सं. राकेश वत्स, पृष्ठ १७

सक्रिय कहानी की अवधारणा से स्पष्ट होता है कि यह भी वामपंथ में विश्वास रखती है। उनकी संवेदनाएँ भी वर्तमान आर्थिक-सामाजिक शोषण के विरूद्ध जुडी हुए हैं। समांतर कहानी और जनवादी कहानी भी यही कहती है। लेकिन राकेश वत्स उन वामपंथी लेखकों से बचने को कहते हैं जो स्वार्थी है और सामान्य जन की बातें चापलुसी भरे ढंग से परोसकर उनकी कमजोरीयों और कमियों को प्रकट करतें हैं। सक्रिय कहानी से जुडे श्री. सुरेन्द्र कुमार कहते हैं कि 'सक्रियता का अर्थ मेरे लिए यह है - रचनाकार की रचना-सक्रियता, शोषित जनता को उसके अधिकारों के प्रति जागरूक करना, उसके वर्ग शत्रु को उसके सामने नंगा करना, वर्ग शत्रु के तमाम माध्यमों, तरिकों एवं उसके मूल्यों का पर्दाफाश करना एवं उनसे निपटने के लिए शोषित वर्ग को संघटनात्मक तरीके से सक्रिय करना।'[१] अर्थात सक्रिय कहानी सामान्य जनता में जागृति लाना चाहती है। इसके लिए वह साहित्य को एक महत्वपूर्ण माध्यम मानती है।

सक्रिय कहानी आम आदमी की कहानी है जो उनके शोषण और शोषण के कारणों को उजागर कहती है। सक्रिय कहानी शोषण के विरूद्ध आवाज उठाती है। 'उसका फैसला' (सुरेन्द्र कुमार) कहानी में सामंती उत्पीडन और आम आदमी की दयनीय दशा चित्रित है। लेकिन 'लक्खा' उनसे लडने का निर्णय लेता है। 'उठो लक्ष्मीनारायण' (सुरेन्द्र मेनन) का नायक 'लक्ष्मी' हर संकट का सामना करता है और अपनी ही नहीं दूसरी फैक्ट्रियों के मजदूरों को भी शोषण के खिलाफ संघठित करने का यत्न करता है। रमेश बतरा की 'जंगली जुगराफिया' का 'फौजासिंह' पहले अकेले ही पूंजीवादी ताकतों से लड रहा था लेकिन जल्द ही गाँववाले भी उसके साथ संघर्ष में शामिल हो जाते हैं। 'आखिरी मोड'(कुमार संभव), 'काले पेड' (राकेश वत्स), 'एक न एक दिन'(नवेन्दू) आदि कहानियों में ऐसे ही सक्रिय संघर्ष करते पात्र चित्रित हुए हैं। सक्रिय कहानी के पात्र सचाई, ईमानदारी, भलाई, जनहित के लिए संघर्ष करते हैं। डॉ. वेदप्रकाश अमिताभ कहते है कि सक्रिय कहानी ने 'आम आदमी समांतर कहानी से लिया है और उसे सक्रियता और तेजस्विता जनवादी चिंतन से लेकर दी गयी है।'[२]

---

१. सक्रिय कहानी की भूमिका - सं. राकेश वत्स, पृष्ठ १८०
२. हिन्दी कहानी : एक अंतर्यात्रा - डॉ. वेदप्रकाश अमिताभ, पृष्ठ ७८-७९

राकेश वत्स के अतिरिक्त सक्रिय कहानी में रमेश बत्रा, विवेक निझावन, सच्चिदानंद धुमकेतु, नवेन्दु, चित्रा मुद्‌गल, सुरेन्द्र मेनन, श्रवण कुमार, अब्दुल बिस्मिल्लाह, श्रीकांत, सिरिल मैथ्यू आदि का भी सहभाग रहा। इन्होंने सक्रिय कहानी के विकास में पर्याप्त योगदान दिया।

सक्रिय कहानी को व्यापक आधार प्राप्त न हो सका। वह राकेश वत्स की 'मंच' पत्रिका तक ही सीमित रहा। डॉ. विश्वंभरनाथ उपाध्याय प्रश्न उठाते हैं कि कहानी किन मूल्यों के प्रति सक्रिय हो? जबकि 'राकेश वत्स की सक्रियता में इस तरह के आधारभूत सवालों के लिए कोई उत्तर नहीं हैं।' सक्रिय कहानी की सीमाएँ बहुत हैं। वह कलात्मकता की बात नहीं करती हैं। केवल कथ्य पर बल देती है, जो कहानी की अधूरी अवधारणा है।

सक्रिय कहानी आंदोलन अपने सीमित फलक के कारण विशेष प्रभाव नहीं पैदा कर सका। यह आंदोलन कुछ समांतर कहानी और कुछ जनवादी कहानी का मिश्रण था। इसकी अपनी वैचारिक भूमिका कुछ विशेष नहीं थी। वास्तव में कहानी के विकास में संघर्षशील पात्र के अतिरिक्त इसका कोई विशेष योगदान नहीं रहा।

३. हिन्दी उपन्यास का विकासक्रम :

यद्यपि भारतीय कथा-साहित्य अत्यन्त प्राचीन है तथापि हिन्दी उपन्यास साहित्य आधुनिक युग की देन है । उपन्यास के आधुनिकतम रुप के अनुसार संस्कृत साहित्य में उपन्यासों का अभाव ही था। वैसे तो समस्त प्रेमाख्यान काव्य भी उपन्यास साहित्य का एक निखरा हुआ रुप प्रतीत होता है। इन प्रेम कथानकों में 'मधुमालती', 'मृगावती', 'हीर और रांझा', 'ढोला मारुरा दुहा' आदि अधिक प्रशंसनीय हुए। गद्य साहित्य की अन्य विधाओं की भांति हिन्दी उपन्यास का उद्‌भव भी आधुनिक युग की ही देन है। उपन्यास साहित्य का वर्गीकरण करते समय विभिन्न विचारकों ने अपनी-अपनी सुविधानुसार उसे विभाजित करने का प्रयास किया है। हमने हिन्दी उपन्यास साहित्य को निम्नलिखित तीन भागों में विभाजित किया है -

१) प्रेमचंद पूर्व उपन्यास साहित्य

२) प्रेमचंदयुगीन उपन्यास साहित्य

३) प्रेमचंदोत्तर उपन्यास साहित्य

३.१ सर्वप्रथम मौलिक उपन्यास :

प्रेमचंद पूर्व उपन्यास साहित्य पर विचार करते समय हमारा ध्यान सर्वप्रथम इस और जाता है कि हिन्दी का पहला मौलिक उपन्यास किसे माना जाय? यों तो हिन्दी साहित्य के सभी अंगो के विकास की और ध्यान देनेवाले भारतेन्दु हरिश्चन्द्र की दृष्टि उपन्यास साहित्य पर भी पडी और उन्होंने 'पूर्ण प्रकाश' और 'चंद्रप्रभा' नामक उपन्यास का अनुवाद किया तथा 'हमीरहठ' नामक एक मौलिक उपन्यास को लिखना भी प्रारंभ किया पर दुर्भाग्य से वह पूर्ण न हो सका। इसी प्रकार उन्होंने 'कुछ आप बीती कुछ जग बीती' नामक एक उपन्यास लिखना प्रारंभ किया था। पर वह भी अपूर्ण ही रह गया। कुछ समीक्षक १८०७ में लिखित इंशाअल्ला खाँ की 'रानी केतकी की कहानी' को तो कुछ १८७२ में लिखित मुन्शी कल्याण राय की 'वामा शिक्षक' को तो कुछ अन्य १८७७ में रचित श्रद्धाराम फुल्लोरीकृत 'भाग्यवती' को हिन्दी का पहला मौलिक उपन्यास मानते हैं। पर ये कृतियाँ न उपन्यास हैं न आधुनिक कहानी। सन १८८२ ई. में हिन्दी का पहला उपन्यास 'परीक्षा गुरु' नामक लिखा गया और 'परीक्षा गुरु' के रचयिता लाला श्रीनिवासदास को हिन्दी का पहला उपन्यासकार माना गया।

३.२ प्रेमचंद पूर्व उपन्यास साहित्य :

वर्तमान में अधिकांश विचारक लाला श्रीनिवासदासकृत 'परीक्षा गुरु' को हिन्दी का सर्वप्रथम मौलिक उपन्यास मानते हैं। इस उपन्यास में अंग्रेजी शिक्षा प्राप्त मध्य वर्ग की बुराईयों में जकडे एक व्यापारी का चित्रण किया गया है। यह उपन्यास मध्य-वर्ग के सामाजिक जीवन का प्रतिनिधी उपन्यास है।

सामान्यतया सामाजिक और नैतिक उत्थान के उद्देश से लिखे जाने वाले उपन्यासों की जो परंपरा 'परीक्षा गुरु' से प्रारंभ हुई इसमें योग देनेवाले उपन्यासकारों में पं. बालकृष्ण भट्ट, राधाकृष्णदास, अयोध्यासिंह उपाध्याय 'हरिऔंध' और लज्जाराम मेहता के नाम विशेष उल्लेखनीय हैं। भट्टजी ने 'नूतन ब्रह्माचारी' और 'सौ अजान एक सुजान' नामक दो उपन्यासों की रचना की जिनमें से पहले में एक युवक के सदाचरण द्वारा एक डाकू के सुधार और दूसरे में दो धनी व्यापारियों की कुसंगता से पतन तथा एक मित्र की सहायता से उद्धार की कथा है। हरिऔंधजी ने 'ठेठ हिन्दी का ठाठ' और 'अधखिला फूल' नामक दो उपन्यास लिखें जिनमें से प्रथम में अनमेल विवाह का दुष्परिणाम दिखाया गया है और दुसरे में ग्रामीण जनता के अंध विश्वासों का चित्रण है। लज्जाराम मेहता ने इन सभी उपन्यासकारों से अधिक उपन्यास लिखे हैं और उनके उपन्यासों में सुधार की भावना ही प्रधान रुप से है। धूर्त रसिकलाल, स्वतंत्र रमा, परतंत्र लक्ष्मी, आदर्श दम्पति, बिगडे का सुधार और आदर्श हिंदू उनके उल्लेखनिय उपन्यास है।

देवकीनंदन खत्री ने पहले नरेंद्र मोहिनी, कुसुमकुमारी और वीरेंद्र वीर आदि उपन्यासों की रचना की थी पर उनका उपन्यास 'चंद्रकांता' (सन १८९२) हिन्दी साहित्य में नई दिशा की ओर संकेत करता हैं। 'चंद्रकांता' के चार भाग हैं और उसके पश्चात 'चंद्रकांता संतति' (चोबिस भाग) व 'भूतनाथ' (अठरहा भाग) का प्रकाशन हुआ तथा हिन्दी साहित्य में तिलिस्मी व ऐय्यारी के उपन्यासों की परंपरा प्रारंभ हुई। इन उपन्यासों में कल्पना की दौड और अतिप्राकृत प्रसंगो की अधिकता के कारण पाठकों के मनोरंजन की यथेष्ट सामग्री है।

गोपालराम गहमरी नें हिन्दी में जासूसी उपन्यासों की परंपरा प्रारंभ की। उन्होंने सन् १९०० से 'जासूस' नामक मासिक पत्र का प्रकाशन प्रारंभ किया और लगभग १५० छोटे-बडे मौलिक व अनुदित उपन्यास हिन्दी जगत को प्रदान किए जिसमें से खूनी कौन, बेकसूर की फाँसी, जासूस की भूल, मेम की लाश, अद्‌भूत खून आदि विशेष उल्लेखनीय है।

देवकीनंदन खत्री के पुत्र दुर्गाप्रसाद खत्री ने लाल पंजा, प्रतिशोध, रक्तमंडल और सफेद शैतान जैसे साहसिक उपन्यास लिखकर जासूसी उपन्यासों की परंपरा ही विकसित की है। पर उनके उपन्यासों में राष्ट्रीय भावना को भी प्रश्रय दिया गया है। सामान्यता उनके उपन्यासों के पात्र विदेशी साम्राज्यवाद से संपूर्ण एशिया को मुक्त कराने की लालसा रखते हैं और अंग्रेजी साम्राज्यवाद को उखाड फेंकने के लिये संगठन पर भी जोर देते हैं। इस प्रकार हिन्दी उपन्यास साहित्य में तिलिस्म व ऐय्यारी और जासूसी व साहसिक उपन्यासों की अधिकता सी दीख पडने लगी। पं. किशोरीलाल गोस्वामी को हिन्दी उपन्यास जगत में 'पायनिअर' का कार्य करने का श्रेय प्राप्त है। गोस्वामीजी ने लगभग साठ-पैंसठ उपन्यास लिखे है और उन्हें तिलस्मी, जासूसी, सामाजिक व ऐतिहासिक आदि विभिन्न प्रकार के उपन्यास लिखने का श्रेय प्राप्त है। उन्होंने तारा, कानन कुसूम, मल्लीका देवी और सुलताना रजिया बेगम आदि उपन्यास लिखकर ऐतिहासिक उपन्यासों का श्री गणेश किया है। इसी प्रकार उन्होंने त्रिवेणी या सौभाग्य श्रेणी, लिलावती या आदर्श सती, राजकुमारी चपला, पुनर्जन्म और मालती माधव नामक कई सामाजिक उपन्यास भी लिखे।

इस युग में ब्रजनन्दन सहाय, लालाभगवानदीन, श्रीधर पाठक, मिश्रबंधू, ईश्वरीप्रसाद शर्मा आदि ने भी उपन्यास प्रस्तुत किए। सामन्यता इस युग में सर्वाधिक अनुवाद बांगला से हुए और बंकिमचंद्र, उमेशचंद्र दत्त, चंडीसरन सेन, चारुदत्त, रवींद्रनाथ ठाकुर व शरतचन्द्र की रचनाओं के प्रचुर परिमाण में अनुवाद हुए। इसी प्रकार उर्दू, अंग्रेजी और मराठी के भी कई सुन्दर-सुन्दर उपन्यासों के हिन्दी में अनुवाद हुए तथा हिन्दी उपन्यास साहित्य की पर्याप्त अभिवृद्धी हुई।

३.३ प्रेमचन्द युगीन उपन्यास साहित्य :

विचारक प्रेमचन्द पूर्व उपन्यास साहित्य को निर्माण और अनुवाद का आरंभिक युग मानते है। इस युग को पार करते ही हम हिन्दी उपन्यासों के उस नविन युग में पहुँचते है जिसका शिलान्यास प्रेमचन्द जी ने किया और जिसमें आकर हिन्दी उपन्यास एक सुनिश्चित कला स्वरुप को प्राप्त कर अपनी आत्मा को पहचान सका तथा अपने उद्देश से परिचित होकर उसकी पूर्ती में लग

सका। इस प्रकार प्रेमचन्द को निर्विवाद रुप से हिन्दी उपन्यास साहित्य का निर्माता कहा जा सकता है तथा उन्हें हिन्दी का युगप्रवर्तक अमर कलाकार भी कहा जाता है। सच तो यह है कि उनसे पूर्व हिन्दी उपन्यास सर्वथा अविकसित था, उसमें तिलिस्मी, ऐय्यारी और जासूसी कथाओं को ही प्रधानता थी। किन्तु प्रेमचंदजी ने उपन्यास साहित्य को मानवीय जीवन के निकट ला दिया और उसमें तात्कालीन सामाजिक और राजनीतिक समस्याओं का चित्रण किया। उनके उपन्यास तत्कालीन, संघर्षमय जीवन और समाज के प्रतिबिंब है।

यद्यपि प्रेमचंद की साहित्य साधना का समय सन १९०० से प्रारंभ होता है। पर प्रेमचंदजी प्रारंभ में उर्दू में लिखते थे और सन १९१४ तक वे उर्दू में ही साहित्य सृजन करते रहे। इस प्रकार 'सेवासदन' को जो कि सन १९९६ में प्रकाशित हुआ था प्रेमचंद का पहला हिन्दी उपन्यास कहा जाता है पर इसके पूर्व उन्होंने 'वरदान', 'प्रतिज्ञा' या 'प्रेमा' और 'रुठी रानी' आदि उपन्यास भी लिखे थे। 'सेवासदन' एक समस्या-प्रधान उपन्यास हैं और वह कथोपकथन, भाव, शैली एवं कथावस्तु आदि दृष्टियों से सर्वथा नवीन और मौलिक कृति है। 'सेवासदन' हमारे समाज और परिवार की कुरीतियों से उत्पन्न होनेवाले भीषण दुष्परिणामों का वास्तविक चित्र है तथा उसमें दहेज प्रथा और अनमेल विवाह आदि समस्याएँ प्रस्तुत की गयी हैं।

प्रेमचंदजी के समसामयिक उपन्यासकारों में जयशंकर प्रसाद, विश्वंभरनाथ शर्मा 'कौशिक', चतुरसेन शास्त्री, सुदर्शन पाण्डेय बेचन शर्मा 'उग्र', ऋषभचरण जैन, राजा राधिकारमण प्रसाद सिंह, प्रतापनारायण श्रीवास्तव, वृंदावनलाल वर्मा, शिवपूजन सहाय, गोविंदवल्लभ पंत, भगवतीचरण वर्मा, सियारामशरण गुप्त, भगवतीप्रसाद, वाजपेयी, सुर्यकांत त्रिपाठी 'निराला,' राहूल साकृंत्यायन और जैनेंद्रकुमार आदि की गणना की जाती है पर इनमें से अधिकांश उपन्यासकारों की प्रतिमा प्रेमचंदोत्तर काल में अधिक निखर के सामने आयी।

प्रसादजी ने 'कंकाल' 'तितली' और 'इरावती' नामक तीन उपन्यास लिखें हैं पर 'इरावती' अपूर्ण ही रह गया है। प्रसादजी के 'कंकाल' और 'तितली' सामाजिक उपन्यास ही हैं।

जहाँ तितली प्रेमचंदी परम्परा का ग्राम जीवन से संबंधिक उपन्यास है वहाँ कंकाल में मानव जीवन की यथार्थता का चित्रण अपने अतिरुप में दिखाई पडता है। उसी प्रकार कौशिकजी ने 'माँ' और 'भिखारीणी' नामक उच्चकोटी के सामाजिक उपन्यास प्रस्तुत किये तथा चतुरसेन शास्त्री ने हृदय की प्यास, हृदय की परख, अमर अभिलाषा, आत्मदाह , सोमनाथ, वयं: रक्षाम, वैशाली की नगरवधू, सोना और खून व गोली आदि कई सामाजिक एवंम् ऐतिहासिक उपन्यासों की रचना की।

पंडित बेचनशर्मा 'उग्र', और ऋषभचरण जैन के उपन्यासों में नग्न यथार्थ तथा प्रकृतिवाद की ही प्रधानता है। उग्र का 'दिल्ली का दलाल, बुधुआ की बेटी, शराबी तथा ऋषभचरण जैन की मुर्दाफरोश आदि कृतियाँ इसी कोटि की है। वृंदावनलाल वर्मा ने ऐतिहासिक और सामाजिक दोनों ही प्रकार के उपन्यास प्रचुर संख्या में लिखे। उनके प्रसिद्ध उपन्यासों के नाम गढकुंभार, प्रेम की भेंट, विराटा की पद्मिनी, मुसाहिब जू, झाँसी की रानी, कचनार, अचल मेरा कोई, महादजी सिंधिया, टुटे काँटे, मृगनयनी, अहिल्याबाई, भुवन आदि है।

सामान्यतया प्रेमचन्द और प्रसाद के पश्चात विविध सामाजिक समस्याओं पर उपन्यास लिखनेवालों की हिन्दी साहित्य में बाढ-सी आ गयी। प्रेमचंद युग में हिन्दी उपन्यास साहित्य की पर्याप्त समृद्धि हुई और प्रेमचंद के समवर्ती कई उपन्यासकारों जैनेंद्र, भगवतीचरण वर्मा आदि की प्रतिभा प्रेमचंदोत्तर युग में और भी अधिक निखरे हुए रुप में सामने आयी।

३.४ प्रेमचंदोत्तर उपन्यास साहित्य :

वस्तुत: प्रेमचंदोत्तर युग में हिन्दी उपन्यास साहित्य ने विविधमुखी उन्नति की है। एक धारा निम्न मध्य वर्ग के जीवन, उसकी निराशाओं और असफलताओं को अपनाती है। इसके प्रमुख परिचायक जैनेंद्र, भगवतीप्रसाद बाजपेयी, अश्क आदि है। दूसरी धारा व्यक्तिवादी, अहंवादी, नाशवादी दृष्टिकोन को अपनाती है। इसके प्रतिनिधी भगवतीचरण वर्मा, अज्ञेय आदि है। एक धारा मनोविश्लेषणशास्त्र के प्रभाव में अतृप्त वासनाओं की अभिव्यक्ती करती है। इसके प्रमुख प्रतिनिधी इलाचंद्र जोशी रहे है। एक अन्य धारा भारतीय श्रमजीवी वर्ग की अग्रगामी शक्तीयों से संबंध जोडती

है और भविष्य की धरती को संजोती है। इसके प्रमुख प्रतिनिधी यशपाल, रांगेय राघव, पहाडी, भगवतशरण उपाध्याय, नागार्जुन, अमृतलाल नागर आदि हैं। इससे यह स्पष्ट हो जाता है कि प्रेमचंद परवर्ती हिन्दी उपन्यास कई धाराओं में प्रवाहित हुआ है। स्थुल रुप से हम प्रेमचन्दोत्तर उपन्यासों को निम्नलिखीत वर्गो में विभाजित कर सकते हैं -

१) सामाजिक उपन्यास

२) मनोवैज्ञानिक उपन्यास

३) साम्यवादी उपन्यास

४) राजनैतिक उपन्यास

५) ऐतिहासिक उपन्यास

६) आंचलिक उपन्यास

३.४.१. सामाजिक उपन्यास :

इनमें समाज की सामन्य समस्याओं का चित्रण किया जाता है। ऐसे उपन्यासोंमें समाज के धार्मिक अंध विश्वास व रुढियाँ, नारी का समाज में स्थान, स्त्री पुरुष के संबंध तथा प्रेम का आदर्श आदि बातें विशेष रुप से अंकित की जाती है। इस युग में प्रतापनारायण श्रीवास्तव, सियारामशरण गुप्त, भगवतीप्रसाद वायपेयी आदि ने कई अच्छे सामाजिक उपन्यास लिखे हैं। प्रतापनारायण श्रीवास्तव की 'विदा' में तीन परिवारों की कथा को एक सूत्र में गुंथकर पाश्चात्य और पौर्वात्य संस्कृति का द्वन्द्व दिखाया गया है, जिसमें पौर्वात्य संस्कृति की विजय होती है। श्रीवास्तवजी का उपन्यास 'विजय' विधवा विवाह की समस्या से सम्बधित है और उनके विकास में अर्वाचिन व प्राचीन मान्यताओं के संघर्ष की कुछ कथाओं का सगुंफन हैं। भगवतीप्रसाद बाजपेयी के पिपासा, दो बहनें, निमंत्रण और पतवार आदि उपन्यासों में आर्थिक सामाजिक दोनों दृष्टिओं से स्त्री-पुरुष के पारस्पारिक प्रेम और अतृप्त अभिलाषा आदि का चित्रण हुआ है। एकदा, विश्वास का बल, सूनी राह और गोमती के तट पर आदि कुछ नवीन उपन्यासों में बाजपेयीजी की कला अधिक निखरी हुई हैं।

प्रेमचंदोत्तर सामाजिक उपन्यासों में निम्नलिखीत कृतियाँ भी उल्लेखनीय हैं - निराला जी की अलका और निरुपमा, राधिकारमण प्रसाद सिंह की 'पुरुष और नारी', 'सूरदास', 'पूरब और पश्चिम', 'नारी एक पहेली', भगवतीचरण वर्मा की 'तीन वर्ष', 'आखिरी दाँव', 'अपने खिलौने', 'वह फिर नहीं आई', 'सामर्थ्य और सीमा', 'थके पाँव और रेखा', उपेन्द्रनाथ अश्क की 'सितारों के खेल', 'गर्म राख', 'बडी-बडी आँखे', 'पत्थर शहर में घूमता आईना' और 'बांधो न नाव इस ठाँव', उदयशंकर भट्ट की 'वह जो मैंने देखा', 'नये मोड', 'एक नीड दो पंछी', 'शेष-अशेष' और 'डॉ. शेफाली' आदि, रांगेय राघव की 'घरौंदे', 'कब तक पुकारुं' और 'आग की प्यास' आदि, बलवंतसिंह की 'रात', 'चोर और चाँद', 'एक मामुली लडकी' और 'उजाला', राजेंद्र यावद की 'उखडे हुए लोग', 'सारा आकाश', 'अनदेखे अनजान पुल', नरेश मेहता के 'उखडे हुए मस्तुल' और 'यह पथ बंधू था', मोहन राकेश की 'अँधेरे बंद कमरे', कमलेश्वर की 'एक सडक सत्तावन गलियाँ' इत्यादी।

३.४.२ मनोवैज्ञानिक उपन्यास :

सामान्यतया हिन्दी में मनोवैज्ञानिक उपन्यासों का सूत्रपात करने का श्रेय जैनेंद्र को प्रदान किया जाता है और हम देखते हैं कि प्रेमचंद ने व्यक्ती के मनोविज्ञान को समाज के साथ मिलाकर देखा था, जैनेद्र ने व्यक्ती के मनोविज्ञान के प्रकाश में समाज को देखा । प्रेमचंद का क्षेत्र गाँव, खेत और विस्तृत सामाजिक जीवन था, जैनेद्र ने शहर की गली और कोठरी में प्रवेश किया। जैनेंद्र ने समाज की बाह्य समस्याओं के स्थानपर आभ्यंतर मन की गुत्थियां सुलझायी। इस प्रकार जैनेंद्र के परख, सुनीता, त्यागपत्र, कल्याणी, सुखदा, व्यतीत और विवर्त आदि उपन्यासों में मुख्यतया मनोवैज्ञानिक विश्लेषण को ही प्रधानता है और कहीं-कहीं जैनेंद्र दार्शनिक से हो गये है।

यद्यपि वैयक्तिक मनोवैज्ञानिक चित्रण प्रधान उपन्यासों का सूत्रपात जैनेंद्र ने किया है पर फ्रायड, एडलर, युंग आदि की मान्यताओं के प्रकाश में उपन्यासों द्वारा पात्रों की नूतन सृष्टी करने का श्रेय इलाचंद्र जोशी को ही है। उनके उपन्यासों में व्यक्ती के चरित्रों का अध्ययन उसके स्वप्न,

संभाषण और भाव-भंगी के आधार पर होता है तथा प्रेम उनके उपन्यासों का केन्द्रिय भाव है क्योंकि मनोविश्लेषण शास्त्र में कामवासना ही जीवन की सबसे बडी प्रेरक शक्ति हैं। 'जहाज का पंछी', 'संन्यासी', 'मृण्मयी', 'परदे की रानी', 'प्रेत और छाया', 'लज्जा', 'निर्वासित' और 'जिप्सी' आदि उनके उपन्यासों में मनोविश्लेषण कि प्रधानता है।

'शेखर : एक जीवनी', 'नदी के द्विप' आदि प्रसिद्ध उपन्यासों में अज्ञेय में मनोविश्लेषण प्रधान उपन्यासों का नवीन रुप प्रस्तुत किया है। 'शेखर : एक जीवनी' में उपन्यासकार ने यह स्पष्ट करना चाहा है कि मनुष्य के जीवन में प्रारंभ से ही भय, कामवासना एवं अंह का किस प्रकार जन्म एवं विकास होता है। अज्ञेय का उपन्यास 'नदी के द्विप' हिन्दी साहित्य की उल्लेखनीय बहुचर्चित कृति है। इसी प्रकार डॉ. देवराज का 'पथ की खोज', नरोत्तम नागर का 'दिन के तारे', डॉ. धर्मवीर भारती का 'गुनाहों का देवता', डॉ. द्वारिका प्रसाद का 'घेरे के बाहर' और श्रीमती रजनी पननिकर के 'पानी की दीवार', 'काली लडकी' और 'जाडे की धुप' आदि उपन्यास मनोवैज्ञानिक उपन्यास ही माने जाते है।

३.४.३ साम्यवादी या प्रगतिवादी उपन्यास :

मार्क्सवाद के प्रचार द्वारा हिन्दी में साम्यवादी या प्रगतिवादी उपन्यासों के निर्माण की ओर उपन्यासकारों का ध्यान गया। इस दिशा में यशपाल को अग्रणी समझना चाहिए। उन्होंने 'दादा कामरेड', 'देशद्रोही', 'पार्टी कामरेड' और 'मनुष्यों के रुप' आदि उपन्यासों में साम्यवादी प्रचार का तत्व होते हुए भी उन्हें हिन्दी के श्रेष्ठतम उपन्यासकारों की प्रथम पंक्ति में स्थान प्रदान किया जाता है। यशपाल के अतिरिक्त राहूल सांकृत्यायन, नागार्जुन, रांगेय राघव, अश्क और भैरवप्रसाद गुप्त आदि ने इस धारा को पुष्ट किया है। नागार्जुन के 'बलचनामा' और 'नई पौंध', रांगेय राघव के 'विषाद मठ', 'अश्क की गिरती दीवारें' और भैरवप्रसाद के 'मशाल' आदि उपन्यासों में साम्यवादी विचारधारा का स्पष्ट चित्रण हुआ हैं।

३.४.४. राजनैतिक उपन्यास :

सामान्यतया प्रेमचंद के सामाजिक उपन्यासों में राजनैतिक जीवन का विशद चित्रण किया गया है और 'कर्मभूमि' तो शुद्ध राजनीति पर आधारित है। इस परंपरा को दृढतापुर्वक अग्रसर करने का श्रेय राजा राधिकारमण प्रसाद सिंह को है। उनके 'राम रहीम' नामक उपन्यास में गांधीजी की हिंदू मुस्लीम एकता पर आधारित राजनिति का ब्योरेवार चित्रण किया गया है। इसी प्रकार अंचल ने 'चढती धुप' में सन् १६४२ के राष्ट्रीय आंदोलन की असफलता के कारणों का विश्लेषण कर साम्यवादी राजनीति का समर्थन किया है और उनकी 'नई इमारत' में भी प्रगतिशिलता का यही स्वर है। इस प्रकार भगवती चरण वर्मा के 'टेढे-मेढे रास्ते', 'स्वाधिनता के पथ पर' और 'स्वराज्य दान' आदि उपन्यास इसी वर्ग में आते हैं।

३.४.५ ऐतिहासिक उपन्यास :

वस्तुत: प्रेमचंद युग में ही वृंदावनलाल वर्मा ने अनेक ऐतिहासिक उपन्यास लिखकर हिन्दी में ऐतिहासीक उपन्यासों की परम्परा को समृद्ध करने में अपना महत्त्वपूर्ण योग दिया था। वर्माजी की प्रतिभा का इस युग में उत्तरोत्तर निखार ही हुआ। उनके अतिरिक्त, भगवतीचरण वर्मा की 'चित्रलेखा', यशपाल की 'दिव्या और अमिता', रांगेय राघव की 'मुर्दो का टीला', डॉ. हजारीप्रसाद द्विवेदी की 'बाणभट्ट की आत्मकथा' और 'चारु चंद्र लेख' तथा रघुवीरशरण मित्र की 'आग और पानी' आदि ऐतिहासिक कृतियों को प्रेमचंदोत्तर युग की उल्लेखनिय रचनाएँ माना जाता है। इनमें से 'चित्रलेखा' और 'बाणभट्ट की आत्मकथा' विशेष महत्वपूर्ण है तथा हमारे साहित्य में गौरवपूर्ण स्थान की अधिकारिणी है।

३.४.६ आंचलिक उपन्यास :

प्रेमचंद, वृंदावनलाल वर्मा आदि की कृतियों में आंचलिकता का आभास मिलता है। लेकिन फणीश्वरनाथ रेणू के १९५४ में प्रकाशित 'मैला आंचल' से आंचलिक उपन्यास का आरंभ माना जाता है। आंचलिक उपन्यासों में लोकतत्वों के आधार पर जनपदीय जीवन का चित्रण किया जाता

है। रेणू का 'मैला आंचल', 'परती परिकथा', 'जुलूस' प्रसिद्ध आंचलिक उपन्यास है। रेणू के साथ ही शिवप्रसाद सिंह, मार्कण्डेय, शैलेश मटियानी ने भी आंचलिक उपन्यासों की रचना की है।

४. निष्कर्ष :

संक्षेप में स्वातंत्रोत्तर काल में अनेक कहानी आंदोलन आये और कुछ विशिष्ट रचनाकार और रचनाएँ दे गये। कुछ आंदोलन कुछ अरसे तक चले तो कुछ जैसे आए थे, वैसे चले गये। नई कहानी आंदोलन ऐसा आंदोलन था जो प्रेमचंद की जमीन से जुडा था। नई कहानी की त्रयी के बिखरते ही यह समाप्त हो गया। अकहानी तेजी से उभरी और समाप्त भी हो गयी । सहज कहानी का फलक सीमित था। वह 'नई कहानियाँ' पत्रिका के प्रकाशन तक ही सीमित रहा। समांतर कहानी कमलेश्वर के 'सारिका' के संपादक पद का भार छोडते ही बिखर गयी। सक्रिय कहानी की सीमाएँ उसे ज्यादा चर्चित नहीं कर पायी। जनवादी कहानी अब भी संभावनाओं से युक्त है। वह प्रेमचंद की धारा को आगे बढा रही है। उसकी जडे यथार्थ के धरातल पर जमी है। लेकिन वर्तमान में कहानिकारों का 'आंदोलनों ' के प्रति विशेष मोह नहीं दिखायी देता। यूँ भी कहानीकार की रचनात्मकता ही इतिहास बनती है आंदोलन तो कुछ समय के लिए ही होते हैं।

इसी प्रकार उपन्यास विधा भी नई-नई धाराओं के साथ विकसित हुई और वर्तमान समय में निरन्तर अग्रसर हो रही है। उपन्यास अपने विस्तृत फलक के होते हुए भी और वर्तमान समय के व्यस्त जीवन में भी केवल इसीलिए पाठक प्रिय विधा है क्योंकि विषयों की विविधता, मनोरंजन के तत्त्व और शैली की रोचकता पाठक को बांधे रखती है।

...

तृतीय अध्याय

चित्रा मुद्गल के कथा साहित्य कथ्य के आधार पर अनुशीलन

तृतीय अध्याय

चित्रा मुद्‌गल के कथा साहित्य का कथ्य के आधार पर अनुशीलन

१. प्रस्तावना :

कहानी के छ: प्रमुख तत्व माने गये हैं। यों तो सभी तत्व अपने आप में महत्वपूर्ण होते हैं। किंतु इनमें सर्वाधिक महत्व रखनेवाला तत्व कथानक या कथावस्तु है। कथ्य अर्थात जो कहा जा रहा है। अंग्रेजी में कथानक को 'प्लाट' कहा जाता है। इसे ही 'थीम' भी कहते है। यूँ 'प्लाट' का एक अर्थ-कपट योजना या षडयंत्र भी है। लेकिन साहित्य में 'प्लाट' शब्द कथानक का ही पर्याय है। कथानक की गतिशील घटनाएँ सीधी रेखा में नहीं चलती। उनमें उतार चढाव आते हैं। व्यक्ति का भाग्य बदलता है - अपने वातावरण के विरूद्ध उसे प्राय: संघर्ष करना पडता है। कथानक में जीवन के इसी गतिमान संघर्षशील रूप की अवतारणा की जाती है।[१] डॉ. प्रतापनारायण टंडन ने कथावस्तु को कहानी में सुनिबद्ध घटना सूत्रों का संकलन कहा है, जो कहानी का मूल आधार होती है।[२] अर्थात कहानी की निर्मिती में कथावस्तु आधारभूत रूप में कार्य करती है और उसमें घटनाओं की क्रमगतता आवश्यक होती है।

१.१. कथावस्तु की विशेषताएँ :

दैनंदिन जीवन में सुबह से शाम तक कई घटनाएँ एवं प्रसंग घटित होते हैं लेकिन वह 'कथावस्तु' नहीं कहलाते। 'दैनिक' जीवन में घटित घटनाओं को, विविध क्षेत्रों से ली गई वस्तु को जब कहानीकार रचना के धरातल पर अपने जीवन विषयक विचारधाराओं के अनुरूप मौलिक स्तर पर उठाता है, तभी वह कथावस्तु का रूप धारण करती है। एक सफल कहानी के लिए यह भी आवश्यक है कि वह सुसूत्र रूप से गुंफित हो। डॉ. लाल के अनुसार-'वस्तुविन्यास की दृष्टि से

---

१. हिन्दी साहित्य-कोश-भाग १ - सं. - धीरेन्द्र वर्मा, पृष्ठ २०३
२. हिन्दी कहानी कला - डॉ. प्रतापनारायण टंडन, पृष्ठ २६२

कथानक के तीन अंग होते हैं-१. आरम्भ २. मध्य और ३. चरमसीमा अथवा अंत।[1] अर्थात सफल कहानी के लिए यह आवश्यक है कि कथावस्तु इस प्रकार नियोजित हो कि वह क्रमश: चरमसीमा की ओर बढे, उसकी धारा में शैथिल्य न आने पावे। साथ ही पाठक के मन में उत्तरोत्तर उत्सुकता और जिज्ञासा उत्पन्न करें।'[2] कहानी में कथावस्तु की एकात्मकता की रक्षा करना बहुत आवश्यक होता है। उसके आरम्भ से आगे आने वाली घटना का आभास होना चाहिऐ। मध्य का सम्बन्ध आरम्भ और अन्त में प्रस्तुत सूत्रों से होना चाहिऐ। अंत का सम्बन्ध आरम्भ और मध्य में घटित घटना सूत्रों से होना चाहिऐ। आधुनिक कहानी में पुरानी कहानी कला के समान कहानी का विकास नहीं माना जाता। आधुनिक कहानी में आदि और अंत पर विशेष बल दिया जाता है। आधुनिक कहानी में भी वस्तु है, संघर्ष है, जिज्ञासा है, आश्चर्य है लेकिन इस का स्तर भावुकता की बजाय बौद्धिकता का है। वस्तुत: 'आधुनिक कहानी-कला के मूल तत्वों में परिवर्तन नहीं हुआ है, वरन् उन तत्वों के प्रति रचनात्मक दृष्टिकोण में परिवर्तन उपस्थित हुआ है।'[3]

२. चित्रा मुद्‌गल की कहानियों के वर्ण्य विषय :

युगानुरूप विविध विषय कहानी की वस्तु बनते हैं। आधुनिक कहानी में घटना के स्थान पर मानव-संघर्ष, अंन्तर्द्वंद्व को अधिक महत्व प्राप्त है। 'स्थूल घटनाओं के बजाय मानवी स्थितियाँ, मूड्स, भाव तथा प्रसंगो को महत्व मिला है।'[4] चित्रा मुद्‌गल की रचनाएँ वस्तु विहीन नहीं हैं। उनकी कहानी का वर्ण्य विषय यथार्थ के धरातल से चुना गया है। उनकी कहानियों की कथावस्तु विविध क्षेत्रों से, अलग-अलग भावभूमि से ग्रहण की गई है। उनके कथानकों में भी स्थूल घटना के स्थान पर सूक्ष्मता है। छोटी-छोटी बातें भी उनकी कथा की वस्तु बन सकती है। उनके कहानियों की कथावस्तु की यह भी विशिष्टता है कि उसमें उठाए गए प्रश्न और समस्याएँ पाठक को विचलित कर

---

१. हिन्दी कहानीयाँ की शिल्प-विधी का विकास - डॉ. लक्ष्मीनारायण लाल, पृष्ठ २९६.
२. कहानी कला, विकास और इतिहास - डॉ. श्रीपति शर्मा त्रिपाठी, पृष्ठ १५
३. हिन्दी कहानियों को शिल्प-विधी का विकास - डॉ. लक्ष्मीनारायण लाल, पृष्ठ ३००
४. कहानी : पुराने बनाम नई - डॉ. साधना शाह, पृष्ठ १२

देते हैं। पाठक कहानी को बार-बार पढने को विवश हो जाता है और समस्या की गहराई तक पहुँच कर विचार करने को बाध्य हो जाता है। उनकी कहानियों की बुनावट, आन्तरिक और बाह्य भी, ऐसी होती है कि पाठक कहानी से आंतरिक लगाव महसूस करता है, और कहानी का अंत आते-आते कहानी के मार्मिक कथ्य से प्रभावित हो जाता हैं।

चित्रा मुद्‌गल की कहानियों का कथ्य यथार्थ जीवन से लिया गया है अर्थात इसका यह आशय कदापि नहीं है कि इसमें कोरा अनुभववाद ही है। क्योंकि वे मानती हैं कि 'विचारशून्य कहानी पागल का प्रलाप है और संवेदनाशून्य कहानी मृतक देह। कहानी मनोरंजन के लिए नहीं लिखी जाती, जिज्ञासाएँ कुरेदने के लिए लिखी जाती है, जो व्यक्ति के भीतर आत्मद्वंद्व ही नहीं उत्पन्न करती, उसे आत्मप्रश्नों से भी झिझोंडती है ताकि वह जगे।'[१] जन-जीवन से जुडे प्रश्नों को कहानी के माध्यम से उठा कर वे जागृति का कार्य करना चाहती हैं। हमारे जीवन से जुडी समस्याओं को उनकी कहानी में स्थान मिला है। उनकी कहानियों के कथ्य का विश्लेषण हमने अलग-अलग समस्याओं के अन्तर्गत किया है जैसे- पारिवारिक समस्या, सामाजिक समस्या, आर्थिक समस्या आदि।

२.१ सामाजिक समस्या से सम्बन्धित कहानियाँ :

चित्रा मुद्‌गल मुंबई से गहरे जुडी हैं। मुंबई की झुग्गी-झोपडियों को निकट से देखने का अवसर उन्हें प्राप्त हुआ है। ऐसे में अनेक परिवारों को मिलकर उनकी समस्याओं को समझने का यत्न किया है। उनका यही अनुभव संसार कहानी में चित्रित हुआ है। न जाने कितनी सामाजिक समस्याओं का ब्यौरा वहाँ के लोगों ने चित्राजी को दिया। इस उपशीर्षक के अन्तर्गत सामाजिक समस्याओं से सम्बन्धित कहानियाँ ली गई है। 'फातिमाबाई कोठे पर नहीं रहती' उन स्त्रियों पर लिखी गई कहानी हैं जिन्हें समाज अपने शरीर का विक्रय करने के लिए मजबूर करता है। फातिमाबाई सिर्फ कोठे पर ही नहीं न जाने कितने घरों मे विद्यमान है। 'चेहरे 'कहानी भीख

---

१. लोक शासन - १९ जुलाई ९५, पृष्ठ ७

मांगनेवाली स्त्री की है। रेल्वे प्लेट फार्म पर भीख मांगने वाली अधनंगी स्त्रियों को न तो पुलिस हटा सकती है न रेल प्रशासन। क्योंकि यार्ड के एकांत में पुलिसवाले उसके शरीर को पाते हैं तो रेल-प्रशासन के अधिकारी हफ्ता प्राप्त करते हैं। फिर भला ऐसी समस्या का हल कैसे निकाला जा सकता है? 'बंद' कहानी साम्प्रदायिक दंगों से ग्रस्त शहर के आम जन से जुडी है। 'सुख' और 'स्टेपनी' की कहानियाँ नौकरानियों से सम्बन्धित हैं। 'सुख' की नौकरानी उचित वेतन और अन्य सुविधाओं के रहते भी केवल इसलिए काम छोड देती है कि उस घर में कोई मर्द नहीं है। 'स्टेपनी' कहानी में यह जानकर भी कि नौकरानी के मालकिन के पति से सम्बन्ध है, उसे काम पर रखा जाता है। 'अढाई गज की ओढनी' में टी.वी. के दुष्परिणाम की ओर संकेत किया गया है। चित्राजी ने सामाजिक बुराईयों की ओर इशारा करने वाली कई लघुकथाएँ भी लिखी हैं, जिन्हे केवल 'लघु कथाएँ' शीर्षक के अन्तर्गत रखा गया है।

२.१.१ झुग्गी झोपडी का जीवन : विवाहेतर सम्बन्ध –'केंचुल' :

चित्रा मुद्‌गल की केंचुल कहानी झोपडपट्टी से सम्बन्धित है। कमला भले ही दारु का धंधा करती है पर वह नहीं चाहती कि उसकी बेटी सरना गलत रास्ते पर चले। अश्लील हरकत करने वाले बानी की शिकायत जब सरना कमला से करती है तो वह क्रोध से तिलमिला उठती है। वह बानी के मूँह पर थूकना चाहती है। लेकिन 'किसके बूते पर लडे? अपने? एकली अपने? ताकत है लडने की? मजाल थी कि बानी की छीछालेदारी किये बगैर ही लौट पडती? पर लौटती कैसे न! बानी के एहसान जो छाती पर लदे बैठे है।'[1] बानी उसका कच्चा चिट्‌ठा जानता हैं। दारु के लिए कच्चा माल उसे वही देता है। कई बार पुलिस का हफ्ता भी वही चुकाता है। और सोचा जाय तो अब कोई और धंधा उससे हो भी नहीं सकता। चार बच्चों और एक निखट्टू पति की जिम्मेदारी सिर्फ कपडे बर्तन करके वह नहीं संभाल सकती। उसके शरीर की ताकत समाप्त हो चली हैं। हर सेठानी को उससे रोज शिकायत होती रहती थी। तिमैया की माँ ने दारु का धंधा सुझाते हुए कहा था कि वह

---

१. केंचुल - ग्यारह लम्बी कहानियाँ - चित्रा मुद्‌गल, पृष्ठ ११९

उसे शरीर बेचने का धंधा नही सुझा रही है। यह धंधा विष्णु के मन के अनुकूल था। पर वह सिवाय पीने के कुछ नहीं करता था। रत्नू को मार डाला गया, गोविंदा घर से भाग गया पर बाप होने के नाते विष्णु को उसकी कोई पर्वा नहीं थी। औलाद ही नहीं बल्कि पत्नी के लिए भी उसका कलेजा पत्थर का था। वह अपने रिश्तेदारों में बहुत बदनाम था। मटका खेलने से लेकर चोरी करने तक सभी काम वह बडी बेशर्मी से पूरे करता था। इसीलिए उसे कोई भी अपनी लडकी देने को तैयार नहीं था। कमला का बाप, कमला की मामी को चाहता था। उसी के कहने से विष्णु के साथ कमला की शादी की गयी थी।

कमला झोपडपट्टी के इस गंदे माहौल से सरना को दूर ही रखना चाहती थी। इसीलिए सरना की जिद पर उसे सब्जी की फेरी लगाने के लिए सामान और लोकल का पास निकलवा देती है। वह दिन भर कॉलोनी में तो शाम को स्टेशन के बाहर पाटी लेकर सब्जी बेचती है। न वह फिजूल खर्ची करती थी, न ही देर से लौटती थी। जिंदगी चल निकली थी। अचानक एक दिन रुकमनी तायी खबर लाती है कि सरना का किसी भैय्या से टांका भिड गया है। वह उसी की बगल में कांदा-बटाटे की ढेरी लगाता है। कमला ने सरना में आये परिवर्तन को गौर किया तो पाया कि वह अब चोटी की बजाय जूडा बनाने लगी है और उसमें गजरा भी लगाने लगी है। घर भी देर से जाती है और पेट-दर्द का बहाना कर ठीक से खाना भी नहीं खाती। जब कमला उससे देर से आने का कारण पूछती है तो वह स्पष्टतया बता देती है कि वह कल्पू की खोली पर जाती है। उसके लिए खाना भी बनाती है। कमला यह सुन कर स्तब्ध रह जाती है। प्यार तो उसने भी नन्दू से किया था। पर इस तरह खुले-आम नहीं। सरना को सबसे बचाकर रखने के उसके सारे प्रयत्न निष्फल हुए। वह सरना की स्पष्टोक्ति से क्रोधित हो जाती है - ''खोली पर जाती ...क्या-क्या नई करती होयेगी तू? हाँ ... मूँ काला किया न मेरा ... बोत तन के चलती न मैं ... मिट्टी किया न आबरु ... खलास करके सोडेगी उस साआले भैइये के बच्चे को...''[1]

---

१. केंचुल - ग्यारह लम्बी कहानियाँ - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ १२६

परंतु उसका यह आक्रोश आक्रोश ही बना रहा। नन्दू उससे विवाह करने के लिए बहुत पिछे पडा था पर वह डटी रही थी। वह उससे छिप-कर ही मिलती रही। अच्छा ही हुआ कि वह नन्दू की बातों में नहीं आयी। क्योंकि उसकी मृत्यु के बाद कमला को पता चला कि गाँव में उसकी पत्नि और तीन बचे थे। ब्याह के बाद भी कमला नन्दू से मिलती रही। यह तो सिर्फ वही जानती है कि सरना नन्दू की बेटी है। कल्पू कमला से सरना का हाथ मांगने घर भी आता है। लेकिन दूध की जली कमला टका-सा जवाब दे देती है कि न उनकी जात-बिरादरी एक है, न रीत-रिवाज एक है। और सबसे महत्वपूर्ण बात तो यह है कि ''भैया लोगों पर अपन को ईस्वास नई... एक जोरु मुलुक में रखते ... एक औरत इदर फंसाते।''[१] कल्पू के जाते ही सरना प्रतिवाद करती है कि वह अपनी माँ के समान निकम्मे पति के साथ नहीं रहेगी न ही दारु की भट्टी लगायेगी उसे तो 'औरत सरखा घर में रैने का ... भैया लोगों में औरत को घर पे रखते ... धन्ना पानी नई करवाते ... उसका कमाई नई खाते ...।'[२] सरना के जीवन की एक नई दिशा उसे दिखाई दी।

कमला की सोच में बदलाव आता है। यद्यपि वह यह नहीं चाहती कि उसके साथ जो बीता वह उसकी बेटी के साथ भी हो तथापि अब वह यह भी सोचने लगी है कि ऐसा वर उसकी बेटी को उसकी बिरादरी में मिलने वाला नहीं है। वह निश्चय कर कल्पू से बात करती है कि यदि उसे सरना से विवाह करना है तो देर न करें। विवाह के लिए वह आर्थिक मदद भी देने को तैयार है। वह अपने भूतकाल से त्रस्त है जब उसने भी नन्दू से प्रेम किया था और विवाह बाह्य सम्बन्ध भी स्वीकारे थे। फिर भी उसने धोखा खाया था। वह यह त्रासदी अपनी बेटी को नहीं भोगने देना चाहती। अतःशीघ्र ही उसका ब्याह वह कल्पू से करना चाहती है।

२.१.२. लघु व्यवसायी : अपराधी वृत्ति निर्मित करता समाज – 'बेईमान' :

आदमी कोई ईमानदार या बेईमान पैदा नहीं होता उसे परिस्थितियाँ ईमानदार या बेईमान

---

१. केंचुल - ग्यारह लम्बी कहानियाँ - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ १३०
२. केंचुल - ग्यारह लम्बी कहानियाँ- चित्रा मुद्गल, पृष्ठ १३१

बना देती हैं । अम्मा की मृत्यु के बाद छटंकी की मामी उसे अमीशकरपूर लिवा ले गयी थी। जहां दिन भर ढोर-ढंगर का सानी पानी करने पर भी उसे भरपेट रुखी रोटी नहीं मिल पाती थी। एक दिन वह भाग आया। इस प्लेटफार्म पर बाबू भाई ने ही पसीजकर उसे काम दिया था और पुलिस वालों को भी समझा दिया था कि उसे तंग न करे। वह उसका रिश्तेदार है। बाबू भाई जानते हैं कि पचीस रुपये दिहाडी मांगने वालों की बजाय बीस पैसे कमीशन पर काम करने वाला 'छंटकी' उनके काम का है। वह पढा-लिखा भी नहीं है। पत्रिकाओं की तस्वीरों से वह पत्रिकाओं को पहचानता है। अनुभव से वह जान गया है कि आम गाडियों के सूखे मुँह वाले मुसाफिर पत्रिकाएँ देखते अधिक है, खरीदते कम है। एयर कंडीशन गाडियों के दो डब्बे भी मुश्किल से निपटा पाता है। क्योंकि ये गाडियाँ राजधानी से छुटने पर कोटा जाकर ही रुकती है। अपनी कृश काया के साथ दस किलो की पत्रिकाओं को संभालकर चलना मुश्किल है उसके बाजू दुखने लगते हैं।

लेकिन पत्रिकाएँ बेच लेना आसान काम नहीं है। बडे-बडे लोग रेजगारी न होने पर पत्रिकाएँ तो रख लेते हैं पर बाद में पैसे ही नहीं चुकाते। फिर यदि टिकट-चेकर उसे डिब्बे में न घुसने दे तो वह कैसे पत्रिकाएँ बेचेगा? अत: उसने यदि कोई पत्रिका उठा भी ली तो वह कुछ बोल नहीं पाता। मालिक उस पर कुछ खास नाराज भी नहीं होता। नुकसान के पैसे छटंकी के कमीशन से कट जाते हैं। कई दिनों से वह बक्कल वाली निकर के सपने देख रहा है। पुरानी निकर सुतली से बंधी होने पर भी खिसक ही जाती है। वह गाडी में अलग-अलग सवारियों को उनकी पसंद की पत्रिकाएँ दे देता है । कईयों के पास रेजगारी नहीं थी। गाडी छुटने के आसार नजर आते ही वह सबसे पैसे इकट्ठा करने के लिए दौड पडता है। लेकिन अब गडबडी में उसे पत्रिका खरीदने वालों के चेहरे ही याद नहीं आ रहे। अचानक उसे उस सभ्य दिखने वाली महिला का स्मरण आता है जिसने उससे दो पत्रिकाएँ ली थी। वह संकोच छोड उससे पैसे मांगता है तो वह साफ इंकार कर देती है। वह फट पडती है - 'किसी और को दी होंगी तूने ... ईडियट ... ये 'राजधानी' है कि छकडा? कैसे-कैसे उचक्कों को धुसाकर बैठा लेते हैं गाडी में जिन्हें सवारियों से बात करने तक की

तमीज नहीं...'[१] ट्रेन चलने को तत्पर देख वह तेजी से उतरने लगता है तो अचानक टिकट बाबू उसके हाथों की पत्रिकाओं के ढेर से एक पत्रिका खींच लेते हैं।

बाबू भाई को हिसाब देते हुए पत्रिकाओं और पैसों का जोड ही नहीं बैठता। बाबूभाई उस पर खूब नाराज होते हैं कि उसने टिकट बाबू को क्यों पत्रिका लेने दी। यदि इसी प्रकार वह मुफ्त पत्रिकाएँ बाँटता रहा तो उसका तो धंधा ही चौपट हो जाएगा। बडे ही कठोर शब्दों में वे उसे धमकाते है -'ले पकड अपने इक्कीस रुपये और दफा हो सामने से। सदाव्रत खोल रखा है मैने हेंअ? भिखमंगो पर दया करके ऐसी ही लात लगेगी ...एक के पीछे रुपिया - डेढ रुपिया मुश्किल से कमीशन मिलता है, बीस पैसे तुझे दूँ कॉपी पीछे ... क्या कमाऊंगा?''[२] यदि वह किसी दिन पूरी पत्रिकाएँ लेकर चम्पत हो गया तो किसे पूछेंगे वे?

छटंकी के बहुत रोने गिडगिडाने पर अपने नफे नुकसान का विचार कर बाबूभाई उस पर दया दिखाते हुए पत्रिकाएँ देकर ड्लिक्स की ओर भगाते है। गाडी छूटने ही वाली थी। वह तय किये था कि बिना छुट्टे के किसी को पत्रिका नही देगा। इतने में ही एक व्यक्ति ने पचास का नोट थमा 'फिल्मी कलियाँ' ली। छुट्टा लाने के बहाने से वह भाग कर रिजर्वेशन चार्ट के पिछे दुबक जाता है। तब तक गाडी छूट जाती है। सवारी परेशान सी उसे देखने का यत्न करती है। गाडी गति पकडने लगती है और वह मन ही मन हिसाब करता है कि बाबू भाई के नुकसान के पैसे देकर भी उसके पास इतने पैसे बच जाते हैं जिससे वह बक्कल वाली निकर खरीद सकता है। वह गाडी में मिली सभ्य समझी जाने वाली सवारियों से ही बेईमानी करना सीखता हैं। यदि बेईमानी की सजा हम छटंकी को देना चाहे तो उससे पहले हमें उन सभ्य-सुशिक्षित लोगों को सजा देनी चाहिये जो बिना मजबूरी के भी बेईमानी करते हैं। इसीलिए पाठक की सहानुभूति छटंकी को मिलती है। यह कहानी चित्राजी के सूक्ष्म निरिक्षण को ही दर्शाती हैं।

---

१. बेईमान - जगदंबाबाबू गाँव आ रहे हैं - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ ८५
२. बेईमान - जगदंबाबाबू गाँव आ रहे हैं - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ ८८

२.१.३. भिखारियों की समस्या – 'चेहरे' :

रेल्वे स्टेशन पर अक्सर हम भीख मांगने वालों को देखते हैं। आमतौर पर सभी उन भिखारियों को जी भर कर कोस लेना ही पर्याप्त समझते हैं। चित्राजी ने ऐसे ही भिखारियों पर यह कहानी लिखी है। चित्राजी का दृष्टिकोण आम लोगों की तरह एकांगी न होकर व्यापक है। इस समस्या को गहरे निरीक्षण से उन्होंने समझने की कोशिश की है।

रेल्वे स्टेशन पर खडी भीड जब तक टिकट-खिडकी पर कतारबद्ध रहती है तभी तक भीख मांगने वालो को भला बुरा कहती है। कभी किसी की जेब कट जाने पर बडा हो-हल्ला किया जाता है कि ये भिखारिनें केवल यात्रियों की दया दृष्टि पाकर एकाध सिक्का नहीं पाना चाहती, बल्कि अपने लिए ग्राहक भी जुटाती है। ये भिखारिनें बार-बार दया की याचना करते हुए यात्रियों का ध्यान अपनी और आकर्षित करती हैं और फिर भीड में छुपे उनके साथीदार जेब काट कर चम्पत हो जाते हैं। कई-कई बार रेल प्रशासन से शिकायत करने पर भी कुछ असर नही होता। वे अपना स्पष्टीकरण देते हैं कि रेल प्रशासन खुद ही इन भिखारियों से बडा परेशान हैं। लेकिन जब तक यात्री ही अपनी भीख देने और उन भिखारियों के माध्यम से अपना परलोक सुधारने की आदत से निजात नही पाते कोई कुछ नहीं कर सकता। सरकार गरीबी नहीं हटा पा रही फिर बेचारे मुसीबत के मारों का क्या करें ? सरकार ने भिक्षुक आश्रम खोल कर भिक्षुकों को वेन्स् में भर कर आश्रम पहुँचाया था मगर लाभ कुछ नहीं हुआ। ये लोग रेल्वे स्टेशन भी गंदा कर देते हैं। 'टिकट घर के सामने इनसे कितनी गन्दगी होती है ... कौने-कोने पर अपने चीकट मैले-कुचैले नंग-धडंग बच्चे बैठा देंगी जो खाना, अबाना,हगाना, मूतना एक साथ निपटाते रहेंगे ... और-तो-और गाडियाँ तो जैसे इनके बाप की मिल्कियत है ... फ्री पास दे रखा है रेल्वे ने इन्हें कि यात्रियों से भत्ता वसूल करते रहो।'[१]

कुछ समय पूर्व ही रेल प्रशासन ने भिक्षुकों की व्यवस्था की थी। ढिलाई के कारण ही फिर से रेल्वे स्टेशन पर भिखारियों की भीड बढ गयी। कथा नायक का कहना है कि ये केवल पेट भरने

---

१. चेहरे - इस हमाम में - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ ४९

और तन ढंकने के लिए ही भीख नही मांगते वरन 'भीख मांगना लोगों का पेशा हो गया है और पेशा इतनी आसानी से नहीं बदला जा सकता।'[१] अपंगों की लाचारी तो समझ में आती है लेकिन हट्टी-कट्टी भिखारनों को भीख मांगते देख वह सोचते है कि यूँ ढूंढने पर घर में काम करने वाली बाईयाँ नहीं मिलती। रेल्वे वाले भी यात्रियों की सुरक्षा के सवाल पर टका-सा जवाब दे देते है कि रेल्वे स्टेशन ही नही पूरा बंबई जेबकतरों से भरा है वे किस-किस की सुरक्षा करें।

उसी समय एक वृद्ध की जेब कट जाती है। एक बच्चा भीड में से भागता है। उसी को जेबकतरा समझकर उस बच्चे की माँ को ही पकड लिया जाता है। भीड जमा देखकर नायक भाषण देना शुरु कर देता है। उसका कहना था कि ये लोग भीख मांगने के साथ ही उनकी गाढी कमाई भी ले उडते हैं। लोगों की जेबें कट जाती हैं। ऐसी घिनौनी हरकते रेल्वे स्टेशन के लिए कलंक की बात हैं। भीड पर उसके भाषण का परिणाम होता है। अब मोर्चा उनके हाथ आ जाता है। कथा-नायक सबको ललकारता है कि इस समस्या को हम स्वंय हल करेगें। स्टेशन पर बैठे भिखमगों-भिखमंगियों को खदेड देगें । तुरंत भीड सक्रिय हो उठती है-'यात्री भिखारियों पर टूट पडे और उन्हें घसीट-घसीट कर सडक पर ले जाने लगे। उनके बासन, मैली-कुचैली चादरें बाहर फेंक दिए गए। उनके बच्चे सहमे-रोते-चीखते बाहर भागे ।[२] कुछ ही देर में पुलिस भी आ जाती है। एक पुलिसवाला जब उस भीखमंगी को हटाना चाहता है तो वह टस से मस नहीं होती। एक बाँह में अपने बच्चे को भींचे वह खम्भे से चिपक कर खडी हो जाती है और फूहड गालियाँ बरसाते हुए सारी भीड को चुनौती देती-सी गरजती है-' यहीं बैठेगी मैं... ये जागा मेरी है और काय को नई बैठूँगी। वो जो बडे बाबू बैठते आतमध्ये(भीतर)... हप्ता लेते मेरे से.... और ये भडवे (उसने सिपाहियों को दुत्कारा) क्या पकडेगे मेरे को रात यारड में ले जाके....'[३] भीड की सारी उत्तेजना और क्रोध एक क्षण में ठंडा पड जाता है।

---

१. चेहरे - इस हमाम में - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ ४९
२. चेहरे - इस हमाम में - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ ५५
३. चेहरे - इस हमाम में - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ ५७

सिपाही उस भिखारन को बाहर घसीट ले जाते हैं। भीड फिर पंक्ति बद्ध हो टिकट-खिडकी पर खडी हो जाती हैं। नायक चाहता है कि सचाई और नैतिकता के लिए लडे लेकिन वह नपुंसक भीड के साथ यह लडाई कैसे लड सकता है। वह तो केवल पुलिसवालों और रेल अधिकारियों को ही इस समस्या का मूल समझ अपराधी मान रहा था लेकिन उसे सच जानने पर भी मौन रह जानेवालों की भीड भी उन्हीं चेहरों के समान दिख रही थी। फिर भला भिखारियों की समस्या का क्या हल होगा ?

२.१.४ वेश्या समस्या :

वर्तमान समय में समाज को कुष्ट रोग की तरह इस समस्या ने भी ग्रस्त कर रखा है। इस समस्या के भी अनेक पहलू है। यह बात तो लगभग नब्बे प्रतिशत सही है कि घर-परिवार के अनेक दबावों के कारण जैसे आर्थिक या सौतेले माँ-बाप के कारण या ठगी के कारण लडकियाँ वेश्या व्यवसाय में आ जाती है। दस प्रतिशत लडकियाँ बहुत ऊंचे स्तर का जीवन जीने के लिए स्वेच्छा से कॉल गर्ल बननेवालों की हम माने ले रहे हैं। इस समस्या को चित्राजी ने भी समझने की कोशिश की है और इसके अलग-अलग पहलुओं को उजागर करने का यत्न किया है। यूँ तो भिखमंगों से सम्बन्धित कहानी 'चेहरे' में भी हम भिखारिनों का शारीरिक शोषण देख चुके है। लेकिन इस वर्ग में विशेष तौर पर वेश्या व्यवसाय की समस्या पर चर्चा करेंगे।

२.१.४.१ मजबूरी और नरक की दास्तान – 'फातिमाबाई कोठे पर ही नहीं रहती' :

कहानी का शीर्षक ही इस बात को प्रमाणित करता कि फातिमाबाई कोठे पर ही नहीं रहती बल्कि वह कहीं भी मिल सकती है। आलोच्य कहानी सर्वे के आधार पर लिखी गयी है।

बंबई के रेड-लाईट एरिया का सर्वे कर लेखिका रिर्पोट तैयार करना चाहती हैं। पुलिस उपायुक्त श्री श्याम सुंदर सिन्हा इस हेतु उन्हें मदद करते हैं। वे उसे सलाह देते हैं कि ऐसी नरक भरी जिंदगी देखने जाने की बजाय यदि वे यहीं किसी वेश्या से मिलना चाहें तो वे व्यवस्था कर

सकते हैं। लेकिन वह ऐसा नहीं करती वैसे 'वह चाहती तो कुछेक खोजी पत्रकारों के लेखों और विश्लेषणों के आधार पर बडी आसानी से देह-व्यापार की दुनियाँ अपने इर्द-गिर्द बून लेती और उसकी रिपोर्टिंग तैयार हो जाती। मगर रह-रहकर उसके अन्तर्मन को यही प्रश्न उमेठता रहा कि क्या वह दूसरों के गढे आईनों में मनुष्यता की देह पर कोढ सदृश गल रही इन विद्रूप सचाइयों के वास्तविक चेहरे टटोल पायेगी ?'[१] सिन्हाजी ने एक हवलदार को साथ भेजा था जो उसे उस नर्क को दिखाने वाला था।

सिन्हाजी ने उसे कोठों की नरकमय जिंदगी के बारे में बताया ही था। यहाँ का गंदगी भरा माहौल देख कर पुष्टी भी हो गयी। हवलदार कोठेवाली बाई फातिमा से उसकी मुलाकात करवा देता है। बडे साहब द्वारा भेजने के कारण उसे वेश्या लडकियों से मुलाकात तो करवानी ही पडती है लेकिन अखबार वाली होने के कारण वह पहले खुद का ही रोना रोने लगती है कि वे लडकियों को यहाँ लाने से पहले ही लाइसेंस बनवा लेती हैं। इमारतें खस्ता हाल है, पानी और शौचालयों की असुविधा है आदि। लेखिका के आग्रह पर वह लडकियों से उनकी कोठरियों में मिलने और बात करने की अनुमति दे देती है। फातिमाबाई के जाते ही वातावरण दबावमुक्त हो जाता हैं। सबसे पहले रेशमा अपनी आप बीती सुनाती है सौतेली माँ ने गरीबी की वजह से एक बूढे दम्पत्ति की सेवा का काम उसे लगाया था लेकिन बूढा रंगीली तबीयत का था। वह उसे फ्राक उतारने को कहता। माँ के सिखाने से वह इस काम के लिए अलग पैसे मांगती हैं। बाद में फ्लैट की नौकरानियों के परिचय से वह कोठे पर आ जाती है। लेखिका जब सवाल करती है कि क्या वह एक बेहतर जिंदगी अपनाना चाहेगी तो वह इंकार कर देती है। क्योंकि चाहे जगह कोई भी हो हर मर्द के हाथ औरत के जिस्म को टटोलते ही हैं। लेकिन केतकी एकाएक बिफर उठती है। आक्रोश में भर कर वह उस नरक की सडन को दिखा देती हैं। 'उसने आंचल हटा अपने ब्लाऊज के बटन चट खोल दिये।

---

१. फातिमाबाई कोठे पर ही नहीं रहती - इस हमाम में - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ २९

उसके मातृत्व से भरे उघडे स्तन नील और खरोंचो से क्षत-विक्षत बाहर लटक आये।'[१] जचगी के बाद तीन महिने भी नहीं हुए कि उसे फिर से धंधे पर बैठा दिया। रात भर उसके शरीर से जोसेफ खेलता रहता है और उसका बच्चा भूख से तडपता रहता है। लेकिन फातिमाबाई का तर्क रहता है कि ग्राहक बच्चे की माँ को पसंद नहीं करते। जोसेफ तो फिर भी पन्द्रह रूपये पकडा जाता है।

अचानक अखबार वाली लेखिका की आँखो में केतकी की पहचान उभर आती हैं। आठ साल पहले यही लडकी पंजाब मेल में उनके डिब्बे में चढी थी। टिकट चेकर के पूछने पर उसने लेखिका से टिकट ले लेने के लिए चिरोरी भी की थी। वह अपने अंकल से उन्हें पैसे दिला देनेवाली थी, जो उसे स्टेशन लेने आने वाले थे। उसका किसी ने बटुआ मार लिया था जिसमें उसके पैसे, टिकट, पता रखा था। कथा लेखिका उसका टिकट लेना भी चाह रही थी लेकिन कई सहयात्री महिलाओं ने शंकाएँ व्यक्त की कि बटुआ खो सकता है मगर खाने-पीने का सामान और कपडे-लत्ते भी कैसे गायब हो गये। हो सकता है वह किसी गिरोह से सम्बन्धित हो और रात में यह जनाने डब्बे का दरवाजा खोल साथी डाकूओं को भीतर ले लें। या यूँ भी हो सकता हैं कि सिनेमा के मोह में यह घर से भाग आयी हो। ऐसी बातें सुन कर उसकी सहानुभूति नष्ट हो गयी। आज वही शैला केतकी के रूप में उसके सामने है। फेल होने पर माँ की पिटाई से नाराज हो कर वह घर छोडकर भागी थी। टिकट-चेकर ने उसे रेल मजिस्ट्रेट के पास ले जाना चाहा था लेकिन घर जाने की इच्छा न होने से वहाँ से भी भाग निकली और फिर काम के प्रलोभन में न जाने कितने हाथों बिकती इस कोठे तक पहूँची थी। उसे लगता है कि शैला को केतकी बनाने में उसका भी सहयोग रहा हैं। यदि वह चाहती तो-' शैला को बचा सकती थी.... सच्चाई उगलवा सकती थी... उसके समाजभीरू माँ-बाप को समझाबुझा सकती थी.... डिब्बे में मौजूद औरतों की बनिस्बत वह निश्चय सुशिक्षित, संवेदनशील और जागरूक विचारों वाली थी।'[२] यदि वह सहयात्रियों की बात न सुनती और स्वयं विवेक से निर्णय लेती तो आज केतकी की यह दशा नहीं होती। लोगों का यह अजनबीपन ही

१. फातिमाबाई कोठे पर ही नहीं रहती - इस हमाम में - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ ३५
२. फातिमाबाई कोठे पर ही नहीं रहती - इस हमाम में - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ ४४

फातिमाबाई के कोठे को आबाद कर रहा है। इसीलिए केवल फतिमाबाई कोठे पर नही है। तटस्थ रहनेवाले लोग भी फतिमाबाई जैसे ही है? यह कहानी कई सवालों को पाठकों के लिए छोड जाती हैं।

२.१.४.२ देह व्यापारियों का जाल – 'सौदा' :

'सौदा' कहानी लडकियों का व्यापार करनेवालों की पोल खोलनेवाली है। कमाठीपुरा के बदनाम ऐरिये में अपनी नरकीय जिंदगी जीनेवालों की यही कहानी होती है। कहानी का आरंभ रात में एक अजनबी लडकी की दस्तक से होता हैं जो दलालों के हाथ से बच कर भागी थी। मंगला कशमकश में पड जाती है कि वह उसे आश्रय दे या न दे। क्योंकि उसका पति ड्राइवर है। उसे महिने के आधे से भी ज्यादा दिन अकेले बिताने पडते हैं। यदि कहीं कोई मुसीबत आ गई तो किसके पास सहारा मांगने जायेगी। यूँ चंदू के आने तक आश्रय देने में क्या हर्ज है। तब तक वह लडकी बचों के साथ लिहाफ में ही दुबकी रहेगी।

परिचय पूछने पर लडकी ने बताया वह दीनागंज, जिला गोरखपूर की है। गाँव में काम मांगने होटल जानेपर उसकी मुलाकात एक ड्रायव्हर से हुई। उसी ने पांच सौ रूपये की नौकरी का लालच देकर उसे अपने साथ यहाँ लाया और लालू दलाल के हाथ चार हजार में बेच कर चल दिया। लालू उससे धंदा करवाना चाहता था लेकिन मौका पाते ही वह भाग आयी। गेंदा को लिहाफ में सोने के लिए मंगला ने कहा। तब अचानक चंदू के फोटो पर चंदा की नजर पडती है। वह चीख पडती हैं कि यही वह ड्राइवर है, जिसने बहला फुसला उसका जीवन बरबाद किया है। वह उसका नाम भी बता देती है कि सब उसे चंदू कहते हैं। मंगला स्तब्ध ही रह जाती है कि चंदू ऐसा काम करता होगा। लेकिन शक के लिए जगह भी नहीं है। क्योंकि नाम व पेशा वह सही बता रही हैं। चंदू गोरखपुर, बलिया, देवरिया आदि जगहों पर माल ढुलाई के लिए जाता भी है। सिसकती गेंदा को देख वह सोचती है कि बेचारी को यह भी ज्ञात नहीं होगा कि जिस घर में वह आश्रय ले रही है वह उसी शिकारी का घर है।

मंगला गेंदा की रक्षा करना चाहती है। उसे घर ही बैठा 'दलित स्त्री उद्धार समिति' की पटवर्धन ताई के घर की और चल पडती है। घर पर बाहर से ताला भी डाल देती है। रास्ते भर उसके मन में अन्तर्द्वंद्व चलता रहता है कि वह किसके लिए यह सब कर रही है। लेकिन वह यह स्वीकारने को तैयार नहीं कि वह स्त्री के देह व्यापार से उन्नति करे । उसे पूरानी बात याद आती है जब चंदू ने दस हजार के नोट देकर कहा था कि सेठ ने उसकी मेहनत से खुश होकर उसे ये पैसे दिये हैं। अब वे झोपडी में नहीं पक्के घरों में सारी सुख सुविधाओं से रहेगे। उसे आश्चर्य हुआ था लेकिन पति की ईमानदारी, मेहनत पर विश्वास भी था। पर अब 'छि: छि : चंदू का यह स्वरूप भी हो सकता है?.... असलियत पूरी क्रुरता और कुरूपता के साथ उघड चुकी हैं।'[1] ताई से कह कर वह उसे सीधे पुलिस के हवाले कर देगी। पुलिस कमाठीपूरा आदि के अड्डों पर छापे मार कर अन्य कईयों को भी पकड सकती है। लेकिन यदि चंदू पकडा जाएगा तो, 'उसकी गृहस्थी का जुआ भूमि पर आ गिरेगा। बरसों बाद अभावों की मार से वह अपनी पीठ बचा पायी है ! एक झटके में सारा खेल खत्म हो जायेगा फिर वही दलदल ! घर-घर बर्तन घिसना ! स्वामिनियों के व्यंग्य बाण झेलना ! लौट सकेगी उसी जिंदगी में ?'[2] गलती गेंदा की भी है कि अनजान व्यक्ति के साथ वह चली आयी। 'चंदू का भला क्या दोष है, धंधा फिर धंधा है.... चमडे का हो या चमडी का ! देखा नहीं सुना खूब है....। बडे बडे होटलों में औरतों का नंगा नाच करवाते हैं सेठिये ! कितनी इज्ज़त है समाज में उनकी ? ठाठ से लम्बी गाडी में घूमते हैं। कोई उठाता है उंगली उन पर ।'[3] वह फिर लौटने का इरादा करती है। चंदू को जेल होने पर अभावग्रस्त शिब्बू भी एक दिन गेंदा की ही तरह मजबूरी में गलत कदम उठा सकती हैं। अन्य दलाल उसके घर को फूंक सकते है। लेकिन उसकी विवेक बुद्धि उसे सचाई के मार्ग से डिगने नहीं देती। वह ठान लेती है वह गेंदा की बलि लेकर गृहस्थी नहीं बसा सकेगी ? 'स्त्री होकर स्त्री के दुर्भाग्य में साथीदार हो सकेगी? चंदू पति है तो

---

१. सौदा - जगदंबाबाबू गाँव आ रहे है - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ २७
२. सौदा - जगदंबाबाबू गाँव आ रहे है - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ २७
३. सौदा - जगदंबाबाबू गाँव आ रहे है - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ २७

क्याअपराधी नहीं है?'[1] वह अपने साहस को खोना नही चाहती। वह तेजी से पटवर्धन ताई के घर की ओर चल पडती है। दरवाजे पर दस्तक देती है और भीतर कमरे में बत्ती चल जाती हैं। यह प्रकाश पयार्य से गेंदा के जीवन में भी आता हैं कि वह बरबाद होने से बच जाती हैं और मंगला के जीवन में भी यही प्रकाश फैला है जो स्त्री होकर स्त्री की रक्षा की जिम्मेदारी लेती है और वह भी अपने पूरे परिवार के सुख को तिलांजली देकर । 'सौदा' कहानी चित्राजी की उम्दा कहानियों में से एक है। जहाँ नारी का 'शक्ति' के रूप में चित्रण हुआ है।

२.१.५ महानगर में आवासीय समस्या – 'जरीया' :

कथा नायिका के पास पत्र आता है कि राष्ट्रीय नाट्य विद्यालय के भूतपूर्व विद्यार्थी विवेक बतरा उसकी कहानी पर फिल्म बनाना चाहते हैं। 'यही जवाब है' के कथानक से बतरा, उसके सहकर्मी और दूरदर्शन की सुप्रसिद्ध निर्देशिका अमला भटनागर भी अभिभूत है। अमला जी स्वयं उस फिल्म को दिग्दर्शित करना चाहती हैं और बतरा उसकी पटकथा, संवाद लिखने के साथ नपुसंक पति की केन्द्रिय भूमिका भी करेंगे। वह फौरन अपनी अनुमति और फीस का ब्योरा भेज दें। ऐसे ही पत्राचार के दौर में बतरा का पुन: पत्र आता है कि वह अगले हफ्ते ही बंबई आ रहा है। चूंकि बंबई उसके लिए अजनबी शहर है अत: निवास के लिए कोई व्यवस्था कर दे। वह महंगे होटल में आर्थिक कारणों से नहीं रूक सकता।

नायिका उसे अपने घर ही ठहरा लेती है। विवेक चूंकि किसी डायरेक्टर के बुलावे पर स्क्रीन टेस्ट के लिए आया था अत: वह दिन भर स्टुडियों की खाक छानता फिरता और केवल रात को ही घर लौटता। लौटने पर नायिका की कहानी पर घंटो चर्चा होती रहती। यूं वह आया हफ्ते भर के लिए था लेकिन महीना भर रहता है। लेखिका उसकी रचनात्मकता से अभिभूत है। 'कहानी के कुछ अंश वह पात्रों में गहरे डूबकर इस हावभाव के साथ सुनाता कि उसकी आँखों के

१. सौदा - जगदंबाबाबू गाँव आ रहे है - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ २८

समक्ष दूरदर्शन का पर्दा खिंच जाता और पर्दे पर थिरकते दृश्य।'[१] उसने लेखिका को नाटक लिखने को भी कहा और आश्वासन दिया कि मंचित करने का कार्य वह करेगा। कथा नायिका अपना अधूरा उपन्यास छोडकर विवेक के कहने से नाटक लिखने में लग जाती है। यद्यपि उसके पति को नाटक की थीम पसन्द नहीं आती। वह अपना दो-टूक मत प्रदर्शित करते है- 'शोषण की बात उठाना आम फैशन हो गया है लेखकों में। मध्यवर्गीय सम्पन्नता में हाथ धोने की ख्वाहिश रखते हुए सर्वहारा वर्ग की खोखली चिन्ता ? तुम मध्यवर्गीय पाखण्डों को अपना विषय क्यों नहीं बनाती ?'[२] लेखिका को यह कडवी प्रतिक्रिया रास नहीं आती। वह तो विवेक के विचारों से प्रभावित है।

विवेक के लौटने के बाद लम्बी प्रतिक्षा के बाद उसका पत्र आता है जिसमें वह क्षमा मांगता है कि दूरदर्शन के अधिकारियों ने फिल्म की स्क्रिप्ट अस्विकार कर दी हैं। अमलाजी भी इस निर्णय से दु:खी हैं। कथा नायिका आक्रोश में भरकर दिल्ली दूरदर्शन को पत्र लिखती है कि 'जब अमला भटनागर की सहमति और स्वीकृति से उसकी कहानी पर काम शुरू हुआ था तो फिर क्यों कर स्क्रिप्ट अस्वीकृत हो गयी।'[३] जवाब भी शीघ्र आ जाता है कि अमलाजी बतरा से परिचित है लेकिन उन्होंने न कभी कहानी का न ही दूरदर्शन के लिए फिल्म का अनुबन्ध सौंपा था। वह भ्रम का शिकार हुयी है। वे ऐसी किसी बात के लिए जबाबदेह नहीं है। सारी बात जान उसके पति ठहाका लगाकर हँस पडते हैं, क्योंकि वह देश की माया नगरी में रहती है। जहाँ निवास की सुविधा बडी मुश्किल से होती है। ऐसे में जिसे भी डेरे की तलाश होगी 'बंदा तुरन्त तुम्हारी कहानी पर नाटक लिखने लगेगा, या रूसी-या फ्रेंच में उसके अनुवाद की अनुमति चाहेगा। तुम खुश और अगर ऐसे में वह इस शहर में आना चाहेगा तो भला तुम उसे बाहर कैसे रहने दे सकती हो ?'[४] अर्थात आवासीय समस्या से निपटने के लिए लोग इस प्रकार के झूठे बहाने गढकर अपना डेरा जमाते है

---

१. जरिया - इस हमाम में - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ ११०
२. जरिया - इस हमाम में - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ १११
३. जरिया - इस हमाम में - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ ११४
४. जरिया - इस हमाम में - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ ११५

लेखिका केवल माध्यम बन कर रह जाती है।

२.१.६ नौकरानी की समस्या –'सुख' :

कामकाजी महिलाओं को नौकरानियों की कितनी आवश्यकता होती है इसे कई लेखिकाओं ने अपने निजी अनुभवों के आधार पर लिखा है। ऐसी ही कामकाजी सुमंगला ने फूली को दिन-रात के लिए अपने फ्लेट पर काम के लिए रखा था। उसने अपेक्षा तो सुख की थी लेकिन दु:ख के अतिरिक्त उसे कुछ नहीं मिलता।

सुमंगला जादवपुर विश्वविद्यालय में राजनीति विज्ञान की प्रवक्ता है। दक्षिण कलकत्ता के जोधपुर पार्क की शांति कुंज सोसायटी में डबल बेडरूम के फ्लैट में वह अपनी बेटी पंछी के साथ रहती है। पति की असमय मौत के बाद वह सासुजी से साथ रहने का आग्रह करती हैं लेकिन वे नहीं आतीं। यूँ सोसायटी मे नौकरानियाँ खूब मिल जाती हैं लेकिन दिन-रात रहने के लिए कोई तैयार नहीं होती। हफ्ता भर छुट्टी लेकर वह फूली का इंतजाम करती है। शुरूआत में वह काम-धाम में चुस्त रहती है लेकिन कुछ समय पश्चात ही पंछी के लिए लाये गये बिस्किट, बिकानेरी सेव, चीनी, बदाम चट करने लगती हैं। तीन आदमीयों का खाना अकेले खा लेती है। सात से पहले सुबह सोकर नहीं उठती। मजबूरी में सुबह की चाय बनाना, पंछी को तयार करना जैसे काम सुमंगला को ही करने पडते हैं। न उठने का कारण पूछने पर वह बताती है कि रात भर बहुत मच्छर काटते हैं अत: नींद नहीं हो पाती। सुमंगला अपनी सास की मसहरी उसे निकाल कर देती है। वह दो-दो दिन सिर्फ इसलिए नहीं नहाती क्योकिं उसके पास तौलिया नहीं है। वह तौलिया भी बॉम्बे डाइंग का टर्किशवाला इस्तेमाल करती है, क्योंकि दूसरे तौलियों से उसकी त्वचा छिल जाती है। इन नखरों से नायिका सकते में आ जाती हैं। दिन भर घर में टी.वी. देखती रहती है। उठते ही लोटा भर चाय पीती हैं। बासा भात-माछ पेटभर खा लेती है। अखबार, दूध, कूडेवाली के बजट से उसे कोई फर्क नही पडता। ऊपर से वह अपनी ईमानदारी के किस्से गढ-गढ कर सुनाया

करती हैं। फूली कभी भी अपनी गलतियों को नहीं समझती। सुमंगला परेशान हो उठती है कि इतना सहन करने के बाद भी फूली न 'अपनी गलतियों के प्रति राई-रत्ति सचेत हुइ हो न किसी प्रकार का ग्लानिभाव न सुधरने का प्रयत्न। सुख फोडे-सी व्यावहारिकता की पपडी छोडने लगी। नखरे उठाने की कोई सीमा और सामर्थ्य होती है।'[१]

इतना सब करने के बाद भी काम नहीं करती। कई दिनों से न पूरे घर के समान की झाड-पोंछ हुई हैं और न कपडों में इस्त्री ही की है। वह खुद भी नौकरी करती है। लेकिन विश्वविद्यालय या विभाग के काम में जरा भी कोताही नहीं करती। यदि कोई काम रह भी गया तो उसे स्पष्टीकरण देना होता है। नौकरी छोडी भी नहीं जा सकती। जब की फूली बडी बेफिक्र रहती हैं जैसे उसे काम की जरूरत ही नहीं है। ऐसे ही एक दिन काम के लिए डाँटने पर वह काम छोडकर चली जाती है। बाद में सोनाली बताती है कि दरअसल वह सुमंगला का काम ही नहीं करना चाहती क्योंकि उसके घर कोई मर्द जो नहीं है । इस चौंकानेवाले कारण को सुनकर सुमंगला स्तब्ध ही रह जाती हैं। यह उस नौकरानी की मानसिकता को बताती है जो घर के मर्दो को रिझाती हैं और काम भी करती है। इन कामवालियों में एकता भी बहुत होती है। एक का छोडा काम दूसरी बाई तब तक नही पकड सकती जब तक पहली वाली स्वीकृति न दे दे। कामवाली को खोकर सुमंगला सोचने लगती है कि पति के न रहने से काम के बोझ से ही असहिष्णु हो गयी है। उसे फूली को नहीं डाँटना चाहिये था। कामकाजी महिला को नौकरानी की जिस समस्या को देखना पडता है उसी का यथार्थ चित्रण उक्त कहानी में हुआ है।

२.१.७ साम्प्रदायिकता :

हमारा देश अनेक धर्मो और सम्प्रदायों से सजा हुआ है। विविध रंगी रंगो से सजे इस देश में एकता तो है ही लेकिन कुछ बुरे लोगों के कारण इसकी शांति में अक्सर खलल पडता है। ऐसे

---

१. सुख - जिनावर - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ ४७

साम्प्रदायिक दंगों के दौरान सबसे अधिक हानी आम आदमी की होती है। जातिगत द्वेष फैलने पर सीधे-साधे लोगों को अनेक कष्ट सहने पडते हैं। दिहाडी पर काम करने वालों की सबसे दयनीय अवस्था होती है। बेचारों को खाना भी नसीब नहीं होता। कहीं-कहीं साम्प्रदायिक दंगों में मोहल्ले में रहने वाला अल्पसंख्यक बेचारा बेगुनाह होते हुए भी मारा जाता है।

२.१.७.१ दंगे : सामान्य आदमी की दुर्दशा –'बंद' :

मुंबई जब कभी किसी छोटे बडे कारण से बंद होती है तो मुसीबतें सामान्य व्यक्ति को उठानीं पडती हैं। 'बंद'कहानी का सृजन लेखिका ने इसी समस्या को व्यक्त करने के लिए किया है। महाराष्ट्रियों ने मद्रासियों के विरोध में 'बंद' का आव्हान किया था। क्योंकि 'बेचारे महाराष्ट्रियों को नौकरियाँ नहीं मिलतीं। जबकि मुंबई उनकी हैं और उनकी अपनी ही मुंबई में उनका यह अनादर ! उनकी मांग थी कि अस्सी प्रतिशत नौकरियाँ स्थानिक लोगों को प्राप्त होनी चाहिये। उनका नारा था-''बाहरवालों को भगाओं, अपनों को जगह दिलाओ''....'[1] लेकिन इस बंद से मजदूरों को क्या लाभ। उनकी तो रोजी-रोटी का सवाल है। बंद के दौरान तो उन्हें 'उसल-पाव' भी नहीं मिलेगा।

ऐसे में ही 'मेनका' फिल्म पत्रिका में काम करने वाले तीन युवक भी चिंतित हैं। उन्हें भी मल्होत्रा प्रतिदिन पैसे देता था और चाय उन्हें मुफ्त मिलती थी। मालिक पक्का कंजूस है। नवल चाहता है कि यदि मालिक उसे लोकल का फ्री पास निकलवा दें तो वह स्टूडियों में घूमकर ओरिजनल रिपोर्टिंग कर सकता है। लेकिन उन्हें स्टारडस्ट, फिल्म फेयर, स्क्रीन, फिल्म इंडस्ट्री जनरल की नकल से ही रिपार्टिंग करने को कहा जाता है। बंद के दौरान तो मल्होत्रा किसी भी हालत में दफ्तर नहीं आ सकता। तीनों युवक परेशान हैं। अचानक उन्हें कल्पना सूझती है कि क्यों न 'मेनका' की रद्दी निकाल कर बेची जाय। वे तीनों इस काम मे जुट जाते हैं। भीमजी भाई

---

१. बंद - ग्यारह लम्बी कहानियाँ - चित्रा मुद्‌गल, पृष्ठ १७८

को रद्दी बेचकर वे उस दिन का गुजारा करते हैं। रद्दी तोलते हुए भीमजी भाई एक मार्मिक टिप्पणी करते हैं। 'मुंबई आमची। बंबई क्या ये घाटी लोगों न बनाया? अब्बी बोलता कि दुसरा जात वालों को बार हकालो? पन वाजिब है क्या ये? हाँ साब? .... हिन्दू-मुसलमान का फसाद होता तो लोग बोलते कि ये दो मजब का टक्कर है। अब्बी ये कैसा झगडा है कि हिन्दू कोच हिन्दू हकालने को माँगता?'[1] जो बात एक सामान्य व्यक्ति समझ सकता है वही बात अंदोलनकारी क्यों नहीं समझ पाते। दंगो में कितनी ही तोडफोड होती है। बसें जला दी जाती हैं।

दूसरे दिन मालिक मल्होत्रा अफसोस प्रकट करता है कि वह दफ्तर नहीं आ पाया इसलिए पैसों के अभाव में उन्हें कष्ट हुआ होगा। अचानक उसका ध्यान रेक्स पर जाता है। वह कुशलता से जान लेता है कि रद्दी उन्होंने इक्कीस रूपये साठ पैसे में बेची है। तुरंत व्यावहारिकता का जामा पहन वह उनका उस दिन का हिसाब कर देता है-'आप लोगों के कल के छह-छह रूपये काटकर बचे जी,... तीन रूपये साठ पैसे, यानि इसमें से पर हैड एक तीस, आज की किस्त में से घटाया जाय तो? ....लीजिये, आप लोग आज की पहली किस्त ले जाइये। दो रूपये सत्तर पैसे ईच, ठीक है न जी हिसाब।'[2] नवल, रमेश और हरीश नाराज होकर भी चुप हैं क्योंकि इस माया नगरी में उन्हे आवास की सुविधा के साथ मिली यह नौकरी बडी मुश्किल से मिली है। वे मजबूर हैं। वे तीनों मालिक के दफ्तर में चपरासी से लेकर चौकीदार तक का काम करते हैं। इतनी मेहनत से दफ्तर साफ करते हैं लेकिन शाबाशी मिलने के स्थान पर मल्होत्रा के कोरे व्यवहार के दर्शन होते हैं। तीनों को रोटी और मकान की आवश्यकता है। इसीलिए उस नौकरी से वे चिपके हैं। आम आदमी यही तो चाहता है। लेखिका की अंतिम टिप्पणी बडी गरिमामय है-'यह बंद न मराठियों का मद्रासियों के खिलाफ है न एक जाति का दुसरी जाति के प्रति यह उस जाति के खिलाफ है जो स्वार्थों और संकीर्णताओं के चलते दूसरों का शोषण करती हैं। और किसी भी जाति का मुखौटा ओढ कर

---

१. बंद - ग्यारह लम्बी कहानियाँ - चित्रा मुद्‌गल, पृष्ठ १८६
२. बंद - ग्यारह लम्बी कहानियाँ - चित्रा मुद्‌गल, पृष्ठ १९१

अपना चेहरा बदल लेती है।'[१]

२.१.७.२ मानवीयता का संकोच - 'बाघ' :

हिंस्र समझे जाने वाले 'बाघ' आज जंगल तक ही सीमित नहीं है। उसका आतंक और भय क्रॉंक्रिट के जंगलों तक व्याप्त है। आज बाघ जैसे क्रुर व्यक्ति हर बडे शहर में मिलेंगें। आये दिन दंगे होते हैं। हजारों मकान फूंक दिये जाते हैं। सम्पत्ति को लूटा जाता है। कभी मंदिर-मस्जिद का विवाद तो कभी बिल्ला जैसे आततायी की धमकियाँ कई बार लगता है कि सरकार ने सभी तडीपारों को यमुना पार लाकर बसा दिया है। जिनके बीच रहना जीवन पर्यत आतंक और असुरक्षा में जीना है। जो वहाँ की कानून व्यवस्था को मनमाने ढंग से चला रहे हैं।

लगभग पौनी आयु अमन-चैन में गुजार देने के बाद कथा-नायक को अब अशांति सहन नहीं होती। माँ की मृत्यूपरांत पुरोहितजी का छोटा बेटा बिल्ला अडियल सूदखोर की तरह मकान का हिस्सा मांगने आता है। उसकी खूँखार धमकियों से पूरे घर पर आतंक छा जाता है। उसने साफ साफ कह दिया हैं कि वह उनकी स्कूटर को डी.टी.सी. के ड्राइवर से कह कर धक्का दिलवा देगा या वैन चढवा देगा। बच्चों के कारण पुरोहितजी ने उसी दिन अपना पटेलनगर वाला पुश्तैनी मकान बेच दिया और यमुना पार अठ्ठारह सौ रूपए प्रतिमाह किराये के मकान में रहने लगे। किराये के कारण घर खर्च मे कटौती करनी पडी। कई सुविधाओं से हाथ धोना पडा था। उनकी बेटी ही बता रही थी कि बस में चिल्ला गाँव के गुण्डे लडके चढकर छेडछाड करते हैं।

पुरोहित डरे हुए थे। मकान की तलाश में थे। जैसे ही उनके मित्र 'ग' ने 'ख' के मकान के बारे में बताया वे उसे खरीदने के लिए उतावले हो गए। 'ग' ने बताया की पूरी कोलीनी में 'ख' का मकान अन्य मजहब के व्यक्ति का है। पिछले दंगों के कारण 'ग' की बस्ती वालों ने सोच लिया है कि रामनवमी के पूर्व 'ख' को बस्ती छोडने के लिए मजबूर कर देगे। वैसे वह मकान के बाइस लाख कह रहा है पर कम में पट जायेगा। गुलमोहर और छतनार से पटी साफ-सुथरी, चौडी सडकें, शांत

---

१. बंद - ग्यारह लम्बी कहानियाँ - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ १९२

वातावरण और दक्षिण दिल्ली में स्थित मकान पुरोहितजी को आकर्षित कर गया। 'ग' ने उन्हें आश्वासन दिया कि उनकी चादर में ही सौदा पक्का हो जाएगा। जरूरत उसे है, भयभीत वह है। लोगों द्वारा खदेडने से पूर्व यदि मकान बिक गया तो उसे कीमत मिलेगी और 'रामनवमी है कितनी दूर? चिंगारी ने लपट पकडी नहीं कि 'ख' औने-पौने दामों घर सुलटा बोरिया-बिस्तर बांध लेगा।'[१] क्योंकि 'ग' ने कहा था बस 'कुछ हफ्तों का खेल है। तोते उडे हुए है जनाब 'ख' के। हमारी बिरादरी के बीच बचू रहे तो रहे मगर बाघ के सामने बँधी बकरी से।'[२]

पुरोहितजी को उसके शब्दों से ऐसा लगा कि आज अपने स्वार्थ में लिप्त आदमी 'बाघ' की ही भूमिका निभा रहें हैं। 'ग' के स्कूटर के पीछे बैठा वह ऐसा ही सोच रहा था कि 'अचानक उन्हें महसूस हुआ कि उनकी हथेली के नीचे 'ग' के जकडे कंधे की जगह किसी की सख्त नुकीली बालों-भरी पीठ आ गयी है।'[३] 'ग' ने उनके अचेतन मन में 'बाघ' का रूप धारण कर लिया। उन्हें पता ही नहीं चला कि यह उनका दृष्टिभ्रम है या एन्जाइना का अटैक। उन्होंने सिहरकर 'ग' के कंधे को देखा। उन्हें लगा जैसे बाघ ही सामने हो। 'ग' के कंधे से हथेली हटाने पर भी उनकी घिग्धी बंधी रही। उनकी घबराहट देख कर 'ग' ने उन्हें थ्री-व्हीलर में बैठा घर तक पहुँचाना चाहा मगर पुरोहितजी अकेले ही थ्री व्हीलर से घर चल पडे। पुरोहितजी को लगा कि यदि वे 'ग' द्वारा दिखाया मकान खरीद लेते हैं तो हमेशा यहीं आशंका बनी रह सकती हैं कि दंगो में मकान जलाया जा सकता है या फिर सस्ते दामों में बेचना पड सकता है। 'ग' व्यक्ति नहीं, एक 'बाघ' का प्रतीक है, जो कभी भी झपट सकता है।

२.१.८ पत्रकारिता एवं विज्ञापन जगत :

चित्राजी स्वंय लम्बे समय से पत्रकारिता जगत में काम कर रही हैं। इस क्षेत्र में रहने वाली कडी प्रतियोगिता और महिलाओं के प्रति दृष्टिकोण को उन्होंनें निकट से देखा है। पत्रकारिता जगत

---

१. बाघ - जिनावर - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ ३५
२. बाघ - जिनावर - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ ३९
३. बाघ - जिनावर - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ ३६

में 'जो जीता वही सिकन्दर' होता है। कडी मेहनत, सजगता, शीघ्रता और निरपेक्षता के गुणों से ही पत्रकारिता जगत में रहा जा सकता है। विज्ञापन क्षेत्र में महिलाओं को केवल दिखावे की वस्तु माना है और उसे उपभोग के लिए उपयोग में लाया जाता है। उसकी पहचान पुरूषों द्वारा ही बनायी गयी है। यह स्त्री की अपनी छवि नहीं है। मीडियॉ के इन सवालों पर दृष्टिक्षेप डालती चित्राजी की कहानियाँ हैं।

२.१.८.१ बढती हुई स्पर्धा और सामाजिक सम्बन्धों में दुराव – 'पेशा' :

नरेन्द्र तबेलेवालों की बिरादरी का युवक है। स्वभाव से थोडा दब्बू भी है। वह चाहता है कि जब तक उसे नौकरी नहीं मिलती विवाह नहीं करेगा लेकिन परिवार वाले लगातार उसे विवाह के लिए बाध्य करते हैं। वह अपने मित्र प्रणव से मध्यस्थ की भूमिका निभाने को कहता है। लकिन परिवार वाले प्रवण को खरी-खोटी सुनाते है कि शायद अपनी बहन के लिए लडका फाँस रहा है। प्रणव की सहायता से ही वह कुछ ट्यूशन और पत्रकारिता के गुर सिखने लगता है।

पत्रकारिता जगत के रंग-ढंग सीखने में उसे अधिक समय नहीं लगा। इस बीच विवाह के बाद परिवार वाले दहेज के लिए ससुराल वालों के खिलाफ उसे भडकाते हैं लेकिन वह स्पष्टत: इन्कार कर देता है। कक्कू क्रोध में उसका सिर फोड देते हैं। वह घर छोड देता है। प्रणव उसकी हर कदम पर सहायता करता हैं। इस बीच प्रणव के पास 'नवरंग' के बतरा का पत्र आता है। दोनों ही 'नवरंग' के संपादक बतरा से मिलने जाते हैं। बतरा उनसे कहता है कि वह पत्रिका को साप्ताहिक बना रहे हैं। लेकिन उन्हें लेखों की नहीं बंबई के फिल्मी सितारों के साक्षात्कार चाहिये। साथ ही वे उन्हें लताडते भी हैं-'आप लोग सुस्ती बहुत कर जाते हैं.... कई सनसनी खेज विवादों पर अन्य पत्रिकाओं में सामग्री छप चुकी होती हैं तब हमारे यहाँ आती है।'[१] प्रणव बतरा साहब से बहुत कुछ कहना चाहता था कि चित्र सहित शूटिंग की रिपोर्ट के मात्र बीस रूपये मिलते हैं। पत्रिका भी उन्हें

---

१. पेशा - ग्यारह लम्बी कहानियाँ- चित्रा मुद्गल, पृष्ठ ३५

खरीदनी होती है, जो दरअसल मुफ्त मिलनी चाहिये। लेकिन बतरा की बातों में अपनी बात कहने का अवसर हाथ नहीं आ पाता।

बतरा एक और प्रस्ताव भी उनके सामने रखता है कि वे अपनी पत्रिका में प्रश्नोत्तर का स्तंभ शुरू कर रहे हैं जिसके लिए किसी प्रसिद्ध सितारे का नाम वे चाहते हैं। प्रति कॉलम दो सौ रूपये देगें। प्रणव हिचकते हुए कहता हैं कि सुमिता पाठक और सरस संपत को वह इसके लिए राजी कर लेगा। लेकिन बतरा कहता है कि वह किसी फर्स्ट या सेकेन्ड क्लास कलाकार को चाहता है। नरेन्द्र तब निर्भीकता से कहता है कि-''अभी तक हमारी पत्रिका न विशेष स्तर निर्मिति कर पायी हैं, न सितारों के दरम्यान अपना महत्व बना पायी।''[1] बतरा बडी चतुराई से संयमित उत्तर देते हैं कि ''यह तो आप जैसे लेखकों का ही फर्ज बनता है कि 'वे अपनी पत्रिका के तेवर उन्हें समझाएँ । पत्रिका की छवि तो आपकी प्रतिभा, सहिष्णुता,कन्विंसिंग पावर पर निर्भर करती हैं। चुनौती स्विकारिये।''[2]

प्रणव और नरेन्द्र दोनों ही नये स्तम्भ के लिए सितारों के नाम सुझाते हैं। जिसमें नरेन्द्र द्वारा प्रस्तावित संदीप मेहरा का नाम तय हो जाता है। कई दिनों तक नरेंन्द्र प्रणव से नहीं मिलता। प्रणव सोचता है कि संदीप मेहरा के कारण व्यस्त होगा। शायद वह फिर आकर हमेशा की तरह उससे मदद माँगेगा। लेकिन ऐसा कुछ घटित नहीं होता तो वह सोचने लगता है कि इस स्तम्भ से आठ सौ रूपयों की आमदनी बढती है। उसे भी इस के लिए प्रयत्न करना ही चाहिये। आखिर संपादक काम तो उसे ही देंगे जो धंधा देगा। उसके दिमाग मे 'सतीश कानेटकर' और 'शिशिर कपूर' का नाम कौंधा। सतीश उस पर खुश है क्योंकि उसने सतीश के नाटक 'सवाल अपने-अपने' की बढिया समीक्षा की थी। सतीश के माध्यम से शिशिर को पकडा जा सकता है। रास्ते में वह सोचने लगा कि 'शिशिर कपूर' का नाम यदि संपादक स्वीकार लेंगे तो नरेन्द्र की उस पर क्या

१. पेशा - ग्यारह लम्बी कहानियाँ- चित्रा मुद्‌गल, पृष्ठ ३९
२. पेशा - ग्यारह लम्बी कहानियाँ- चित्रा मुद्‌गल, पृष्ठ ३९

प्रतिक्रिया होगी ? लेकिन यह भी तो सच ही है कि-' आदमी के निज का भी तो जीवन में महत्व होता है । 'निज' को जीवित बनाये रखने के लिए समय रहते अगर साधन न भुनाये गए तो प्रगति का 'ग्राफ' कहीं छीनने लगता है । मित्रता अपनी जगह है, पेशा अपनी जगह मित्रता के कुछ उसूल हैं, तो पेशे के भी कुछ उसूल हैं।'[१] पेशे में नरेन्द्र उसका प्रतिद्वंद्वी है। बात सिर्फ पैसों की नहीं है न ईष्या-द्वेष की बल्कि उसकी क्षमता और सामर्थ्य की है कि जाना-माना पत्रकार होकर भी उसकी कोई खास पहुँच नहीं हैं।

कहानी का अंत प्रणव की पेशे में जीत और नरेन्द्र की हार से है। प्रणव शिशिर कपूर को सवाल जवाब वाले स्तम्भ के लिए तैयार कर अनुमति पत्र भेज देता है। नरेन्द्र क्रोध, अविश्वास, विवशता और मात से तिलमिला उठता है। लेकिन बढती प्रतियोगिता में कौन किसका मित्र होता है? यह तो उनके पेशे की आवश्यकता है कि बढती प्रतियोगिता में वही जीत सकता है जो मैत्री और पेशे में अंतर रखता हो।

२.१.८.२ स्त्री की अस्मिता - 'एक जमीन अपनी' :

हिन्दी उपन्यास के फलक पर पहली बार यह चित्रित करने का प्रयास हुआ है कि इक्कीसवीं सदी की ओर तेजी से बढते हमारे विकासोन्मुख समाज की मानसिकता के रोम-रोम को अपनी स्वप्निल और आडम्बर पूर्ण चकाचौंध से गिरवी बनाता हुआ विज्ञापन जगत का छद्म अपनी तहों में कितना कीच-भरा है और किस चतुराई से वह अपने इस दल-दल की विकृति को पोस्टस, होर्डिंज, पत्रिकाओं, अखबारों, फिल्मों, दूरदर्शन-स्लाईड्स के माध्यम से शनै: शनै: समाज पर फैला रहा है। चित्रा मुद्‌गल का उपन्यास 'एक जमीन अपनी' पूरी सजगता, जागरूकता और संवेदनशीलता से विज्ञापन-जगत के दल-दल को ही नहीं उजागर करता वरन् स्त्री से जुडे उन ज्वलंत प्रश्नों को भी पाठकों की अदालत में उघाडकर रेखांकित करता है, जो आधुनिकता, समता स्वतंत्रता के नाम पर

---

१. पेशा - ग्यारह लम्बी कहानियाँ- चित्रा मुद्‌गल, पृष्ठ ४४

संचार माध्यमों द्वारा पुरूष प्रधान समाज द्वारा भारतीय नारी को सौंप रहा है। संघर्ष के मूल में बसी इन्ही दो परिणतियों की विसंगतियों को कई-कई कोणों से चित्राजी ने अपने उपन्यास में उजागर किया है।

विज्ञापन की दुनिया में पुरूषों का वर्चस्व है। वहाँ महिलाओं का टिक पाना पुरूषों की इच्छा पर निर्भर है। उपन्यास की नायिका 'अंकिता' इस मक्तेदारी को तोडने का प्रयत्न करती है। विज्ञापन-जगत की भी अपनी समस्याएँ हैं। मुख्य समस्या है अनुवाद की। प्राय: पहले अंग्रेजी विज्ञापन तैयार किये जाते हैं फिर उनका अन्य भाषाओं में अनुवाद होता है। अनुवादकों को इसमें खासी परेशानी उठानी पडती है। दरअसल 'अंग्रेजी से तैयार की गई कापियाँ मात्र अनुवाद बनकर रह जाती हैं। उसमें प्रांतिय भाषाओं की निजी खूशबू, सौंधापन, अपने मुहावरे, अभिव्यक्ति का भाषाई अंदाज पैदा नहीं हो पाता।'[१] उदाहरण के तौर पर 'दि टुवंटी फोर केरेट फीलिंग' का अनुवाद 'चोबीस टके का खरा अनुभव' प्रभावकारी नहीं बन पाता है। दरअसल अंग्रेजी के रहनुमा ही विज्ञापन जगत के मालिक हैं। 'अंग्रेजी के मुकाबले अन्य भाषा-भाषी कॉपी लेखकों को पारिश्रमिक इंची टेप से नाप-जोख कर दिए जाते है और बहुत कम दिए जाते हैं जबकि परिश्रम उसे मूल से अधिक करना पडता है।'[२] अंकिता सबसे अधिक क्षुब्ध है विज्ञापनों में होने वाले नारी के चित्रण से । अपनी सहेली नीता से भी वह अपना विरोध प्रकट करती है कि 'आम्रपाली' विज्ञापन के लिए उसने बिकनी जैसे वस्त्र क्यों पहनें। आधुनिकता की यह परिभाषा पुरूषों ने स्त्री को सौंपी है। अंकिता कहती है कि 'दु:ख तो यह है, कि आज का अधिकांश पढ़ा लिखा विचारशील होने का दावा करता हुआ स्त्री समाज, स्त्री स्वातंत्र्य, स्त्री समानता और उसके अधिकारों की लडाई लडता हुआ भी नहीं जानता कि वे अधिकार वस्तुत: क्या हैं। कैसे होने चाहिये, किस रूप में चाहिये, उसकी सामाजिक छवि कैसी हो?'[३]

---

१. एक जमीन अपनी - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ २१
२. एक जमीन अपनी - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ ३०
३. एक जमीन अपनी - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ ११६

आधुनिकता के ढोंग को जीना अंकिता के फितरत में नहीं है तभी तो आबजर्वेशन में काम करते हुए लिली प्रेशर कुकर वाले मि. सक्सेना की बदतमीजी नहीं सह पाती और उसे वह नौकरी गंवानी पडती है । सुधांशु से उसका लव मैरेज हुआ था लेकिन पुरूषी अहं से भरे सुधांशु के व्यवहार को वह सहन नहीं करती। घर को धर्मशाला बना देनेवाले सुधांशु का वह विरोध करती है न मानने पर उससे सारे रिश्ते तोड लेती है। उसकी कविता की कॉपी को सुधांशु चिंदी-चिंदी कर देता है। वह अपने अस्तित्व का ठुकराया जाना बर्दाश्त नहीं करती। बाद में भी सुधांशु के जुडने के प्रस्ताव को वह इन शब्दों में अस्वीकार करती है-'सुधांशु, औरत बोनसाई का पौधा नहीं है.... जब जी चाहा उसकी जडें काटकर उसे वापस गमले में रोंप लिया.... वह बौना बनाए रखने की इस साजिश को अस्वीकार भी तो कर सकती है।'[१]

हरिन्द्र के सहयोग से 'फिल्मरस' में उसे काम मिला था। पति को छोड देने के कारण अक्सर उसकी पत्नी सविता उसे शक की निगाह से देखती है। क्योंकि सामान्य स्त्री अभी रूढ मानसिकता से मुक्त नहीं है। पति द्वारा छोडी गयी स्त्री सहानुभूति की पात्र है तो पति को छोड आयी स्त्री शक के घेरे में। वास्तविकता यह है कि स्वतंत्र व्यक्तित्ववाली, आत्मविश्वासी, संघर्षशील स्त्री से सामान्य स्त्री अपने व्यक्तित्व के बौनेपन की वजह से आतंकित रहती है। मि. भोजराजजी ने उसकी योग्यता, अनुभव और जुझारूपन को देख कर 'माध्यम' में अवसर प्रदान किया था। 'माध्यम' में आते ही उसने बडे-बडे विज्ञापन किये। सिमला सिगरेट के लिए अजय जैसे प्रसिद्ध हीरो का अनुबंध किया। रिकार्डिंग के लिए अलग-अलग भाषा के कमेंटर इकट्ठा करने में भी खासी मेहनत की। गलतफहमी के चलते भोजराजजी उसे आरोपों के कटघरे में खडा कर देते है लेकिन वह उन आरोपों को गलत बता इस्तीफा दे देती है लेकिन भोजराजजी अपनी गलती मान उसके त्यागपत्र को फाड देते हैं। उसी प्रकार वह शैलेन्द्र जैसे चरित्रहीन व्यक्ति को केबिन के बाहर यह कह कर खदेड देती है कि '' 'माध्यम' चकला नहीं है शैलेन्द्रजी, नारी की देह की नुमाइश पर वह अपने

---

१. एक जमीन अपनी - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ २२०

लिए रोटी नहीं सेंक सकती !''[१]

उपन्यास की उपनायिका नीता स्वतंत्र विचारों की युवती है। वह अपने सौंदर्य के बलबूते पर मॉडेलिंग जगत में ऊँचाई पर पहूँची है । अपनी सुंदर देह को विज्ञापन में दिखाने को गैरवाजिब नहीं मानती। उसका मानना है कि जब वह निजी जीवन में तैरने के लिए वन पीस ही पहनती है तो विज्ञापन में तैरने के दृष्य के लिए वन पीस पहनने में हिचक कैसी? वह अनेक पुरूषों से जुडी थी क्योंकि वह उन्हें उल्लू बना कर उनके सिर चढकर बोलना चाहती है। विवाह के बंधन भी उसने नहीं माने। विवाहित सुधीर से प्यार किया और उनके साथ रहने लगी। एक बच्ची को जन्म भी दिया। लेकिन सुधीर ने उसे धोखा दिया। जिससे वह टूट गयी और अंत में आत्महत्या कर ली। जो खुद आत्महत्या को पलायन मानती रही, सारे सामाजिक बंधनों को तोडकर जीती रहीं लेकिन अंत में हार गयी क्योंकि उसके विचारों की बुनियाद कच्ची थी। यहाँ की जमीन से जुडी हुई न होकर विदेशी थी। जाते-जाते वह वसीयत कर जाती है - 'अंकू ! मानसी-भविष्य की इस स्त्री को तुम्हे सौंप रही हूँ- कुम्हार के हाथों में कच्ची मिट्टी-सी तुम्हारी ममता की गोद में मानसी अपने अस्तित्व की तलाश पूरी कर सकेगी विश्वास हैं।' [२]

एक ही स्थितियों में संघर्ष करती हुई अंकिता और नीता के जीवन में कितने भिन्न परिणाम सामने आये। भारतीय भूमि से जुडकर स्त्री स्वतंत्रता, समता को तलाशने वाली अंकिता अंत में भविष्य की स्त्री की संरक्षिका बनती हैं तो विदेशी विचारों की वाहक स्वच्छंद, स्वतंत्र नीता मृत्यू को अपना लेती है। अंकिता पुरूष प्रधान विज्ञापन जगत में यश के शिखर छूती है तो नीता पुरूष को छल कर अवसरवादिता से केवल कुछ सफलताएँ हासिल कर निराशा के गर्त में डूब जाती है।

---

१. एक जमीन अपनी - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ २२८
२. एक जमीन अपनी - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ २५५

२.१.९. दूरदर्शन के दुष्परिणाम – अढाई गज की ओढनी :

'अढाई गज की ओढनी' कहानी में लेखिका ने बच्चों को केन्द्र में रखकर केबल कनेक्शनों का बच्चों पर पडने वाला कुपरिणाम चित्रित किया है। केबल के बारे में कई महिलाओं का दृष्टिकोण था कि इनकी वजह से बच्चे पढना लिखना छोड कर केबल टेलीविजन देखते रहेगें, फिल्मों का बुरा असर उन पर होगा तो कुछ महिलाओं का मानना था कि इस माध्यम से वे आधुनिक युग से जुडकर विकास करेंगे। खेल-कूद, भ्रमण, शिक्षाप्रद फीचर्स से उनका ज्ञान बढेगा। लेकिन सचाई यह हैं कि बच्चों को तो लाभ नहीं हुआ पर जो महिलाएँ आपस की निंदा से फुर्सत नहीं पाती थी अब दिन में तीन-तीन फिल्में टेलीविजन पर देखती हैं। बच्चों को भी कौन सा धारावाहिक, किस चैनल पर, कितनी बजे आता है यह कंठस्थ हो गया है। तात्पर्य यह कि बच्चों पर इसका प्रभाव विपरीत ही पडा है।

कथानक कुछ इस प्रकार है कि सोसायटी के सब बच्चे मिलकर छत पर पिकनिक मना रहे हैं। छत पर सिवाय बच्चों के कोई नहीं था। सभी बच्चे अपने-अपने घर से कुछ न कुछ ला रहे थे। के.जी. की छात्रा प्रिया अपनी मम्मी से फ्रूट क्रीम लायी है। उसकी उम्र सिर्फ पाँच वर्ष है लेकिन बातें बडी-बूढी सी हैं। वह अपनी मम्मी से गोटे लगी अढाई गज की ओढनी भी मांग कर ले गयी हैं। बच्चों का खेल दरअसल गुड्डे-गुडियों का था। पहले मम्मी से बनवा कर गुड्डे गुडियाँ खेली जाती थी लेकिन आजकल ये एडवान्स बच्चे उन गुडियों से नहीं खेलते।

बच्चों के खेल में किसी के माता-पिता विघ्न डालने नहीं जाते। लेकिन प्रिया की मम्मी उमा उसे कुछ हिदायतें देने छत पर जाती है तो वहाँ का दृष्य देख मंत्र-मुग्ध रह जाती है। छत पर खूब रौनक है। बाराती जिस प्रकार खा-पीकर सामान बिखेरते हैं बच्चों ने भी वैसे ही चिजें बिखेर रखी थी। छोटे-छोटे बच्चे 'तू चीज बडी हैं मस्त-मस्त' की धून पर मटक-मटक कर नाच रहे थे। लेकिन बच्चों की इस भीड में उमा को प्रिया कहीं नजर नहीं आती। वह अनिष्ट की आशंका से घबरा जाती है। परेशान हो वह शानू से धीरे से प्रिया के विषय में पूछती है तो जवाब मिलता हैं कि प्रिया तो

हनीमून मनाने गयी है। वह चौंकते हुए मतलब पूछती है तो उत्तर मिलता है-हम लोगों ने सिराज और प्रिया को गुड्डे गुडिया बनाया। ... उन की शादी की.... उनकी बारात लेकर आये। .... उनका रिसेप्शन किया और फिर वे दोनों 'हनिमून' मनाने स्विट्जरलैंड चले गए....।[1] स्विट्जरलैंड का पता पूछनें पर उसने टंकी के पीछे की जगह बता दी। उसने सोचा दबे पांव जाकर वह उसे 'भौऊं' कह कर चौका देगी। पर वहां का दृष्य देखकर वह खुद चौंक गयी। मुंडेर और पानी की टंकी की दीवार के बीच एक चादर तनी थी। भीतर की ओर झाँका। भीतर का दृष्य देखकर वह स्तब्ध रह गयी-'उसकी, ओढ़नी बिछाये लेटी प्रिया के ऊपर सिराज औंधा लेटा हुआ था।'[2]

बच्चे अनुकरण प्रिय होते हैं। बडों को देख कर ही वे सीखते हैं। केबल पर आनेवाली फिल्में, उनमे दिखाये गए विवाह और हनीमून के दृष्य बच्चें देखते हैं और सीखते हैं। जैसा उन्होंने देखा वैसा ही करने का यत्न किया गया। चित्राजी ने इस कहानी से संकेत मात्र ही किया है कि भविष्य कितना भयानक हो सकता है। यह तो छोटी सी एक ही घटना है। बाल-मानस तो परदे पर अन्य भी कई दृष्य जैसे खून-खराबा, बलात्कार, चोरी आदि देखता है। पूरी संभावनाएँ हैं कि इन बुराईयों को भी वे सीखते चले जाएँ। समय रहते ही हमें चेत जाना चाहिये।

२.१.१० लघुकथाएँ:

'सारिका' में लघु-कथाओं का कुछ ऐसा दौर चला था कि लोग कहानियाँ बाद में पढते पहले लघु-कथाओं पर झपटते। इन लघु-कथाओं की विशिष्टता यह होती है कि छोटी सी घटना का अंत कुछ इस कदर किया जाता है कि घटना के बजाय अंत में काटी गयी चुटकी पाठकों के मर्म तक पहूँच कर अपना स्थान बना लेती है। ये कटुक्तियां समाज की छोटी-छोटी बुराईयों की चीर-फाड करती हुई हमेशा स्मरण में रहती हैं। कहानी और व्यंग्य के इस-मिले जुले रूप को पाठकों ने खूब सराहा।

---

१. अढाई गज की ओढनी - जिनावर - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ १०१
२. अढाई गज की ओढनी - जिनावर - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ १०१

'जिनावर' कथा संग्रह के अंत में चित्रा मुद्‌गलजी ने लगभग ग्यारह लघु कथाएँ दी हैं जो सामाजिक जीवन से ही सम्बन्धित हैं।

२.१.१०.१ 'राक्षस' :

इस लघुकथा में छोटे भाई-बहन देखते हैं कि बी.कॉम. पास भैया को शराब पीकर आने पर पिताजी बुरी तरह पीटते हैं। उसे 'राक्षस' कहते हैं। वह मार खाकर अपमानित हो घर से सामान उठा हमेशा के लिए घर छोड देता है। लेकिन अपने बॉस को घर खाने पर बुलाने पर पिताजी छोटे बेटे को वाइनशॉप से 'ओल्ड मॉंक रम' की बोतल लाने भेजते हैं। बबलु पिता के ही शब्द दोहरा देता है कि शराब पीनेवाले उनके बॉस क्या राक्षस हैं। तब उसे करारे चाँटे के साथ कि 'अबे, उल्लू के पट्ठे ...राक्षस कहता हैं उन्हें ? अरे, वे हमारे बॉस है, बॉस। हमारे... अन्नदाता...।'[१] बबलू समझ नहीं पाता कि कैसा दुहरा मानदण्ड है कि एक व्यक्ति शराब पीता है तो राक्षस कहलाता है वहीं दूसरा पीता है तो अन्नदाता कहलाता है। कथ्य छोटा होकर भी टीस पैदा करता है।

२.१.१०.२ 'गरीब की माँ' :

मलप्पा सेठानी को कई महिनों का किराया चुका नहीं पाता। खोली खाली करने का हुक्म मिलने पर वह मुँह छुपाता है। सेठानी जब उसकी पत्नी को खोली खाली करने को कहती है तो वह मलप्पा के सीखाए उत्तर को दोहरा देती हैं कि उसकी माँ के मर जाने से वह मुलुक गया है। लौटने पर पैसा देगा। सेठानी कहती हैं छः महीने पहले भी उसकी माँ मर गयी थी। तब पत्नी कहती है कि वो उसकी दूसरी माँ थी। उसके बाप ने दो शादियाँ की थी। सेठानी उनकी नाटकबाजी जानती है। वह कठोर शब्दों में कहती है कि तो ये तीसरी माँ किधर से आयी। मलप्पा की पत्नी डर जाती है कि कहीं भरी बरसात में दादा से कहकर वह उन्हें खोली से न निकाल दे। इसलिए सेठानी को जो उत्तर देती है उसमें हाजीरजवाबी तो है ही साथ ही गहरा व्यंग्य भी है-'दो औरत मरने का बाद पिछू तीसरा

---

१. राक्षस - जिनावर - चित्रा मुद्‌गल, पृष्ठ १०३

सादी बनाया होता बाप ने।'[१] गाँव में कोई सरकारी कायदे तो चलते नही। वह चाहे जितनी शादी कर सकता है।

२.१.१०.३ 'रिश्ता' :

बंबई से पूना जाते समय खंडाला घाट में दुर्घटना ग्रस्त हुआ नायक अस्पताल में बाईस दिन अचेतनावस्था में पडा रहता है। मारिया नामक नर्स उसकी देखभाल माँ के समान करती है। बरसों बाद उसकी सेवा का मूल्य चुकाने जब वह अस्पताल पहूँचता है तो वह उसे वॉर्ड से बाहर निकालते हुए कहती है-' पेचाना-पेचाना,... पर अभी मेरे को टाइम नई... ड्यूटी पर ऐसा नई आना मिलने कू। जाओ तुम। देखता नई पेशेन्ट कितना तकलीफ में हय ?'[२] नायक को बुरा लगता है कि पहचान कर भी नर्स ने उसे बाहर निकाल दिया। वह दूसरे मरीजों के मुँह से उस नर्स के लिए माँ का ही सम्बोधन सुनता है। वह समझ नहीं पाता कि यह कैसा रिश्ता है? उस नर्स के लिए सभी मरीजों के प्रति वैसा ही स्नेह भाव है। बगैर किसी आधार के यह रिश्ता अनोखा है।

२.१.१०.४ 'व्यावहारिकता' :

श्रीमती पांड्येय लोगों की व्यावहारिता पर चकित है कि लोग गट्ठर भर कपडे देकर मामूली से बरतन पर लार टपकाते हैं। लेकिन अपनी उतरन महरी या मेहतरानी को नहीं देते। बेचारे गरीब लोग उतरन पहन लेगें तो धर्म कमाई ही होगी। एक दिन वे भी बर्तन वाले से बर्तन के लिए जब जिरह करती है तो वह गट्ठर खोलकर कपडे बता कर कहता है कि इतने कपडे देने पर उसने रोटी रखने का डिब्बा दिया था। उचित कपडे मिलने पर ही वह बडा बरतन देगा। श्रीमती पांड्येय तब चकित रह जाती है जब वे गट्ठर के कपडों को देखती है कि ये सभी वे कपडे होते हैं जो दयावश उसने महरी को दिए होते हैं। वास्तव में व्यावहारिकता में वह ही भोली रह गयी जब कि महरी होशीयार निकली।

---

१. गरीब की माँ - जिनावर - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ १०५
२. रिश्ता - जिनावर - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ १०६

२.१.१०.५ 'रक्षक-भक्षक' :

दुर्घटना-ग्रस्त भैया के ठीक होने पर माँ महालक्ष्मी के मंदिर में गरीबों को भोजन कराने का विचार करती है। दोपहर होने से वहाँ कोई नहीं होता। पता चलता है कि सब आस-पास गलियों में सोए पडे हैं। जूते चप्पल संभालने वाली बाई उन्हें बुला कर लाती है तो मधुमक्खियों के समान भिखारी टूट पडते हैं। ऐसे मे सबको धकियाते आगे आते मुस्टंडे को देख माँ उसे डाँटती है। तो वह आग बबूला होकर जो कहता है वह बडा ही महत्वपूर्ण हैं-'तुम्हीच लोग गरीब, लाचार का हाथ-पाँव तुडवाता हय... उसको अंधा-लुला लंगडा बनवाता है।... दादा लोंगो को मालूम हय... साबूत अंगवाले को कोई भीख नहीं देता... उनपे दया नई करता... तुम्हारा दया पे थू...।'[1] यदि गरीबों पर समान रूप से दया की जाए तो दादा लोग जो अच्छे खासे बच्चों को अपंग बनाते हैं शायद हाथ पैर न तोडे। लेकिन समाज में अपाहिज को ही दया का पात्र समझते हैं, लाचार-गरीबों को कोई दया नहीं दिखाता अर्थात भिखारी को अपाहिज बनाने में हमारा दृष्टिकोण भी शामिल है। हम भी इस गुनाह में शामिल हैं।

२.१.१०.६ 'ऐब' :

कभी-कभी अच्छे कार्य करने वाले को भी बदले में निंदा ही मिलती हैं। ठीक 'होम करत हाथ जले' वाली स्थिती होती है। 'ऐब' के कथानायक सुधीर ने प्रोफेसर होकर भी दहेज नहीं लिया क्योंकि उसकी पत्नी एम्.ए. पढी-लिखी है। गाँव वालों की दृष्टि से तो ऊंची नोकरी-ज्यादा दहेज का हिसाब होता है। लेकिन जब सब इस सचाई को जानते हैं तो बजाय उसके इस कृत्य की प्रशंसा करने के लोगों में अलग ही चर्चा शुरू हो जाती है। उनके दहेज न लेने का कारण गाँव वालों की दृष्टि से-''ऐसी हरिश्चन्द्र की माई नहीं बबुआइन! अब तक सुधिरवा ब्याह के खातिर राजी कहाँ होत रहे? छत्तीस का तो होई रहा। जरूर लडिका मा कुछ खोट होएगा... तभी तो खाली लडकी

---

१. रक्षक - भक्षक - जिनावर - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ १११

लेइके...।''[१] सुधीर ने टीके में भी सिर्फ एक रूपया लिया था ताकि वधू-पिता आत्मग्लानि में न डूबें। लेकिन लोगों ने अर्थ का अनर्थ निकाला।

२.१.१०.७ 'मानदण्ड' :

लोगों की मानसिकता बडी संकुचित होती है। दोहरे मानदण्ड में जीने वालों की कमी नहीं है। झोपड्पट्टी का नल बंद होने से बाई अपने कपडे मेमसाब के घर धोना चाहती है तो उससे छूत लगने का भय बताया जाता है वहीं उसी बाई की कमर आधी से ज्यादा दाद से भरी होने पर भी उससे काम करवा लेने से उन्हे छूत नहीं लगती। स्वार्थ हो तो सब मंजूर अन्यथा छूत-छात का भेद हाजीर ही है। दोहरे मानदण्ड की मानसिकता पर यह लघु-कथा करारा व्यंग्य करती है।

२.१.१०.८ 'पहचान' :

प्रतिदिन रेल से सफर करने वाली महिला हो या कभी-कभार सफर करने वाली, टिक़ट-चेकर उन्हें उस समय संशय की ही दृष्टि से देखता है जब वे पर्स चोरी जाने के बारे में कहती है। क्योंकि आये दिन रेल में ऐसी घटनाएँ होती रहती हैं। ऐसी ही एक पत्रकार महिला जो रोज ट्रेन से सफर करती है जब टिकट चेकर से निवेदन करती है कि उसका पर्स किसी ने चुरा लिया है और वह घर जाकर टिकट और जुर्माने के पैसे भेज देगी तो उसकी आशा के विपरित उसे उत्तर सुनना पडता हैं- ''आप जैसी चुस्त-दुरुस्त लडकियों की असलियत से मैं खूब वाकिफ हूँ। चार सौ रूपल्ली की साडी लपेट, मांग में सिन्दूर भर लोगों की जेबें कतरती फिरती स्मगलिंग करती हैं और पकडी जाने पर भद्रता का नाटक...।'[२] एक जानी-मानी पत्रकार होकर भी जब उसें इस अशिष्ट व्यवहार को देखना पडता है तो वह उस टिकट चेकर को झापड़-जड़ देना चाहती है। पर ऐसा कर नहीं पाती। उसकी स्थिती समझ कर जब एक भद्र पुरूष उसकी सहायता करते है तो जुर्माने की रसीद पकडा कर टिकट चेकर दूसरे से कहते है कि '-गैंग चलता हैं भई इनका .... एक पकडा जाए तो दूसरा फौरन

---

१. ऐब - जिनावर - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ ११२
२. पहचान - जिनावर - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ ११७

छुडवा लेता है।' उस टिकट चेकर के पास सबको नापने का एक ही मानदण्ड है। सभी की समान पहचान है-चाहे जेबकतेरे हो या सभ्य स्त्री-पुरूष। असली गुनहगार तो पहचाने नहीं जाते लेकिन मध्यमवर्गीय सभ्य जन यूँ ही आहत-अपमानित होते रहते हैं।

संक्षेप में कहा जा सकता है कि चित्राजी की दृष्टि बहुत सूक्ष्म है। सामाजिक जीवन की हर नाडी को वे पहचानती हैं और उसके मर्मस्थल की दुखती रगों कों पकड लेती हैं। छोटी-छोटी समस्याओं से लेकर हर मसले को सोचती समझती वे उन्हें कथा रूप देती चलती हैं। समाज चाहे झुग्गी-झोपडी का हो या मध्यवर्ग का या उच्च वर्ग का ... उनकी समस्याएँ बजबजाते धाव-सी होती हैं। जब तक समाज समस्याग्रस्त रहेगा व्यक्ति या परिवार भी उनसे घिरा रहेगा। अत: समाज की समस्याओं का निराकरण करना हमारी प्राथमिक आवश्यकता होनी चाहिये। चित्राजी समस्याओं को इस खूबी से कथा सूत्र में बांधती है कि समाज का ही एक अंग-व्यक्ति भी अपने दायित्व को समझ सके और निराकरण में अपनी भूमिका निभा सके। कहानी पढते समय पाठक तटस्थ रहकर प्रेक्षक की भूमिका नहीं निभा पाता। वह कहानी से जुडकर उसका एक अंग बन जाता है।

२.२. पारिवारिक समस्याओं से सम्बन्धित कहानियाँ :

प्रेमचंद युग से साठोत्तरी काल तक आते-आते परिवार की स्थितियों में बहुत अधिक परिवर्तन आया हैं। पहले जहाँ एकत्रित कुटुंब से संबंधित समस्याएँ लेखकों के सामने थी और परिवार के माध्यम से समाज के सामने आदर्श स्थापित करने की बात थीं वहीं कालानुरूप परिवर्तन के साथ लेखकों को स्वतंत्र परिवारों की समस्याओं से जुझना पड रहा है। परिवार के प्रमुख अंग पति-पत्नी हैं। आज पति-पत्नी के सम्बन्धों में भी तेजी से परिवर्तन आ रहा है। इस परिवर्तन के कई कारण हो सकते हैं जैसे शिक्षा का प्रसार, औद्योगिकीकरण, स्त्री और पुरूष की 'स्व' के प्रति जागरूकता, नारी अस्मिता की पहचान आदि।

चित्राजी आधुनिक युग के आधुनिक छोटे परिवारों की समस्याएँ तो देखती ही हैं साथ ही

उनकी नाल आज भी गाँवों से जुडी हुई है इसीलिए केवल पति-पत्नी के सम्बन्धों तक सीमित न रह कर, पिता-पुत्र, माँ-बेटी, भाई-भाई, बुआ-भतिजी के बदलते सम्बन्धों पर भी उन्होंने लेखनी चलाई है। चित्राजी की कहानियों में एक बात रेखांकित करने जैसी यह है कि इन बदलते सम्बन्धों में कहीं भी उन्होंने पूरी तरह टूटते सम्बन्ध नहीं दिखाये हैं। स्नेह की धारा अजस्त्र रूप से बहती हुई अलगाते-से रिश्तों को पुन: समेट लेती है। परिवार बिखरते हुए भी फिर सहजना-सिमटना शुरू कर देता है या खो गए रिश्तों की उर्मि को महसूस करने लगता है। लेकिन आधुनिकता की आड में परिवारों में फैला अति-व्यक्ति स्वातंत्र्य भी उनकी नजरों से नहीं छुटा है। दरअसल हमारे यहां की मिट्टी आचार और व्यभिचार की स्पष्टत: सीमा रेखा बनाए हुए है। इन सीमाओं को उलाँघते हुए भले ही लोग आधुनिक बनने का यत्न करें लेकिन वास्तविकता यहीं हैं कि वे केवल आधुनिकता का 'ढोंग' रचते हैं।

उनकी कहानी 'पाली का आदमी' गाँव की अनपढ गंवार पत्नी और पुत्री को छोडकर शहर में नया जीवन शुरू करने वाले नायक की है। लेकिन द्वंद्व बना ही रहता है कि पहली पुत्री के प्रति उसके कुछ कर्तव्य हैं पर भयभीत भी है कि कहीं दूसरी पत्नी पुराने रिश्ते को जानने पर छोड न दे या आत्महत्या न कर लें। 'अग्निरेखा' की नायिका अपंगत्व से त्रस्त हो न खुद जी पाती है न औरों को सुख दे पाती है। मन से भी पंगु हो वह पति और बहन को भी शक के घेरे में लेकर टूट जाती है। दशरथ का वनवास, रूना आ रही है, एंटीक पीस, अनुबंध अलग-अलग रिश्तों के उलझने-सुलझने की कहानियाँ हैं तो सेक्स के बदलते रूपों को बताती कहानी 'अपने अपने गिरेबान' है। माता-पिता के स्नेह के चरम को दिखाती 'शिनाख्त हो गयी है'कहानी है तो अग्रजों के सानिध्य में दुल्हन बनी रही साठ साल की 'दुल्हन' की मार्मिक कथा है। इस परिच्छेद में हम चित्राजी द्वारा चित्रित परिवार की विभिन्न समस्याओं को देखने का यत्न करेंगे ।

२.२.१. व्दिभार्या समस्या - 'पाली का आदमी' :

'पाली' मराठी का शब्द हैं जो शिफ्ट के अर्थ में प्रयुक्त होता हैं। प्रस्तुत कथा का नायक भी ग्रामीण और शहरी पत्नी के साथ बट कर शिफ्ट में जीवन जी रहा हैं। रवि जब पढ ही रहा था तभी माँ की जिद् के कारण एक ग्रामीण युवती से विवाहबद्ध हो जाता है और एक बेटी का बाप भी बन जाता है। उसे न पत्नी से प्रेम है और न बच्ची से स्नेह क्योंकि विवाह के बाद वह दो-तीन दफे ही गाँव गया था। वह शहर में ही रहकर एम.ए. तक की पढाई पूरी करता है। नौकरी भी अच्छी लग जाती है और वही पढी-लिखी नौकरी करनेवाली नीरू से वह शादी कर लेता है। रवि और नीरू एक बेटी के माता-पिता भी बन गये हैं।

रवि का शहरी जीवन शिफ्ट में ही बंधा हुआ है। पति-पत्नी दोनों ही नौकरी करते हैं। जब वह घर में होता है तब पत्नी नीरु दफ्तर में होती है और जब वह फैक्टरी जाता है तब नीरू घर में होती हैं। इस बीच कई बार उसकी दीदी गाँव में रहने वाली उसकी पत्नी और बच्ची के प्रति उसे उसके कर्तव्यों की याद दिलाती है लेकिन वह गाँव आना जाना ही छोड देता है। इस बार उसकी बेटी का ही पत्र आया है और दीदी का भी। पत्नी नीरू दफ्तर गयी है। वह घर में अकेला है पत्र से पता चलंता है कि गाँव की उसकी बेटी लल्ली का ब्याह होने जा रहा है। दीदी चाहती हैं कि वह लल्ली को आशिर्वाद देने गाँव आये और कुछ रूपयों का भी इंतजाम करें। बेटी ने बडा ही भावभीना पत्र भेजा है। जिसे पढकर वह भी भावुक हो उठता है और नीरू से छिपाकर आशिर्वाद भरा पत्र और एक ड्राप्ट तैयार करता है। आखिर पत्नी ने भले ही शापग्रस्त अहिल्या होना स्वीकार लिया हो बेटी को वह उसके अधिकार से कैसे वंचित रख सकता है। लेकिन तभी उसे सुधीर द्वारा बतायी गयी फैक्टरी की घटना याद आ जाती है कि पैकिंग विभाग की एक लडकी ने नींद की गोलियाँ खाकर इसलिए आत्महत्या कर ली कि वह जिससे प्यार करती थी उसने उसे धोखा दिया। वह एक बच्चे का बाप था।

इस हादसे को याद कर रवि सोच में पड जाता है कि वह लल्ली को पत्र व ड्राफ्ट भेजे या नहीं ? क्योंकि उसने भी नीरू को अपने विगत जीवन के बारेमें कुछ नहीं बताया है। उसे वह ग्रामीण

जीवन नापसंद था। नीरू के साथ उसने अपने पसंद की गृहस्थी सजाई थी। यदि नीरू को लल्लीवाली बात पता चल जायेगी तो बनी बनायी गृहस्थी उजड सकती है। वह लल्ली को लिखा पत्र व ड्राफ्ट फाड देता है। लल्ली के असली विवाह में न जाकर अपनी दूसरी बेटी सोनू की गुडिया की शादी के लिए वह फैक्टरी से छुट्टी ले लेता है। 'कभी-कभी आदमी बडी-बडी बातों के लिए नहीं बल्कि छोटी-छोटी बातों के लिए जीना शुरू कर देता है।'[१] वह सीढियों की बजाय अब लिफ्ट का आदी हो चुका है। और इतनी ऊँचाई पर रहनेवालों को सडकों से गुजरने वाली भीड कीडे-मकोडे लगने लगती है। रवि अब उस भीड से निकल चुका है। फिर से उसका हिस्सा नहीं बन सकता। न ही अब वह दो शिफ्टों में एक साथ कार्य ही कर सकता है।

२.२.२ पति-पत्नी : सेक्स के नये आयाम -'अपने अपने गिरेबान' :

महानगरीय जीवन नित नूतन की आकांक्षा में दौडता रहता है। परिवार भी अनेक उलझनों में फँसा रिश्तों से ऊब चुका है। पति-पत्नी के रिश्तें में भी यह ऊब है। इनसे उबरने के लिए वे जिमखाना, क्लब आदि साधनों का प्रयोग करते है। लेखिका ने ऐसे ही एक क्लब का वर्णन किया है। इस क्लब की विशेषता यह है कि कुँवारे इसके सदस्य नहीं हो सकते। यूँ वहाँ अनैतिक कुछ भी नहीं होता और 'जब आपसी सहमती और स्वीकृति से कोई बात तय होती है, उसमें अनैतिक, अवैध कुछ भी नहीं होता। सभी यहाँ अपनी जिंदगी की समस्याओं, रोजमर्रा के तनावों और चिन्ताओं से मुक्त होकर जीवन के सरस रस का स्थूल आनंद उठाने के ख्याल से ही आते हैं।'[२] इस क्लब से जुडनें वालों को वर्जनामुक्त, रूढीमुक्त होकर मानसिक मुक्ति का विचार ग्रहण करना होता है। पति-पत्नी आधुनिक विचारधारा एवं परस्पर समान अधिकारों को मानने वाले होने चाहिये।

---

१. पाली का आदमी - लाक्षागृह - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ २७
२. अपने अपने गिरेबान - इस हमाम में - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ ७६

लेखिका ने इस प्रकार के क्लब के एक खेल 'वाईफ-स्वैपी' का वर्णन किया है। एक नक्काशीदार चाँदी के जग में लबालब बियर भरी जाती है, जिसमें सभी सदस्य अपनी गाडियों की चाबी डालते हैं। जग अच्छे से हिलाया जाता है। पहले चाबी डालने वाला पहले चाबी निकालता भी है। इस प्रकार जिसके हाथ जिसकी गाडी की चाबी आती है उसकी पत्नी पर उस रात उसका अधिकार होता है। इस निहायत गुप्त रूप से चलनेवाले खेल के बारे में श्रीमान सेठ बताते हैं। जो इस वर्ग की मानसिकता को उजागर करता है।

उँचे समझे जाने वाले आधुनिक लोग ही यह खेल खेलते हैं। सेठ बताते हैं कि एक बार ऐसे ही खेल में उनके हाथ क्लब की सबसे चहेती महिला सदस्य उनके हाथ लगती है। उस रात के मादक क्षणों को वे संक्षेप में संकेतात्मक भाषा मे बताते हैं-'वह एक खूबसूरत रात थी एण्ड.... शी वाज वण्डर फुल.... वेरी को ओपरेटिव।'[1] लेकिन जब उनसे अगले दिन उनकी पत्नी पूछती है तो वे पत्नी परायण-से उत्तर देते हैं कि आइंदा ऐसी पार्टियों में वे नहीं जायेंगे। पत्नी के कहने पर कि आप तो उसे पाते ही बगैर मुडकर पत्नी को देखे निकल लिये थे तो वे कहते है कि वह सुंदर है पर पत्नी के समान लावण्यवती नहीं है, हँसती है तो मसूढे तक दिखते हैं, आवाज फँटे बाँस-सी है। वो तो रात भर यहीं बताते रहे कि अपनी पत्नी से मुलाकात, प्रेम और विवाह कैसे हुआ। लेकिन पत्नी संतुष्ट नहीं होती। वह सीधे आक्रमण करती हुए पूछती है- 'हाथ-वाथ भी नहीं पकडा ? किस-विस! इतने दूध के धोए नहीं हो तुम । .... सरेआम तो कमर मे हाथ डालकर ले जा रहे थे।'[2] लेकिन पति साफ बचते हुए कहते हैं कि वे अपनी पत्नी से डरते हैं। पत्नी के सामने अन्य सभी महिलाएँ फीकीं हैं। अंत मे वे पत्नी के सामने झूठी कसम भी खा लेते हैं।

जब ऐसे ही सवाल वे अपनी पत्नी से पूछते हैं तो वह भी झूठीं बातें कहती है, कि वह जिन महाशय के साथ थी वे तो कविता सुनाते रहे। किस-विस के सवाल पर जबाब देती है, कि यदि 'वह

---

१. अपने अपने गिरेबान - इस हमाम में - चित्रा मुद्‌गल, पृष्ठ ७९
२. अपने अपने गिरेबान - इस हमाम में - चित्रा मुद्‌गल, पृष्ठ ८०

कोई कोशिश करते भी तो मैं धक्का मार के कमरे से बाहर खदेड देती ? ... तुम्हारे अलावा किसी अन्य पुरूष का स्पर्श भी बर्दाश्त नहीं मुझे।'[१] इस प्रकार वह भी बहाने गढती है और अंत में झूठी कसम खा लेती है। पति पत्नी पर तो पत्नी पति पर विश्वास दर्शाते हैं।

वास्तविकता यह है कि यदि वे इस विश्वास को बने रहने का यदि भ्रम न रखे तो उनका हँसता मुस्कराता परिवार टूट जायेगा। सारी परिपक्वता, आधुनिकता धरी रह जायेगी और जीवन नरक बन जाएगा। अत: पति-पत्नी दोनों ही झूठी कसमें खा कर परिवार को जोडे रहते हैं। सवाल कई उठ सकते हैं कि इन बातों पर विश्वास करें या न करें, भारत जैसे देश में ऐसे क्लबों और खेलों का होना उचित है भी या नहीं ? लेखिका केवल सवाल उठा कर छोड देती है कि पाठक खुद सोचे कि क्या उचित है क्या अनुचित।

२.२.३ पत्नी से पीडित - 'पति-पत्नी' :

चित्राजी ने इस लघुकथा में पत्नी से पीडित पति की व्यथा-कथा कहीं है। यमराज समझे बैठे थे कि नरक के समान बुरी जगह कोई नहीं। यदि वे मृत्यूलोक अर्थात पृथ्वी को एक बार देख लेते तो उनका यह भ्रम टूट जाता। एक पति आत्महत्या करके यमलोक पहुँचता है। असामयिक मृत्यु का कारण बताता है कि वह वेश्यागामी है अत: पत्नी ऐसा उत्पात मचाती है कि वह आत्महत्या कर लेता है। यमराज उसे वेश्या का पति बना फिर पृथ्वी पर भेजते हैं। वह फिर आत्महत्या कर लेता है। यमराज को आत्महत्या का कारण बताता है कि वेश्या पत्नी बनते ही पहली पत्नी से भी उग्र और उदंड हो गयी। हमेशा पूर्व पत्नी का नाम लेकर कोसती है। यमराज उसके असमय मृत्यू से क्रोधित हो कहते हैं-'कुछ भी हो, हमारी व्यवस्था और विधान नहीं बदल सकता तुम्हें अब दोनों पत्नियों के साथ पच्चीस साल ग्यारह महिने गुजारने होंगे।'[२] बेचारा पति बिजली की तरह तडका यमराज के चरणों में सूक्ष्म देह भी प्राण त्याग देता हैं। यदि विनोद का अंश छोड भी दिया जाय तो महिलाओं पर

---

१. अपने अपने गिरेबान - इस हमाम में - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ ८१
२. पत्नी - जिनावर - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ ११५

चुटीला व्यंग्य अवश्य है। कई पत्नियाँ समस्या का समाधान जिस उठा-पठक, हाय-तोबा से करती हैं उसका फल उचित नहीं मिलता।

२.२.४ अपंगत्व : शरीर का और मन का भी – 'अग्निरेखा' :

शरीर से अपंग व्यक्ति जब मन की शक्ति खोने लगता है तो वह मन से भी पंगु बन जाता है। बेचारगी उसकी सोचने समझने की शक्ति को समाप्त कर देती हैं। कथा नायिका मनु प्रसव के दौरान अपंगत्व को प्राप्त होती है। छोटी बहन शशी और पति अमरेन्द्र उसे इस दु:ख से उबारने का यत्न करते हैं लेकिन एक ही कमरे और बिस्तर की सीमा में कैद रहकर वह मानसिक दृष्टि से कमजोर हो गयी है। भाई-भाभी के यहाँ मनु की माँ और शशी का जीवन गुलामों-सा था। माँ ने शशी को मनु के पास भेजते समय उसकी सारी जबाबदारियाँ भी मनु पर ही डाल दी थी। शशी हर क्षण इस प्रयास में रहती है कि जिज्ञी तनावग्रस्त न हो, वह उन्हें खुश रख सके। प्रसरोपरान्त बच्चा तो बच ही नहीं पाया, मनु भी अपाहिज होकर लौटी थी। तभी से उसके स्वभाव में तेजी से बदलाव आया है। सहज,सरल, निशंक मनु अब सशंयग्रस्त हो गयी है। कभी-कभी वह भी सोचती है कि-'वह शरीर से ज्यादा दिमाग से अपाहिज हो चुकी है, जो शायद अब कभी उसे इस काबिल नहीं छोडेगा कि वह सही चिज को सही मायनों में सोच सके, जी सके, उदार दृष्टिकोन अपना सके।'[१]

कमरे में बंद रहकर वह कुंठा ग्रस्त हो गयी हैं। शशी की मनु को खुश रखने की हर कोशीश नाकाम होती है। शशी 'अनायास ग्लानि में डूब जाती है। जुर्म न करके भी अभियुक्त करार पा जाने की ग्लानि।'[२] शक के कारण ही उन्हे घर की हर हलचल में षडयंत्र की बू आती है। उसे लगता है कि शशी ने घर के साथ ही अमरेन्द्र को भी हस्तगत कर लिया है। दरअसल कहीं कोई नहीं बदला है, टूटा है। कही कुछ बदला है और टूटा है तो वह है स्वंय का विश्वास टूटा है। वह आस्थाहीन हो गयी है।

---

१. अग्निरेखा - लाक्षागृह - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ ९७
२. अग्निरेखा - लाक्षागृह - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ ९९

डॉक्टर की दवाएँ बदली जाती है लेकिन वे कुछ असर ही नहीं कर रही। डॉक्टर उन्हें तनाव मुक्त रहने को कहते हैं। पत्र-पत्रिकाओं, संगीत में उन्हें व्यस्त रखने का प्रयास होता है। लेकिन वह संशय से ऊबर नहीं पाती। वह रात को अचानक चीख कर अमरेन्द्र और शशी के आने की आहट लेती है कि वे किस कमरे से आ रहे हैं। शशी अमरेन्द्र और मनु दोनों को खुश देखना चाहती हैं इसीलिए अमरेन्द्र को ठीक मनु के तरीके से रात बारह बजे नर्गीस के फूल देकर जन्मदिन की बधाई देती है। यह बात जब मनु को वह बताती हैं तो मनु चिढ जाती है। शशी थल सेना के कैप्टन अरूप से प्यार करती है लेकिन मनु गलतफहमी ही पाले रहती है। वह पति से भी शिकायत करती है तो वह बडे ही तटस्थ भाव से उत्तर देते हैं-'मैं सिर्फ तुम्हें जीता हूँ... तुम्हारे साथ जीता हूँ.... तुम्हे किसी भी रूप में पाता हूँ तो पा लेना चाहता हूँ लेकिन तुम.... तुम्हारा दिमाग सड गया है... इस कमरे की चार दीवारियों को तुमने खन्दक बना लिया है... उसी में घुमडती रहती हो।'[1]

लेकिन लाख समझाने पर भी वह संशय मुक्त नहीं हो पाती। पति और बहन के सम्मिलत ठहाके, किसी भी विषय पर पति से चर्चा न होना, उसकी पसंद-नापसंद ना पूछी जाना उसे नागवार गुजरता हैं। जिंदा लाश के समान वह जी रहीं है। अंत में वह आत्महत्या का मार्ग चुन लेती है।

लेखिका ने मनु का संशयी स्वभाव चित्रित किया है लेकिन उसका शंकालु स्वभाव यूँ ही नहीं हो गया है। भले ही शशी को लगता हो कि उसने अमरेन्द्र को जन्मदिन की बधाई मनु के समान देकर स्वंय को अमरेन्द्र की बाहों में सिमटा कर कोई गलती नहीं की लेकिन यहाँ मनु का संशय निराधार नही रह जाता।

२.२.५ पिता-पुत्र : नये सम्बन्धों की तलाश - 'दशरथ का वनवास' :

त्रेता युग में दशरथ ने राम को वनवास दिया था और कलि-युग में राम ने दशरथ को वनवास दिया है। रमानाथ अपने कठोर अनुशासन वाले पिता के प्रेम को समझ नहीं पाया। पिता

---

१. अग्निरेखा - लाक्षागृह - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ १००

का स्वभाव इतना कठोर था कि वह कभी उनसे लगाव महसूस ही नहीं कर पाया। पिता से सीधे बातचित तो होती ही नहीं थी, जब कभी उनमें संवाद होता तो वह भी बाबा के माध्यम से। वह स्वंय को पितृहीन ही समझता रहता है। उसके पिता ने न उसे कभी महाबीरन का मेला दिखाया,न रंगीन चश्में खरीद कर दिये। सुबह उठने में देर हो जाती तो उसकी बेरहमी से खटियाँ उलट देते, जब पीटने लगते तो माँ को भी बीच में न आने देते। यदि वह बचाव करने आती तो उसे भी पीट देते। ऐसे ही एक समय रमानाथ ने कहा था-'अब की अगर बाबूजी ने तुम्हारे ऊपर हाथ उठाया तो ठीक नहीं होगा। दहलीज में टँगी उन्हीं की दुनाली न उन पर दाग दूँ तो रघुराजसिंह का नाती नहीं।'[1] तभी से पिता के प्रति उसका मोह छुटने लगा था। पिता से छुपाकर जब वह उनकी सायकल ले गया था तब भी उसे उन्होंने बुरी तरह पीटा था। वह तो बाबा ने उनके हाथ से बेंत छीन लिया वरना जान ही ले लेते।

हाईस्कूल पास कर वह पिता से दूर शहर में ईश्वर अंकल के पास चला जाता है। यह दूरी पिता-पुत्र के बीच के अंतर को और बढा देती है। बाबूजी ईश्वर अंकल को ही पत्र लिखते, जिसमें उस पर कडी नजर रखने की हिदायत होती। उसके नाम से वे एक भी वाक्य नही लिखते। माँ की मृत्यू के पश्चात तो वह उनसे और दूर हो जाता है। रमानाथ पिता की मर्जी के बिना अपनी पसंद से विवाह कर लेता है। अब उनमें किसी भी प्रकार का पत्र व्यवहार भी नहीं है। सुधा ससुर की निष्ठुरता को देख कर रमानाथ से पूछती हैं-'क्या बाबूजी कभी हमारी शादी की सचाई स्वीकार नहीं करेगें ? पोता-पोती को देखने को जी नहीं तरसता उनका? कहते हैं अकेला बेटा मन की कमजोरी होता हैं। कैसे वे इतने निष्ठुर हैं तुम्हारे प्रति? लगता है उन्हें देखूँ रमानाथ ! मिलूँ उनसे ... वे बहू कहकर पुकारें ... मर्जी के खिलाफ शादी जरूर कर ली हैं तुमने, मगर मुझे विश्वास हैं कि वे अगर एक बार भी मुझसे मिलेंगे तो बहू के रूप में मैं उन्हें निराश नहीं करूँगी।'' लेकिन रमानाथ अपने पिता के स्वभाव को जानता हैं। वह सुधा को कभी गाँव नहीं ले जाता।

---

१. दशरथ का वनवास - ग्यारह लम्बी कहानीयाँ - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ ८५
२. दशरथ का वनवास - ग्यारह लम्बी कहानीयाँ - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ ९३

रमानाथ के बच्चे भी उससे पूछते हैं कि वे मम्मी के डैडी से तो अक्सर मिलते रहते हैं लेकिन उसके डैडी से नहीं। तब वह उन्हें बहलाने के लिए कह देता है कि उनके नानाजी ही दादाजी हैं लेकिन बच्चे नहीं मानते तो वह कह देता है उनके दादाजी बहुत पहले मर गए। सुधा जब इस झूठ का कारण पूछती है तो स्पष्ट उत्तर देता है- 'मेरे लिए इस रिश्ते का यही महत्व रह गया हैं। जिन सम्बन्धों को मैं जी नही पाया... उन्हें... ।'[1] उसे लोगों के कुछ कहने सुनने से मतलब नहीं है। जिस पिता से उसे पिता जैसा स्नेह नहीं मिला उस रिश्ते को वह केवल दुनियाँवालों के लिए नहीं ओढना चाहता।

पिताजी की मृत्यु के पूर्व गाँव से कई आग्रह और समझौते भरी चिठ्ठीयाँ आती हैं कि वह एक बार आकर बहू और बच्चों को देहरी ही छुआ जाए। भले ही बाबूजी कुछ मुँह से नहीं कहते लेकिन आखिर वे उसके पिता है। चिठ्ठीयाँ उसके दुखते जख्मों को कुरेदने का काम करती। सभी उससे केवल हक की अदायगी चाहते है। लेकिन कभी किसी ने बाबूजी को उनके कर्तव्यों की याद क्यों नहीं दिलायी कि 'एक बच्चा तुमसे सिर्फ दहशत ही नहीं सीने की गरमाई का भी मोहताज हैं... ।'[2]

बाबूजी की मृत्यू के बाद भी वह उनके अंतिम संस्कार के लिए गाँव नहीं जाता। केवल लोक-लाज के खातिर वह मृत सम्बन्धों को जीना नहीं चाहता। ये तर्क उसकी प्रतिशोधी मानसिकता के शस्त्र मात्र थे। ईश्वर अंकल उसे एक रेल्वे की बिल्टी भेजते हैं जिसे छुडाकर घर आकर खोलकर देता हैं। उसमे एक नई साइकिल होती हैं साथ मे एक पुर्जा होता हैं जिसमें बाबूजी ने लिखा होता है-'चि.बबुन ! सोचा था तुम दफ्तर जाने लगोगे तब तुम्हें यह साइकिल भेंट करूँगा... तुम दफ्तर जाने लगे मगर तुमसे भेंट नहीं हो पायी... तुम्हारी अमानत अब नहीं संभाल पा रहा। तुम्हारे पास भिजवा रहा हूँ.... ।'[3] रमानाथ की सारी नफरत धुल जाती हैं वह उस साइकिल से लिपटकर रोने लगता है। लेखिका ने कहानी का अंत अत्यन्त प्रभावशाली ढंग से किया है। टूटे

१. दशरथ का वनवास - ग्यारह लम्बी कहानीयाँ - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ ९३
२. दशरथ का वनवास - ग्यारह लम्बी कहानीयाँ - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ ९४
३. दशरथ का वनवास - ग्यारह लम्बी कहानीयाँ - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ ९५

संबंध एकबारगी जी उठते हैं।

२.२.६ माँ–बेटी : सम्बन्धों में दरार – 'एंटीक पीस' :

नीतु की माँ को अपने नैहर और नैहरवाले बडे प्रिय हैं। अपनी अमीर बहन कुंती और उसके घरवाले उसे अपने पति और बच्चों से भी प्रिय है। उसे इस बात का भी दु:ख है कि पिता ने उसे केवल वर की डिग्री देखकर ही ब्याह दिया। अपने पति की सुरूचिपूर्ण पसंद की तांत की साडियों की जगह उसे कुंती की टेरीवायल की उतरन ही पसंद थी। लकवाग्रस्त पति को भी वे बडी तुच्छता से देखती है।

बहन के बेटे को बेटा होने पर वह नीतु की बचपन की पैंजनी ले जाती है। नीतु को वे बडी प्रिय है क्योंकि उसकी पैदाइश पर दादी ने चांदी का सिक्का तुडवाकर वे बनवायी थी। उसकी जगह वे कुछ और भी दे सकती थी, लेकिन दादी के प्रति भी उनके मन में आदरभाव नहीं था। बच्चों के प्रति भी उसमें विशेष स्नेह दिखाई नहीं देता। जब कभी वे बच्चों से लडिया कर बोलती तो बच्चें समझ जाते कि जरूर उनका कोई स्वार्थ है।

ऐसे ही एक दिन कुंती मौसी का बेटा इन्द्र उनके यहाँ आता है। दादी के जमाने का पुराना पानदान देख अभिभूत हो जाता है। नीतु ने ही उस पानदान को टीन के बक्से में से निकाल धो पौंछ कर रखा था। वह दादी के चढावे का था, अम्मा को भी चढा अब उसकी ही वह अमानत था। इन्द्र पानदान की तारीफ किये जा रहा था-'गजब का एंटीक पीस है मौसी। अब कहाँ नजर आती है मुगलों के जमाने की ऐसी बारीक मुरादाबादी कारीगरी..... सच पूछो तो मौसी, मुगलों का शासन क्या खत्म हुआ कि नक्काशी, तरकशी, पच्चीकारी, फूलदारी, जरदोजी की कला भी चौपट हो गयी...'[१] माँ भी उसकी बात की पुष्टि करती है और कहती है कि यह पानदान भी बडा पुराना है। यदि इन्द्र को इतना ही पसंद है तो वह इस पानदान को ले जा सकता है। अपने जन्मदिन की भेंट स्वरूप वह इसे

---

१. एंटीक पीस - जिनावर - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ ७२

महिना पहले ही ले जा सकता। लेकिन नीतु दादी की अमानत को नहीं देना चाहती। उसका विरोधी स्वर सुनते ही माँ उसे कुतिया आदि गालियों से विभूषित करती है और कहती है यदि तेरे बाबूजी को अपनी माँ की चिजें इतनी ही प्रिय थी तो पीकदान, गद्दे, रजाईयाँ क्यों दान कर दी? इस नोंक-झोंक को सुन इन्द्र ऊपरी तौर पर पानदान के लिए मना करता है लेकिन माँ के जरा आग्रह करते ही तुरंत ले कर खिसक लेता है। माँ जब कभी बाबूजी के मन के विरूद्ध कार्य करती है या उनका अपमान करती है या बच्चों पर क्रोधित होती है तो व्यथित हो कर बोलने में अक्षम बाबूजी नीतु से उन्हें दिवार की ओर करवट करवा देने को कहते हैं। नीतु पिता की व्यथा को अच्छे से समझती है। इसलिए वह पिता के सामने किसी भी चख-चख से बचना चाहती है।

आर्थिक कारणों से वह शीघ्रातिशीघ्र नौकरी प्राप्त करना चाहती है। नौकरी मिलने पर वह माँ और उनके मायके वालों के दबाव से भी मुक्त हो सकती है। माँ के पोते के बरसे में चले जाने के बाद वह तुरंत अपने भाई-बहनों और पिताजी के खाने की व्यवस्था में जुट जाती है। नौकरी मिलने का विश्वास उसमें उम्मीदें भर देता है।

२.२.७ भाई-भाई : टूटते-जुडते रिश्ते – 'अनुबन्ध' :

चित्रा मुद्‌गलजी ने इस कहानी में महानगर की मुश्किलों में रिश्तों के टूटने-जुडने की ओर संकेत किया है कि समस्याग्रस्त व्यक्ति स्वार्थी हो कर संकुचित भी हो जाता है और रिश्तों में कटुता ले आता है।

समस्याएँ हरेक के साथ होती है। कम या ज्यादा, मात्रा में अंतर हो सकता है। परंतु व्यक्ति को दूसरों की समस्या में भी शामिल होना चाहिये। नायक की सौतेली माँ पिता की मृत्युपरांत अध्यापकी कर घर चलाती है। वह नायक को पत्र द्वारा सूचित करती है कि तबादला होने से तीन महीनें की तनख्वाह उसे नहीं मिली है। मुन्ना की छाती में डाक्टरों ने पैच बताया है और रोज

इंजेक्शन लेने की सलाह दी हैं। माँ हैरान है कि खर्च कहाँ से जुटाएँ। उसके भाई नरेन ने भी लिखा है कि वह कंस समान मामा के साथ नहीं रहना चाहता। वह भैय्या के पास बंबई आकर कुछ काम करना चाहता है कि क्योंकि मामा कंस से भी क्रूर है---'रात घर लौटकर खाना-पीना निबटाकर जब मैं सोने की तैयारी करता हूँ.... यह नीच मुझे अलग नहीं सोने देता। मुझसे जबरदस्ती करता है।'[1] वह लिखता है कि अगर भैय्या ने उसे नहीं बुलाया तो गंगा में कूदकर अपनी जान दे देगा।

नरेश को अपने दिन याद आते हैं। उसकी माँ की मृत्यु के बाद उसके पिताजी ने उसे नाना-नानी की छत्रछाया में छोड दिया था। वहाँ नाना के लिए उसे रोज शराब लानी पडती थी। यूँ उसे प्रतिदिन खाना ठीक से नहीं दिया जाता था पर पिताजी के मिलने आने पर जरूरत से ज्यादा परोस दिया जाता। दरअसल उसकी नानी सौतेली थी। उसकी दूर की चाची रसूलपूर में रहती थी। उसे जब सारी स्थिती पता चलती है तो वह सहारा देती है। नई माँ के आने पर भी वह चाची को छोडकर नही गया। पिताजी की मृत्युपरांत भी वह माँ के पास नहीं जाता। पढलिख कर वह मुंबई की फिल्म नगरी से जुड जाता है। बडे निर्देशकों के सहायक के रूप में काम करते हुए अवसर मिलते ही वह स्वतंत्र निर्देशक बन जाता है। फिल्म वित्त निगम से कर्ज लेकर फिल्म भी बना डालता है लेकिन चर्चा के बाबजूद भी फिल्म चल नहीं पाती।

पहली प्रादेशिक फिल्म पूरी होने पर उसने विवाह भी कर लिया था लेकिन पत्नी को उसकी रचनात्मकता से कुछ लेना देना नही हैं। यदि नरेश आज भी सहायकी स्वीकार ले तो उसकी जिंदगी अच्छे से चल सकती है। पर दो स्वतंत्र फिल्में निर्देशित करने के बाद सहायकी करने में उसे शर्म आ रही है। यद्यपि दुग्गल नें सहायकी के प्रस्ताव के साथ यह भी कहा था कि उसका नाम टाइटल में असोशिएट डॉयरेक्टर दिया जाएगा पर वह मानने को तैयार नहीं है।

दुग्गल नरेश का मित्र है। परेशानी में हमेशा साथ देता है। फिल्म के लिए अब तक कितने

---

१. अनुबंध - ग्यारह लम्बी कहानियाँ- चित्रा मुद्‌गल, पृष्ठ १९

ही फाइनांसरों को पकड-पकडकर लाता रहा है। नन्हें का खत नरेश दुग्गल को देता है ताकि वह कोई सलाह दे सके। दुग्गल खत को पढकर महत्वपूर्ण बात कहता है क्योंकि नरेश अपनी ही परेशानियों का रोना ले बैठा है दुग्गल कहता है - 'दरअसल तुम अपनी कुंठाओं से पीडित रहे हो। नन्हें के प्रति तुम्हारा रवैया हमेशा ही प्रतिशोध पूर्ण रहा है। जो तुम्हें नहीं मिला उसे तुम औरों को भी देना नही चाहते। समस्याएँ किसके साथ नहीं है ? क्या उस छोटी सी खोली में उसके लिए कोई कोना नहीं निकल सकता ? निकल सकता है मगर पहले एक कोना अपने मन में पैदा करो। औरों की तरफ हाथ बढाना भी तो सीखों ?''[१] नरेश को अपनी भूल का अहसास होता है और वह अशोक' दा की फिल्म का अनुबन्ध स्विकार कर लेता है, ताकि आर्थिक तंगी दूरकर वह अपने भाई नरेन को अपने पास बुला सकें।

२.२.८ बुआ-भतीजी : नये सम्बन्धों की तलाश - 'रूना आ रही है' :

निमा और रूना बुआ-भतीजी हैं। दोनों समवयस्क हैं अत: उनमें सहेलियों सी दोस्ती है। निमा अपने पिता की बुढापे की बेटी है और उसके जन्म के बाद ही उसकी माँ का देहान्त हो जाता है। परिणाम स्वरूप पिता उस बेटी से ही घृणा करने लगते हैं। वे अपनी नातिन रूना की हर इच्छा-अनिच्छा की ध्यान रखते पर निमा से किसी भी प्रकार की बातचित नहीं करते समय के साथ दोनों ही उम्र की उस दहलीज पर पहुँच गयी थी जब युवतियाँ रंगीन सपनों में खोने लगती हैं। रूना के जीवन में श्रीमन्त का आगमन होता है। हमेशा साथ-साथ रहनेवाली बुआ-भतीजी में अब दूरी बढने लगती है। जब तक निमा का विवाह नहीं होता रूना का भी विवाह नहीं हो सकता इसी बात से विवाद होने लगता है।

निमा के जीवन में पडोस की सलमा आपा के भाई शैकत का प्रवेश होता है। घर के उपेक्षित जीवन से परेशान निमा के लिए 'शहर जमीन पर भी खूबसूरत हो उठा।'[२] वे बाहर भी मिलने लगे

---

१. अनुबंध - ग्यारह लम्बी कहानीयाँ - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ २६
२. रूना आ रही है - ग्यारह लम्बी कहानीयाँ - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ १७३

घूमने भी लगें लेकिन घर में भूचाल आ गया। श्रीमन्त की माँ ने रूना का रिश्ता यह कह कर लौटा दिया कि निमा ने मुस्लिम लडके से छिपकर ब्याह कर लिया है। वास्तव में श्रीमन्त की माँ बडी व्यावहारिक किस्म की महिला थी-'व्यावहारिक होना उनके लिए स्वाभाविक भी था। वैधव्य की विकरालता से जूझते हुए उन्होंने बडी कठीनाई में अपने बच्चे पाले थे। उन्हें ऊँची शिक्षा तक पहुँचाया था। अच्छा भविष्य देना भी उनका लक्ष्य होगा। ऊंचे घराने से सम्बन्ध लेना और देना भी।'[1] रूना अपनी बुआ को ही इसके लिए जबाबदार मानती है। रूना ने फिर विवाह नहीं किया निमा ने शौकत से विवाह कर लिया और दो बच्चों की माँ भी बन गयी। परिवार से टूट कर भी उसे घर की खबर मिलती रहती। उसकी बेटी मुनिया तो रूना के समान ही हरकतें करती है। सत्रह वर्ष के अंतराल में निमा न तो रूना को भूल पाती है और न ही अपने दुराग्रहों को त्याग खुद ही उसे खत लिख पाती हैं। निमा के समझदार बच्चे माँ की इस स्थिती को समझ जाते हैं और मुनियाँ रूना'दी को पत्र लिख आने का निमंत्रण दे देती हैं। अब रूना का तार आया है कि वह आ रही हैं और पूरा परिवार उसके आने की खबर से प्रसन्न है। निमा को लगता है कि उसके बच्चे ही उससे अधिक परिपक्व हैं। चाहती तो वह भी रूना को श्रीमन्त को खोने की पीडा से उबार सकती थी लेकिन वह ऐसा नहीं कर पायी।

२.२.९ परिवार नियोजिन : वैचारिक मतभेद –'दुलहिन' :

'दुलहिन' कहानी के नायक ने विवाह की पहली रात ही तय कर लिया था कि वह जब तक थिसिस पूरी कर प्राध्यापक नहीं बन जाता तब तक बच्चे के विषय में कतई नहीं सोचेगा। यदि गलती से कुछ हो गया तो सफाई करवा देगा। ज्यादा उम्र होने पर यदि बच्चे न हुए तो अनाथालय से ले आयेगा। लेकिन उसकी अम्मा उसके विचारों के विरूद्ध थी। छ: भाई-बहनों में वह सबसे छोटा है। बडी बहन चार बच्चों की माँ है और बडी बेटी को ब्याह चुकी है। बडके और मझले भैया के बच्चे कॉलेज जा रहे हैं। गीता और सुषमा दो-दो बच्चों की माँए बन चुकी हैं। इस उम्र में अम्मा फिर

१. रुना आ रही है - ग्यारह लम्बी कहानीयाँ - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ १७४

गर्भवती हो जाती है। अम्मा को जीजी ने सफाई करवा लेने की सलाह दी थी लेकिन अम्मा क्रोधित हो गयी-' बेटवा-बेटार तो भगवान का परसाद होती है। नहीं तो मनई तरसि जात हैं देवी-देवता मनावत है... कथा भागवत सुनत है। टोना-टोटका करावत है तैनिक पै औलाद नहीं नसीब होति है... और फिन, अबै तो जिया बैठी हैं छाँह धरे ... हमारे तीज-त्यौहार करे वाली ... नेग-न्यौछार धरे वाली।' [१] बस तभी से वह अम्मा से दूर हो गया है वरना अम्मा के हाथों की चाय उसकी पहली पसंद है।

दो ही वर्ष बाद पुन: वह अम्मा को मोरी मे उलटी करते देखता है। आज सुबह ही अनी ने उसे अपने गर्भवती होने की आशंका प्रकट की थी। डॉ. मजूमदार के निर्देश में उसकी पी-एच.डी. पूरी हो रही थी, नौकरी का पक्का आश्वासन था अत: वह अनी को अबार्शन नहीं करने देने वाला था और अम्मा के गर्भवती होने पर भी वह उनसे कुछ नहीं कहने वाला था क्योंकि अब वह यूँ भी गाँव-घर से नौकरी के सिलसिले में दूर जाने वाला था। पिछली बार जब अम्मा गर्भवती थीं तब दोस्तों ने उसकी खूब खिंचाई की थी। लेकिन अब तो वह नौकरी की वजह से अपने-आप घर की समस्या से दूर हो रहा है अत: निश्चिंत था।

लेकिन अगली सुबह ही घर में हंगामा मच जाता है। उसकी आजी स्वर्गवासी हो जाती है। अम्मा पछाड खा-खाकर रूदन कर रही है। उसके सीने से लग के रोते हुए कहती है-'जिया नहीं रही रे छोटू ... छाडि गयी हमका ... अब हम का दुलहिन कहिके को पुकारी रे दैईया ऽऽऽ ... को हमरा तीज-त्योहार करी रे ... हमरे बरे नेग न्यौछाबर धरी ... रे ... आज हम बुढा गईन रे छोटू, बुढा गईन... जब तक जिया जियत रहीं .. हमका यहै लागत रहा कि हम बहुरियाहन .... भले हमरे जवान-जहील बहु-बेटवा, नाती-पनाती है तो का !'[२] नायक को अहसास होता है कि अपने से बडे जब तक रहते है आदमी को अपनी बढती उम्र का अहसास ही नहीं होता। कल तक अम्मा केवल

---

१. दुलहिन - ग्यारह लम्बी कहानीयाँ - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ ५३
२. दुलहिन - ग्यारह लम्बी कहानीयाँ - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ ५९

दुलहिन थी। आज वे कई-कई रिश्तों मे बंट गयी काकी, दादी, नानी, सास, जेठानी आदि। आजी की तेरवीं होते ही वे सफाई करवाने कानपूर चली जाती है। क्योंकि जिया के रहते वे बढती उम्र के बावजूद खुद को दुलहिन समझती थी लेकिन उनके पश्चात अब वे स्वंय को बुढा महसूस करती है अब जवान बच्चों के सामने गर्भवती होना उचित नहीं लगता।

२.२.१० खोए हुए बालक के परिजनों की व्यथा-'शिनाख्त हो गयी हैं' :

कुकी और निखिल का बेटा एक दिन स्कूल से लौटकर नहीं आता। कुकी और निखिल बदहवास से सारे नाते-रिश्तेदार, पास पडोस के घरों, दोस्तों के यहाँ उसे खोज आते हैं, लेकिन वह नहीं मिलता । स्कूल में भी पूछताछ कर आते हैं। पुलिस में बच्चे के खोने की रिर्पोट दर्ज करवायी जाती है। शाम तक भी सोनू का कहीं पता नही लगता। निखिल लगातार फोन से पुलिस से संपर्क बनाये हुए है। घर में परिचितों की भीड इकट्ठी हो जाती है। कुकी की तबीयत खराब हो जाती है। वह लगातार सोनु के लिए रोए जा रही है। आने वाला हर व्यक्ति बच्चे के खोने पर अलग-अलग प्रतिक्रिया व्यक्त करता है। अलग-अलग घटनाओं को बयान करता है। कोई यह समझने की कोशिश नहीं करता कि ऐसी बातें सुन कर सोनू की माँ की क्या हालत होगी? उसका मनोबल बंधेगा या टूटेगा।

मिसेस स्वामी प्रश्न करती है कि कहीं सोनू को गुस्सा तो नहीं किया था? क्योंकि आजकल के बच्चे नाजुक-मिजाज होते है। झोपड्पट्टी के बच्चों की बुरी सोहबत से बच्चे बिगड जाते हैं और अमीरों के बच्चें भी कोई अच्छे नहीं होते। बस्तों मे गांजा चरस लाते हैं। सोनु कुछ चुरा कर तो नहीं ले गया-जैसी शंका भी प्रकट की जाती है। मिसेस पाटील दीदी को जरी-मरी वाले मंदीर के पंडीतजी के पास ले जाती हैं। शाम को निखिल के दफ्तर के सहकर्मी भी मिलने आ जाते है। कोई बताता है कि शहर में बच्चे उडानेवाला गिरोह है जिनमें मांत्रिक भी है। ऐसे ही उडाए गए बच्चे की लाश पवई लेक में मिली। कुछ बच्चे लौट भी आते हैं लेकिन उन्हें कैसे ले आया गया यह याद नहीं रहता।

राजु की मम्मी को कुकी और निखिल का सोनू को घर छोडकर घूमने जाना अच्छा नहीं लगता। वे बताती है कि सोनू ने भी इस पर नाराजी व्यक्त की थी। कुकी कई-कई देवताओं से सोनू के लौट आने के लिए प्रार्थना करने लगती है। कल तक की अनास्था आज आस्था और श्रद्धा में परिवर्तित हो गयी है।

तभी खबर आती है कि सेंट जार्ज अस्पताल में किसी दुर्घटनाग्रस्त बचें की लाश आयी है जिसकी शिनाख्त के लिए निखिल को बुलाया है। निखिल के अस्पताल जानें के घंटे भर बाद भी जब फोन नही आता तब अनेक शकांए आने लगती है। यदि सोनू ही नहीं रहा तो कुकी और निखिल के होने का क्या अर्थ है। इस घर का क्या अर्थ है। वे सोनू के बिना जी ही नहीं सकते। तभी निखिल फोन पर बताते है कि शिनाख्त हो गयी। लाश किसी दूसरे बच्चे की है। दीदी की बेटी सीमा व्यथित सी बुदबुदाती है कि उस बच्चे की माँ भी अपने बेटे को ऐसे ही खोज रही होगी। उसे पता भी नहीं होगा कि वह बेचारा गाडी के निचे कुचला गया है। कुकी उसकी बुदबुदाहट सुन उस माँ के बारे में सोचने लगती है। आखिर दोनों का दर्द समान है-'एक मुखौटाधारी भीड उस माँ को आश्वस्त कर रही होगी ... हमदर्दी के हथौडे से कूट-कूट कर कुचल रही होगी और जब उसे पता चलेगा कि उसका बच्चा बर्फ की सिल्लियों के बीच लावारिस लाश-सा अपनी शिनाख्त की प्रतीक्षा में दबा पडा है तों ...।'[१] वह विक्षिप्त हो उठती है।

अब तक निखिल ने स्कूल पास-पडोस, बगीचों, रिश्तेदारों, रेल्वे प्लेट फार्म, पुलिस स्टेशन, ट्रेफिक दुर्घटना सूचि, रेल्वे दुर्घटना सूचि, बाल सुधार गृह, अस्पताल सभी जगह की खाक छान मारी है। दीदी भी मंदीर से लौट आयी है। कुकी-निखिल बगैर विरोध के भभूत खा लेते है और कोई दिन होता तो दीदी का ही मजाक उडाते। रात के बारह बज रहे है अब तक सोनू का पता नहीं लगा। दोनों को सोनू की आदतें याद आ रही है 'सोनू को दिन में तीन-चार बार भूख लगती है ... आठ बजा नहीं कि फौरन पलके झपकनें लगती हैं। पढने के लिए मुँह पर छींटे मार-मार कर

---

१. शिनाख्त हो गयी है - लाक्षागृह - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ ७८

जगाना पडता है, तब भी बमुश्कल साढे नौ-दस तक वह जग पाता है।'[1] निखिल उसके गर्म कपडे पहन कर जाने के बारे में जानना चाहते हैं। वो बार-बार पुलिस को फोन कर रहे है। पीने-पिलाने के सख्त खिलाफ होने वाली दीदी निखिल की हालत देख उसे रम लेने का आग्रह भी करती है लेकिन अनमने से वे इंकार कर देते हैं।

तभी दरवाजे की घंटी बजती है। एक व्यक्ति सोनू को लेकर आया है जो बताता है कि फैक्टरी की रात पाली के लिए जाते हुए सोनू उन्हें रोता हुआ मिला। पूछने पर उसने घर जाने की इच्छा जतायी और पता दिया। वह टैक्सी कर उसे फौरन घर छोडने आ गया। उसने टैक्सी का भाडा भी नहीं लिया और जाते-जाते हिदायत दे गया कि आइंदा बच्चे को ऐसे मत छोडना वरना दादा लोग दारू की भट्ठी पर लगा देंगें। दरअसल स्कूल जाने के समय ही लेंट्रीन जाने की इच्छा के कारण सोनू को स्कूल जाने में देर हो रही थी। माँ से लेट नोट मांगने पर भी माँ ने नहीं दिया उल्टे डाँट दिया इसीलिए वह नाराज हो चला गया था। बच्चे के कोमल मन पर स्कूल के फॉदर का दबाव तो था ही माँ के डाँटने से वह और भयभीत हो गया। सोनू बुदबुदाता है कि माँ अब कभी मत डाँटना, जिसे सुन कर कुकी का ममता भरा हृदय व्यथित हो जाता है। वह बेहोश हो जाती है। अस्पताल में होश आने पर देखती है कि किसी दूसरे बच्चे की लाश सफेद चादर से ढँकी जा रही है। उसका सोनू सुरक्षित है। लेकिन वह उस अनजान बालक की माँ की व्यथा भी रामझ रही है।

२.३ नारी समस्याओं से सम्बन्धित कहानियाँ :

चित्राजी ने नारी समस्याओं के अलग-अलग पक्षों को अपनी कहानियों में चित्रांकित किया है। दहेज की अग्नि में भस्म होती-युवती के स्वप्न 'लाक्षागृह' कहानी के कथ्य में हैं जहाँ उसकी नौकरी उसकी कुरूपता को ढंक कर दहेज का पर्याय बनती है। पुरूष के दंभ का शिकार होती नारी की व्यथा कथा 'मुआवजा' और 'प्रमोशन' में है। स्त्री के व्यक्तित्व की आंच पुरूष सह नहीं पाता

---

१. शिनाख्त हो गयी है - लाक्षागृह - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ ७९

और उसे अबला बनाये रखने के लिए यत्न करता है। स्त्री के पुनर्विवाह से उसकी पहली संतान पिता द्वारा प्रताडित होती है पुरूष उस बच्चे को नहीं स्वीकारता जब कि स्त्री पुरूष के पहली पत्नी के बच्चों को और बाद के बच्चे को भी सहजता से अपना लेती है। पुरूष स्वार्थांध हो कर स्त्री से दुर्व्यवहार करता है। 'शून्य' कहानी का पति अपने प्रेम के खातिर पत्नी के साथ अन्याय करता है और प्रेमिका के अपघातग्रस्त हो कर संतान उत्पत्ति में असमर्थ होने पर पुन: पत्नी से उसकी संतान की कामना करता है। स्त्री अस्मिता को पाने के संघर्ष में पुरूष द्वारा सौंपी गयी आधुनिकता को अपना कर 'हस्तक्षेप' की नीता शिक्षित होकर भी छली जाती है तो 'प्रेतयोनि' की बहादुर अनिता गुप्ता अपने परिजनों द्वारा ही संघर्ष के मार्ग पर बढने से रोकी जाती है। इस तरह स्त्री के संघर्ष को चित्रित करती उनकी कहानियाँ स्त्री के सामर्थ्य को बताती है एवं उसका संघर्ष सफल भी होता है।

२.३.१ पत्नी का नया रूप-'बावजूद इसके' :

'बावजूद इसके' कहानी की नायिका प्रीति और उसके पति गोयल के बीच झगडा होने का कारण, आधुनिक युग की जिंदगी जीने के अपने-अपने तरीके थे। गोयल हमेशा शालीनता ओढे रहता। क्लब में रात एक-दो बजे तक ब्रीज खेलता और पीने-पीलाने में रूचि रखता जब कि प्रीति न गोयल जैसे रम के पैग के बाद दूसरा पैग पी पायी, न ब्रीज खेलना सीख पायी। 'बोनियम' के रिकार्ड्स पर थिरकते हुए मि.खन्ना का उसके कंधों पर होठों को छुआ देना भी वह बर्दाश्त नहीं कर सकी। इस तरह की एक्जिक्यूटिव सभ्यता उसे पसंद ही नहीं थी। प्रीति ने जब इसका विरोध किया तो गोयल ने उसे इस बुरी तरह पीटा कि पीठ नील के धब्बों से भर गयी। वह गर्भवती थी, रक्तस्त्राव होने लगा। तब अम्मा और भाभी ने गोयल को जानवर, राक्षस जैसे विशेषणों से विभूषित किया था। लेकिन पुन: उसे गोयल के पास भेज दिया था यद्यपि देवर ऐसा नहीं चाहता था। भाई के व्यवहार से असंतुष्ट होने की वजह से ही वह विवाहोपरांत अलग हो गया था। मोना की बिमारी में भी वह पिता के दायित्व से अलग ही रहा। कभी-कभी अवश्य उसका पितृत्व जाग जाता लेकिन मोना चल बसी। कुछ दिन गोयल सामान्य रहा लेकिन पुन: घर से बाहर रहने लगा। वह मायके लोट

आती है क्योंकि बाहरी लोगों का शोषण तो सहा जा सकता हैं और यूँ भी उसे इस बात से अधिक पीडा हुयी है कि उसके अधिकारों का हनन किया गया वह कहती है कि 'लात-घूँसों की चोट से भी अधिक पीडादायक ... जख्म होता है अधिकार च्युत होने का ।'[1]

पुरूष के अहम् का सब्र छोटा है उसके चुकते ही वह प्रीति पर चारित्रिक आरोप लगा कर वापस बुलाने का यत्न करता है। वह तलाक के कागज पति के पास भेज देती है। यह लिखते हुए कि -'पत्नी मैं तुम्हारी बन नहीं सकती ... किसी अन्य नाजायज रूप में, मुझे तुमसे रहने-खाने के मुआवजों की दरकार नही। अब जिंदगी अपनी भी जीना चाहती हूँ।'[2] वह 'गोल्डन काण्टीनेण्टल' में रिसेप्शनिस्ट के पद पर कार्यरत हैं। प्रीति को यह काम पसंद भी था:'काम ही क्या होता है? मेहमानों को चाबी दो, चाबी लो। उनकी कोई आवश्यकता है, शिकायत है तो सम्बन्धित व्यक्ति तक पहूँचाना, और बस, जबरन मुस्कुराते रहना।'[3] होटल में केवल कुंवारी लडकियों को ही नौकरी दी जाती थी। प्रीति पत्नीत्व के भाव से मुक्त हो वहाँ काम कर रही थी लेकिन तभी होटल में गोयल का पत्र पहुँचता हैं कि वह कुंवारी नही हैं। वे अभी तक कानूनन पति पत्नी हैं। द्विवेदी ने बुलावा भेजा था उसे। प्रीति को नर्वस देख द्विवेदी ने दिलासा दिया था कि वह नौकरी बचा सकता है यदि वह मेहमानों को एण्टरटेन करे तो -'आज की मॉड लडकियाँ इसे बेजा नहीं समझती ... यूनो बॅटर ... अरेबियन गेस्टस् आर वेरी रिच ... फॉर कम्पनी सेक ... वे मन चाहा पे करते है ... बट, शर्त यह है कि किसी को भनक नहीं लगनी चाहिये।'[4] आखिर हजार रूपये की नौकरी आसानी से उसे मिलने वाली नहीं। तिलमिलाकर उसने गोयल को खत लिखा था कि वह सेल्स एक्जीक्यूटिव हैं अत: हर स्टेशन कंपनी देता होगा लेकिन उसका स्वतंत्र अपने पैरों पर खडा होना गोयल को उद्विग्न कर रहा है।

---

१. बावजूद इसके - ग्यारह लम्बी कहानियाँ - चित्रा मुद्‌गल , पृष्ठ १४३
२. बावजूद इसके - ग्यारह लम्बी कहानियाँ - चित्रा मुद्‌गल , पृष्ठ १४४
३. बावजूद इसके - ग्यारह लम्बी कहानियाँ - चित्रा मुद्‌गल , पृष्ठ १४८
४. बावजूद इसके - ग्यारह लम्बी कहानियाँ - चित्रा मुद्‌गल , पृष्ठ १४९-१५०

कल तक भैया भी अम्मा-भाभी की तरह उसे ही गलत समझ रहे थे। गोयल के पास लौट जाना ही उन्हे उचित पर्याय लग रहा था। रिसेपशनिस्ट की नौकरी उनकी प्रतिष्ठा को ठेस पहुचाती है लेकिन जब गोयल ने भैया को लिखे खत में प्रिती के साथ उन्हें भी घसीट लिया तो वे तटस्थ नहीं रह पाये। उनकी प्रतिष्ठा पर आंच आते ही वे प्रीति के पक्षधर बन गये और नौकरी पर बने रहने की सलाह देने लगे। वह दुविधा ग्रस्त हो उठती है। लेकिन ठान लेती है कि वह मोहरों-सी इस्तेमाल नहीं होगी। गोयल, भैया, द्विवेदी किस-किस से बचेगी और संघर्ष करने का निर्णय ले वह नौकरी का त्यागपत्र फाड देती है।

२.३.२. पत्नी की त्रासदी – 'होना संपादक की पत्नी – एक लेखिका का' :

नारी की त्रासदी का एक और पहलु चित्राजी ने प्रस्तुत कहानी में हास्य और व्यंग्य के साथ प्रस्तुत किया है। स्त्री की अपनी अलग पहचान यदि हो भी तो लोग उसे दर किनार कर देते हैं। नायिका को संपादक पति के होने का नाज था लेकिन उनके लेखिका होने को भूलकर जब सभी उन्हें केवल संपादक की पत्नी और संपादक तक पहुँचने का मार्ग समझने लगे तो उसे भी लगने लगा कि 'काश मैं किसी डॉक्टर, इंजीनियर, वकील, कम्पाउण्डर, क्लर्क, हवालदार या चाहे किसी घसियारे की ही बीवी होती पर किसी सम्पादक की पत्नी न होती।'[1]

किसी भी समारोह का आमंत्रण तो उन्हें लेखिका के रूप में ही मिलता लेकिन समारोह समाप्ति तक वे केवल संपादक पत्नी ही बची रहती। ऐसे ही एक समारोह में संगोष्टी उपरान्त एक युवा रचनाकार उन्हें अकेले में अपनी रचना देते हुए कहते हैं कि यह रचना आप के पति के कार्यालय से बगैर पढे ही लौटा दी गयी है अत: इसे छपवाकर न्याय दिलाए। एक अन्य वृद्ध रचनाकार ने उनकी रचना की कांट-छांट पर आपत्ति प्रकट करते हुए कहा-'जिस दिन घर में संपादक की तू-तपड होती होगी ... बलि का बकरा बेचारी कहानियाँ बनती होगी।'[2] ऐसे ही सत्कार समारंभ में एक

---

१. होना संपादक की पत्नी - एक लेखिका का - इस हमाम में - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ ११७
२. होना संपादक की पत्नी - एक लेखिका का - इस हमाम में - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ १२१

नविन अनुभव होता है। समारोह शालीनता भरा और सम्माननीय वातावरण में संपन्न होता है। प्लेट फार्म पर छोडने आये सज्जन एक लिफाफा थमा देते है। जिसमें समारंभ की रिपोर्ट है और निवेदन करते है कि संपादकजी को दे दें ताकि अगले अंक में रिपोर्ट छप सके। पिछे से कटखना जुमला आता है-'भई घाटे का सौदा नहीं रहा .... इक्कीस सौ देकर पांच हजार की पब्लिसिटी क्या बुरी है।'[१]

एक नवलेखन कथा गोष्ठी के पश्चात तो उन्होंने डाक पढनी ही छोड दी थी कि अब वे किसी भी सभा-समारोह के निमन्त्रण नहीं स्वीकारेंगी। दरअसल उस गोष्ठी में हुआ यूँ था कि नये रचनाकारों के उत्साहवर्धन के लिए उन्होंने उनकी भरपूर प्रशंसा की थी। गोष्ठी जमी भी खूब। लौटते समय बस अड्डे पर विदा करने आये कुछ युवा रचनाकारों ने अपनी रचनाएँ उन्हे थमाते हुए कहा था कि यदि ये संपादकजी तक पहुँचा दे और प्रकाशन की व्यवस्था कर दे तो नवलेखक इस सहयोग के लिए उपकृत रहेंगे। घर लौटकर उन्होंने संपादक पति के सामने जब रचनाएँ रखते हुए कहा कि 'रचनाओं के साथ न्याय नहीं होता।... एक लेखिका के नाते आप से गुजारिश है कि आप न्याय की खातिर स्वंय इन्हें पढें ... अपने सहकर्मियों से न पढवायें। वरना इन कालजयी रचनाओं के साथ अन्याय हो सकता है। यह मैं बरदाश्त नहीं कर सकती।'[२] लेकिन संपादक पति ने उन्हें ऐसा आदेशात्मक स्वर सुनाया कि वे लेखिका का चोला त्याग पत्नी बनी खाली लिफाफे ले आयी और उन रचनाओं को तुरंत लौटा दिया। भले ही वे पत्नी के साथ लेखिका हो लेकिन संपादक के काम में वे दखल नहीं दे सकती थी। दरअसल उनकी व्यथा यह थी कि लोग उन्हे संपादक की पत्नी के रूप में ही बुलाते थे कहानीकार के रूप में नहीं।

२.३.३. प्रौढावस्था की समस्या-'अपनी वापसी' :

व्यक्ति को अपना अभिभावक स्वंय बनना चाहिये और बदलते माहौल के साथ जुडे रहना चाहिये। बढती उम्र का हौवा बना कर परिवर्तनों से कट जाने पर व्यक्ति अकेला हो जाता है।

---

१. होना संपादक की पत्नी - एक लेखिका का - इस हमाम में - चित्रा मुद्‌गल, पृष्ठ १२२
२. होना संपादक की पत्नी - एक लेखिका का - इस हमाम में - चित्रा मुद्‌गल, पृष्ठ १२४

खासकर महिलाएँ तो बच्चों के जन्म के बाद से ही खुद की ओर से लापरवाह हो जाती हैं। अब उसे किसे दिखाना है? उसमें किसे दिलचस्पी है? किसे परवाह हैं? जैसी बातों मे उलझ कर वह खुद से दूर हो जाती है। यदि कोई निकटस्थ मित्र उसे उसके होने का एहसास कराता है तो उसमें पुन: जीने की उमंग आ जाती है। चित्रा मुद्‌गल की 'अपनी वापसी' कहानी में यहीं व्यक्त किया है।

शकुन अपने दो जवान बच्चों और पति के साथ बडे से सुख सुविधापूर्ण घर में रहती है। बच्चे अपने-अपने कमरों और दिनचर्या में व्यस्त है तो पति अपने दफ्तर के कामों में । शकुन सबसे कटी-सी अलग-अलग है। बच्चों व पति के अधिकतर कार्य नौकर और आया कर देते हैं अत: उसकी आवश्यकता उन्हें महसूस नही होती। हरीश भी उसकी ज्यादा परवाह नही करते। न उसकी तकलीफ पूछते है। न ही स्वंय डॉक्टर के पास ले जाते हैं। 'दूसरों को प्रश्नों के घेरे में घेरती ... अचानक वह स्वंय को प्रश्न हुआ पाती। सोचती 'अब ऐसा क्यो हो गया उनके दरमियान । वह बदल गयी है या हरीश ? या बच्चें, ... या समय ... ? या उसकी प्रौढ हो आई देह की आकर्षण खो चुकी निरंतर असक्रिय होती जा रही उमंगविहीन उपस्थिति? या अच्छा दिखने, बनने की कोशीश में जतन से ढंक-मूंद ही गई अपनी कुंठाएं जो सुई में तागा डालने की असमर्थता के चलते पैबंद-सी उधड गयी?' [१] लेकिन हरीश के प्रति उसका आकर्षण बना हुआ है।

बरसों बाद मेजर से मुलाकात के बाद फिर से उसने तय किया था कि नियमित व्यायाम करेगी, मसाज करेगी लेकिन कुछ दिनों बाद वह पुन: पुरानी दिनचर्या में लौट जाती है। मेजर उनके पुराने घनिष्ठ पारिवारिक मित्र हैं। मेजर अक्सर शकुन की प्रशंसा करते हैं। उनके घर आयोजित पार्टी में मेजर शकुन को एकांत में बुलाते हैं। वह भी मेजर से बहुत कुछ कहना चाहती है। उसे विश्वास है 'मेजर उसकी पीडा को महसूस कर सकेंगे उनके अतिरिक्त किसी से कह भी तो नही सकती। लोग यहीं समझते है कि उन सा सफल दम्पत्ति दूसरा नहीं। असत्य! कितनी तनहा खडी

---

१. अपनी वापसी - चर्चित कहानियाँ - चित्रा मुद्‌गल, पृष्ठ २६

है उम्र के इस मोड पर ! ... जहाँ न वह पत्नी रही है, न बच्चों की माँ ... न जीवंत वजूद।'[1] वह मेजर से सारे गिले-शिकवे कहना चाहती है कि बच्चों और पति की चुहल-से, वाद-विवाद, चर्चा से स्वंय को कटा सा मानती है। सभी उसकी उपेक्षा करते हैं लेकिन वह कुछ कहे उससे पूर्व ही मेजर उदास आवाज में अपनी व्यथा कथा कहने लगते है कि उसकी पत्नी सुनीता परिवार से दूर होती जा रही है। वह जडता ग्रहण कर जिंदगी को जीने की बजाय सोचने लगी है। अपने ही कोश में वह सीमटी रहती है 'सुनीता अब संशय, विरक्ति, अपेक्षा और स्वार्थ की प्रतिमूर्ति बन गई है ... प्रौढता को उसने हताशा की खोह बना लिया हैं, सोचती है कि उसके जीने के दिन चुक गए ... नहीं समझती कि उम्र के हर मोड का अपना रंग होता हैं।'[2]

मेजर की बात सुनकर शकुन को एहसास होता है कि सुनीता के बारे में कही गयी सभी बातें उस पर भी लागू होती है। हरीश भी मेजर की तरह ही निराश हो गये हैं और बच्चे भी इसी वजह से उससे दूर हो गये हैं। उसे अपनी गलती का एहसास हो जाता है। वह ठान लेती है कि जीने में कृपणता नहीं करेगी और अपने परिवार वालों के साथ जुडकर प्रौढता के इस नये रंग को जान कर पूरे उत्साह के साथ जीएगी।

२.३.४ पति-पत्नी-प्रेमिका और संतान -'शून्य' :

सरला का विवाह राकेश से दीदी की जिद्द से तय हुआ था। राकेश ने बेला और अपनी तस्वीर भेज विवाह तोडने का यत्न किया था। ताऊजी ने भी सुनी अफवाहों का जिक्र किया था लेकिन घरवालों ने उसे यह कहकर नजरअंदाज कर दिया कि अपनी लडकी के लिए लडका फांसने के ये तरीके हैं। लेकिन विवाह के चौथे दिन ही राकेश ने नशे की हालत में सरला से बेला और उसके सम्बन्धों के बारे में बता दिया। अपने जल्लाद पति से त्रस्त बेला को वह सहारा देना चाहता है। उसने बेला और उसके पति के तलाक के लिए भी प्रयत्न किया था पर असफल रहा। उसने अपने

१. अपनी वापसी - चर्चित कहानियाँ - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ ३३
२. अपनी वापसी - चर्चित कहानियाँ - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ ३५

और बेला के रिश्ते को दोस्ती का नाम दिया था। लेकिन सरला देखती है कि वह दोस्ती की सीमाओं को पार कर रहा है। दौरे पर जाते समय वह बेला को साथ ले जाता है। बाहर से भी उसे बहुत कुछ अनर्गल बातें सुनने को मिलती हैं। लेकिन पूछने पर झूठ बोल देता है। वह बेला को तो सहेजने में लगा है लेकिन सरला की ओर से लापरवाह है। उसके इस दोहरे स्वभाव को वह राकेश के सामने व्यक्त भी करती है कि बेला को संभालने का तो बहाना मात्र है जो उसे 'भावनात्मक रूप से बेवकूफ बनाने के लिए किया गया है। ताकि जिसे घर में लाकर पटक दिया है वह मुँह सिये बैठी रहे। तुम बेला के साथ मौज मारते रहो। उसके दु:ख बाँटते रहो कि कहीं वह विक्षिप्त न हो जाये। जिंदगी से टूट न जाये। भले मैं उस स्थिति में पहुँच जाऊँ। पहुँच ही रही हूँ। पर तुम्हें क्या परवाह ? भला तुममें और बेला के उस खूसट पति में क्या अंतर है?''[1] सच सुन राकेश ने तिलमिलाकर उसे पीट दिया था।

सरला ने फिर भी समझौते की कोशिश की थी। बेला को तलाक मिलने पर वह मौसी के यहाँ रहती है और राकेश हफ्ते के आधे दिन वही बिताता है। आखिर उसने घर छोडने का निर्णय ले लिया। बाबूजी ने भी कहा था कि आखिर पढाया-लिखाया किस लिए है। उसने कॉलेज में नौकरी कर ली। उसने तलाक के समय यह शर्त रखी थी कि वह बच्चा नहीं संभालेगी। कारण 'वे दोनों स्वच्छन्दता से मौज-मस्ती मारे और वह बच्चा पालती बिसुरती रहे ... एक तलाकशुदा औरत का निभाव समाज में सहज है? फिर जिसकी गोद में बच्चा टँगा हो उसकी जिंदगी में तो यूँ ही सैंकडो पूर्ण विराम लग जाते हैं .... उसके जीने के सारे हक खतम हो जाते हैं।'[2] लेकिन कोर्ट ने निर्णय दिया कि बच्चा सात वर्ष का होने तक माँ के संरक्षण में रहेगा। एक दिन अपनी विवशता पर पगला कर उसने सोये हुए दीपू का ही गला दबा दिया था पर जाग रहे बाबूजी ने उसे छुडा लिया था और अब वह दीपू के बगैर एक पल भी नहीं रह सकती। कॉलेज से भी बार-बार फोन कर नौकर को दीपू के विषय में

१. शून्य - ग्यारह लम्बी कहानियाँ - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ २०७
२. शून्य - ग्यारह लम्बी कहानियाँ - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ २१०

हिदायतें देती है। दीपू के कारण ही डॉ. शेवडे के विवाह प्रस्ताव को उसने ठुकरा दिया था। जबकि वह भी उनके प्रति विशिष्ट अनुराग रखती है और डॉ.शेवडे भी दीपू से घनिष्ट है। उसने अनुभव से जाना है 'आदमी के प्रेम की पराकाष्ठा अंधी होती है वरना बेला की भावनाओं को पूरी संवेदना से समझने, प्यार करनेवाले राकेश, उसके प्रति इतने क्रूर, निष्ठुर हो पाते।'[1] और स्त्रियों की मानसिकता भी अजीब होती है। वह भी राकेश को भूल नहीं पायी थी जबकि वह जानती है कि राकेश बेला से प्यार करता है लेकिन उसने भी तो राकेश से जी-जान से प्यार किया था। इसलिए वह अन्य किसी के प्रति आकर्षित भी नहीं हो पायी। भारतीय नारी की अस्मिता को लेखिका ने यहा व्यक्त किया है। चाहती तो राकेश से बदला लेने के लिए वह डॉ. शेवडे से विवाह कर सकती थी।

अरसे बाद राकेश सरला से मिलने आते हैं। वे दीपू को ले जाना चाहते हैं। जिन्होंने आज तक पितृत्व का कोई दायित्व पूर्ण नहीं किया। उनमें अचानक पितृत्व का स्रोत फूट पडता है। जिस बेला ने कभी उनके बारें में जानना नहीं चाहा अचानक ममतामयी हो गयी। दरअसल दीपू के प्रति अकस्मात पैदा हुए स्नेह का कारण स्कूटर दुर्घटना थी, जिसमें घायल बेला का गर्भस्थ शीशु और बच्चेदानी निकाल देनी पडी थी। अपने जीवन के इस शून्य को भरने के लिए उन्हें अब दीपू की आवश्यकता थी। लेकिन सरला ने निश्चय कर लिया था कि वह सुप्रीम कोर्ट तक लडेगी पर दीपू उन्हें नहीं देगी। सरला की दृढता पर पाठक अभिभूत हो जाता है क्योंकि राकेश अपनी अमानुषिकता से सरला को अब तक मात देता रहा है और दीपू को कोर्ट से लेने की बात कर फिर से अपनी बर्बरता प्रदर्शित करता है लेकिन सरला उसके दर्द को चुनौती दे डालती है।

२.३.५ दूसरा विवाह–बच्चों की समस्या – 'ताशमहल' :

दूसरे पिता को केन्द्र में रखकर बच्चों की समस्या के संदर्भ में बहुत कुछ लिखा जा चुका है। मन्नू भंडारी का प्रसिद्ध उपन्यास 'आपका बंटी' 'मणिका मोहिनी का' 'पारू ने कहा था?' आदि में

---

१. शून्य - ग्यारह लम्बी कहानियाँ - चित्रा मुद्‌गल, पृष्ठ २२१

यह समस्या समर्थ ढंग से उठायी है। चित्राजी की प्रस्तुत कहानी 'ताशमहल' में एक ऐसी ही दुविधाग्रस्त नारी का चित्रण है जिसने पुनर्विवाह किया है। उसने सपने तो न जाने क्या-क्या देखे थे लेकिन ताश के महल के समान उसके स्वप्न और जीवन भी बिखर जाता है।

शुभु के जीवन से दिवाकर के चले जाने पर वह अपने बचे बच्चू के साथ मजे में जिंदगी बिता रही थी। कार्यालय जाते समय कभी काकी तो कभी सुलभा आंटी बच्चू को संभाल लेते। वापस घर लौटने तक बच्चू स्कूल से लौट खा-पीकर सो रहा होता या होमवर्क पूरा कर उसकी प्रतिक्षा करता मिलता। जिंदगी मजे में कट रही थी लेकिन निशीथ ने उससे विवाह के लिए जिद पकड ली थी यह कह कर कि 'तुम्हारे लिए सही मायनों में साथी होना चाहता हूँ शुभु, बचे के लिए सचमुच पिता।'[१] उसे विवाह के लिए बाध्य कर दिया। शर्त उसने भी रखी थी कि वह दूसरा बचा नहीं चाहती, जिसे निशीथ ने स्वीकारा भी। लेकिन असावधानी से गर्भ रहने पर वह इस बचे के लिए जिद्द करने लगा। फिर रोनू हो गया। वह दूसरा बचा इसलिए नहीं चाहती थी कि विभाजित माँ डायन होती है। निशीथ की माँ इस विवाह से प्रसन्न नहीं थी लेकिन पोते की खातिर वे वापस लौट आयी थी। अन्यथा वे सत्संगियों के बीच ही रहती।

रोनू की देखभाल माँ मनोयोग से करती। उसकी गंदगी उठाने में हिचक नहीं लगती। लेकिन बहु के पहले बचे बच्चू को बुखार में दवाई देना भी उन्हें अखर जाता। बच्चू एक सौ चार बुखार में तप रहा है। उसे 'एजुकेशन फार वीमन्स इक्वालिटी' पर कार्यशाला में जाना है अत: निशीथ से छुट्टी ले बच्चू को नर्सिंग होम में दाखिल करा देने की प्रार्थना करती है लेकिन वह नहीं मानता। और कहता है कि टायफायड है कोई कैन्सर नही। उसके बच्चू के प्रति दिन पर दिन कठोर होते व्यवहार से वह परेशान हैं। अचानक ऐसा क्या घटित हो गया कि बुखार में पस्त बचे पर भी बिगडा जाय।

एक रात बच्चू नींद में भयभीत हो गया। वह माँ के पास सोने की जिद्द करने लगा। किसी आघात से वह पुन: बीमार न पड जाये, यह सोचकर शोभना उसे पास ले कर सो जाती है। अचानक

---

१. ताशमहल - जगदंबाबाबू गाँव आ रहे है - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ ६०

निशीथ बच्चू को उसके आंचल से खिंचकर पलंग पर पटक देता है। क्योंकि उसे वह दिवाकर का ही अंश लगता है। उसे लगता है कि -'इस टटरूं टूं दिवाकर के पिछे तुम मेरे बच्चे की उपेक्षा कर रही हो।'[१] शोभना उसके तेरे-मेरे वाली बात से दंग रह जाती है। वो माँ है। भला कैसे वह बच्चू और रोनू में अंतर कर सकती है। दरअसल निशीथ ही बच्चू के लिए दिवाकर नहीं बन पाया। उसे लगता है कि 'रोनू के लिए दादी है,पिता हैं, माँ है, किंतु बच्चू के लिए ... सिर्फ उसकी माँ भर हैं। इस घर में ही क्या, संभवत: पूरे संसार में।'[२] इसलिए वह निशीथ के बच्चू को हॉस्टल में डालने के प्रस्ताव को ठुकरा देती है। वह बच्चू की माँ उससे नही छीन सकती। निशीथ ने दिवाकर बन कर बच्चू को पिता का प्यार देने के और उसका सच्चा साथी बनने के जो स्वप्न महल शोभना के साथ बनाये थे वे वास्तव में ताश के महल बन कर बिखर गये। वह अपना ट्रांन्सफर शिमला करवा लेती है ताकि बच्चू के साथ रह सके और दादी और पिता की घृणा और दुर्व्यवहार से उसे बचाकर माँ का निश्चल प्रेम दे सके।

२.३.६ दहेज के नये आयाम :

दहेज अर्थात स्त्रीधन, जिस पर उसका पूरा अधिकार होता है लेकिन आजकल दहेज पर पूर्णत: ससुराल के लोगों का अधिकार होता है। अब दहेज लेने के तरीके में भी बदलाव आ रहा है। यदि लडकी नौकरी करनेवाली होती है तो उसका वेतन दहेज ही समझा जाता है। दहेज यदि नगद मिलता है तो शीघ्र समाप्त भी हो जाता है लेकिन वेतन के रूप मे मिलने वाला दहेज तो लंबे समय तक उपयोगी होता है। उसी तरह यदि कोई लडकी विवाहोंपरांत विधवा हो जाती है और उसके नाम पति धनराशी छोड जाता है तो ससुराल पक्ष के लोग चालाकी से उससे वो पैसा निकलवा लेते हैं। उसके धन पर ये लोग एय्याशी करते है और उसे कानी कौडी भी देना नहीं चाहते।

---

१. ताशमहल - जगदंबाबाबू गाँव आ रहे है - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ ६३
२. ताशमहल - जगदंबाबाबू गाँव आ रहे है - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ ६४

२.३.६.१ 'लाक्षागृह' :

'लाक्षागृह' की नायिका सुनीता खासी बदशक्ल है। इसीलिए विवाह योग्य होने पर भी उसका विवाह नहीं हो पाया। वह नौकरी करती है फिर भी विवाह की संभावनाएँ कम है क्योंकि 'सुन्नी के लम्बे चेहरे ने, ऊँची नाक के नीचे धंसी-धंसी आँखों ने, होंठों से हमेशा बाहर रहनेवाले दाँतों ने उसे कभी साखरपूडा (सगाई) की संभावनाओं तक नहीं पहुँचने दिया।'[1] सभी दफ्तर में उससे कटे-कटे रहते हैं। स्वामीनाथन के शब्दों में तो 'शी लुकस् लाइक पक्का तालीवाला। तेरह साल हो गए, डिपार्टमेंट में चाय पीने का वक्त भी कोई खराब नहीं करना चाहता उसके साथ।'[2] कुरूपता के कारण ही पैंतीस साल की हो जाने पर भी किसी ने उसे पसंद नहीं किया। भानु बहन के मंझले देवर ने अवश्य उससे विवाह की इच्छा प्रकट की थी। वह डेढ दो हजार की कमाई कर लेता था। दो-दो दूकानें थीं, फ्लैट था। लंगडापन नजरअंदाज किया जा सकता लेकिन मिर्चमसाले से गंधाते बदनवाले व्यक्ति से विवाह करने से उसने इंकार कर दिया। माँ ने उससे छोटी शुभा और मालू का रिश्ता कर दिया था।

जीवन उसका भी ठीक ही गुजर रहा था पाँच सौ उसे मिलते थे, क्वार्टर का भाडा ढाई सौ था, अच्छा खासा बैंक बैलेन्स था। लोकापवाद को माँ यह कहकर छिपा देती थी कि सुन्नी शादी ही नहीं करना चाहती। उसने भी सोच लिया था कि वह फ्लैट खरीद लेगी और अनाथालय से सुंदर सी बच्ची गोद ले लेगी लेकिन इस बीच उसकी जिंदगी में सिन्हा आ गया। वह रेल्वे में सहायक हिन्दी आफिसर था। आते ही उसने सुनिता की स्थिती जान ली। बडी तेजी से दोनों में दोस्ती बडी। सुनिता में भी बहुत परिवर्तन हुए। लेखिका ने सुनिता के सिन्हामय होने का चित्रण इन शब्दों में किया है-''वह अपने लुक का खयाल रखने लगी थी। चेहरे के उन तमाम अभिशापों को जिन्हें वह पैंतीस साल तक बदशक्ली के रूप में जीती रही, ब्यूटी पार्लर के एयर कंडीशन कमरों में धोने लगी।

---

१. लाक्षागृह - लाक्षागृह - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ ५५
२. लाक्षागृह - लाक्षागृह - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ ६४

अपने बढे हुए दाँतों पर उसने तार का फ्रेम चढवा लिया था। आई ब्रोस करवाने लगी थी। हफ्ते में एक बार फेशियल के लिए भी जाती थी। फिगरेट भी उसने ज्वाइन कर लिया था।' [१]

सिन्हा ने जब उससे शादी की इच्छा व्यक्त की तो सहमती के शब्द भीतर ही रह गये उसने गर्दन से हामी भरी थी। उस दिन से उसके जीवन में मानों बहार आ गयी। झटपट सिन्हा ने मालाड में एक थ्री रूम ब्लॉक ओनरशिप पर बुक कर दिया। बारह हजार की पहली किश्त सुन्नी ने अपने बैंक बेलेन्स से भर दी। उसने प्रोविडंट फंड से पैसा निकाल लिया और एल.आय.सी. से कर्जा ले लिया। लेकिन एक दिन उसने छिपकर स्वामीनाथन और सिन्हा की बातचित सुन ली। सिन्हा कह रहा था -'हर सौदे की शक्ल सूरत पर नहीं जाना चाहिये। मैं जीवन और व्यावहारिकता को एक दूसरे का पूरक मानता हूँ।' [२] उसकी निगाह में आशा घर चलाने के लिए योग्य लडकी थी लेकिन हर महिने पांच सौ कमानेवाली लडकी व्यवहार की दृष्टि से उचित है। सुनकर सुनिता चौंक पडती है। उसे लगता है कि वह नौकरी नहीं कर रही अपितु नौकरी उसे जीने लगी है। उसके व्यक्तित्व की पहचान बन गयी है। सुन्नी के लिए उसकी बदसूरती और प्रौढता अभिशाप बन गयी तो सिन्हा को पारिवारिक दायित्व के बोझ ने मजबूर कर दिया। सुन्नी ने नौकरी छोडने का फैसला कर लिया। सिन्हा को जब इस बात का पता चला तो उसने फोन पर सुन्नी को डाँटा कि -'तुम बदशक्ल ही नहीं, बेअक्ल भी हो। रिजाइन क्यों कर दिया? घर में बैठकर खाना पकाओगी ?.... शादी के बाद भी तुम्हें नौकरी करनी है सुन्नी।'[३] इसका जो जवाब सुनिता ने दिया है वह नारी चेतना का प्रतिक है- 'मुझे शादी नहीं करनी है तुमसे। नौकरी इसीलिए छोड दी।'[४]

किसी युग में पांडवों को जलाने के लिए लाक्षागृह का षडयंत्र रचा गया था। आज कितनी ही नारियों को ऐसे ही दहेज के लिए लाक्षागृहों में जलना पडता है। सुनिता के नौकरी के पैसों के लिए

---

१. लाक्षागृह - लाक्षागृह - चित्रा मुद्‌गल, पृष्ठ ६०
२. लाक्षागृह - लाक्षागृह - चित्रा मुद्‌गल, पृष्ठ ६४
३. लाक्षागृह - लाक्षागृह - चित्रा मुद्‌गल, पृष्ठ ६६
४. लाक्षागृह - लाक्षागृह - चित्रा मुद्‌गल, पृष्ठ ६६

ही सिन्हा ने विवाह का लाक्षागृह रचा था जिसे समय रहते जान लेने के कारण वह उससे बच गयी वरना जीवन भर वह जलती रहती।

२.३.६.२ 'अभी भी' :

दहेज का ही एक नया पहलु चित्राजी ने इस कहानी में उठाया है। आर्थिक शोषण की दास्तान 'अभी भी' कहानी में व्यक्त है। स्त्री का स्वंय का धन भी वह मर्जी से खर्च तो कर ही नहीं सकती चालाक ससुराल पक्ष उसे उसके ही धन से वंचित कर देता है। शिल्पा का विवाह पायलट मुकेश के साथ हुआ था। अचानक दुर्घटना में स्वर्गवासी हो जाने पर बाबूजी उसे ले जाना चाहते ताकि वह नौकरी कर अपना ध्यान इस दु:खद प्रसंग से बाँट सकें। लेकिन सास बिजी ने उसे रोक लिया। बिजी बहुत व्यावहारिक चालाक और दुनियादार महिला थी। उन्होंने मझले बेटे सुरेश को बेवा शिल्पा से ब्याह करने के लिए राजी कर लिया था ताकि मुकेश की मृत्यूपरांत शिल्पा को मिलने वाले पांच लाख घर में ही रहें। बाबूजी को भी चालाकी से फाँस लिया -'बिरादरी की मुझे परवाह नहीं।...बच्चों की खुशी मेरे लिए पहले है।... सुरेश को मना लिया है मैने ... मान गया है वह अपने बडे भाई की बेवा से ब्याह को ... परिवार का हित इसी में है ।''[1] बाबूजी उनके निर्णय से अभिभूत हो गये थे। उसे इस विवाह से कोई खुशी नहीं हुई लेकिन बिजी की महानता के बोझ तले उसे परिवार के दबाव से इस विवाह के लिए तैयार होना पडा। अरसे तक वह कठपुतली-सी सबकी बातें सुनती काम करती जीती रही और जब 'अपने को लेकर चेती तो स्वयं को एक ऐसे कटघरे में बंदी पाया जो बडी चतुराई से उसे एक नये खूबसूरत घर और नई जिंदगी की उम्मीद के रूप में दिया गया था।'[2] वह अपनी मर्जी से न कहीं आ जा सकती थी, न फोन कर सकती थी। बिजी ने चतुराई से घर की जरूरतों के नाम पर उसके नाम जमा रूपये निकलवा लिये थे। बंबई के उपनगर में आरक्षित उसके नाम का घर भी बेच देने के लिए दबाव डाला जा रहा था। देवर अनिल ने उसी के पैसों से डी.डी.ए.

---

१. अभी भी - जगदंबाबाबू गाँव आ रहे है - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ ३१
२. अभी भी - जगदंबाबाबू गाँव आ रहे है - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ ३४

का एक फ्लैट बुक कर लिया था और अब दुकान के लिए पैसे चाहता था। जबकि उसके बेटे का अंग्रेजी स्कूल में पढना उन्हें पसंद नहीं था। देवर तो ताना भी मारता है कि -'बाप की कमाई समझ के मत उडाओं ... मेरे भाई की खून-पसीने की कमाई है, सोच-समझकर खर्च करो...।' [१] पति सुरेश बडा लिजलिजा किस्म का व्यक्ति था। पत्नी पर हो रहे अन्याय को देख कर भी वह मौन रहता क्योंकि उसे लगता था कि बिजी ने उनके पालन पोषण के लिए बहुत तकलीफें उठाई हैं। बिजी के व्यवहार को वह पारिवारिक अनुशासन कहता था। बिजी ने चतुराई से शिल्पा से सारे गहने और संपत्ति के कागजात ले लिये थे। तब उसे यही लगा था कि सार-संभाल के लिए उन्होंने लिये है। लेकिन जब रकम केवल लाख-सवा लाख ही बची तो बेटे के भविष्य के लिए वह चिंतित हो उठी। देवर अब भी दूकान की निलामी के लिए अस्सी हजार चाहता था। उसके इन्कार करते ही वह क्रुरता से पेश आता है-'देगी कैसे नहीं कुतिया... क्रोध से कांपते हुए अनिल ने उसे कंधे से पकडकर अपनी ओर खींचा और पूरी शक्ति से दीवार पर पटक दिया। फिर उठाया और फुटबाल की तरह घुटनों पर जोर-जोर से प्रहार करने लगा। शिल्पा की दर्दनाक चीख कमरे की सीमा फलांगती पूरे घर और घर के आसपास के फ्लैटों के भी दरवाजे खटखटा आयी।'[२] उस रक्तपात को देख कठोर हृदया बिजी भी घबरा गई। अनिल को डपट कर कहा कि मेरी सारी योजना पर पानी मत फेरो, नहीं तो फुर्रर्र हो जायेगी। इस पर अनिल का उत्तर वहीं था जो आमतौर पर बहुओं की हत्या या आत्महत्या की वजह बतायी जाती हैं -'हुँह, फुर्रर्र होकर तो देखे। मिट्टी के तेल का पीपा उडेल तीली न दिखा दी साआ... ली.... को... तो... दो चार प्रेम पत्र लिखवा के रखवा दूँगा सिरहाने कि....'[३] बेहोशी में डूबती शिल्पा सारे षडयंत्र को समझ जाती है। अस्पताल में वह सोचती है कि पढलिख कर भी कैसे वह षडयंत्र का शिकार हो गयी। वह आत्मनिर्भर बन सकती थी। इन लोभियों से स्वयं को बचा सकती थी। वह अपना आत्मसम्मान अब भी बचा सकती है। केवल उसे साहस जुटाना होगा।

---

१. अभी भी - जगदंबाबाबू गाँव आ रहे है - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ ३१
२. अभी भी - जगदंबाबाबू गाँव आ रहे है - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ ३६
३. अभी भी - जगदंबाबाबू गाँव आ रहे है - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ ३६-३७

पास पडोसियों ने बाबूजी को फोन कर दिया था कि यदि वे पुलिस ले शीघ्रता से नहीं पहुँचे तो शिल्पा बच नहीं पायेगी। बाबूजी को पुलिस सहित देख बिजी उसे फिर स्नेह से समझाने लगती है कि घर की वह बडी बहू है, अनिल नादान है, पुलिस से वह कह दे कि उसे चक्कर आ गया था। चित्राजी ने यहाँ जागृत होती नारी का चित्रण किया है, जो अब परिवार की इज्जत आदि के चौंचलों से नहीं भरमाती। शिल्पा बाबूजी और पुलिस को देखते ही पूरी ताकत से चीखती है कि 'पडोसियों ने गलत इत्तिला नहीं दी बाबूजी ! मुझे जीवित देखना चाहते हैं तो यहाँ से फौरन निकाल ले चलिए... अभी भी वक्त है ... अभी भी...'[1] शिल्पा का यह कहना कि 'अभी भी वक्त है' उन तमाम स्त्रीयों के लिए आशा का संदेश है, जो अब तक ससुराल से दहेज के लिए पीडित होती रही है या वैधव्य उपरांत हक की सपंत्ति से वंचित की जाती रही है। 'जब जागे तभी सबेरा' की तरह अन्याय के प्रति विरोध का भाव उनमें जागना चाहिये।

२.३.७ वैधव्य की व्यथा – 'मोर्चे पर' :

प्रस्तुत कहानी सैनिकों के जीवन पर आधारित है। सैनिकों की पत्नियाँ पति के मोर्चे पर होने पर किस तरह गुजारा करती हैं इसका अनुमान सामान्य नागरिकों को नहीं हो सकता। कमलेश्वर के लघु उपन्यास 'समुद्र में खोया हुआ आदमी' की याद इसे पढते हुए विशेष रूप से आती है। मोर्चे पर युध्दरत व्यक्ति की मौत की सूचना जब तक अधिकृत रूप से नहीं मिलती उसके परिजनों की आशा बंधी रहती है। 'लापता' व्यक्ति के बारे में आशा होती है कि आज नहीं तो कल वह लौट आएगा।

रिन्नी के पति सुदीप लम्बे अरसे से बार्डर पर थे। लडाई खत्म होने पर भी वे नहीं लौटते संदिग्धता से घिरी रिन्नी दिन काट रही थी कि शायद लापता लोगों की सूचि में उनका नाम आ जाये या पडोसी देश के बंदीगृह से आनेवाली अगली बैच में सुदीप आ जाये। लेकिन उसकी प्रतीक्षा की घडियाँ भयानक सच बन कर आयी। अवस्थी भैया उसे बताते है कि सुदीप अब नहीं रहें ।

---

१. अभी भी - जगदंबाबाबू गाँव आ रहे है - चित्रा मुद्‌गल, पृष्ठ ३८

हैडक्वार्टर से अचानक केबल पाकर वह आघात का शिकार न हो अत: वे सूचित करने आ जाते है और समझा देते है कि बच्चे पिता से गहरे जुडे हैं। उन्हें भी इस सदमे के लिए उसे ही तैयार करना है।

बच्चे कई दिनों से उसके पिछे लगे होते हैं कि वे शॉपिंग करने जाना चाहते हैं। वह गम भुला उन्हें बाहर ले जाने को तैयार होती है तो पति की बातें याद आ जाती हैं। वे उसे हमेशा सफेद साडी में ही बाहर ले जाते क्योंकि 'इन सफेद साडी.... सी, यू लुक लाइक हंसिनी।'[१] आज भी तैयार होते समय वह सफेद साडी ही पहनती है और पति की याद आते ही अपने हँसिनी रूप को देख बेहोश हो जाती है लेकिन बच्चों के खातिर वह शॉपिंग के लिए जाती है। रामसिंह और बच्चे भी घर की परिस्थिती से अनमने हो उठे है। एक दिन ऐसे ही सुदीप की याद आने पर वह तार-तार रो दी थी। बच्चे माँ का रोना देख स्तब्ध रह गये थे। मेजर अंकल ने बात संभाली थी कि उनकी तबियत ठीक नही हैं। बच्चे अंकल से आग्रह करते है कि वे कोई अच्छी सी दवा दे दे। वे सोचते है यदि पापा होते तो ममा को कभी इतना नहीं रोने देते। शॉपिंग करते हुए भी वे बार-बार पापा को याद करते है। रिन्नी भी सुदीप की कमी महसूस करती है। वह सुदीप के समान उनकी हर इच्छा पूरी करने का यत्न करती है लेकिन आइस्क्रिम खाकर फिर ज्यूस पीने की बच्चों की मांग पर वह असंतुलित हो उन्हे डाँट देती है। राजू भी बहन को डाँटते हुए समझाता है कि ममा डॅडी नही हैं। वह कहता है 'डू यु थिंक, दैट पापा इज विद् अस? जो कहेगी सब मिलता जायेगा।'[२] अवस्थी भैया ने बोल्ड बनने को कहा था। लेकिन वह जानती है कि बच्चों के लिए वह सुदीप नही बन पाएगी। वह सुदीप की जगह नहीं ले सकती। सुदीप बच्चों के अहसासों में जीवित है फिर वह उन्हें कैसे समझा पायेगी की सुदीप अब नहीं रहे। वैधव्य प्राप्ति के बाद उसे अब एक नये मोर्चे पर लडना है। बच्चों के लिए उसे जीना है और वह भी सुदीप के बगैर जिसे वह और बच्चे बहुत-बहुत चाहते हैं। बच्चों के कोमल मन को सुदीप की मौत की बात बता ठेस नही पहुँचाना चाहती और उनके अहसासों में जीवित पापा जैसी भी वह नही बन पाती। वह निरंतर मोर्चे पर लड रही है।

---

१. मोर्चे पर - ग्यारह लम्बी कहानियाँ - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ ६४
२. मोर्चे पर - ग्यारह लम्बी कहानियाँ - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ ७८

२.३.८ पुरूष अहंकार : दोहरा मानदण्ड :

नारी को कई-कई मोर्चो पर संघर्ष करना पडता है। घर-बाहर हर स्थान पर उसे पुरूष से सामना करना पडता है। हर दृष्टि से योग्य होकर भी अनुचित व्यवहार को सहना पडता है। पुरूष का अहंकार उसकी अस्मिता को निर्ममता से कुचलता है। उसका अहं भी दोहरे मानदण्ड लिये होता है। जहाँ तक स्त्री की नौकरी-व्यवसाय से प्राप्त धन लेने की बात हो वह स्वतंत्र विचारों वाला बन उसे नौकरी-व्यवसाय करने के अवसर उपलब्ध कराता है लेकिन जब बात उसके आत्मसम्मान, अस्तित्व और व्यक्तित्व की आती है वह ओछा बनकर जाने कैसे-कैसे आरोपों से उसे आहत करता है। तब उसकी आधुनिकता लुप्त हो जाती है। दफ्तर में स्त्रियों से वे फर्लट करते हैं उसी आधार पर प्रमोशन देते हैं और अपने समान ही सबको समझकर प्रमोशन योग्य गुणवती पत्नी पर न जाने कैसे-कैसे लाँछन लगाते हैं। ताकि वह पुरूष के दबाव में रहे।

२.३.८.१ 'मुआवजा' :

चित्राजी ने 'मुआवजा' कहानी में एक ओर जहाँ स्वार्थान्ध व्यक्ति का चित्रण किया है वहीं पत्नी के रूप में सुंदर, कमाऊ पत्नी चाहने वालों की मानसिकता को उजागर किया है जो बहू के रूप में व्यक्तित्वहीन गऊ चाहते हैं। शैलू विमान परिचारिका थी। उसने सुमीत संधीर से प्रेमविवाह किया था। सुमीत एन.टी.पी.सी. में इंजिनियर था और उसे बर्लिन में मिला था। भारत लौटने पर माता-पिता की सहमति से वे ब्याह कर लेते हैं। शैलू के माता-पिता को घर-वर दोनो पसंद थे।

शैलू विमान परिचारिका के साथ मॉडल भी थी। उसकी यही खूबी अब उसकी समस्या बन गयी। 'विमान परिचारिका से प्रेम हो सकता है। शादी की जा सकती है, लेकिन उसके कैरिअर को, शौकों को ज्यों-का-त्यों स्वीकारा नहीं जा सकता।'[१] दरअसल लोग बहू के रूप में सुंदर कठपुतली चाहते हैं, व्यक्तित्वपूर्ण बहू नहीं। विवाह के बाद पढा-लिखा सुमीत उस पर अनपढ गंवारों जैसा

---

१. मुआवजा - जगदंबाबाबू गाँव आ रहे है - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ १९

अत्याचार करने लगता है। जलती सिगरेट से उसकी देह को दागदार बना देता है। लेकिन आत्मसम्मानी शैलू घर छोड देती है। लोगों से यही कहा जाता है कि नौकरी की वजह से अलग रह रहे हैं। दोनों ने तय किया था कि कोर्ट कचहरी के चक्कर में न पडकर आपसी समझोते से अलग रहेंगे। लगभग छह वर्षों से वे अलग रह रहे थे।

हवाई जहाज अपहरण के दौरान शैलू ने अभूतपूर्व साहस दिखाया था। उसने अपहरणकर्ताओ से मुकाबला किया और शहीद हो गयी। सरकार की ओर से मुआवजे की रकम घोषित हुयी थी। शैलू की इच्छानुसार उसके माता-पिता ने उस रकम को वनिताश्रम को दान देने की घोषणा भी कर दी थी लेकिन अचानक सुमीत का फोन आता है - 'मुआवजे की रकम 'वनिता आश्रम' को दान करने का अधिकार आप लोगों को कैसे मिल गया?.. मैं शैलू का पति हूँ ... उसकी किसी भी प्रकार की संपत्ति पर मेरा अधिकार पहले बनता है ...।'[1] शैलू के पिता उत्तेजित हो गये इस ढोंग को देखकर। मधु जो बेटी की मृत्यु से टूट चुकी थी को बडी ही मुश्किल से मुआवजे के लिए तैयार कर पाये थे अब वे खुद डगमगा रहे है। शैलू की इच्छा का मान वे भविष्य-निधि की रकम दे कर रख सकते हैं लेकिन मुआवजे का परिपत्र भरने जाने के लिए तैयार मधु को देख उनमे भी साहस आ जाता है। क्योंकि बेटी पर हुए अन्याय-अत्याचार के विरोध में मधु हमेशा लौहमेरु-सी तनी थी। वे ही 'भूल रहे हैं कि वे शैलू के पिता हैं ... जिसने न शोषण से समझौता किया न शोषक से, न अपहरणकर्ताओं से ... एक वे हैं, उन लोगों के समक्ष घुटने टेक रहे हैं जो भावनाओं को तराजू बनाये बैठे हैं ... सवाल मुआवजे की राशि का नहीं है - नीयत का है।'[2]

पुरूष समझ बैठता है कि स्त्री उसकी संपत्ति है। अत: अपनी पत्नी से वह दुर्व्यवहार करके भी लज्जित नहीं होता। स्वार्थान्ध हो कर छोडी हुई पत्नी की मुआवजे की राशी भी हडप जाना चाहता है। पति के किसी कर्तव्य को तो पूरा नहीं किया लेकिन मुआवजा पाने के लिए तुरंत पति का हक जताने के लिए आ गया। पढ लिख कर भी पुरूष का अहंकार नही समाप्त होता।

---

१. मुआवजा - जगदंबाबाबू गाँव आ रहे है - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ १७
२. मुआवजा - जगदंबाबाबू गाँव आ रहे है - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ २०

२.३.८.२ 'प्रमोशन' :

'प्रमोशन' कहानी में भी चित्राजी ने पुरूष के अहंकार को और पत्नी और अन्य बाहरी स्त्रियों के साथ किये जाने वाले उसके अलग-अलग व्यवहार को चित्रित किया है। कामकाजी नारी यदि प्रमोशन पाती है तो पुरूष समझता है कि शरीर दे कर ही उसे पद मिला होगा। उसकी कुंठीत मानसिकता नारी की योग्यता को नहीं समझ सकती। शादी के विज्ञापन में नौकरीशुदा लडकी की मांग केवल अर्थाजन के लिए की जाती है। इसीलिए उसके कैरियर को विवाहोपरांत नजर अंदाज कर दिया जाता है।

डॉ. कोठारी ललीता को नियुक्ति के तीन वर्ष के भीतर ही पैकिंग विभाग का इंचार्ज बना देते हैं। वे उसकी योग्यता की, मेहनत और लगन की हमेशा प्रशंसा करते हैं। लेकिन पति के मन में शक के बीज उपजने लगते हैं - 'डॉ. कोठारी तुम पर इतने मेहरबान क्यों हैं? तीन साल में इतना बडा प्रमोशन? विभाग मे तुम्हारी बनिस्बत अनेक वरिष्ठ, अनुभवी, योग्य व्यक्ति पडे हुए हैं।... इतने वर्षो से उनका नंबर नहीं लग रहा और तुम अचानक तीन सौ लोगों को पछाडकर विभाग की इंचार्ज हो गयी?'[१] दरअसल उसे अपने ही दफ्तर की घटी घटना याद आ जाती है कि टाइपिस्ट रेखा को जब गलतियों के लिए उसने बुरी तरह डाँटा था वह रो पडी थी। सात्वंना के लिए उसने उसे कैबिन में बुला लिया था। तब से सिलसिला ही चल पडा था कि वह उसे कभी भी सबके सामने नहीं डाँटता था, फिर तो वह उसे अकेले बाहर भी ले जाने लगा और इसीलिए उसका प्रमोशन भी हुआ। तभी वह सोचता है कि ललीता का प्रमोशन भी शायद यूँ ही हुआ है। डॉ. कोठारी को जब ललिता इस प्रमोशन की कृतज्ञता व्यक्त करने के लिए घर बुलाना चाहती है तो उसका उत्साह सुभाष को नहीं सुहाता। सुभाष के अनर्गल आरोपों से वह स्तब्ध हो जाती है - 'पुरूष की पदोन्नति हो तो वह उसकी लगन और मेहनत का परिणाम है, स्त्री अगर अपनी लगन और परिश्रम से उन्नति करे तो वह उसकी प्रतिभा नहीं किसी डॉ. कोठारी की अनुकंपा है और ... बीच में शरीर आये बिना यह संभव

१. प्रमोशन - जगदंबाबाबू गाँव आ रहे है - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ ७२

नहीं ?'[1] सुभाष उसे नौकरी छोड देने को कंहता है। चित्राजी के सभी पात्र संघर्ष शील, जागरुक होते हैं। चित्राजी ने प्राय: अपने पात्रों को पराजय न स्वीकारने वाले और चेतना युक्त बताया है तभी तो ललीता भी सुभाष को साफ शब्दों में सुना देती है कि - 'कान खोलकर सुन लो तुम्हारी कुंठाओं द्वारा रचा हुआ सत्य मेरी नियति नहीं बन सकता..।'[2]

२.३.९ नारी की समान नियती : शिक्षित हो या अशिक्षित – 'इस हमाम में' :

चित्राजी की कहानियों में हर वर्ग की स्त्री का चित्रण है। आलोच्य कहानी में दो स्त्री पात्र हैं दिवा और अंजा। जहां दिवा शिक्षित है वहीं अंजा अशिक्षित। लेकिन अंतत: दोनों की ही नियती पुरूष की सत्ता के आगे झुकना है। चित्राजी ने दिवा की तुलना में अंजा को जुझारु चित्रित किया है। वह दिवा को आत्मिक बल भी प्रदान करती है।

दिवा सोमेश की पत्नी है। सोमेश उच्च पदस्थ है, लेकिन अत्यन्त अंधविश्वासी है। सुबह-सुबह खाली डिब्बा देखना या पिछे से आवाज लगाना अपशकुन होता है - जैसे अंधविश्वासों को मानने वाला है। उसके इस वहमी स्वभाव से दिवा का मन क्षोभ और पीडा से छटपटाता है तो कचरा उठाने वाली बाई अंजा इस पर आश्चर्य व्यक्त करती है। कचरे का डिब्बा खाली बाहर न पडा रहे और सोमेश को न दिखे इसीलिए दिवा कचरे वाली अंजा की पुकार पर ही कचरे का डिब्बा बाहर लाती और खाली करा कर तुरंत भीतर ले जाती। तभी उसका अंजा से परिचय हुआ था। साहब के इस वहमी स्वभाव पर अंजा ने भी टिप्पणी की थी - 'साब इतना शिखेला-पढेला मानुस होकर ये सब बात मानता है क्या? आजकल तो अपुन लोग भी ऐसी बात पे इस्वास नहीं करता फिर ...।'[3]

विवाह के बाद से ही सोमेश ने दिवा पर अपने निर्णय लादने शुरु कर दिये थे। अपने बेटे समीप को वह अपने पास रखकर स्नेह से पढाना चाहती थी लेकिन सोमेश ने उसे सिन्धिया में पढने

---

१. प्रमोशन - जगदंबाबाबू गाँव आ रहे है - चित्रा मुद्‌गल, पृष्ठ ७२
२. प्रमोशन - जगदंबाबाबू गाँव आ रहे है - चित्रा मुद्‌गल, पृष्ठ ७३
३. इस हमाम में - इस हमाम में - चित्रा मुद्‌गल, पृष्ठ ८५

भेज दिया था। दिन भर वह घर में अकेली रह कर वह ऊब जाती है । इस ऊब से बचने का रास्ता अंजा ही बताती है कि वह अपने पति की हर बात क्यों मान लेती है। जितनी उसकी परवाह करेगी वह उतना अधिक दबाव मे रखेगा। बेहतर है कि वह कहीं नौकरी कर ले। लेकिन सोमेश ने उसे नौकरी करने से भी मना कर दिया। इस तुन्न-भुन्न में वह रात भर सो भी नही पायी। दूसरे दिन कचरा मांगने आयी अंजा उसकी आँखें देख समझ जाती है कि साहब से उसका झगडा हुआ होगा।

अंजा दुनियादारी की खासी समझ रखती है। उसने पहले दो मर्द छोड दिये और अब तीसरे के साथ रह रही है। उसका मानना है कि यदि खुद कमा कर ही पेट भरना है तो मरद की दादागिरी क्यों सहे। जात-बिरादरी के दबाव के कारण वह अकेली तो नहीं रह सकती लेकिन न निभने पर पति को छोड देती है। उसके तेवर देख कर ही दिवा में साहस आया था। मर्दो के लिए जो आक्रोश अंजा में था वही दिवा में भी था लेकिन उसके समान अशालीन शब्दों मे वह अभिव्यक्त नहीं कर सकती । एक दिन अंजा के स्थान पर एक बूढा कचरा उठाने आता है। पूछने पर ज्ञात होता है कि अंजा ने पति से लड कर क्रोध में कुछ में कुछ खा पी लिया है। बूढा कहता है - 'आदमी और जगह बदल लेने से जिंदगी थोडे ही बदल जाती है।'[१] दिवा उच्च मध्यम वर्ग की पढे लिखे पति की पत्नी है और अंजा अशिक्षित, निम्नवर्ग के पति की पत्नी है लेकिन दोनों की नियती समान है।

२.३.१० नौकरानी की समस्या – 'स्टेपनी' :

'स्टेपनी' प्रतीकात्मक शीर्षक है। गाडी चाहे दो पहियेवाली हो या चार पहियेवाली उसके साथ स्टेपनी अर्थात अतिरिक्त पहिया होता है। कामकाजी नारी के जीवन में नौकरानी का स्थान 'स्टेपनी' के समान है। जो उसके दफ्तर जाने पर पूरे घर की देखभाल करती है। लेकिन कभी-कभी वह गृहिणी के घर के साथ-साथ पति की भी देख भाल करने लगती है और तब नौकरानी स्टेपनी न रहकर मुख्य पहिया ही हो जाती है।

---

१. इस हमाम में - इस हमाम में - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ ९९

आभा ने अपनी सुविधा के लिए बताशा को काम दिया था। लेकिन श्रीमति खन्ना बताशा के बारे में अनेक भेद भरी बातें उसे बताती है कि वह सकते में आ जाती है। तब से ही वह बताशा पर बहुत अधिक ध्यान देने लगी थी। श्रीमति खन्ना ने कहा था कि 'तुम्हारे पीछे घर में कैसे-कैसे चमेली के मडँवे सजते हैं तुम्हें क्या भनक।'[१] एक दिन जब वह दही के लिए जामीन लेने आयी थी तो देर तक दरवाजा हीं नही खुला और दरवाजा खुलने पर उसकी आँखों की रसाई तृप्ति और किवाडों के पिछे की अस्त व्यस्तता बहुत कुछ संकेत दे गयी।

दूसरे दिन आभा को बताशा बिहारी की मुग्धा नायिका ही लगी। 'फिरोजी रंग की फ्यूजी शिफान अपने ठिगने, कसे बदन पर चढाये लकदका रही। ... आँखों के ऊपर रीछ-सी चुभने वाली उसकी सघन भौंहे एकदम विरल तरतीबसे नुची हुई थी। गालों के गुँहासों का भी शायद उपाय हो रहा। फुलौरी जैसी नाक पर हल्दी की आभा ने झलक मारी। धुली-पुँछी देह।'[२] यही बताशा पहले विनोद को चाय देने मे संकोच करती थी अब वह दावे के साथ कहती है कि बाबूजी को गाढी चाय भाती है। जिसे उतरी धोतियाँ भी नसीब नहीं थी अब गार्डन की सतरंगी साडियों में लिपटी दिखाई देती है। पूछने पर किसी के ब्याह, मुंडन, जन्मदिन पर पहनायी गयीं है कहती। आभा को शक था कि विनोद ने अपने दफ्तर के सामने लगी सेल से उसे साडी खरीद कर दी होगी। दाना डालने में विनोद भी कम नहीं है। नौकरानीयाँ भी चमचमाते कपडों, रुपयों या सूटेड-बूटेड साहब से मिलने वाले महत्व के लालच में अपना सब कुछ लुटाने को तैयार रहती हैं। उसने बताशा से कुछ कहने की बजाय विनोद से पूछा। विनोद आरोपों से बौखला कर उसे डाँटता है। कहता है कि मयूर विहार में यूँ भी बाईयों की किल्लत है ऐसी अफवाहें बाइयों को फांसने के लिए ही उठाई जाती हैं। ऐसी बदनामी से कौन बाई हमारे यहाँ काम करेगी । आभा को समझा देता है कि - 'औरतबाजी करनी होगी तो यही नौकरानी बची है मेरे लिए? कमी है औरतों की? ... यहीं मयुर विहार में ही न जाने

---

१. स्टेपनी - जिनावर - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ ७९
२. स्टेपनी - जिनावर - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ ८१

कितने फ्लेटों में ये सारे धन्धे चलते हैं। जाने लगूँ तो तुम एडी-चोटी का जोर लगाकर भी नहीं सूँघ पाओगी कि मैं कहाँ गया और कहाँ से आया।'[१]

आभा आत्म-विश्लेषण करती है। तब उसे लगता है कि वह बताशा को आसानी से काम से निकाल सकती है लेकिन दूसरी नौकरानी का प्रबंध आसानी से नहीं हो सकता। इसे निकालने पर उसे ही सुबह जल्दी उठकर घर के सारे काम निपटाने होगें। 'बताशा की वजह से उसे नाश्ता और पका-पकाया भोजन मिलता है। अजीब स्थिती है। न नौकरी छोडने की सुविधा है उसके पास न नौकरी करने की।'[२] इसके पहले की नौकरानियाँ घर से सामान चुरा लेती थी। आभा के लिए बताशा के अतिरिक्त विकल्प ही नहीं था। कहानी के अंत में चित्राजी ने जो वाक्य रचा है वह नारी के एक त्रासद पहलू की ओर संकेत करता है- 'गृहस्थी और आत्मनिर्भरता के मध्य अपने स्व का संतुलन खोजते हुए कब वह अपने ही घर के लिए स्टेपनी हो गयी है और बताशा मुख्य चक्का - कौन जाने ।'[३] यह प्राय: महानगरीय कामकाजी महिलाओं की त्रासद स्थिती है।

२.३.११ नारी मुक्ति :

जैसे-जैसे स्त्री शिक्षित हो रही है वैसे-वैसे उसमें जागृति भी आ रही है। अब वह बंधी-बंधायी लीक से हट कर भी विचार करने लगी है। जिस तरह सिक्के के दो पहलू होते हैं उसी प्रकार हर बात के दो पक्ष होते हैं। नारी मुक्ति विचारधारा के भी दो पक्ष हैं। कहीं-कहीं नारी मुक्ति का तात्पर्य पुरूष के समान व्यवहार करना होता है तो कहीं अपने स्व, अधिकारों के प्रति जागृति से नारी मुक्ति का तात्पर्य लिया जाता है। कहीं यूँ भी होता है कि बाहर तो नारी मुक्ति या उसकी अस्मिता की रक्षा पर जी भर कर बोला जाता है और घर आते ही वे पुन: उसी दकियानुसी घेरे में बंध जाते हैं जिसमें स्त्री को अब भी अबला ही समझा जाता है। चित्राजी ने 'हस्तक्षेप' में नारी मुक्ति के सही रुप

---

१. स्टेपनी - जिनावर - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ ८३
२. स्टेपनी - जिनावर - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ ८५
३. स्टेपनी - जिनावर - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ ८५

को उभारने का प्रयास किया है तो 'प्रेतयोनी' में स्त्री अस्मिता के सम्बन्ध में परिवार की दोगली नीति उजागर की गयी है।

२.३.११.१ नारी मुक्ति : एक शोध – 'हस्तक्षेप' :

'हस्तक्षेप' कहानी वास्तव में 'एक जमीन अपनी' उपन्यास का एक अंश है। चित्राजी ने इसमें केवल बहस के बहाने अपने विचार व्यक्त किये है। नीता एक सफल मॉडल है। हाल में प्रदर्शित उसकी विज्ञापन फिल्म में उसने अत्यन्त कम कपडों में शूटिंग की है। उसकी सहेली अंकिता इससे क्षुब्ध हो पूछती है कि क्या इस विज्ञापन को पाने के लिए कपडे उतारने आवश्यक थे। अंकिता का कहना है कि सिर से पैर तक कपडों में ढँकी स्त्री को भी जब इज्ज़त नहीं मिल रही तो नाम-मात्र के वस्त्रों में भला स्त्री कैसे सुरक्षित रहेगी। संपूर्ण स्त्री समाज के लिए लज्जास्पद और अशोभनीय व्यवहार से नैतिक मूल्यों का नाश ही होगा। नीता का कहना है कि जिन वस्त्रों में वह तैरती है उन्हे विज्ञापन में पहनने से कौन सी बुरी बात हो गयी। जो महिलाएँ स्त्री मुक्ति के नाम पर आंदोलन करती हैं वे ही अपने घरों में अलग-अलग सम्बन्धों के तहत स्त्री का शोषण करती हैं। हमें संर्कीणता से मुक्त होना चाहिये।

अंकिता अपने विचार स्पष्ट करती है कि सदियों से दासत्व में रही नारी आज अपने अस्तित्व को तलाशने निकली है यह बहुत बडी बात है। जिस आधुनिकता को नीता अपनाए है और पुरूष के समान होने का दंभ पाले है वास्तव में आधुनिकता की वह परिभाषा, 'आधुनिकता और स्वतंत्रता' के नाम पर पुरूषों द्वारा ही अखबारों, पत्रिकाओं, विज्ञापनों, फिल्मों, पोस्टरों, स्लाइड्स के माध्यम से स्त्री को सौंपी जा रही है।'[१] यह स्त्री को आधीन बनाये रखने वाले सामंती हथकंडे हैं, जिसे शिक्षित और आधुनिक कहलाने वाली स्त्री समझ नहीं पायी रही। दरअसल वे यह ही नहीं जान पायी है कि स्त्री स्वतंत्रता, समता और अधिकार किस रुप में, कैसे होने चाहिये। पुरूषों की इस्तेमाल की राजनीति से स्त्रियों को बचना चाहिये।

---

१. हस्तक्षेप - जगदंबाबाबू गाँव आ रहे है - चित्रा मुद्‌गल, पृष्ठ ७७

नीता को यह बात स्वीकार्य नहीं है कि महिलाओं को इस्तेमाल किया जाता है। दरअसल सेक्स के प्रति भी उनका दृष्टिकोण बदलना चाहिये। अपने अधिकार मांगने से नहीं मिलने वाले। स्त्री को भीतरी कुंठाओं से मुक्त हो दृष्टि परिमार्जित करनी होगी। और जब फरेबी मर्यादाओं का 'हौवा उसके मन-मस्तिष्क एक से दूर हो जायेगा पुरुष हाथों से वे सारे पत्ते निकल जायेंगे जिनके बूते पर वह स्त्री को घर, खेत, खलिहान, गली, मोहल्ले, स्कूल व दफ्तर में दबोचकर रखना चाहता है। जीवन के हर क्षेत्र में उसे दोयम दर्जे की नागरिकता में जिलाता है।'[1]

नीता और अंकिता की विचारधारा में बहुत अंतर है। दोनों की जीवन शैली में भी अंतर है लेकिन अंकिता इस प्रकार की असुखद स्थिति इसलिए पैदा कर लेती है ताकि स्वयं के अस्तित्व को अनुभव कर सके। ऐसा हस्तक्षेप उसे उसके होने का अहसास कराता है।

२.३.११.२ परिजनों के छद्म रुप से मुक्ति – 'प्रेतयोनी' :

प्रेतयोनी कहानी का आधार एक घटना है। ३१ अगस्त को मुंबई से आने वाली गाडी का ग्वालियर के पास एक्सीडेंट हो जाता है। जिसमें बी.ए.में पढने वाली छात्रा अनिता गुप्ता को मामुली चोट लगती है। टैक्सी से मथुरा लौटते समय एक निर्जन स्थान पर ड्राइवर उसके साथ जबरदस्ती करने का प्रयत्न करता है लेकिन वह भाग निकलती है और पुलिस में रपट लिखाती है। अखबारों में खबर छपती है। उसकी साहस की थाना प्रभारी प्रशंसा करते हैं।

घर के लोगों ने आते ही उसकी प्रशंसा की थी लेकिन बाद में यही खबर उन्हें बदनामी का कारण लगती है। भाई को लगता है कि उसकी तय हुई सगाई इस घटना से टूट सकती है। बदनामी के भय से उन्होंने सबसे कहना शुरू कर दिया कि खबर वाली अनिता गुप्ता हमारी अनिता नहीं है। उसे कमरे में बंद कर दिया जाता है और अन्य किसी के द्वारा कमरे के बंद रहने के कारण को पूछने पर उत्तर भी तय होता है कि कह देगें कि भतिजी आयी है परिक्षा देने। उन्हे इस बात का गर्व नहीं कि वह मृत्यू और हवस के मुख से बच आयी, उन्हें तो दुख है कि एफ.आई.आर. दर्ज कराते समय

---

१. हस्तक्षेप - जगदंबाबाबू गाँव आ रहे है - चित्रा मुद्‌गल, पृष्ठ ७८-७९

उसने मामला गुप्त रखने की बात क्यों नहीं कही। माँ को शक है कि वह गर्भवती हो सकती है क्योंकि उसका नाडा टूटा हुआ है। दरअसल भागते-दौडते और वहशी बलात्कारी का सामना करते समय वह कभी भी टूटा हो सकता है। इसलिए माँ उसे काढ़ा पिलाने का प्रयत्न करती है। लेकिन अनिता इंकार कर देती है कि काढ़ा पीने का अर्थ है कि उस पर विश्वास नहीं है। उसके इन्कार पर माँ उसे बुरी तरह पीटती है। उसे लगता है-'... प्रेम वात्सल्य, शुभेच्छा झूठें शब्द है। अपनी अपनी कुंठाओं के पर्याय वे जो जीवन के नाम पर जीना उसे सौंपना चाहते हैं, वह पग-पग पर उनकी शर्तो के तैयार· शुदा फंदों मे स्वंय को कसना नही होगा।'[१] विश्वविद्यालय के छात्र छात्राओं ने पुलिस के विरूद्ध आंदोलन छेडा है कि वे ड्राइवर को शीघ्र गिरफ्तार करे। लेकिन बाबूजी को लगता है कि 'अब वे तुम्हारे आत्म सम्मान की रक्षा का नाटक खेलें और हमारी इज्जत को सरे आम सडकों पर नीलाम करें।'[२]

माता-पिता,भाई-बहनों का व्यवहार इतना बदल गया था कि वे सभी सफल अभिनेता लगते थे। जब भी कोई फोन पर पूछता तो वे कहते कि हवस की शिकार अनिता उनकी बेटी अनिता नहीं है। मिलने-जुलने वालों को भी बैठक से ही वापस लौटा देते। अनिता न किसी का फोन सुन सकती थी, न किसी को फोन कर सकती थी। उसके परिजन प्रगतिशीलता और जागरूकता को व्यवहार में लाना नहीं सीखे थे। माँ का छद्म रूप भी वह देख लेती है, जब सुशीला आंटी से वे कहती है -' आबरू की रक्षा के लिए अकेली लडकी के दुर्गा बनने से रक्षा नहीं हो सकेगा। ... पूरे समाज को उसके साथ खडा रहना होगा।'[३] जब कि अम्मा ही नहीं पूर परिवार भी इस बात पर अमल नहीं कर रहा। नीता को लगता है कि उसकी वीरता की प्रशंसा कर उसे साहस देने की बजाय पूरा परिवार केवल अपनी प्रतिष्ठा की चिंता में लगा हुआ है। वह आत्महत्या करने की बात तय कर साडी का फंदा बना पंखे से साडी बांध देती है लेकिन जब वह अपने विश्वविद्यालय के अनजाने

---

१. प्रेतयोनि - जिनावर - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ २१
२. प्रेतयोनि - जिनावर - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ २१
३. प्रेतयोनि - जिनावर - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ २०

सहयोगी छात्र-छात्राओं के बारे में सोचती है, जो उसके सम्मान के लिए लड रहे हैं तो आत्महत्या का विचार त्याग देती है। वह भी आई.टी.ओ. स्थित पुलिस मुख्यालय के सामने प्रदर्शनकारियों के साथ शामिल होने का निश्चय कर लेती है।

चित्राजी ने नारी त्रासदी कर एक अलग पक्ष प्रस्तुत किया है। कहते है कि असमय मौत से मरा व्यक्ति प्रेतयोनी में चला जाता है लेकिन अनिता असमय मौत से बचकर और बलात्कारी के चगुंल से निकल कर भी अभिशप्त प्रेतयोनी-सा जीवन जी रही है। और ऐसा जीवन जीने के लिए बाध्य करने वाले उसी के परिजन है, जिनसे मुक्त हो कर ही वह अपनी अस्मिता की रक्षा कर पाएगी।

२.४. आर्थिक समस्याओंसे सम्बन्धित कहानियाँ :

मनुष्य जीवन की मूलभूत आवश्यकताओं की पूर्ति बगैर 'अर्थ'यानि धन के पूर्ण नहीं हो सकती। व्यक्ति के जीवन को अर्थ ही सबसे अधिक प्रभावित करता है। चित्राजी ने अर्थ तंत्र को बखूबी कहानियों में स्थान दिया है। आमतौर पर यह मान लिया जाता है की अर्थ की समस्या केवल झुग्गी-झोपडियों या निम्नवर्ग की समस्या होती है। दरअसल अर्थ धनिकों को भी उतना ही प्रभावित करता है जितना गरीबों को। फर्क इतना है कि जहाँ एक वर्ग रोटी का जुगाड भी नहीं कर पाता वही एक वर्ग ऐसा भी है जो अधिक धन के लालच में हत्या तक करने से नहीं हिचकिचाता। 'लकडबग्घा' ऐसी ही कहानी है, जहाँ अपने भाई के हिस्से को पाने के लिए जोडतोड की जाती है। गरीबी से परेशान व्यक्ति जायज - नाजायज के बारे में नहीं सोचता। कभी वह घोडागाडी ऐन रास्ते में चला कर दुर्घटना हो जाने पर जानवर के बदले में पैसा लेता है तो कहीं मालिक की गाडी को जबरन गैराज में लाकर कमीशन लेता है। कभी बच्चे की अमानविय मौत का कारण यह अर्थ बन जाता है तो कहीं प्राणों की कीमत वसूली जाती है। गरीबी से त्रस्त दो जून की रोटी के जुगाड में न जाने कितने समझौते करने पडते हैं। बाल मजदूरों की समस्या को भी चित्राजी ने लिया है। ऐसी कहानियों में उनके आसपास का वातावरण, आर्थिक आवश्यकताएँ और किशोर वयस लडकों की

भावनाओं का चित्रण चित्राजी ने खूबसुरती से किया है।

२.४.१. बाल मजदूर :

भारत में गरीबी इतनी अधिक है कि प्राय: निम्न वर्ग में जितने खाने वाले होते है वे सभी प्राय: कमाने वाले भी होते हैं। अर्थात बच्चों को स्कूल से वंचित हो, कमाने के लिए मेहनत करनी पडती है। झुग्गी - झोपडी में रहने वाले ये बाल - मजदूर बचपन के सभी सुखों से वंचित होते हैं। स्नेह - ममता के भूखे ये बालक थोडा-सा प्यार पाकर खिल उठते हैं। 'गामला आगे बढेगा अभी' का मोट्या ऐसा ही किशोर है तो 'त्रिशंकु' का बंडू कमाने के चक्कर में जेल की हवा खा आता है और लौटने पर पाता है कि माता-पिता के होते भी वह अनाथ हो गया। जिस माँ से वह अत्यधिक स्नेह करता था वह भी अपने शराबी पति को छोड दूसरे का दामन थाम लेती है और बंडू अकेला रह जाता है। उसकी अवस्था 'त्रिशंकु' सी हो जाती है। अर्थ की चक्की में पीसते ये किशोर भावनाओं से भी छले जाते है।

२.४.१.१ 'मामला आगे बढेगा अभी' :

महानगरी बंबई में नौकरों की आवश्यकता भी है और नौकरों की कमी भी नहीं है। आवश्यकता होती है - ईमानदार नौकरों की, वक्त के पाबंद नौकरों की। नये-नये घरेलु नौकरों को अपने मालिकों पर बहुत विश्वास होता है, लेकिन यह भ्रम शीघ्र ही टूट जाता है। लेकिन वे भी बगैर मोह में पडे एक घर छोड दुसरे के यहाँ काम करने लगते हैं लेकिन चित्राजी ने इस कहानी में मोट्या को मोह टूटने पर उसी टोयोटो को तोडते-फोडते बताया है जिसे कल तक वह पोंछता था। मोट्या एक पंद्रह वर्षीय किशोर है, जिसकी माँ ने दूसरा विवाह किया है। वह नाना के पास रहता है। चौकीदार तावडें ने उसके नाना के आग्रह के कारण मोट्या को सक्सेना साहब के यहाँ काम दिलवाया था। गाडी धोने के और घरेलु कामों के उसे अलग-अलग पैसे मिलते थे।

सक्सेना साहब को रोज गाडी धुली हुई चाहिये क्योंकि प्रेस्टीज के साथ वे यह भी मानते है

कि बगैर धुली गाडी ले जाने पर फैक्टरी में उन्हे नुकसान होता है। मोट्या गाडियाँ तो चमकाता ही है घर के भी सभी काम करता है। मेमसाब से उसे विशेष लगाव है। वह उन्हें मम्मी कहने की छूट पा जाता है। उनके लिए चिल्ड बियर, सिगरेट ला देता है। यहाँ तक कि मेमसाब अपना दु:ख भी उसे कह देती है-'मुझे तो बस कहने भर को घर मिला है। यह सारी मौज-मस्ती तो वक्त कटी है... साहब कहने को पति और मैं कहालाने को बीवी है... कभी-कभी जो वो घर नहीं आते न ! ... उसी के फ्लैट में रहते हैं। नई गाडी खरीद कर दी है उसे।'[1] तब से मोट्या मेमसाब का ज्यादा ख्याल रखने लगा था और साब से नफरत करने लगा था। वह उस औरत की गाडी की टंकी में किलो भर शक्कर डालने की बात कहता है तब मेमसाब ने उसे गोद लेने की बात कही थी।

एक बार अचानक बीमार होने पर मोट्या काम पर कुछ दिन नहीं आता। उसे लगता है मेमसाब उसके लिए जरूर चिंतित होंगी तथा उसे मिलने आयेंगी। लेकिन ऐसा कुछ नहीं होता। काम पर लौटने के बाद सक्सेना साहब उसे बगैर बताये गैरहाजिर न रहने के बारे में कहते है लेकिन महिना समाप्त होने पर उसकी पगार से सात दिन का खाडा काट लेते हैं। मोट्या इस बात का विरोध करता है क्योंकि वह वास्तव में बीमार था लेकिन साहब उसे धक्के देकर बाहर निकाल देते हैं। चौकीदार उसे व्यावहारिकता सिखाने का प्रयत्न करता हैं कि ईमानदार लोगों को काम की कोई कमी नहीं है। वह उसे दूसरा काम दिला देगा, लेकिन उसे दु:ख इस बात का है कि उसे थप्पड मारने पर भी मेमसाब कुछ नहीं बोली। दरअसल साहब उस पर इसलिए अधिक नाराज थे कि उसे मेमसाब से टीप अधिक मिलने लगी थी और उसने उनकी रखैल के घर काम करने से इन्कार कर दिया था। उसने उनके अब तक कई काम बगैर पैसे के किए थे अत: खाडा काटने पर वह तिलमिला उठा।

जिस गाडी को वह रोज धो-पोंछ कर चमकाता था, उसी टोयेटा को वह लम्बे सरिये से ताड-ताड पीट देता है। साथ ही चिल्लाता जाता 'धक्का दे के निकाला न मेरे कू दरवाजे से? काय को? पूरा पैसा मांगा न इसी वास्ते? .... काट बोलना अबी, अच्छा तरीके से खाडा काट... देखता

१. मामला आगे बढ़ेगा - लाक्षागृह - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ १९

मैं... बरोबर देखता.... भोत धांधल सेन किया... अबी सिद्धा होयेगा।'[1] सारी सोसायटी इकट्ठी हो जाती है। गाडी की दशा देख सभी गुरखे पर चिढ रहे है कि आखीर वॉचमेन वो क्यों रखते हैं? लेकिन किसी में हिम्मत नहीं है कि वो आगे बढ कर मोट्या से सरिया ले लें। मोट्या का भ्रम आज टूट गया। बडे लोग किसी को अपनाते नहीं। उनके चोंचले भिन्न होते हैं। उसकी भावनाओं का यहाँ कोई मोल नहीं । कहानी का अंत नाटकीय है। मेमसाब क्रोधित मोट्या के हाथों में तनी सरिया उसके पास जाकर ले लेती है । उसका विरोध यहाँ समाप्त हो जाता है। वह उनके हाथों सरिया देकर और घुटनों में सिर डाले रो कर जैसे हार मान लेता है। वास्तव में जो मामला आगे बढना चाहिये था वह यहाँ रूक जाता है। उसका संघर्ष समाप्त हो जाता है। यदि वह भी मँजा हुआ नौकर होता तो कुछ दिन के खाडा कटने से ऐसी उम्दा नौकरी न गंवाता, न ही भावनाओं को महत्व देता।

२.४.१.२. 'त्रिशंकु' :

किशोर बंडू घर के वातावरण को देख हमेशा बैचेन रहता है। वह समझने लगा है कि पिता केवल शराबी ही नहीं है बल्कि किसी दुसरी औरत के पास भी जाता है। पति के इसी स्वभाव को देखकर माँ सीताबाई ने अपनी बेटी कमली को जोशीबाई के यहाँ काम पर रखवा दिया था। उसका रहन - सहन देख और घर में माँ-बाप की लडाई देख वह भी चाहता कि माँ उसे कमली के समान किसी के घर काम से लगवा दे। अब तक दो बार उसके बाप ने सीताबाई का सिर फोड दिया था। बीमारी में सीताबाई काम पर नही जा पाती। बंडू ने अवसर पा कर माँ से पाठशाला छोड कर काम करने की अनुमति चाही थी। वह केले बेचना चाहता था लेकिन माँ के पास पैसे न होने से वह ऐसा न कर सका। तब वह राशन की दुकान के सामने मजदुरी करने लगा लेकिन ज्यादा बोझ वह उठा नहीं पाता। उसी दौरान रफीक ने उसे फिल्म की टिकट ब्लैक में बेचने के धंधे में लगाया। वह रोज बीस रुपए माँ को देने लगा।

---

१. मामला आगे बढेगा अभी - लाक्षागृह - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ १०

उस दिन अमिताभ बच्चन की फिल्म रिलीज होने पर संडे होते हुए भी पब्लिक ठंडी ही थी। पर उसे एक अजनबी ने मटन शाप के पीछे आने के लिए कहा। जैसे ही उसने पैसे लिए पुलिस ने उसे दबोच लिया उसकी जमानत के लिए कोई नहीं आया। उसे डोंगरी के 'रिफार्मेटरी' में भेज दिया। वहाँ कादर उसे अजीब किस्सा सुनाता है कि उसके बाप ने लफडेबाज माँ को घासलेट डालकर जला दिया था। वह भी सोचता है कि उसके बाप ने ही उसकी जिंदगी बरबाद की है। वह उसे नही छोडेगा वह भी पुल के नीचे वाली बस्ती में किसी औरत के संग फँसा है। जेल से छुटते ही वह सफेद पुल की ओर आता है। जहाँ लक्ष्मी अम्मा दिखाई देती है। माँ के बारे में पूछने पर बताती है 'सीताबाई ने नया नौरा (दुल्हा) बनाया ! वो तेरा मावसी का देवर था न ... नारायण शिंदे ... भाजीवाला? ... उसीसे।' [१]

बेचारे बंडू की स्थिती त्रिशंकु-सी हो जाती है। न अब उसका बाप है न ही माँ। वह किसे मारे। दोनों के रहते वह अनाथ हो जाता है।

२.४.२. गरीबी की यातना : अमानवीय हत्या को विवश – 'भूख' :

झुग्गी-झोपडीयों से सम्बन्धित समस्याओं मे 'भूख' कहानी हमें सोचने पर विवश करती है कि गरीब अपनी भूख मिटाने के लिए क्या कुछ नहीं करता?

लक्ष्मी का पति मिस्त्री था, जो उँचे माले पर काम करते समय गिर कर मर गया। उसके साथ बच्चों को देख लोग काम पर रखने से कतराते हैं। बच्चे भूख से तडप रहे होते हैं। तभी सावित्री अक्का उसे रास्ता बताती है कि 'एक औरत हय जो सोटे बच्चे को गोद लेती है; सँभालती हय। शाम कू बच्चा परत देती हय ... साथ में पैसा भी देती। मेरे को बात जमा ... बच्चे के वास्ते तेरे को काम नई मिलता न। फिर काम करने को सकेगी।' [२] लक्ष्मी सावित्री अक्का के प्रस्ताव को सुन बिफर उठती है।

---

१. त्रिशंकु - लाक्षागृह - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ ५०
२. भूख - इस हमाम में - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ १६

वह औरत भीख माँगने के लिए छोटे बच्चे ही लेती है उन्हें दूध - बिस्कीट खिलाती है। साथ दो रुपये भी देती है। उसे बच्चे को ट्रेन में लेकर घूमना पडता है। साथ ही बच्चे का हगना-मूतना भी धोना पडता है। लक्ष्मी को अब तक न अनाज चुनने का काम मिला न ही ठेकेदार के यहाँ मजदूरी। मजबूर हो वह बच्चा भिखारीन को गोद देने के लिए तैयार हो गयी। रोज उसे दो रुपये मिलने लगे जिससे बाकि के बच्चों के पेट में कुछ न कुछ पड जाता। एक दिन बहुत देर होने पर भी भिखारन छोटू को लौटाने नही आती। वह चिंतित हो जाती है। लेकिन तभी वह आ जाती है। धंधा न होने का रोना रो वह छोटू और दो रुपये पकडा जाती है। बडी मुश्किल से उस दिन उसने भाजी और भात बनाया था। वह बच्चों को लाने बाहर जाती है। छोटू जोर-जोर से रोता है। उसे लगता है कि दिन भर गोदी में रहने और घूमने की उसे आदत लग गयी है। उसके जाते ही छोटू रेंगता हुआ जाता है और झपट्टा मार कर भात की थाली उलट देता है। क्रोधित हो वह असे पीट देती है 'तेरे को दूध होना, बिस्किट होना ... अक्खा दिन पेट भर खाना होना ... पन घर में आके रोज बोम-बोम करना।'[१] मार खा कर छोटू आँखे उलट देता है। अस्पताल ले जाने पर ढाई घंटे की प्रतिक्षा के बाद डॉक्टर वार्ड से आकर उससे पूछते है - 'बच्चे को खाने को नहीं देती थी क्या? बच्चा भूख से मर गया। उसकी आँते सूखकर चिपक गयी थी . . . ।'[२] वह समझ नहीं पाती ऐसा कैसे हो गया। औरत उसे समझा रही थी, 'अब रोने से क्या ... भिकारिन ने बच्चा पूजा के वास्ते नई लिया होता। वो छिनाल बच्चे का पोट भरती तो बच्चा आराम से गोदी में सोता, पिच्छू उसको भीक कौन देता? अरे वो बच्चे को फक्त भुक्काच नई रक्खते, रोता नई तो चिकोटी काट करके रुलाते कि लोगों का दिल पिघलना.. ।'[३] लक्ष्मी की समझ में कुछ नही आ रहा उसे तो दूध की बोतल, बिस्किट और उसके बच्चे की लाश दिखायी दे रही थी।

---

१. भूख - इस हमाम में - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ २५
२. भूख - इस हमाम में - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ २६
३. भूख - इस हमाम में - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ २६-२७

'भूख' की खातिर ही वह इस अमानवीय हत्या का कारण बन गयी। उसकी बेबसी और लाचारी को चित्राजी ने मार्मिक रुप में प्रस्तुत किया है।

२.४.३. जायदाद की हवस – 'लकडबग्घा' :

पछाँहवाली का गौना होने के कुछ अरसे बाद ही अचानक एक दिन छोटे कुँवर गायब हो जाते हैं। कुछ लोगो का कहना है कि भट्टेवालों की दुश्मनी उन्हे ले गई। तभी से न सधवा न विधवा रह गई पछाँहवाली इस घर के सारे कामकाज कर रही है। पुनिया सतमासी पैदा हुई थी तब भी विवाद उठे थे। उसके जेठ लंबरदार का बहुत दबदबा था। बरसों बाद पछाँहवाली को उसकी बहन इलाहाबाद कुछ दिनों के लिए लाती है। बहन के लडके लडकियों को पढा-लिखा देख उसके मन में भी पुनिया को पढाने की इच्छा जाग जाती है। बहन भी उसे समझाती है कि पढ-लिख कर पुनिया का भविष्य संवर जायेगा। यदि गाँव में शिक्षा का प्रबंध न हो तो वह स्वयं उसे अपने पास रख कर पढायेगी।

घर के कामकाज की दिक्कत देख लंबरदार लंबरदारिन के पैर फिसल कर गिरने का बहाना कर उसे बुला भेजते हैं। गाँव लौटने पर वह लंबरदार के पास पुनिया की शिक्षा के प्रबंध के बारे में संदेश भेजती है कि वह उनसे स्वयं बात करना चाहेगी। लेकिन लंबरदार कहते है कि उसकी बेकार की बात सुनने का उनके पास समय नहीं है। जिस घर के लिए वह आज तक खपती रही उन्हे उसकी बात बेकार की लगती है। वह अन्न-पानी त्याग देती है और काम करने से भी इंन्कार कर देती है । वह जब तीन दिन तक उपासी रहती है तो लंबरदार भी घबरा जाते हैं। वे स्वयं आते हैं लेकिन उसे धौस देते हुए कहते है कि यह क्या त्रिया चरित्र है। 'पछाँहवाली की हौंस को, उनकी बिटिया को आगे पढने की ललक को त्रिया-चरित्र कहकर लांछित किया जा रहा है? उनकी इच्छा का कोई मतलब नहीं इस घर में।'[१] वह अड जाती है कि पुनिया की पढाई का पक्का प्रबंध होना

१. भूख - इस हमाम में - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ १००

चाहिये। वह उसके समान अनपढ नहीं रहेगी। वह अपने पिता के समान डॉक्टरी पढेगी। 'हमार अलगा-अलगी कर दियों लंबरदार ... हमरे हाथ चार पइसा होई तो पाई पाई क मोहताज तो न होइबे कोहू के ...।'[१]

लंबरदार के सामने कभी किसी महिला ने अब तक मूँह नहीं खोला था। लंबरदार ने खुद के बच्चों की शिक्षा की व्यवस्था शहर में की थी लेकिन बिन बाप की पुनिया को अनपढ रखने की साजिश थी ताकि वह कल को अपना जायदाद में हिस्सा न मांग बैठे। ब्याह देने भर से बात निभ सकती थी लेकिन उसकी माँ शेरनी की तरह तन गयी। वह रण-चंडी-सा रुप धारण कर सीधे लंबरदार को चुनौती देती है। लंबरदार क्रोध में बंदुक उठा लेते है लेकिन बीच बचाव से बात टल जाती है।

अगली सुबह चारों ओर यह खबर फैल जाती है कि अरही के खेत में पछाँहवाली को लकडबग्घा उठा ले गया। वस्तुत: लंबरदार ही उसकी हत्या करवा देते है। जायदाद के हिस्से के लालच में लंबरदार पुनिया को अशिक्षित रखना चाहते ही थे लेकिन उसकी माँ में जागृति होते ही उसे ही रास्ते से हटा देते हैं। धन का लालच मनुष्य को पशु बना देता है। नरभक्षी पशु।

२.४.४. अर्थ प्राप्ति हेतु पशु की बलि – 'जिनावर' :

जुम्मन मियाँ का तांगा चलाने का पुश्तैनी धंधा है। उन्हें अपनी घोडी सरवरी जान से भी प्यारी है। पहले वे आगरे में तांगा चलाते थे बाद में दिल्ली आ गये। मोटरों की वजह से कम ही सवारियाँ मिलती थी। पहली बीवी के पांच और जुबैदा के तीन बच्चों को पालना उसे भारी पड रहा था। तिस पर सरवरी बीमार थी। हकीम, गंडे-तावीज करने के बाद वह डॉक्टर को दिखाता है। डॉक्टर उसे 'ग्लेण्डरासन धोक्या' रोग बताते है। उन्होने साफ कहा था कि वह ज्यादा दिन नही बचेगी। लेकिन जुम्मन मियाँ उसके इलाज पर खर्च करते रहते है। जुबैदा चिढ जाती है - 'घोडी-घोडी न होकर रंडी सौत हो गई है मेरी। नही रही तांगा खींचने के काबिल तो घर क्यूँ फूँक रहा

१. भूख - इस हमाम में - चित्रा मुद्‌गल, पृष्ठ १०१

उसके पीछे? लात लगा हरामजादी को और परे कर। मर्द है मर्द। दिहाडी कर कहीं। रिक्षा खीच किराए पर। मगर तू है कि दिन भर उसकी टांगो में घुसा उसके पुट्ठे सहलाता रहेगा।'[१]

जुम्मन मियाँ को शारीरिक मेहनत की आदत ही नहीं है। बचपन से तांगा ही चलाया है। जिस घोडी ने आज तक पाला-पोसा उसे अब भला कैसे छोड दें? घर मे जब खाने को कुछ न मिला तो मजबूरी में सरवरी को ताँगे में लगा बाजार निकलना पडा। अपने घुटनों के दर्द को सहती, मालिक की दशा को पहचानती सरवरी चल पडी। पहले पांच सवारियाँ ली फिर इकलौती सवारी। सरवरी दर्द से हाल-बेहाल हो रही थी। उसकी टाँगे कांप रही थी। जुम्मन मियाँ सोच में पडे थे कि सरवरी के बिना घर कैसे चलेगा। वह नई घोडी कैसे खरीदेगा। तभी हार्न देते फिएट की आवाज को अनसुना कर जुम्मन मिया तांगा बीच रास्ते में ही चलाते है। परिणाम स्वरुप घोडी की टाँगो से टकरा कर फिएट रुक जाती है।

पुलिस आती है। सरवरी रास्ते में मरी पडी होती है। जुम्मन जार-जार रोते हैं। कार वाली महिला और लडकी घबरा जाती है। जुम्मन रिपोर्ट लिखवाता है। लडकी के पिता आकर बात रफा-दफा करने को कहते है। जुम्मन मियाँ आठ हजार से बात शुरु कर दो हजार में मामला निपटाते हैं। घर आकर सोने पर वे अचानक जाग जाते है और चिंघाड मार कर रोने लगते है। जुबैदा कर्कशा होने पर भी उसके दिल का दर्द समझती थी। वह समझाती है कि उसे एक न एक दिन जाना ही था। तब जुम्मन मियाँ कहते हैं 'उसके जुदा होने से पहले ही मैने उसे मार दिया ... मैने उसकी मौत से सौदा कर लिया बीबी।.. जानबूझ कर उसे गाडी से भेड दिया ... यही सोच कर कि अपनी मौत तो वह मरेगी ही आगे-पीछे ... किसी गाडी से दूँगा तो मरते-मरते अपनी कीमत अदा कर जायेगी .. ये नोट, नोट नहीं, मेरी सरवरी की बोटियाँ है बीबी।'[२] उसका अपराध बोध उसे बार-बार कचोटता है। अपनी दौलायमान आर्थिक स्थिति के कारण वह अपनी प्रिय घोडी का अंत भी फायदे के लिए करता है। कहानी का अंत अत्यन्त कारुणिक है।

---

१. जिनावर - जिनावर - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ ५३-५४
२. जिनावर - जिनावर - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ ५७

२.४.५. आर्थिक समझौता – 'लेन' :

अपराध जगत के अंधेरे को दिखाती यह कहानी एक घटना के इर्द-गिर्द बुनी गयी है। महेन्दरी झोपड्पट्टी में पति के साथ रहती है। एक रात चिख-पुकार सुनकर उसका मर्द बाहर निकलता है। एक आदमी को कुछ लोग पीट रहे थे यह देख वह उसे बचाने जाता है। पीटनेवाले उसके पेट में छुरा खोंप भाग जाते हैं। उसका मरद अस्पताल में पडा है। दत्तू मारने वालों को नहीं पहचानता लेकिन महेन्दरी ने खिचडीपुर की ओर की सडक पर खडे हो कर मारने वाले को देखा है। उसे शिनाख्त के लिए रोज थाने और फिर आस्पताल जाना पडता है। दत्तू की हालत धीरे-धीरे सुधर रही है।

उधर वह जिन इमारतों में काम करती है उनकी शिकायतें आने लगती हैं कि बहुत सा कचरा इकट्ठा हो गया है वह काम पर क्यों नहीं आ रही। पुलिस को पूछताछ में वो बताती है कि मुहल्ले के अधिकांश रिक्शे वाले अफीमची है लेकिन उसका पति अफिम नहीं लेता। उसे पुलिस पर भरोसा करते देख मुहल्ले वाले समझाते है 'ये पुलिसवाले तो साक्षात भगवान को भी भरोसा देकर मुकर जाने वाली कौम है।'[१] महेन्दरी प्रभात विहार के पॉकेट दो में सडक के दाहिने ओर की पांचों इमारतों में पाखाना धुलाई और कूडा फिंकवाई का काम करती है। तीन रुपयों में तीस दिन उनका पाखाना साफ करती है। इतने जीने चढना-उतरना, धोना, सफाई और कमाई सिर्फ तीन रुपये। लेकिन बच्चों की एक वक्त की रोटी का निभाव करने के लिए उसे काम करना पडता है। 'किराये की रिक्शे की कमाई तो गिरगिट का रंग हुई। यात्री मिल-न-मिले इससे रिक्शे के मालिक को क्या वास्ता? वह तो रिक्शे के वापसी के साथ ही पूरे दिन के ठहरे बारहे रुपल्ली गिनवा लेता है।'[२]

कई दिनों की नागा से बिल्डिंग वालों ने कहला भेजा था कि यदि वह कल से काम पर नही आयी तो उसे जीना भी नहीं चढने देंगे। अपनी व्यथा दबाये वह नागम्मा से कहलवा देती है – 'बोल

---

१. लेन - इस हमाम में - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ १४०
२. लेन - इस हमाम में - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ १४३

देना बिजी लोगों को ... महेन्दरी, मक्कर करके नई पडी ... कल सुबह झाडू-कनस्तर के संग उनकी सेवा में हाजिर हो जायेगी। ... दुख अपनी जगे काम अपनी जगे।'[१] वास्तविकता तो यह थी कि ये लोग वाशबेसीन और बाल्कनी धुलाई के पैसे उसे देते ही नहीं थे। वक्त जरुरत मदद की बात छोड ऐसे काम पर बुलाते है तभी उसने खिलोनी को यह काम सिखाना शुरु किया है।

पुलिस से खबर आती है कि दो अपराधी पकडे गये हैं एक और भी शीघ्र पकडा जाएगा केवल वह उनकी शिनाख्त कर दे तो उन्हें सजा मिल कर रहेगी। वह खुश थी कि बगैर शत्रुत्व के उसके पति को मारने वालों को वह फांसी चढायेगी। लेकिन तभी उसे दो अजनबी आदमी मिलने आते हैं। जो समझौते के लिए आये हैं। यदि महेन्दरी शिनाख्त से इंकार कर दे तो वे उसे पांच हजार दे देंगे। वह कोर्ट कचहरी के चक्कर में न पडे। केस जीत कर भी उसे आखिर क्या मिल जायेगा। महेन्दरी आर्थिक तंगी के बावजूद भी इस समझौते पर क्रोधित हो जाती है - 'मजाक उडाने आये मजदूर माणस का? ... अरे कोई कितना भी गिर जायेगा, अपणे मरद की जाण की कीमत खायेगा।'[२] लेकिन वे ग्यारह बजे तक लौटने की बात कह कर चले जाते है।

अस्पताल जाने पर महेन्दरी को पता चलता है कि उसका पति अब रिक्शा नहीं खींच पायेगा। वह सोच में पड जाती है कि 'अकेली लेन की आय से क्या क्या कर लेगी वह? सुक्खूराम की दो सौ रुपये महीने कि किस्त चुकाएगी, अनाज पानी भरेगी ... सभी के तन पर कपडे-लत्ते डालेगी ... अस्पताल और चौकी की रखडपट्टी से ही पस्त है आगे कोर्ट-कचहरी कैसे झेलेगी।'[३] यदि वह कटोरी से तीन हजार में एक लेन खरीद ले तो उसका गुजारा भी हो सकता है। दत्तु को भी साथ ले लेगी। कर्जा भी चुक जायेगा, लेन भी मिल जायेगी। कोर्ट-कचहरी उसके बस का रोग नहीं। आदर्शो की बात करने वाली महेन्दरी आर्थिक तंगी से झुक जाती है। वह समझौते के प्रस्ताव को मानने का निश्चय कर लेती है।

---

१. लेन - इस हमाम में - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ १४४
२. लेन - इस हमाम में - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ १५६
३. लेन - इस हमाम में - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ १६३

२.४.६. आर्थिक दबाव : अपराध की ओर झुकाव–'ब्लेड' :

रामखिलावन महानगर में ड्राइवर का काम करता था। आर्थिक जरुरतें उसे साहब से एडवान्स लेने को मजबूर कर देती। वह भी क्या करे गाँव से चिट्ठी आयी है कि बटेसुर बाबा की मानता के बाद मिली इकलौती संतान घुघुनू की टांग टूट गयी है। लंगडी लडकी का जीवन अंधकार मय होता है। शीघ्र ही पैरों का इलाज कराना होगा। साहब से पैसे मांगने पर वे कहते हैं वह कारण भी छोटे-मोटे नहीं बताता'कभी तुम्हारा बैल मर जाता है , कभी तुम्हारी माँ की आँखो का आपरेशन होता है ... कभी बीज के बिना खेतों की बुवाई रुकने लगती है तो कभी बेटी की टांग टूट जाती है।'[1] साहब उसे सख्त हिदायत देते हैं कि अब अगर उसने एडवान्स मांगा तो काम से निकाल देगें।

रामखिलावन की आर्थिक दशा का वर्णन लेखिका ने इस प्रकार किया है - 'घर में नगदी कमानेवाला अकेला वह। उसर बंजर मिलाकर कुल जमा पांच बिघहा खेत तिस पर खानेवाले बडे भैया और उनकी पहली-दूसरी, छाती पर सिल-सी धरीं मंझली रांड भौजी और उनके अभागे तीन मोडा-मोडी, खटिया पोंकती अम्मा और घुघुनु समेत अपनी जगधरी।'[2] लेकिन क्या करे? साहब के अपने खर्चे है। साहब के यहाँ सम्मेलन होनेवाला है। गाडी के टायर, सीट बदलवाने है। तभी तो रामखिलावन की व्यथा सुनकर भी गैंडे की खाल ओढ ली थी।

गैरेजवाले जमाल ने उसकी स्थिति को जान कर सलाह दी थी कि हफ्ते दो हफ्ते में वह कोई न कोई नुक्स बता कर डेढ-दो घंटे गाडी गॅरेज में ले आया करे। हेर-फेर के पांच परसेण्ट देगा। लेकिन उसे नही सुहाया था। तब जमाल ने समझाया कि आज की दुनिया में पगार से किसी की सूखी भी नहीं चलती - 'अबे राजा हरिशचन्द्र की औलाद, हेरा-फेरी नई सिखा रिया, फार्मूला दे रिया मैं तर खाने की ... मर्जी तेरी मत खरीद।'[3] वह इसी द्वंद्व में फँसा रहता है कि साहब कितने अच्छे हैं उस पर कितना विश्वास करते हैं, वह उन्हे कैसे धोखा देगा। इसी उलझन में वह सीट

---

१. ब्लेड - इस हमाम में - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ ६८
२. ब्लेड - इस हमाम में - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ ६६
३. ब्लेड - इस हमाम में - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ ७१

बदलवाने सरदारजी के पास जाता है। वे उसकी उलझन समझ जाते हैं। वह पांच परसेन्ट देने को तैयार रहते हैं लेकिन उसने इकट्ठे तीन सौ मांगे। सरदारजी ने ढाई सौ देने का वादा किया पर शर्त थी कि काम अधिक होना चाहिये। सुबह गाडी धोते समय वह उधडी सिलाई पर ब्लेड चला देता है ताकि वह घुघुनू के इलाज के लिए घरवाली को मनिऑर्डर कर सके। घर के आर्थिक दबाब उसे मजबूरन गलत रास्तों पर ले जाते हैं। वह चाहकर भी नेक नहीं बन सकता। क्योंकि वेतन कम है और उसकी जरुरतें अधिक हैं। जीत आखिर आर्थिक दवाबों के तहत उपजी मानसिकता की होती है।

२.४.७. भिखारियों का अर्थतंत्र – 'बोहनी' :

आदमी शकुन-अपशकुन को जाने-अनजाने महत्व देता रहता है। भिखारियों में भी शकुन-अपशकुन माना जाता है। सांताक्रुज का पुल पार करते समय कथा नायिका एक बोने भिखारी को रोज पांच-दस पैसे दिया करती थी। इत्तिफाक से निरंतर दो-तीन दिन वह भिखारी को कुछ नहीं देती, जबकि रोज वह दुगुनी आवाज में भीख के लिए गुहार लगाता है। चौथे दिन भी जब वह जोर-जोर से उससे भीख मांगता है तो वह क्रोधित हो जाती है कि क्या वह उसकी देनदार है जो रोज ही भीख दे। तब भिखारी का उत्तर चौकाने वाला होता - 'माँ तुम देता तो सब देता ... तुम नईं देता तो कोई पन भीख नहीं देता।... तुम्हारे हाथ से रोज बोहनी होता न तो शाम तलक पेट भरने भर को मिल जाता ... तीन दिन से भुक्का है मेरी माँ ।'[१] उसके हाथों हुई भिक्षा की बोहनी से यदि उस भिक्षुक का पेट भरता हो तो वह गडबडी में भी उसे भीख दे सकती है। वह गाडी छुटने की पर्वा किये बगैर उसकी और सिक्का उछाल उसकी बोहनी कर देती है।

२.४.८. आर्थिक स्तर से जुडे संबंध – 'प्राथमिकता' :

आजकल सभी बातें अर्थ केन्द्रित हैं। यहाँ तक कि रिश्ते भी आर्थिक स्तर के आधार पर

---

१. बोहनी - जिनावर - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ ११९

बनते बिगडते हैं। चित्राजी ने अर्थ केन्द्रित स्नेह सम्बन्धों को कई कहानियों में चित्रित किया है। पैसे वालों के यहाँ व्यक्ति के स्नेह और उसकी भावनाओं की कदर नहीं की जाती। भाँजा जब मामा के यहाँ संतरो का एक झाबा लेकर जाता है और मामी के चरण स्पर्श करने के लिए लपकता है तो उसकी भावनाओं की कद्र करने के बजाय झाबे से गिरकर जो तिनके कालीन पर बिखर गये थे और कालीन खराब कर रहे थे, उनको शीघ्र हटाने की चिंता करती है। आजकल स्नेह, प्यार से नहीं अर्थ से रिश्ते जुडते हैं।

२.५ राजनितिक समस्या से सम्बन्धित कहानी :

चित्राजी ने राजनीति को केन्द्र में रखकर 'जगदंबाबाबू गाँव आ रहे हैं 'कहानी लिखी है लेकिन इस विषय पर अधिक नहीं लिखा है। राजनीति का क्षेत्र दिनोंदिन बिगडता ही जा रहा है। घिनौनी राजनीति के चलते देश की आम जनता न न्याय पाती है न सुखी नागरिक जीवन। चित्राजी राजनीतिक विषय से अलिप्त नहीं हैं। फर्क इतना है कि राजनीति में चलने वाली आपसी खींचा-तानी को नजरअंदाज करते हुए उन्होंने राजनीति के उस हिस्से को अपनी रचना का लक्ष्य बनाया है जहां वह आम जनता से जुडता है। राजनीतिज्ञों के जन प्रतिनिधि होने के ढोंग को वे सह नहीं पाती। 'जगदंबाबाबू गाँव आ रहे है' कहानी में राजनेताओं की अच्छी-खासी पोल खोली गयी है। ये नेतागण जनाभिमुख, जन सेवी होने का केवल नाटक करते हैं।

२.५.१. विकलांगो के प्रति दिखावटी सहानुभूति – 'जगदंबाबाबू गाँव आ रहे हैं' :

राजनेता कितने चालाक और गेंडे के समान मोटी खाल के होते है , इसका अनुभव इस कहानी को पढ़कर होता है। गाँव में चर्चा होती हैं कि भूतपूर्व स्वास्थ मंत्री जगदंबाबाबू गाँव के सुख-दु:ख सुनने आ रहे हैं। उन्होंने 'विकलांग उद्धार समीति' गठित की है जो अपंगो को सहायता देगी। इस समीति की ओर से विकलांगों को पहियागाडी यानि व्हीलचेयर भी दी जाएँगी। अपने गाँव से

सुक्खन-भौजी के बेटे ललौना का नाम व्हीलचेयर के लिए दिया गया है।

ललौना छुटपन में अच्छा चलता था लेकिन पोलियो ग्रस्त होकर वह अपंग हो गया था। फिर भी वह लकडी पर कपडे लपेट बैसाखी बना स्कूल जाता है। कई बार इस वजह से बगलों में जख्म भी हो जाते हैं जिसे सुक्खन भौजी हल्दी-तेल लगा देती है। व्हीलचेअर मिल जाने से ललोना इस वेदना से बच जाएगा यह सोच कर ही वह प्रसन्न होती है। वह जगदंबाबाबू को अवतारी पुरुष और महात्मा समझने लगती है ठीक गांधीजी और विनोबाजी के समान-'कलयुग में गांधी बाबा ने दुखियारों की सुध ली थी, सुराज दिलाया। उनके बाद विनोबा बाबा लंगोटी धरे गाँव-गाँव बेसहारों के लिए दौडते रहे. जगदंबाबाबू वैसे ही महात्मा अवतारी पुरुष लगते हैं। वरना कौन गरीब-गुरुबा के कष्टों पर पुलटिस बांधता है?'[1] जिस दिन जगदंबाबाबू आने वाले होते हैं गाँव को खूब सजाया जाता है। जिस स्थान पर विकलांगों को पहियागाडी वितरित की जानी है, वहाँ बडा सा पंडाल डाला है, खुर्सियाँ बिछी हैं। विकलांगों को और उनके परिजनों को कुर्सियों पर बैठाया जाता है। सुक्खन भौजी सोचने लगती है कि अपने पैसों से जनकल्याण करने वाले जगदंबाबाबू को गयादिन जैसा लंपट उम्मीदवार कैसे हरा गया? कोसों दूर से जनता अलग-अलग साधनों से आयोजन स्थल पर आती है। सुक्खन भौजी का- 'ललोना भी एकदम किसी-किस्सेवाला राजकुमार प्रतीत हो रहा है। ठकरिहाइन काकी से मुट्ठीभर सरसों मांग कर लायी थी। खूब महीन उबटन पीसा था। देह रगड-रगडकर मैल की बत्तिया झाडी थी। नहलाकर नई नेकर-कमीज पहनायी तो बेटे की छवि पर न्यौछावर होता चित्त सहसा उसके बप्पा का स्मरण कर भावुक हो आया।'[2]

वितरण-समारोह में ललोना का नाम पुकारे जाने पर सुक्खन भौजी बडी प्रसन्न होती है। वह बकुलिया टेकता स्टेज पर जाता है। जगदंबाबाबू गाडी देकर उसे थपथपाकर बधाई देते है। उनकी तस्वीर निकाली जाती है। भौजी की आँखों में आँसू आ जाते हैं। भौजी देहरी तुडवाकर

---

१. जगदंबाबाबू गाँव आ रहे है - जगदंबाबाबू गाँव आ रहे है - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ ४७
२. जगदंबाबाबू गाँव आ रहे है - जगदंबाबाबू गाँव आ रहे है - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ ४९

गाडी को घर में रखने की व्यवस्था करती है। ललौना फर्राटे से गाडी आंगन ले आता है। माँ को चक्कर घन्नी देकर परेशान करता है। गाडी आ जाने से माँ-बेटे दोनो ही खुश हो जाते हैं। लेकिन अचानक एक दिन मोहभंग हो जाता है। एक रात सुमेर सिंह आ कर भौजी से कहते हैं कि बीघापुर में 'विकलांग उद्धार समिति' का दूसरा समारोह है। जगदंबाबाबू वहाँ भी विकलांगों को गाडियाँ उपहार स्वरुप वितरित करेंगे लेकिन वितरित की जाने वाली गाडीयाँ अभी तक पहुँच नहीं पायी हैं। दूरदर्शन और आसपास के इलाके के हजारों लोग वहाँ आने वाले हैं अत: ललौना की गाडी चाहिये। एकाध रोज में उसके लिए बैसाखियाँ बनवा देगें। जाते-जाते ठाकुर यह भी कह जाते हैं कि यदि गाँववाले पूछे तो कहना कि गाडी चोरी हो गयी। भौजी ठाकुर से बहुत कुछ कहना चाहती थी कि 'मालिक, मेरे बचौना की जिंदगी न छीनों ... पहियावाली गाडी पाय वह हिरन की नाई चौकडी भरत फिरत हय ... रांड मेहरिया की बुढौती की आस हैं अभागा ... गाडी छीन लैंहों तो कैसे जिई मोर ललौना।'[१] लेकिन उसके शब्द घुट कर रह जाते हैं।

कहानी के अंत में सुक्खन भौजी सहेज कर रखी उस कतरन को जला देती है जिसमें गाडी पर बैठा ललौना है और जगदंबाबाबू हर्षित मुद्रा में तालियाँ बजा रहे हैं। राजनेता जनता में अपनी छवि बनाने के लिए समाज-सेवा के नाम पर गरीबों का मजाक ही उडाते हैं। विकलांगों की भावनाओं से खिलवाड करते हैं। न जाने कितनी ही गरीबों-अपंगों के लिए योजनाएँ बनती हैं लेकिन उनका लाभ गरीबों को न मिल कर बडे लोगों को होता है। ललौना और सुक्खन भौजी के मोहभंग के साथ ही पाठकों का भी राजनीतिज्ञों के सम्बन्ध में मोहभंग हो जाता है।

संक्षेप में कहा जा सकता है कि चित्राजी ने गाँवों में साधारण, गरीब और भोली जनता का छल करने वाले राजनेताओं की खासी पोल खोली है। वहाँ कि जनता उनके प्रभाव के कारण उनका विरोध भी नहीं कर पाती और राजनेताओं द्वारा छली जाती हैं। अपंग बालक की माँ सुक्खन भौजी

---

१. जगदंबाबाबू गाँव आ रहे है - जगदंबाबाबू गाँव आ रहे है - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ ४७

का चित्रण बहुत ही यथार्थ बन पडा है, उसकी हर सांस अपने बेटे की खुशी के लिए है। लेकिन उसके बेटे की अपंगता से जब खिलवाड किया जाता है तो उसकी व्यथा शब्दों में व्यक्त ही नहीं हो पाती। पाठक उसकी वेदना को स्वत: महसूस करने लगता है और रो पडता है। जन प्रतिनिधि कहलाने वाले ही जनता का लाभ कैसे उठाते हैं उसका सटीक चित्रण चित्राजी ने किया है।

३. निष्कर्ष :

समग्रालोचन के रुप में कहा जा सकता है कि चित्राजी की कहानियों के कथ्य अपनी मार्मिकता के कारण पाठक के हृदय में स्थान बना लेते हैं। उन्होंने जीवन के विस्तृत क्षेत्र से विविध विषयों को चयनित किया है। जीवन और समाज को आलोचनात्मक दृष्टि से देखने का उनका विवेकपूर्ण दृष्टिकोण है। कटु यथार्थ से भरे जीवन और समाज की अभिव्यक्ति उनकी कहानियों में 'कहानीपन' को जीवित रखते हुए हुई है। कथ्य की प्रस्तुति का उनका ढंग एकांगी नही है वरन जीवन का यथार्थ और कहानी का यथार्थ जुड कर सामने आता है।

संक्षेप में कह सकते हैं कि चित्राजी ने यथार्थ जीवन से चुने विषय को योग्य न्याय तो दिया ही है, साथ ही समस्याओं के अनछुए पहलुओं को भी उजागर किया है। सभी वर्गो की कहानियाँ उनके कहानी संग्रहों में दिखायी देती हैं जो उनके व्यापक अनुभव जगत को दर्शाती हैं। उनके कथ्य की मार्मिकता, विषय पर पकड, गहराई और सूक्ष्म विश्लेषण की पद्धति कहानी को विशिष्ट बनाती है।

...

चतुर्थ अध्याय

चित्रा मुद्गल के कथा साहित्य का पात्र एवं चित्रण की दृष्टि से अनुशीलन

चतुर्थ अध्याय

चित्रा मुद्गल के कथा-साहित्य का पात्र एवं चरित्र चित्रण की दृष्टि से अनुशीलन

१. प्रस्तावना :

''कथात्मक साहित्य का अन्यतम तत्व चरित्र-वे व्यक्ति जिनके द्वारा कथा की घटनाएँ घटती है अथवा जो उन घटनाओं से प्रभावित होते है।''[१] पात्र रचनाकार द्वारा गढी गई मूर्तियों के अतिरिक्त कुछ नहीं होता, जिसे वह नाम और लिंग जोड देता है। जिनसें वह उद्धरण चिह्नों में बातचीत करवाता है और उसके व्यक्तित्व के भिन्न-भिन्न पहलुओं को उजागर करता जाता है। कथात्मक साहित्य का मूल विषय मनुष्य ही होता है, उसका जीवन ही केन्द्र में होता है। कथाकार अपने पात्र और चरित्र के माध्यम से मनुष्य जीवन के ही विविध रूपों को उपस्थित करता है।

२. पात्रों का वर्गीकरण :

कहानी में प्राय: दो प्रकार के चरित्र होते हैं - वर्गगत और व्यक्तिगत । इनके अतिरिक्त भी पात्रों के कई भेद किये गये है जैसे प्रमुख पात्र और सहायक पात्र, पुरूष पात्र एवं स्त्री पात्र, खल पात्र, यथार्थवादी पात्र, व्यक्तिवादी पात्र, आदर्शवादी पात्र, ऐतिहासिक एवं पौराणिक पात्र, सामाजिक पात्र, धार्मिक पात्र, मनोवैज्ञानिक पात्र, राजनीतिक पात्र आदि-आदि।

२.१ प्रमुख और सहायक पात्र :

कहानी के आधारभूत चरित्र प्रमुख पात्र कहलाते है। मूल अभिप्राय का अभिव्यक्तिकरण इन्हीं पात्रों के माध्यम से होता है। यही कहानी को गति प्रदान करते है। प्रमुख पात्र के चरित्र को उद्घाटित और विकसीत करने वाले और मुख्य घटना के विकास में सहायक सिद्ध होने वाले पात्र सहायक पात्र कहलाते है। प्रमुख पात्र की तुलना में इनका चरित्र अधिक विकसीत नहीं हुआ करता

---

१. हिन्दी साहित्य कोष (भाग १)- सं. धीरेन्द्र वर्मा

है। ये प्रमुख पात्र को अधिक प्रभावपूर्ण और जीवन्त बनाने में सहयोग देते हैं। गौण पात्र या द्वितीय स्थान के पात्र होने पर भी इनका कहानी के विकास में महत्वपूर्ण योगदान रहता है।

२.२. स्त्री और पुरूष पात्र :

लिंग के आधार पर स्त्री और पुरूष पात्र का भेद भी किया जाता है। वस्तुत: कहानी या उपन्यास में नायक-नायिका दोनो का ही होना आवश्यक समझा जाता है। लेकिन दोनो में से किसका स्थान महत्वपूर्ण हो इस सम्बन्ध में कोई निश्चित नियम नहीं है। समाज का दर्पण कहलाने वाले साहित्य में युगानुरूप स्त्री और पुरूष के बदलते महत्व के अनुसार साहित्य में भी उनका स्थान बदलता रहता है। समाज में नारी के दुसरे स्थान के अनुरूप ही साहित्य में भी नायिका को दूसरा स्थान कल तक प्राप्त था। लेकिन आधुनिक युग में नारी ने पुरूष के समकक्ष महत्व प्राप्त कर लिया है। परिणाम स्वरूप साहित्य में भी नायिका को नायक के समान ही प्रमुख स्थान प्राप्त हो गया है। अब नायिका प्रधान उपन्यास और कहानियाँ रची जाने लगी है। कथात्मक साहित्य में अब तक नारी का चित्रण भारतीय संस्कारयुक्त ही है। वे आधुनिक, उच्च शिक्षित होने पर भी संवेदनाशील, उदारमना, त्यागमयी, ममत्वशील और प्रेम में एकनिष्ठ व दृढ है। यद्यपि आधुनिक कथाकारों ने उन्हे बंधन मुक्त व युरोपिय ढाँचे में ढालने का यत्न किया है लेकिन उन्हे भारतीय संस्कारों से सर्वथा मुक्त नहीं कर पाये।

२.३ खल पात्र :

सत् और असत् के मध्य संघर्ष हमेशा से रहा है। सामाजिक, नैतिक और धार्मिक मूल्यों से अधिष्ठित पात्र नायक कहलाते हैं तो इसके ठीक विपरित मूल्यहीन, असत् पात्र खल पात्र कहलाते हैं। पुराने साहित्य में प्राय: रामत्व अर्थात सत् और रावणत्व अर्थात असत् का संघर्ष चित्रित हुआ है। यही परम्परा लम्बे समय तक रही। लेकिन आधुनिक साहित्य में खल पात्रों के चित्रण में मूलभूत परिवर्तन दिखलायी देने लगे। वैज्ञानिक यथार्थवाद और मनोवैज्ञानिक सिद्धान्तों के परिणाम स्वरूप

इस धारणा में परिवर्तन हुआ कि कोई चरित्र बुरा है तो अंत तक बुरा ही होगा और उसकी बुराई जन्मजात ही होगी। साहित्यकारों ने इस सत्य को महसूस किया कि व्यक्ति बुरा नहीं होता बल्कि ऐसी भिन्न-भिन्न परिस्थितियाँ और लाइलाज कारण हो सकते हैं जिनके प्रभाव और परिणाम स्वरूप वह चरित्र खल पात्र में परिवर्तित हो जाता है। चरित्र चित्रण में आये इस परिवर्तन के कारण ही ऐसे पात्रों का चित्रण होने लगा जो समान रूप से अच्छे और बुरे गुणों से युक्त है। महान व्यक्तियों में भी कुछ कमजोरियाँ होती हैं। कोई भी चरित्र पूर्णत: निर्दोष नहीं होता। अत: चरित्र चित्रण में अवगुणों कमजोरियों का चित्रण हो तो पात्र अधिक सजीव, जीवन्त और यथार्थ प्रतीत होते है क्योंकि वे मानव स्वभाव के अधिक निकट होते है।

२.४ यथार्थवादी पात्र :

यथार्थवादी पात्रों का चित्रण उन्नीसवीं शती में होने लगा। वस्तुत: आदर्शवादी पात्र भी यथार्थ से परे नहीं होते किन्तु आदर्श व उपदेशात्मक की अधिकता के कारण वे भिन्न दिखायी देते हैं। यथार्थवादी चरित्रों का यथातथ्य चित्रण, कटु सत्य का ज्यों का त्यों वर्णन, जन-जीवन से जुडी समस्याओं का चित्रण आदि इसकी विशेषताएँ है। भारतीय साहित्य में यथार्थ का नग्न चित्रण नहीं मिलता। प्रगतिवाद के प्रभाव स्वरूप पात्रों को सत्य के निकट ला कर उनका कल्याणकारी चित्र ही प्रस्तुत किया जाता है।

२.५ व्यक्तिवादी पात्र :

प्रगतिवाद के प्रभाव स्वरूप जिन यथार्थवादी पात्रों का चित्रण होता रहा उनके विरोध में व्यक्ति की महत्ता को सिद्ध करने वाले पात्रों का चित्रण कथा साहित्य में होने लगा। प्रगतिवादियों का मानना था कि व्यक्तिवादी पात्र असामाजिक या विकृत होते है। जब कि व्यक्तिवादी पात्रों के सृजनकर्ताओं का ऐसा विश्वास था कि ऐसे पात्र पूर्वाग्रह ग्रस्त नहीं होते और मुक्त दृष्टिकोण लिए होते है।

२.६ आदर्शवादी पात्र :

भारतीय साहित्य में आदर्शवादी पात्रों की परम्परा अत्यन्त प्राचीन रही है। रामत्व की अर्थात आदर्श मूल्यों की स्थापना करने वाले पात्र इनके अंतर्गत आते हैं। ऐसे पात्र सद्गुणों से युक्त, कमजोरियों से प्राय: मुक्त होते है। ऐसे पात्र संघर्ष में भी आदर्श का साथ नहीं छोडते और अनेक कठिनाइयों को सहते हुए प्राय: विजयी हुआ करते हैं। इनका प्रमुख कार्य आदर्श की स्थापना करना और उपदेश देना होता है। आधुनिक युग में अवश्य इनके सृजन में परिवर्तन हुआ और आदर्श के साथ ही यथार्थ का उचित समन्वय करते हुए ऐसे पात्रों की रचना की जाने लगी है।

२.७ ऐतिहासिक और पौराणिक पात्र :

ऐतिहासिक पात्रों को हम दो वर्गो के अंतर्गत विभक्त कर सकते हैं- व्यक्ति प्रधान एवं सामान्य चरित्र । व्यक्ति प्रधान के अंतर्गत किसी विशिष्ट ऐतिहासिक कालावधि का कोई प्रमुख ऐतिहासिक व्यक्ति नायक हो सकता है तो सामान्य चरित्र के अंतर्गत ऐतिहासिक काल विशेष के सामान्य चरित्रों के माध्यम से वातावरण प्रधान कृति की रचना की जा सकती है।

पौराणिक पात्र प्राय: देवी-देवता, सुर-असुर आदि होते है। प्राय: आधुनिक रचनाकारों ने इन पौराणिक पात्रों का प्रयोग प्रतिकात्मक रूप से किया है। फिर भी कुछ रचनाएँ स्वतंत्र रूप से इन पर लिखी गयी है।

२.८ सामाजिक पात्र :

मूलत: वैयक्तिक एवं सामाजिक ये दो ही पात्रों के प्रमुख भेद हो सकते है। व्यक्ति और समाज अन्योन्याश्रीत है। सामाजिक पात्रों को अधिक महत्व प्राप्त है क्योंकि वे किसी सामाजिक उद्देश्य की पूर्ति करते हैं और समाज के दृष्टिकोण को स्पष्ट करते है। सामाजिक समस्याओं जैसे दहेज प्रथा, बाल-विवाह, तलाक, अनमेल विवाह, अछूतोद्धार, नारी दुर्दशा आदि को ऐसे पात्र प्रस्तुत करते है। सामाजिक पात्रों के चित्रण में भी विविधता दिखायी देती है-कुछ पात्र गाँव और

नगर की संस्कृति के बीच के संघर्ष को व्यक्त करते है तो कुछ पाश्चात्य और भारतीय संस्कृति के संघर्ष का चित्रण करते है। कुछ ग्रामीण समस्याओं को उठाते है तो कुछ नगर की समस्याओं को प्रकट करते है। शिक्षित, अर्द्ध शिक्षित, अशिक्षित, नगरीय पात्रों में भी पर्याप्त विविधता व सजीवता है।

२.९ धार्मिक पात्र :

भारतीय संस्कृति में धर्म का स्थान महत्वपूर्ण है। अत: रचनाकारों के लिए भी धार्मिक संस्कारों को दुर्लक्षित करना मुश्किल रहा है। मतभेद के बावजूद भी धार्मिक संस्कारों का चित्रण साहित्य में होता रहा है। धर्म का एक रूप पाखण्ड और ढोंग का है, जिसका कथा साहित्य में निरन्तर विरोध किया गया है और दूसरा रूप उदात्त एवं गंभीर है। धर्म का सीधे-सीधे चित्रण प्राय: नहीं हुआ है लेकिन पात्रों के आचार-व्यवहार में धर्म का चित्रण हुआ है। प्राय: भारतीय चरित्र में धार्मिक कट्टरपन के स्थान पर सहिष्णुता और समन्वय का भाव अधिक रहता है। ऐसे ही पात्र अधिक सफल भी माने गये है।

२.१० मनोवैज्ञानिक पात्र :

फ्रायड, युंग और ऐडलर की नविनतम खोजों से मनोविज्ञान विकसीत हुआ और उसका प्रभाव कथा साहित्य पर भी पडा। मनुष्य की गतिविधियाँ, क्रियाकलाप मनोविज्ञान पर आधारित होते हैं। रचनाकारों ने सूक्ष्म मानसिक प्रक्रियाओं के चित्रण से ऐसे पात्रों की रचना की जो मनोविश्लेषणात्मकता की दृष्टि से महत्वपूर्ण है। मनुष्य की मानसिक विकृती, उसके कारणों का विश्लेषण आदि कर मानव की असीम शक्ति को या तो उद्घाटित होते हुए या फिर कुंठीत होते हुए दिखाया गया है। मनुष्य अपने सामान्य जीवन में ऐसी अनेक कुंठाओ और धारणाओं से ग्रस्त रहता है, जिससे उसका जीवन दुखमय बन जाता है। ऐसे मनोवैज्ञानिक पात्रों के माध्यम से यह चित्रित करने का यत्न किया जाता है कि कैसे स्वस्थ मानसिक और सामाजिक जीवन को बनाया जा सकता है।

२.११ राजनीतिक पात्र :

मनुष्य के जीवन पर राजनीति का व्यापक प्रभाव रहा है। जीवन के किसी भी स्तर पर ऐसे राजनीतिक पात्र मिल सकते है। भारतीय साहित्य में स्वतंत्रता प्राप्ति तक काँग्रेसी आदर्शों का ही वर्चस्व रहा लेकिन स्वातंत्र्योत्तर काल में अनेक राजनैतिक पक्ष और उनकी विचारधाराएँ सामने आयीं जिनका साहित्य पर प्रभाव पडा। राजनीति के अच्छे-बुरे प्रभावों को ऐसे पात्रों के माध्यम से चित्रित किया गया है। ग्रामीण एवं शहरी भागों में राजनीति का रूप अलग-अलग रहा है। कथा साहित्य में इस अलगाव को और राजनैतिक चेतना को अभिव्यक्त किया गया है।

३. चित्रा मुद्गल के कथा साहित्य के पात्रों का चरित्र चित्रण :

चित्राजी जनवादी सोच से जुडी हुई हैं।[१] लेकिन वे स्पष्ट करती है कि उनकी 'रचनाएँ वातानुकूलित जनवादी सोच की वायवी उपज नहीं।'[२] यही कारण है कि उनकी कहानियों में निम्नतम वर्ग का जीवन मुखरित हुआ है। वे भी मानती हैं कि जो कुछ जीते हैं, वही हमारे लेखन का प्रमुख स्वर होता है। कई बार अन्य लोगों का अनुभव या पढा हुआ अनुभव भी हमारा अपना अनुभव बन जाता है, यदि हम उसे उतने ही सजीव रूप में जियें। अवध नारायण मुद्गल जी से प्रेम विवाह होने पर वे बंबई की झोपडपट्टी की 'चाल'[३] मे रहीं है। 'आठ बाई आठ के कोठरीनुमा कमरे में कई वर्ष निकाले है।'[४] इसीलिए झोपडपट्टी के जीवन को उन्होंने निकट से देखा हैं। यही वजह है कि उनकी कहानियों में झोपडपट्टी का जीवंत चित्रण मिलता है। उनके अधिकांश पात्र इन्हीं झोपडपट्टी के मजदूर है। लेकिन अपने पिता के संपन्न घर से सम्बन्ध होने के कारण उच्चवर्गीयों और मध्यवर्गीयों को भी उन्होंने निकट से देखा है। अत: इन वर्गो के पात्र भी उतने ही स्वाभाविक लगते है।

---

१. शोधछात्रा द्वारा चित्राजी का लिया गया साक्षात्कार
२. नवभारत - १८ दिसम्बर १९९४, पृष्ठ २
३. चाल - मराठी 'चाळ' - एक दूसरे से सटकर बने पक्के मकानों की बस्ती, जहाँ प्राय: निम्न या निम्न-मध्यवर्गीय किरायेदार रहाता हैं।
४. नवभारत - १८ दिसम्बर १९९४, पृष्ठ २

३.१ चित्राजी की कहानियों के स्त्री पात्र :

चित्राजी की कहानियों में नारी पात्र अधिक सशक्त रूप में सामने आते है । फिर चाहे वह निम्न वर्ग का प्रतिनिधीत्व करने वाली 'भूख' कहानी की 'लक्ष्मा' हो या ऊँचे तबके की 'एक जमीन अपनी' की 'नीता' हो या 'अंकिता' या फिर मध्यवर्ग की 'शून्य' की 'सरला' और 'बेला' । उन्होंने खासतौर से महिला समस्या को अपने लेखन में स्थान दिया है। चित्राजी का कहना है कि 'नारी समस्या मानो सिर्फ एक परिवार से सम्बन्धित समस्या है, विशाल भारतीय समाज से उनका कोई लेना देना नहीं है। ऐसा प्राय: साहित्यकार मानकर चल रहे हैं। आज भी नारी समस्या पर लिखना हेय दृष्टि से देखा जा रहा है। पुरुष कथाकार तो इस विषय पर लिखना ही नहीं चाहते। इसे वे दोयम दर्जे का लेखन मानते है।'[१] उन्होंने महिलाओं की समस्याओं को देखा और समझा है। उनकी संवेदनात्मकता हर वर्ग की नारी की संवेदना से जुडती है। उनकी कहानियों के नारी पात्र इतने जीवंत, यथार्थ और सहज लगते हैं कि हर नारी पात्र का अनुभव लेखिका का अनुभव लगने लगता हैं।

३.१.१. उच्चवर्गीय स्त्री पात्र :

३.१.१.१ प्रीति : (बावजूद इसके)

'बावजूद इसके' कहानी की नायिका प्रीति गोल्डन कोण्टीनेण्टल में 'रिसेप्शनिस्ट' के पद पर कार्यरत है। बडे होटलों की रिसेप्शनिस्ट को काम वैसे ही काम कम रहता है। मेहमानों को चाभी दो, चाभी लो। उनकी कोई आवश्यकता है, शिकायत है तो सम्बधित व्यक्ति तक पहुँचा दो और मुस्कुराते रहो। शारीरिक कष्ट न होने पर भी दिमाग भारी हो उठता है क्योंकि मैनेजर उन्हें अक्सर हिदायतें देता रहता है ''मिस आज आपने बाल शॅम्पू नहीं किये? खुला रखने का शौक है तो... या चेहरे पर इतनी मुर्दनी क्यों? जरा फेशियल करा कीजिए न । .... मेहमान के सामने आप

---

१. पाञ्चजन्य - २३ जुलाई १९८९

बैठी क्यों थी ?-''[१] इस पेशे में बडा चुस्त दुरूस्त रहना पडता है। कई बार मामुली बात को लेकर टोका-टाकी की जाती है। यूँ भी पुरूषों के मुँह से रहन-सहन या सौंदर्य को बढाने या लुक को सुधारने के लिए कही गई बातें बडी बुरी लगती है। नाईट ड्यूटी रहने पर तो घर लौटने में देर हो जाती है। इन सबके बावजूद प्रीति नौकरी कर रही थी क्योंकि वह गोयल को बताना चाह रही थी कि उसके बिना भी वह जिन्दा रह सकती है। गोयल की अमानुषिकता के खिलाफ उसे लडाई लढनी है। आधुनिकता के नाम पर बोनीयम के रिकार्डस् पर डान्स करते समय वह मि. खन्ना का खुले कन्धे पर होंठ रखना गँवारा नहीं कर सकती। एक्यीक्यूटीव सभ्यता का विनिमय उसे स्वीकार नहीं था। बदले में उसे गोयल द्वारा मार-पीट सहन करना पडती है। पीठ पर मार के निशान लेकर वह भैया-भाभी के घर लौट आयी। प्रेगनेन्सी पिरीयड में ही उसे ब्लडींग शुरू हो गया था। बच्ची जब बीमार पड गयी तब गोयल ने पिता का कोई दायित्व नहीं निभाया। बेटी मोना उसे छोडकर स्वर्गवासी हो गयी।

प्रीति ने निश्चय कर लिया कि अब वह गोयल के साथ नहीं रहेगी। वह तलाक लेने का निर्णय लेती है। क्योंकि 'लात घुसों की चोट से भी अधिक पीडादायक... जख्म होता है-अधिकार च्युत होने का।'[२] इसे न तो उसकी माँ समझ सकती थी न भाभी। भले ही उसकी अमानुषिकता के लिए वे गोयल को राक्षस और जानवर कहें। भाभी उसके चुटकुलों के आधार पर उसे जिंदादिल कहती है पर गोयल के सगे भाई जतिन ने गोयल के असली रूप को जान लिया था। उसने प्रीति को साफ-साफ कहा था कि अपनी हत्या करवाने के बजाय अपने भरोसे खडे होकर वह जीए।

पुरूष अपनी गलतियाँ छिपाने के लिए आमतौर पर स्त्री पर यह आरोप लगा देता है कि अवश्य ही उसका कहीं कोई प्रेमी होगा। ठीक उसी प्रकार गोयल भी प्रीति पर आरोप लगाता है। तब प्रीति उसके आरोप भरे पत्र का उत्तर यूँ देती हैं-'पत्नी मैं तुम्हारी बन नहीं सकती। किसी अन्य

---

१. बावजूद इसके - ग्यारह लम्बी कहानियाँ - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ १४८
२. बावजूद इसके - ग्यारह लम्बी कहानियाँ - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ १४३

नाजायज रूप में मुझे तुमसे रहने खाने के मुआवजों की दरकार नहीं। अब जिंदगी अपनी भी जीना चाहती हूँ? चुक गये संबंधो की चर्चा अब तुम्हे सालती क्यों है? अगर स्वीकार कर भी लूँ कि यह सब पूर्व सम्बंधों का ही परिणाम है तो क्या फर्क पडता है?''[१] उसने अपने वकील के द्‌वारा विच्छेद के कागज भेज दिये। उसने उससे कोई अपेक्षाः भी नहीं की क्योंकि तलाक के अतिरिक्त कोई विकल्प भी नहीं था। पति-पत्नी की महज औपचारिकता वह निभाना नहीं चाहती। इसलिए असने स्वयं को कुआँरी समझकर नौकरी करना आरंभ कर दिया।

घर में भाभी को उसकी फाईवस्टार वाली नौकरी पसन्द नहीं थी। प्रीति सोचती है कि वह एकाध कमरे का मकान लेकर रह सकती है। खाने-पीने का विशेष खर्चा है ही नहीं। होटल में एक रूपये के कुपन पर उसे रियायती भोजन मिलता है। वह माँ को साथ रख लेगी तो मानसिक तौर पर बडा सहारा होगा। जतिन हमेशा उसे हिम्मत बँधाता रहा। वह कहता था कि तलाक के बाद वह उसके लिए दुल्हा भी खोज देगा। उसके साथ काम करने वाला सतीश कभी-कभी उसकी सादगी देखकर कहता कि उसे तो किसी मन्दिर में होना चाहिए। गोयल के खत से होटलवालों को पता चल जाता है कि वह कुमारिका नहीं है। तब मैनेजर नौकरी बचाने के लिए उसके समक्ष घृणित प्रस्ताव पेश करता है- 'तुम गेस्ट को एण्टरटेन करना पसन्द करोगी? थिंक ओवर धिस .... आज की मॉड लडकीयाँ इसे बेजा नहीं समझती ... यू नो बैटर... अरेबियन गेस्टस् आर वेरी रीच... फॉर कम्पनी सेक ... वे मनचाहा पे करते हैं। ... बट शर्त है कि किसी को भनक नहीं लगनी चाहिए।'[२] प्रीति को ऐसा लगा कि पेपर वेट से वह उसका सिर फोड दे। अप्रत्यक्ष रूप से वह कह रहा था कि नौकरी बनाए रखना हो तो शरीरदान आवश्यक है। क्रोध करके भी प्रीति क्या कर सकती थी? कारण हजार रूपये वाली नौकरी भी उसे आसानी से नहीं मिल सकती। इस नौकरी के लिए भी उसे कितने पापड बेलने पडे थे।

---

१. बावजूद इसके - ग्यारह लम्बी कहानियाँ - चित्रा मुद्‌गल, पृष्ठ १४४
२. बावजूद इसके - ग्यारह लम्बी कहानियाँ - चित्रा मुद्‌गल, पृष्ठ १५०

उसने एक साथ दो पत्र लिखे एक गोयल को और दूसरा त्यागपत्र। गोयल को उसने लिखा था कि वह अपने षड्यंत्र को शेम्पेन के साथ सेलीब्रेट करे। उसे इस बात की खुशी है कि वह उसे कहीं न कहीं उद्विग्न करती है। वैसे उसे औरतों की जब कमी नहीं है तो वह उसे लेकर परेशान क्यों है? लेकिन वह गोयल को लिखा खत फाड देती है क्योंकि उसे पत्र लिखना उसकी विजय घोषित करना होगा। जब गोयल भैया को भी प्रीति के साथ घसीट लेतें हैं तो कल तक प्रीति को गोयल के पास लौट जाने की सलाह देनेवाले भैया भी उसके पक्ष में आ खडे होते है। सबके स्वार्थ को देख वह निश्चय कर लेती है कि वह नौकरी करेगी क्योंकि-'लडाई खुद की है... फिर ? ... कोई अन्त ? कोई अन्त नहीं । उसके हिस्से में नहीं तो जूझने की चुनौती क्यों न स्वीकारें ? मोहरों सी क्यों इस्तेमाल हो।'[१] प्रीति गोयल की दी हुई चुनौती स्वीकार कर अपने पैरों पर खडी होती है। नारी जगत के लिए उसका चरित्र एक मिसाल है।

३.१.१.२ अंकिता : (एक जमीन अपनी)

'एक जमीन अपनी' उपन्यास की प्रमुख पात्र एवं नायिका 'अंकिता' है। अंकिता एक फ्रीलांसर पत्रकार है और विज्ञापन जगत की जानी-मानी हस्ती है। अंकिता आत्मविश्वासी और स्वाभिमान से पूरित स्त्री है। उसके जीवन में एक समय ऐसा अवश्यक आया था जब वह अपना अस्तित्व खो चुकी थी। उसने सुंधाशु से प्रेम विवाह किया था लेकिन उसे बाद में यह एहसास हुआ कि-'कुछ लोग दूर से ही अच्छे लगते है, अच्छे होते हैं।'[२] उसका वैवाहिक जीवन असफल रहा। क्योंकि वह न वहाँ कुछ पढ पाती थी न लिख पाती थी। सुधांशु आधुनिकता के नाम पर पीने-पिलाने, रमी खेलने में मग्न था और घर धर्मशाला बना हुआ था। उसका पुरुषी अहंकार अंकिता के 'स्व' को हर तरह से नष्ट करने का यत्न करता है। यहाँ तक की वह अंकिता को पीट भी देता है।

---

१. बावजूद इसके - ग्यारह लम्बी कहानियाँ - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ १५५
२. एक जमीन अपनी - (उपन्यास) - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ-१८

लेकिन अंकिता सुधांशु को छोडकर नया जीवन जीने का साहस करती है। माँ और भाईयों के स्नेहमय आसरे से वह फिर से अपने पैरों पर खडी हो जाती है। वह प्राध्यापिका बन इतिहास पढाना चाहती थी लेकिन आर्थिक आवश्यकताएँ उसे विज्ञापन जगत की ओर खींच लाती है। 'फिल्मरस' में काम करते समय वह 'आब्जर्वेशन' का भी काम देखती है। नीता का स्वभाव ऐसा कि 'किसी के भी व्यक्तिगत मामले में न उसे दिलचस्पी थी न उत्सुकता।... वह स्वंय अपनी जिंदगी में न किसी की दिलचस्पी बरदाश्त कर पाती हैं न खुफिया ताक-झाँक, न बेवजह टीका-टिप्पणी, न बिन मांगे सलाह - मशवरा ... मेहता और नीता के मुताबिक - वह जितनी बुद्धिमान है उतनी ही शिष्ट, सलीकेदार, समझदार और संवेदनशील भी।'[1]

अंकिता के अपने जीवन मूल्य है और अपनी विचारधारा है। वह हर जगह समझौतों से काम लेना नहीं चाहती। पुरूष प्रधान क्षेत्र में कार्यरत होते हुए भी वह अपनी अस्मिता बनाए रखने का यत्न करती है। 'आब्जर्वेशन' का काम उससे इसीलिए ले लिया जाता है कि वह आधुनिकता के नाम पर पश्चिम की परंपरानुसार किसी भी पुरूष को मर्यादा तोडने नहीं देती। नीता और अंकिता की बहस के माध्यम से अंकिता के स्त्री-पुरूष सम्बन्धों पर और विज्ञापनों के माध्यम से प्रस्तुत स्त्री की छवि पर विचार जानने को मिलते हैं। उसका स्पष्ट मत है कि नौकरी पाने के लिए वह किसी की सिफारिश की आवश्यकता नहीं मानती। 'पुरूष उसके लचीलेपन की सुविधा बनाकर जिस तरह लाभ उठाना चाहता है-स्त्री के लिए वह उसकी भावना, इच्छा-अनिच्छा, छवि और आत्मसम्मान का प्रश्न है'।[2] यदि आज स्त्री ही स्त्री की शोषक है तो उसकी वजह पुरुष वर्ग की सत्ता है। आज तक स्त्री को बंदी बनाए रखा इसीलिए उसकी संवेदना और निर्णय क्षमता कुंद हो गयी है। स्त्री को पुरूष ने 'भोग्या और देवी' की छवि प्रदान की है। दोनो ही स्थितियाँ कृत्रिम है। यदि पुरूष चाहता तो सुरक्षा के नाम पर उसे कैद करने की बजाय आत्मरक्षा का साहस प्रदान करता। अंकिता घोर स्त्रीवादी नहीं है बल्कि वह स्त्री और पुरूष की साझीदारी की पक्षधर है।

---

१. एक जमीन अपनी - (उपन्यास) - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ १९

२. एक जमीन अपनी - (उपन्यास) - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ ८१

नीता की 'आम्रपाली' की पोषाखों के विज्ञापन की फिल्म देखने के बाद वह नीता को अपनी राय देते समय स्पष्ट कहती है कि आज जब पूर्ण वस्त्रों में भी महिलाएँ सुरक्षित नहीं हैं तो विज्ञापन में प्रदर्शित न्यूनतम वस्त्रों में जो स्त्री की छवि प्रस्तुत की जा रही है वह किन जीवन मूल्यों को प्रस्तुत कर रही है? पुरूष की सामंती विचारधारा ने ही उसे सदियों तक बंदी बना कर गुलामों का जीवन दिया और आज फिर पुरूष ही आधुनिकता, स्वतंत्रता और समानता के नाम पर उसे जो सामाजिक छवि प्रदान कर रहा है वह वास्तव में इस्तेमाल की राजनीति है। वह नीता के स्पष्टीकरण प्रस्तुत करने पर यह समझाने का यत्न करती है कि इस संदर्भ में व्यक्तिवादी रवैया नहीं अपनाना चाहिये क्योंकि-'जब तक वह वर्गो में बंटकर निजी स्वार्थो और सुविधाओं में उलझी विभाजित होकर जीती रहेगी...। उसके अस्तीत्व की तलाश पूरी नहीं होगी।[1]

भोजराज जी की एंजेसी 'माध्यम' में बतौर मुख्य कार्यकारी अधिकारी के पद पर कार्य करते हुए यह अपनी कार्यकुशलता का परिचय देती है। विज्ञापन के रिकार्डिंग में आनेवाली बाधाओं को कुशलता से निपटाती है। कई महत्वपूर्ण खाते 'माध्यम' के पक्ष में लेती हैं। इसी बीच मैथ्यू की शिकायत पर भोजराज जी उस पर आरोप लगाते है कि उसने 'जीवन-चक्र' और 'नीलमणि इंडिया' के सौदे में दलाली खायी है। ऐसे आरोपों से वह तिलमिला उठती है। वह अपने पद से त्यागपत्र दे देती है कि वह न अपने काम में दखलअंदाजी सह सकती है, न आत्मसम्मान पर चोट ही। यदि विश्वास ही खंडित हो गया हो तो एकत्रित कार्य कैसे किया जा सकता है। त्यागपत्र पाकर मिलने आए भोजराज जी को भी वह स्पष्ट कह देती है कि-'अविश्वास और दबावों के बीच मैं काम नहीं कर सकूंगी भोजराजजी...।'[2] लेकिन भोजराज जी प्रतिभा के पारखी है। वे अंकिता से क्षमा मांग उसे त्यागपत्र वापस लेने पर बाध्य कर देते है। इसी प्रकार की दृढता का परिचय वह शैलेन्द्रजी के संदर्भ में भी देतती है जो स्त्री को मात्र भोग्या समझते है। वह उन्हे उनके प्रस्ताव पर खदेड देती है कि -

---

१. एक जमीन अपनी - (उपन्यास) - चित्रा मुद्‌गल, पृष्ठ ११८
२. एक जमीन अपनी - (उपन्यास) - चित्रा मुद्‌गल, पृष्ठ २३४

'माध्यम' चकला नहीं है शैलेन्द्रजी, नारी देह की नुमाइश पर वह अपने लिए रोटी नहीं सेंक सकती।'[१] अपनी दृढता, काम के प्रति निष्ठा, लगन और आत्मविश्वास के कारण ही वह 'माध्यम' के व्यापार को बढा पाती है।

अंकिता जितनी कार्यकुशल, दृढ और आत्मविश्वासी युवती है, उतनी ही भावुक और संवेदनशील भी है। प्रसंग चाहे हरिन्द्र के बेटे के नाम रखने का हो, चाहे मेहता की व्यक्तिगत समस्या का। वह हरिन्द्र के बेटे का नाम सुझाती है, जो उसने अपने अजन्मे बेटे के लिए सोच रखा था। पति-पत्नी के मनमुटाव के कारण वह अपने बेटे को जन्म नहीं दे पायी लेकिन वह नाम उसके मानस में बैठ गया था। मेहता को भी पत्नी के व्यवहार के कारण जो मानसिक यंत्रणा झेलनी पडी उसमें अंकिता उसे सहारा देती है-एक मानसिक आधार। अपनी अम्मा के न रहने पर वह फूट-फूट कर रो पडती है क्योंकि सुधांशु से विवाह-विच्छेद हो जाने पर उन्होंने दिवार बन कर समाज के सारे विवादों, प्रवादों को झेला था लेकिन अपनी बिट्टी पर आंच नहीं आने दी थी। अम्मा की वस्तुओं के बंटवारे के समय बडे भाई-भाभी के व्यवहार से वह क्षुब्ध हो उठती है। तब भाभी से कहे गये वाक्य बहुत महत्वपूर्ण है- 'टिन्नी, मिन्नी को इस तरह कभी अपने से अलग न करना... लडकी समाज में इसलिए उपेक्षित, निरीह रही है क्योंकि ... अपने घर में वह मात्र कर्तव्य होती है- कर्तव्य से उऋण हो उसे पराया मान लिया जाता है ... हर उस लडकी का आत्मबल प्रखर होता है, जिसे मायके वाले पराया नहीं मान लेते।'[२]

अंकिता अपनी सामर्थ्य के बल पर ऐसे स्थान को पा लेती है जहाँ वह स्वंय की एंजेसी खोलने का विचार करने लगती है। उपन्यास के अंत में नीता, जो आत्महत्या कर लेती है, अपनी वसीयत में अपनी बेटी मानसी की सारी जिम्मेदारी अंकिता पर डाल देती है। मानसी को यदि अंकिता गोद ले लेती है तो वह मानसी की सारी संपत्ति की भी अधिकारिणी बन सकती है। अंकिता

---

१. एक जमीन अपनी - (उपन्यास) - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ २२८
२. एक जमीन अपनी - (उपन्यास) - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ १७०

यह जबाबदारी भी उठा लेती है। क्योंकि नीता को विश्वास है कि 'भविष्य की स्त्री का निर्माण अंकिता ही कर सकती है - 'तुम्हारी ममता की गोद में मानसी अपने अस्तित्व की तलाश पूरी कर सकेगी।'[१] अंकिता का संघर्षशील चरित्र आज की नारी को एक दिशा देता है। भारतीय नारी अपनी जमीन से बिछड कर विकास नहीं कर सकती और न ही पुरुषप्रधान संस्कृति के इस्तेमाल की राजनीति से मुक्त होकर स्वतंत्रता, समता पा सकती है। अंकिता का चरित्र स्त्री को सम्मान भी प्रदान करता है और उसके अस्तित्व को पहचान दिला कर स्वीकार भी करवाता है।

३.१.१.३ नीता : (एक जमीन अपनी)

नीता 'एक जमीन अपनी' की गौण नायिका है। लेकिन उसका विद्रोही, बैलोस व्यक्तित्व पाठकों का ध्यान बरबस आकर्षित करता है । नीता एक प्रसिद्ध मॉडेल है। इस पुरुष प्रधान व्यवसाय में और पुरुष प्रधान संस्कृति में वह अपना स्वार्थ पूरा करना बखूबी जानती है। विज्ञापन जगत में उसके बारे में कई किस्से और अफवाहे मशहूर हैं। 'अक्सर बिंदास व्यक्तित्व अपने खुले चाल-चलन को लेकर सामान्य जन में आलोचना का विषय बनते रहते हैं।'[२] नीता ऐसा ही अलमस्त व्यक्तित्व थी। वह जानती है कि यह ग्लैमर की दूनियाँ है। इसीलिए अंकिता से कहती है कि- 'नौकरी और प्रतिभा दो अलग-अलग चीजें है... कभी-कभी वे दोनो को एक साथ, एक मंच पर होने का अवसर और सम्मान देते है लेकिन अक्सर नहीं।... यहां जीने की, जी पाने की पहली शर्त है- विशिष्ट दिखना, विशिष्ट करना, विशिष्ट होना, विशिष्ट बनना-जो वास्तविकता नहीं हैं...।'[३] वह पानी में रहकर मगर से बैर नहीं कर सक्ती। इसीलिए उन्हें उन्हीं के समान बन कर परास्त करती है।

वह एक सौन्दर्यवती और सफल मॉडेल है। वह अपने रूप को भुनाना भी जानती है। 'आम्रपाली' के अनुबंध में वह बहुत कम वस्त्रों में विज्ञापन-फिल्म में अभिनय करती है क्योंकि उसे लगता है कि यदि वह वास्तविक जीवन में तैराकी के लिए 'बिकनी' पहन सकती है तो विज्ञापन में

---

१. एक जमीन अपनी - (उपन्यास) - चित्रा मुद्‌गल, पृष्ठ २५५
२. एक जमीन अपनी - (उपन्यास) - चित्रा मुद्‌गल, पृष्ठ २२
३. एक जमीन अपनी - (उपन्यास) - चित्रा मुद्‌गल, पृष्ठ ८०

क्यों नहीं? केवल किसी पुरूष के देख लेने भर से किसी की पवित्रता नष्ट नहीं होती। दरअसल महिलाओं को पहले जागृत होना चाहिये। 'वह दासीत्व भाव को जीने में गौरव अनुभव करती है। अनपढ औरत को छोड भी दें तो विश्वविद्यालय से डिग्रीयाँ लेकर निकली ये छोकरियाँ माँग में पुरूष को सजाकर बैठाए रखने को इतनी आतुर क्यों होती है? पुरूष से स्वतंत्र होना है तो पहले उन्हे सिंदूर पोंछना होगा ! बिछुए त्यागने होंगे ! दासीत्व के प्रतीक चिह्न।'[1] नीता भी व्यवसाय के खतरे उठाना जानती है। वह अंकिता के द्वारा सौंपा गया 'आब्जर्वेशन' का कार्य करते हुए जब वह यह जानती है कि मैथ्यू अंकिता को वहाँ से इसलिए निकालना चाहते है कि वह बहुत खुले स्वभाव की नहीं है तो तुरंत वह वहाँ काम स्वीकार लेती है क्योंकि अंकिता के समान उसकी वर्जनाएँ नहीं है। लेकिन अंकिता को ठेस भी नहीं पहुँचाना चाहती अत: उसे गोल-मोल उत्तर दे देती है। वह जानती हैं कि अंकिता की सचचरित्रा के बावजूद भी लोग उसके बारे में उलटी-सीधी अफवाहें फैलाते है। बाद में वह 'आब्जर्वेशन' छोड कर 'पूर्णा' में कार्य करने लगती है। वह 'आब्जर्वेशन' की पक्की नौकरी छोड 'पूर्णा' में मॉडेलिंग के लिए आती है क्योंकि उसका मानना है 'छलांग भरने का खतरा उठाए बिना प्रगति का मोल-भाव संभव नहीं...।'[2]

'आम्रपाली' के अनुबंध के दौरान ही वह विवाहित 'सुधीर' से प्रेम करने लगती है। नीता और सुधीर साथ रहने भी लगते है। वह भी पुरूष के समान अपने मन को जीना चाहती है। सुधीर का वैवाहिक जीवन उसकी दृष्टि में मात्र एक व्यवस्था है। वह सुधीर की पत्नी नहीं सहचरी बन कर जीना चाहती है। क्योंकि पत्नी शब्द में उसे दासीत्व की बू आती है। अंकिता के समझाने पर भी वह नहीं मानती और वही होता है जिसका शक था। 'सुधीर' और नीता में मन-मुटाव हो जाता है। सुधीर पुन: अपनी पत्नी के पास लौट जाते है। 'आम्रपाली' का अनुबंध समाप्त हो जाता है। नीता की मन:स्थिती बिगड जाती है। वह बच्चे की माँ बननेवाली है। डॉक्टर की सलाह से वह शराब-

---

१. एक जमीन अपनी - (उपन्यास) - चित्रा मुद्‌गल, पृष्ठ-११७
२. एक जमीन अपनी - (उपन्यास) - चित्रा मुद्‌गल, पृष्ठ-७८

सिगरेट पीना बंद कर देती है। बच्ची के जन्म के कुछ महिनों बाद ही वह नींद की गोलियाँ खा लेती है। छ: घंटे के परिश्रम के बाद भी नीता नहीं बचती। जो नीता कोकिला की आत्महत्या पर यह कहती है कि- 'उसने जिंदगी के प्रति सतत संघर्षशील लोगों का उपहास उडाया' या 'जीना बहुतों के हिस्से में नहीं होता, फिर भी वे लडना नहीं छोडते !' या यह कि 'मै तो वसीयत कर जाऊंगी कि मरने के बाद मुझे विद्युत शवदाह गृह में ही जलाया जाए...''[१] वह मृत्यु उपरान्त बेडोल दिखने लगती है। उसका संघर्ष एक गलत मोड ले दुर्गती के अंत पर पहूँचता है। अंकिता के अनुसार उसका गणित ही गलत था वरना वह उसे हल कर लेती। उसका स्वतंत्रता के नाम पर मर्दाना जीवन जीना, सारे सामाजिक बंधनों को तोडना उसके लिए अभिशाप सिद्ध हुआ। अंत में अपनी पुत्री मानसी को वह अंकिता के सुरक्षित ममत्व की छाँह में छोड जाती है। वह स्वीकार करती है भारतीय नारी विदेशीपन में जी नहीं सकती।

नीता का विद्रोही चरित्र मतभेद के बाद भी विवादास्पद प्रश्न उठाता है और उसका असफल जीवन पाठक की संवेदना को गहरे तक छु जाता है। नीता ने पुरूष से संघर्ष का जो मार्ग चुना था वह उसे अकेलेपन और कुंठा से घेर लेता है, जिससे बचने की कोशीश में वह हार जाती है।

३.१.२. मध्यवर्गीय स्त्री पात्र :

३.१.२.१ सुन्नी : (लाक्षागृह)

चित्रा मुद्गल ने 'लाक्षागृह' कहानी की नायिका को कुरूप बनाया है। क्योंकि संसार में सुंदर स्त्रियाँ ही नहीं होती। असुंदर स्त्रियों को क्या भोगना पडता है? किन-किन लाक्षागृहों में प्रतिदिन जलना पडता है आदि का अंकन 'सुन्नी' के द्वारा किया है। सुन्नी के चरित्र की बाह्य रेखाएँ कुछ इस प्रकार की है-''सुन्नी के लम्बे चेहरे ने, उँची नाक के नीचे धँसी आँखों ने, होठों से हमेशा

---

१. एक जमीन अपनी - (उपन्यास) - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ २४८

बाहर रहनेवाले दाँतो ने उसे कभी साखरपुडा की संभावनाओं तक पहुँचने नहीं दिया।''[१] जिंदगी के लगभग पैंतिस साल तक वह कुँवारी ही रही। उसकी तनखाह के साढे पाँच सौ रूपये उसे प्रतिमास मिलते है। माँ-बाप के पास रहती है। मैट्रिक पास होने के बाद उसे रेल्वे में नौकरी मिल गयी थी। हर नारी की इच्छा की तरह वह भी अपने घर को सजाना चाहती थी। तिपाई, कुछ कुर्सियाँ, दीवारों पर आसमानी डिस्टेम्पर हैण्डलूम के पर्दे परन्तु माँ ने मना कर दिया। माँ एक कैलेण्डर तक टाँगने नहीं देती। कहती अपने घर जाकर करो यह सब पर सुन्नी को अभी तक घर नहीं मिला। किसी ने भी उसे पसंद नहीं किया। वह निराश नहीं होती वह सोचती है कि यदि उसकी शादी नहीं हुई तो वह वन रूम फ्लैट खरीद लेगी। अनाथालय से एक बच्ची उठाकर ले आयेगी। उसी के सहारे जिंदगी गुजारेगी।

उसको सिर्फ भानु बहन के लंगडे देवर नें ही पसंद किया। दोनो का अपना-अपना हीनत्व बोध था। वह लंगडा और यह कुरूप। लंगडा उसे हमेशा सिर आँखो पर रखेगा। प्रस्ताव पर सोचने पर उसे लगा कि ''वह बदशक्ल जरूर है किन्तु पढी-लिखी, अच्छी पोस्ट की बदशक्ली इतनी आम तो नहीं होती कि ... ।''[२] वह व्यापारी से शादी से इंकार कर देती हैं।

उसके दफ्तर में सिन्हा ट्रान्सफर होकर आता है। पहली बार लंबे, छरहरे कद और चौडे गेहूँए चेहरे पर मोटा चष्मा पहनने वाले सिन्हा ने उससे बात की। वह उसे चाय पीने ले गया। आज तक दफ्तर का कोई भी आदमी उसके साथ चाय पीने नहीं गया। पहली बार एक सुंदर युवक के साथ ओपन एयर कॅफेटेरिया में एस्प्रेसो कॉफी पीते हुए और गेट वे ऑफ इंडिया तक घूमकर आते समय ऐसा लगा कि वे स्वर्ग में हैं। इतने वर्षो बाद किसी युवा पुरूष का साथ और चाहत ने सुन्नी मे गजब का परिवर्तन ला दिया। ''वह अपनी लुक का खयाल रखने लगी। चेहरे के उन तमाम अभिशापों को जिन्हें वह पैंतिस साल तक बदशक्ली के रूप में जीती रही। ब्यूटी पार्लर के

---

१. लाक्षागृह - लाक्षागृह - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ ५८
२. लाक्षागृह - लाक्षागृह - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ ६०

एअरकण्डीशन कमरों में धोने लगी। अपने बढे हुए दाँतो पर उसने तार का फ्रेम चढा लिया था। आईब्रोस करवाने लगी थी। हफ्ते में एक बार फेशियल के लिए भी जाती थी। फिगरेट भी उसने ज्वाइन कर लिया था।''[१] ऑफिस में चल रही कानाफूसी के प्रति वह लापरवाह थी। एक दिन सिन्हा ने सुन्नी की उँगलियों को अपनी हथेली में भींचकर कहा था कि वह उससे शादी करना चाहता है। 'शादी' शब्द सुनकर उसे क्या महसूस हुआ इसका अंकन चित्राजीने बडे रोमांटिक ढंग से अंकित किया है।' सिहरन का ज्वार उसकी देह-दृष्टि में उबलने लगा था। वे ओपन एयर कैफेटेरिया में बैठे थे। उसे महसूस हुआ था सिन्हा ने उसकी हथेलियों को नहीं भीड में उसके अस्तित्व को संदली बाहों के घेरे में दिया है।'[२] विवाह की निश्चितता के कारण उसने सिन्हा के लिए ओनरशिप पर फ्लैट बुक कराने के लिए बारह सौ की पहली किस्त भी भर दी। प्राविडेण्ट फंड से पैसा भी निकाल लिया। पॉलिसी से कर्ज भी ले लिया वह सिन्हा पर सब कुछ लुटाने को तैयार थी। लेकिन एकदिन अचानक वह अपने बारे में सिन्हा के विचार सुनती है। वह कहता है कि हर सौदे की शक्ल-सुरत नहीं देखी जाती। जीवन और व्यावहारिकता एक दूसरे के पूरक है । शक्ल में उन्नीस सुनिता आठ सौ कमाती है। ऐसी पत्नी उसे कहाँ मिल सकती है। उसकी आर्थिक आवश्यकताओं को वही पूरा कर सकती है। सुन्नी समझ जाती है कि ''वह उसे नहीं उसकी तनखाह को अपनी बीवी बनाना चाहता है। ... वह सिर्फ माध्यम थी। प्राप्ति नहीं... ।''[३]

उसने सिन्हा से शादी न करने का फैसला कर लिया और नौकरी छोडने का निर्णय ले लिया। उनके बॉस ने उसका इस्तिफा दो-चार दिन के लिए स्थगित कर दिया। सिन्हा को मालूम होते ही वह बरस पडता है। उसका असली रूप वह देख लेती है। वह उसे घर में खाना पकाने के लिए नहीं रखना चाहता। सुन्नी ने उसे साफ कह दिया वह उससे शादी नहीं करना चाहती। वह अपंग देवेन्द्र से विवाह के लिए तैयार हो जाती है लेकिन उसकी भी सगाई हो चुकी थी। वह जिंदगी भर लाक्षागृह में जलने के लिए मजबूर हो जाती है।

---

१. लाक्षागृह - लाक्षागृह - चित्रा मुद्‌गल, पृष्ठ ६०
२. लाक्षागृह - लाक्षागृह - चित्रा मुद्‌गल, पृष्ठ ६२
३. लाक्षागृह - लाक्षागृह - चित्रा मुद्‌गल, पृष्ठ ६४

३.१.२.२ सरला : (शून्य)

शून्य कहानी की नायिका 'सरला'अभिशप्त वैवाहिक जीवन के कुछ वर्ष जीने के बाद कामकाजी नारी बनकर अपने पुत्र के साथ जीवन व्यतित कर रही है। विवाह के तीसरे ही दिन पार्टी से लौटने के बाद राकेश ने कहा था कि वह बेला नामक एक विवाहिता से प्यार करता है। उसने इस बात की सूचना उनके घर दी थी ताकि विवाह न हो सके। एक चित्र भी भेजा था। पर उसके घरवालों ने यह बात छिपा ली थी। सरला स्वर्ग से धरती पर आ गयी थी। उसका पति भावनात्मक रूप से किसी और के साथ जुडा हुआ था। वह चिडचिडी हो गयी थी। इर्षा, द्वेष, और लांछन के सिवा उसके पास कुछ नहीं रह गया था। क्योंकि राकेश और बेला रोज ही मिलते थे। वह सब भी करते थे जो एक पुरूष और स्त्री करते हैं। सरला को दु:ख इस बात का था कि उसे तो घर में लाकर पटक दिया था और राकेश बेला के साथ मौज मार रहा था। उसे सरला की नहीं बेला की अधिक चिंता थी। सरला के यह पूछने पर कि बेला के पति और उसमें क्या अंतर है तो जवाब में उसने उसे इतना पीटा कि माथे पर चार टाँके लगाने पडे। सरला उसके और राकेश के व्यवहार पर सोचने लगती है।' रोज-ब-रोज की कलह... क्या वही जिम्मेदार है? राकेश का कतई दोष नहीं है? कितना नाटक सहे। कब तक अपने दिल-दिमाग को झूठी तसल्लियों की पूँजी थमाती रहे?'[१]

राकेश पीटने पर भी कभी अपने अपराध स्वीकार नहीं करता। बेला के तलाक के लिए वह चिंतित था। अत: बेला को तलाक मिलने पर अपनी दयनीय स्थिती से उबर कर सरला पिता के पास लौटकर प्राध्यापकी करने लगती है। धीरे-धीरे वह जमती गयी। तीन शहर,तीन कॉलेज बदल चुकी थी। 'हर शहर, हर नई नौकरी में उसे आत्मबल ही नहीं दिया, सामर्थ्य बोध से भी पूरा है।'[२] कभी कभी उसे अकेलेपन का अहसास होता है, लगता है कि क्या पुरुष के बगैर नारी की जिंदगी अधूरी है , बेबस है, बेमायने है। फिर वह स्वयं को समझा लेती है। उसके बाबूजी उसके लिए

---

१. शून्य - ग्यारह लम्बी कहानियाँ - चित्रा मुद्‌गल, पृष्ठ २०७
२. शून्य - ग्यारह लम्बी कहानियाँ - चित्रा मुद्‌गल, पृष्ठ १९९

अच्छे-अच्छे विवाह के प्रस्ताव भी लाये थे। पर उसने इन्कार कर दिया। उसके सहयोगी डॉ. शेवडे ने उसके सामने ब्याह का प्रस्ताव रखा था। उनके प्रति अनुराग होते हुए भी उसने उसे अस्वीकार कर दिया। कारण वह जानती है। 'प्रेम का उद्दाम जहाँ एक के प्रति समर्पण की अति को छूता है, वहीं दूसरे के प्रति कितना निर्मम, उपेक्षापूर्ण हो उठता है।'[1] उसने सोच लिया था कि शेष जिंदगी बेटे दीपू के लिए समर्पित करेगी।

तलाक लेते समय कोर्ट ने फैसला दिया था कि बालक बडा होने तक सरला के पास ही रहेगा। तब वह दीपू को इसलिए नहीं रखना चाहती थी कि परित्यक्ता स्त्री का जीवन यूँ भी कठिन होता है। उस पर बच्चा उसके लिए और कठिनाई पैदा करेगा। साथ ही यह भी कारण था कि वह अकेली ही बेटे को क्यों सँभाले और बेला और राकेश मौज करें? लेकिन अचानक राकेश दीपू को लेने आते हैं क्योंकि दुर्घटनाग्रस्त बेला अब माँ नहीं बन सकती। इसलिए पितृत्व का कोई कर्तव्य न निभानेवाले राकेश दीपू को ले जाना चाहता है। लेकिन सरला नहीं चाहती थी कि दाम्पत्य के विघटन की कडवाहट बच्चे के दिलो-दिमाग को विभ्रमित करे। इसलिए उसने निश्चय कर दिया था कि चाहे उसे सुप्रीम कोर्ट तक क्यों न लडना पडे वह लडेगी पर दीपू राकेश को नहीं देगी। 'एक विद्रुपता भरी मुस्कान उसके होठों पर खिल आयी। आज बेला उसके सामने हाथ पसारे खडी हैं ... आज उसके पास कुछ है जिसके लिए बेला पूरी जिंदगी भर तरसती रहेगी। ... आज लडाई उसके और राकेश के बीच नहीं है, उसके और बेला के मध्य है।'[2]

सरला का चरित्र पुरूष के दर्प को तोडता है, जो यह समझते है कि परित्यक्ता नारी लाचार ही होती है। सरला का चरित्र एक आदर्श उपस्थित करता है कि परिस्थितियों से डरकर भागने के स्थान पर संघर्ष करना चाहिए।

---

१. शून्य - ग्यारह लम्बी कहानियाँ - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ २११
२. शून्य - ग्यारह लम्बी कहानियाँ - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ २१२

३.१.२.३ मनु : (अग्निरेखा)

'अग्निरेखा' कहानी की नायिका 'मनू शारीरिक रूप से ही अपाहिज नहीं हुई अपितु मानसिक रूप से भी अपाहित हो गयी थी। प्रसव पीडा से परेशान वह खुद के पैरों से चलकर लेबर रूम तक गयी थी। किन्तु अपाहिज होकर लौट आयी थी। यहाँ से मनु की जिन्दगी अलग ढंग से शुरू होती है। उसकी नाक में जब ऑक्सीजन की नलियाँ थी, ग्लुकोज और ब्लड जब साथ-साथ चढाया जा रहा था। तब अमरेंद्र के होठों पर गिडगिडाहटें और मिन्नतें थी। डॉक्टर और ईश्वर से उसने कितनी ही प्रार्थनीएँ की थी। किन्तु अपाहिज होना ही मनु की किस्मत में लिखा था। प्रसुति के दौरान अपाहिज हुई औरत की वेदना को मनु के माध्यम से चित्राजी ने प्रस्तुत किया है। उसकी बाह्य स्थिति देखिए- ''चौदह बाई दस के कमरे में कैद होकर रह गयी है इसीलिए उसकी दुनियाँ न इस कमरे के विस्तार को लांघ पाती है न बाहर फैला हलचलों का सैलाब उस तक पहुँच पाता है। यह अपंगता ... यह असमर्थता ... क्या उसकी कुंठा बन गयी है?''[1] डेढ साल कोई मामूली नहीं होता। लगातार डेढ साल से बिस्तर पर पडे रहना, ठीक हो जाने की उम्मीद में आस लगाए बैठना, मनू से सहा नहीं जाता। उसने तो कई बार डॉ. दत्ता से कहा था कि उसे ऐसी दवाई दे कि दुबारा वह उठ ही न पाए। अपनी सेवा टहल करने के लिए उसने अपनी छोटी बहन शशी को बुलाया था। उसकी माँ ने कहा था कि भाई-भाभी के बजाए वह उसकी देखभाल करें। उसे क्या पता था कि उसी शशी के कारण उसका जीना हराम हो जाएगा। उसे शक हो गया था कि देखभाल के बहाने वह मनु के घर को ही नहीं अपितु अमरेंद्र को भी हथियाना चाहती है। 'सच बात तो यह थी कि उसने अपनी निष्क्रियता को असमर्थता बना लिया है। और घर की हर हलचल को अपनी संशय ग्रस्त दृष्टि से तौला करती थी। उन्हें हर सरगर्मी अपने खिलाफ एक षड्यंत्र महसूस होती है।''[2]

बिस्तर पर पडे-पडे वह शशी और अमरेंद्र को लेकर शंकाओं के जाल बुनती रहती हो।

---

१. अग्निरेखा - लाक्षागृह - चित्रा मुद्‌गल, पृष्ठ ८४
२. अग्निरेखा - लाक्षागृह - चित्रा मुद्‌गल, पृष्ठ ९५

उन्हें रंगे हाथो पकडने के लिए रात में अचानक चीख भी उठती है लेकिन उसका शक सही साबित हो, ऐसा कुछ नहीं नजर आता।

किसी जमाने में उसे पेंटिग्ज का कितना शौक था। पापा के लेटर पैड्स पर लीपा-पोती करने पर उसे मार खानी पडी थी। माँ का भी उसने ऐसा ही व्यंग्य चित्र निकाला था। एक हाथ में झाडू था, पापा के कहने के अनुसार दूसरे हाथ में उसने बेलन रख दिया था। बजाय गुस्सा होने के माँ हँसते-हँसते लोट-पोट होने लगी थी। वही लडकी आज अपनी सगी बहन पर अविश्वास करती है। जुर्म न करनेपर भी उसे अभियुक्त करार दे रही थी।

एक छोटी घटना द्वारा उसे लगा था कि उसे मर जाना चाहिए। उसके पति के जन्मदिन पर शशी ने मनु की तरह ही नर्गिस के फुलों का गुच्छा उन्हें भेट किया। परन्तु अचानक भावावेश में आकर अमरेंद्रजी ने शशी को बाहों में भर लिया। अमरेंद्र ने उसे शशी न समझ मनु समझ लिया। बरसों बाद अमरेंद्र के चेहरे पर शशी ने सुख की झलक देखी। मनु को जब पता चला तो उसका उल्लसित चेहरा एकाएक बुझ गया। उसे शशी का उसी की तरह अमरेंद्र को बधाई देना अच्छा नहीं लगा। उसकी तेज नजरों से शशी की गर्दन पर का नीला धब्बा छिपा नहीं। फलस्वरूप उसकी भयानक प्रतिक्रिया देखिए। ''घर उसके अर्तनाद से थरथरा उठा था ... नर्गिस के फुल चिन्धी-चिन्धी हो पूरे कमरे बिखर गये थे।''[१]

डॉ. दत्ता बार-बार कहते कि उल-जलूल मत सोचो अन्यथा दवाईयाँ असर नहीं करती। वे जब उसे अस्पताल में भर्ती करवाना चाहते हैं तो वह इंकार करती है 'अस्पताल मत भेजिए डॉक्टर प्लीज... प्लीज... आई एम आल राईट हियर ... '[२] मनु जानती है अस्पताल में घर से ज्यादा अच्छी तिमारदारी होगी। पर वह इसलिए नहीं जाना चाहती कारण ''संकोच लिहाज का एक जिंदा एहसास है जो उनके नंगे इरादों के कंधे पर, हर पल, हर क्षण सवार रहता है। वह नहीं रहेगी तो सारे पर्दे हट

---

१. अग्निरेखा - लाक्षागृह - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ ९७
२. अग्निरेखा - लाक्षागृह - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ ९८

जाएगें। वे खुलकर अपनी कामुकता का पेट भर सकेंगे।''[१]

अमरेंद्र उसे बार-बार एहसास दिलाता है कि वह सिर्फ उसका है, उसके लिए जी रहा है। पर उसे विश्वास नहीं आता। कारण वह भी जानती है कि वह एक जिन्दा लाश है।

उसके बेडोल लोथडे के साथ अमरेंद्र क्यों कर प्यार करेगा? तब वह सोचती है कि उसे मर ही जाना चाहिए। वह नींद की गोलियाँ खाकर डायरी में कुछ लिखकर इस दुनिया से चली जाती है। कुरूपता या अपाहिज होना स्त्री के लिए एक बहुत बडा अभिशाप है। शशी उसकी सगी छोटी बहन थी। लेकिन शरीर और मन से अपाहिज मनु शक के कारण उसके और अमरेंद्र के बारे में न जाने क्या कुछ सोच बैठी और हार कर आत्महत्या का रास्ता चुन लेती है। मनु का चरित्र पराजित मन:स्थिती की स्त्री को प्रस्तुत करता है।

३.१.२.४ शिल्पा:(अभी भी)

'अभी भी' कहानी की प्रमुख पात्र शिल्पा है। उसके पायलेट पति की दुर्घटनाग्रस्त में मृत्यू होने से उसे पाँच लाख का मुआवजा मिला था। मुकेश की माँ बिजी ने यह रकम अपने ही घर में रहे इसलिए शिल्पा की दूसरी शादी अपने दूसरे बेटे सुरेश से करवा दी। उस समय तो उसे यही समझाया गया था कि मुकेश की जो भी रकम मिलेगी वह सब शिल्पा के नाम ही जमा रहेगी। अंतरंग क्षणों में भी सुरेश ने कहा था कि उसके पैसे को कोई नहीं लेगा। पर यह सब कहने की बातें थी। 'जब भी किसी पर कोई जरूरत टुटती है। उससे जबरन पैसे निकलवा लेते है। उसी के पैसों से ननदों की सुख-सुविधाएँ जुटायी जाती है। देवर अनिल के मकान की किश्तें भरी गयी। डी.डी.ए. की दुकान की नीलामी में अब वह अपने लिए दुकान खरीदना चाह रहा है।'[२] शिल्पा को लगा पाँच लाख की रकम टूटते-टूटते अब सवा डेढ लाख बची है। यह भी गयी तो वह दाने-दाने को मोहताज होगी। अपने बचे की तंबूवाले स्कूल में डालना पडेगा। बाप की कमाई नहीं मेरे मरे हुए भाई की

---

१. अग्निरेखा - लाक्षागृह - चित्रा मुद्‌गल, पृष्ठ ९९
२. अभी भी - जगदंबाबाबू गाँव आ रहे हैं - चित्रा मुद्‌गल, पृष्ठ ३१

कमाई है। उसे यूँही मत उडाओ-कहनेवाला अनिल खुद उडा रहा था। उसकी घर में चलती भी थी। शिल्पा का पति उससे डरता था। शिल्पा को लगता है ये कैसा पति है ''पति होने के नाते क्या पत्नी पर होते अत्याचार के प्रति उसका कोई कर्तव्य नहीं है?''[१]

ऐसे समय में उसे अपने दिवंगत पति की याद आती। 'जब नियति के क्रूर उपहास ने उसे मुकेश से सदैव के लिए जुदा कर जीवन के उस चौराहे पर लाकर खडा कर दिया जहाँ जीने के सारे रास्ते अवरूद्ध होते नजर आते। मुकेश के संग बीते वर्ष किसी लम्बे मादक सपने की तरंग से गुजर गये ।'[२] पति के अचानक गुजर जाने से वह कई घंटो तक रो नहीं पायी।

न चाहते हुए भी उसे सुरेश से शादी करनी पडी। उस समय उसके मन-मस्तिष्क में उठें तुफान को चित्राजी ने बडे सुंदर ढंग से अंकित किया है। 'पलक खुलने पर अविश्वास की पर्तों में लिपटी स्मृति में हल्के से दर्ज भर जिसे न दुबारा आँख मूँदकर दोहराया जा सकता है न मिटाया। दु:ख और अवसाद में डूबे उसके मन को इतनी मोहलत ही नहीं मिली कि वह अपने साथ हुए नियति के क्रूर मजाक से उबरकर वर्तमान और भविष्य की सोच पाती। जब वह सपने से चेती तो पाया कि खूबसूरत कटघरें में वह बन्द है।'[३] घर के सभी लोगों ने बडी ही चतुराई के साथ धीरे-धीरे मुकेश के मरणोपरांत प्राप्त रकम घर की जरूरतों के नाम धीरे-धीरे निकलवायी। जब थोडी सी बची रकम भी अनिल ने हडपना चाहा तब उसका मन विद्रोह कर उठा। ''भूल जाओ ! वह भी अप्रत्यशित रूप से दृढ हो आयी। ये पैसे मेरे हैं। इनपर मेरा अधिकार है ... बहुत धर्मखाता हो गया ... माँ बेटे ने मिलकर जीना हराम कर रखा है। जोंक की तरह चुसते रहे हो, अब तक तुम लोग।'[४]

अनिल ने उसे पूरी शक्ति से दीवार पर पटक दिया फिर उठाकर फुटबॉल की तरह जोर-जोर से घुटनों पर प्रहार किये। शिल्पा की दर्दनाक चीख गूँज उठी। उसने उसे अप्रत्यक्ष रूप से

१. अभी भी - जगदंबाबाबू गाँव आ रहे हैं - चित्रा मुद्‌गल, पृष्ठ ३१
२. अभी भी - जगदंबाबाबू गाँव आ रहे हैं - चित्रा मुद्‌गल, पृष्ठ ३३
३. अभी भी - जगदंबाबाबू गाँव आ रहे हैं - चित्रा मुद्‌गल, पृष्ठ ३४
४. अभी भी - जगदंबाबाबू गाँव आ रहे हैं - चित्रा मुद्‌गल, पृष्ठ ३०

उस दिन धमकी दी कि किसी दिन वह मिट्टी का तेल उंडेलकर उसे जला देगा। दो-चार प्रेम-पत्र सिरहाने रख देगा। ताकि उसकी मौत पर सवाल न उठने पाए।

शिल्पा ने जान लिया था कि शेष रकम हडपने के लिए ये लोग कुछ भी कर सकते हैं। इसलिए बाबूजी पडौसियों की इत्तला पर पुलिस को जब साथ लाये तब वह बिना पति और सास की परवाह किये चीखती है-''मुझे जीवित देखना चाहते हैं तो यहाँ से फौरन निकाल ले चलिए।''[१] अन्यथा जैसे कुछ लोग बहु को दहेज न लानेपर मार डालते है, ये लोग बेटे के मुआवजे की रकम प्राप्त करने के लिए उसे मार डालते। शिल्पा ने हिम्मत दिखाई इसलिए वह बच गयी। शिल्पा एक जुझारू स्त्री है जो समय रहते जाग जाती है।

३.१.२.५ शोभना : (ताशमहल)

'ताशमहल' की शोभना एक कामकाजी नारी है। उसने दिवाकर के जाने के बाद निशीथ से शादी की। शादी के समय ही उसने निशीथ से कहा था कि बच्चू के बाद वह अन्य दूसरा बच्चा नहीं चाहेगी। कारण विभाजित माँ डायन होती है। निशीथ यदि उसे चाहता है तो वह बच्चू के साथ उसे अपनाए । सौंदर्य और ऊँचे दर्जे की अफसरी पाने के चक्कर में निशीथ ने हाँ भर दी थी। असावधानीवश जब रोनू रह गया तो पिता होने की भावना ने जोर मारा और निशीथ ने उसे गर्भपात करने नहीं दिया। रोनू के आते ही निशीथ में परिवर्तन आ गया। उसकी न लौटने की कसम खाकर गयी माताजी पोते की देखभाल करने चली आयी। न चाहते हुए भी घर बँट गया। रोनू के लिए दादी थी, पिता थे, माँ थी पर बच्चु के लिए सिर्फ उसकी माँ थी। नायिका ने दो प्रसंगो से इसे जाना था। बच्चू बीमार था। उसकी कार्यशाला होने से वह छुट्टी ले नहीं सकती थी। उसने निशीथ को आग्रह किया कि वह छुट्टी ले ले ताकि बच्चू को दवाखाने में दाखिल कर सके। कारण जो कुछ भी वह खाता था उलट जाता था। उसकी हालत बहुत खराब थी। उसकी भाग-दौड देखकर तो माँ जी उसे

---

१. अभी भी- जगदंबाबाबू गाँव आ रहे हैं - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ ३८

हमेशा सलाह देती थी कि नौकरी छोड दे और घर रहकर रोनू को अपना दूध पिलाए और उसकी देखभाल करें। लेकिन नौकरी आसानी से नहीं मिलती इसलिए वह टाल जाती। रोनू के लिए दादी कष्ट उठाती है। मगर बच्चू की बीमारी की अवस्था में भी वे देखभाल करने से कतराती। उसे लगता था निशीथ के साथ शादी कर उसने गलती की। पहले वह बच्चू को सुकुमारी काकी के हवाले कर चली जाती थी। अनुशासित दिनचर्या थी। कोई बाधा व्यवधान नहीं। बच्चू उस समय कितना खुश था। एक रात जब बच्चू डर गया था,उसे चिपटाकर वह सो रही थी। उसे ऐसा महसूस हुआ किसी ने बच्चू को छीन लिया हो। उठकर देखा तो-''अशक्त बच्चू को शक्तिभर उँचे उठा निशीथ ने निर्दयतापूर्वक पलंग पर पटक दिया।''[१] वह पगला गयी थी। उसने निशीथ से जब जवाब माँगा था तब उसने जो कहा उससे उसकी इर्ष्या झलकती थी-''बच्चू मात्र दिवाकर का अंश ही नहीं उसकी शक्ल में तुम प्रतिपल अपने भीतर दिवाकर को ही जी रही हो। दिवाकर तुम्हारे लिए अतीत नहीं अब भी वर्तमान है।''[२] उसके दिमाग में यह बात पक्की बैठी है तभी स्तनों के बीच सिर गडाये दुबका हुआ बच्चू उसे दिवाकर ही नजर आता है। शोभना से यह सब सहा नहीं जाता। रोनू भी उसी की संतान है और बच्चू भी। वह सौतेला व्यवहार कैसे कर सकती थी? उसने यही सलाह निशीथ को दी कि वह शक मन से निकालकर बच्चू को उसी प्रकार प्यार करें जैसे रोनू को करता है। निशीथ जानता है कि यह बच्चू से उस ढंग का प्यार नहीं कर सकता। अत: वह पंचगनी के होस्टेल में उसे भर्ती करने की पेशकश उसके सामने रखता है। शोभना जब उसे समझा-समझाकर हार गयी तब वह दूसरा निर्णय ले लेती है।

उसका ट्रान्सफर शिमला हो गया था। रोनू के लिए वह बार-बार इसे कैन्सल करवाने की कोशिश कर रही थी। ट्रान्सफर के विरोध में लिखा पत्र उसने नौटियाल से माँगा और कहा कि अब वह शिमला जाने के लिए तैयार है और स्वीकार का पत्र लिखवा देती है। दिल्ली रहकर क्या करेगी? रोज की इस खचखच से दूर ही रहना अच्छा। बच्चू की तो उपेक्षा नहीं होगी। कारण बच्चू के लिए वह

---

१. ताशमहल - जगदंबाबाबू गाँव आ रहे हैं - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ ६२
२. ताशमहल - जगदंबाबाबू गाँव आ रहे हैं - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ ६३

अकेली है। रोनू के लिए तो दादी, पिता और माँ है। उसका निर्णय नारी चेतना का प्रतीक है।

३.१.२.६ अनी की सास : (दुलहिन)

'दुलहिन' कहानी की अनी की सास एक ऐसा चरित्र है जो अंधविश्वासों से घिरा हुआ है। संतान की प्राप्ति को जो भगवान का प्रसाद समझती है। इसलिए कथानायक जो छ: संतानों में से सबसे छोटा बेटा है, जिसकी शादी होकर कई वर्ष बित गये हैं। फिर भी अम्मा को गर्भवती बनने में कोई शर्म महसूस नहीं होती। उलटियाँ करने के प्रसंग पर उसका एक बेडौल रूप चित्राजीने हमारे सामने रखा है।'' हमेशा घूँघट में रहनेवाले अंगुल भर खिचडी बाल रिबन बाँधी चुटिया में गर्दन के नीचे झुकने और फिर उपर उठने की प्रक्रिया में उठ बैठ रहे थे।... उनका पेट डबल रोटी सा फूल गया था। वे चलती हुई नहीं लुढकती हुई महसूस होती थी। उसके कद ने उनकी बेडौलियत में रही-सही कमी भी पूरी कर दी थी।''[१] पेट की सफाई करवाने वाली बात को लेकर नायक की माँ और दादी ने पूरा घर सिर पर उठा लिया था। कह दिया था-''पैदा करि रहन है तो इन लढलुमडन कै भरोसे ? जिनके अपनी मेहरियन कै चूतड चाटें से फुरसत नहीं मिलती?''[२] नाऊन काकी तक उनका मजाक उडाती है।

नायक ने ॲबार्शन की बात अपनी बडी जिज्ञी से कहलवा दी थी। उसकी तो अम्मा ने दुर्गति कर ही दी थी। पर नायक को भी कहलवा भेजा था,''उसे इस घर में सीधे-सीधे रहना है तो रहे नहीं तो अपनी मायी(अनी) को लेकर कहीं और ठौर ठिकाणा कर लें।''[३] नायक की दादी मर जाती है तब नायक की माँ को अहसास होता है कि अब उसे दुलहिन बने रहना शोभा नहीं देता। अम्मा ने सास की मृत्युपरांत जो कहा था उससे उसका अभी तक दुलहिन बने रहने के राज का पता चलता है - ''किसी बडे का साया सिर पर होता हैं, आदमी छोटा ही बना रहता है, जिस दिन वह नहीं रहता

१. दुलहिन - ग्यारह लम्बी कहानियाँ - चित्रा मुद्‌गल, पृष्ठ ४७
२. दुलहिन - ग्यारह लम्बी कहानियाँ - चित्रा मुद्‌गल, पृष्ठ ५३
३. दुलहिन - ग्यारह लम्बी कहानियाँ - चित्रा मुद्‌गल, पृष्ठ ५३

उसकी उम्र अपनी लम्बाई ओढ लेती है।... बयालिस साल की दुलहिन आज अम्मा रह गयी है।''[1] जिस समय अबार्शन करने की सलाह छोटू ने उन्हें दी थी तब जिया (माँ की साँस) जिन्दा थी। सास के रहते हुए वह अपने को बूढा गयी महसूस ही नहीं करती। अब समय बदल गया घर में सबसे बडी वही है। काकी, नानी, दादी, जेठानी, सास सभी संबोधन उसके लिए हैं। ऐसे समय - ''जवान जाहील बच्चो के सामने से झुमका फुलाये घूमना बडा भद्दा लगता है।''[2]

अम्मा का चरित्र भले ही बहुतेरे बच्चों के जन्म के कारण दकियानुसी लगे लेकिन अपने घर के वरिष्ठ व्यक्तियों के प्रति उनका आदभाव और उनके स्नेहयुक्त सम्बन्ध उद्घाटित होते है। दादी और अम्मा के बीच इतने प्रगाढ प्रेमपूर्ण सम्बन्ध है कि बूढी हो चली अम्मा ये महसूस नहीं कर पाती कि वे अब मात्र दुलहिन नहीं है कि अब भी गर्भवती रह सके। लेकिन अम्मा जिया के जाते ही एकदम बूढी हो जाती है। उन्हें अपनी उम्र का अहसास हो जाता है।

३.१.३ निम्नवर्गीय स्त्री पात्र

३.१.३.१ फूली – (सुख)

'सुख ' कहानी की नायिका 'फूली' घर की नौकरानी है। ''फूली साँवली, छरहरी, उँचे कद की, अति साधारण से नाक-नक्शवाली युवती थी। सुमंगला के घर काम पर लगने से पूर्व वह टालिगंज में किसी समृद्ध बंगाली परिवार में लगातार तीन वर्ष तक मनोयोग से सेवा टहल कर चुकी थी।''[3] फूली काम-धाम के मामले में चुस्त थी। किस भाँति, कब, क्या चाहती है मालकिन उसे एकाधबार से अधिक नहीं बतलाना पडा। पंछी के बालहट को भी वह सहज रूप से लेती थी। परन्तु बालिका के लिए लायी गयी खाद्य सामग्री को बिना अनुमति के चट कर लेती थी। बिस्कीट, बिकानेरी सेव, मूडी और चीनी, बादाम का हफ्ते भर का कोटा कुछ ही दिनों में खत्म कर देती थी।

---

१. दुलहिन - ग्यारह लम्बी कहानियाँ - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ ५९
२. दुलहिन - ग्यारह लम्बी कहानियाँ - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ ६०
३ सुख - जिनावर - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ ४१

डेढ दो हफ्ते में ही खाने-पीने की खुली छूट ने उसकी देह में मकराहट भर दी । बाद में तो वह सात बजेतक बिस्तर ही नहीं छोडती थी। पूछने पर बताती क्या करें? मच्छरों के कारण नींद नहीं आती। फूली के देर से उठने से सुमंगला को सबेरे की चाय खुद बनानी पडती। नहाने का पानी खुद गर्म करना पडता। पंछी को तैयार करना पडता। विश्वविद्यालय से लौटने पर सुमंगला को उसके लिए अपनी सास की रखी मसहरी निकाल देनी पडी।

फूली कई दिनों तक नहाती नहीं थी। एक गलिच्छ धोती में घुमती थी। निकट से गुजरने पर पसीने की बदबू आती थी। पूछने पर बताती है, तौलिया नहीं है। गमछे को वह तौलिया नहीं मानती थी। उसके लिए पैंतीस रूपये का तौलिया लाना पडा। परन्तु उसने कहा-''हमें तो बॉम्बे डाईंग का तौलिया इस्तेमाल करने की आदत है। इस तौलिये से तो देह छिल जायेगी हमारी।''[1]

कई बार वह अकारण बाल्कनी में खडी होकर नीचे ताका करती थी, कभी खिडकी की जाली से टिकी सामनेवाली इमारत के किसी फ्लैट की ओर अपलक ताका करती थी या परेशान सी होकर टी.वी. के अलग-अलग चैनलों से प्रसारित होनेवाले प्रोग्राम देखा करती थी। शेष पडे कामों को अनदेखा करती थी। सुमंगला उसके चरित्र के बारे में यों टिप्पणी करती है-''फूली की नि:संगता उसे खूरच गयी किस धातू की बनी है आखिर यह औरत दूसरों का मन रखना भी नहीं आता इसे।''[2]

मसहरी पाने पर फूली में परिवर्तन आया। वह पुकारते ही हिरनी सी चौकडी भरती फौरन हाजिर हो जाती। घर की प्रत्येक वस्तु चमचमाती हुई मिलती। साग-सब्जी भी विशेष प्रयास से बनती। सुमंगला को लगा अब वह उसके घर से निकलेगी नहीं। पर यह सिर्फ हफ्ताभर चला। हर नौकरानी के समान फूली थी अपनी संशयी मनोवृत्ती की गृहस्वामिनी का विश्वास प्राप्त कर लेने के लिए किस्से गढ-गढकर सुनाती थी। घाट-घाट का पानी पीकर वह चतुर हो गयी थी।

---

१. सुख - जिनावर - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ ४४
२. सुख - जिनावर - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ ४५

फूली बार-बार कहती थी कि उसकी तबीयत ठीक नहीं है। परन्तु बिस्तर छोडते ही अस्वस्थ फूली को लोटाभर गर्म चाय कंठ में उँडेलते और बासी भात-माछ मजे से मुट्ठी-मुट्ठी गटकते देख विश्वास करना मुश्किल हो जाता कि वह अस्वस्थ हो सकती है।''[1] तीन लोग जितनी रोटीयाँ खाते है। उतनी वह अकेली खा जाती। तीन सौ पगार लेती थी। खाना-पीना, साबुन, तेल सब मिलकर हजार रूपये हो जाता। इस पर भी वह नखरे करती। आईने के सामने चौबीसो घंटे खडी रहती। जरा सी बात कहते ही अपने कपडे लत्ते लेकर बिना पगार लिए वह चली गयी। ऐसे तेवर इस जमाने के नौकर ही दिखा सकता है। सोनाली ने जो उसके न आने का कारण बताया वह था - '' घर में कोई मर्द नहीं।''[2] मर्द रहता तो शायद उसे वह फ्लर्ट करती। शायद शारीरिक संबंधो का आकर्षण बना रहता। खाने-पीने के अतिरिक्त जो भूख होती हैं उसकी पूर्तता होती।

३.१.३.२ बताशा : (स्टेपनी)

'स्टेपनी' कहानी में 'बताशा' नौकरानी के रूप में आभा के घर में कार्यरत है। पडोसियों के शब्दों में उसके रंग-रूप के विषय में टिप्पणी देखिए-''डेढ दो महिने से वह भौंहे नुचवाने लगी है। होंठ रंगने लगी है। धोती उसे अच्छी नहीं लगती। हमारी तुम्हारी तरह गार्डन की साडी पहनकर आती है। सेल से खरीदकर लायी है। किसी के साथ जाकर ...''[3] ''मिसेस खन्ना ने किया उसका वर्णन आभा ने अपनी आँखो से देखा था।'' ''फिरोजी रंग की फ्यूजी शिफान अपने ठिगने, कसे बदन पर चढाए लकदका रही। चेहरे पर उचटी नजर से गौर किया। अरे ! आँखों के उपर रीछ सी चुभनेवाली उसकी सघन भौंहे एकदम विरल तरतीब से नुची हुई थी। गालों के मुंहासों का भी शायद उपाय हो रहा। फुलौरी जैसी नाक पर हल्दी की आभा ने झलक मारी। धुली पुँछी देह ।''[4] सचमुच उस कल्लों परी की शक्ल सूरत बदल गयी थी। दुनिया वाले जो चाहे कहे वह ठीक पौने सात बजे

---

१. सुख - जिनावर - चित्रा मुद्‌गल, पृष्ठ ४७
२. सुख - जिनावर - चित्रा मुद्‌गल, पृष्ठ ५०
३. स्टेपनी - जिनावर - चित्रा मुद्‌गल पृष्ठ ७८
४. स्टेपनी - जिनावर - चित्रा मुद्‌गल, पृष्ठ ८१

दरवाजा खटखटाती थी। सबसे पहले रसोई घर की सफाई करती थी। जब तक आभा की चाय बनती। बताशा आटा गूँथ, सब्जी काट, हाथों-हाथ उसका और विनोद का नाश्ता साथ ले जानेवाले डिब्बे तैयार कर देती थी। आभा के काम पर जाने के बाद घंटे भर में विनोद उससे घर की सफाई आदि करवा लेता है। ऐसे ही समय मिसेस खन्ना दही जमाने के लिए जामिन माँगने आयी थी। काफी देर बाद दरवाजा खुला। उसने आभा को बताया कि बताशा की आँखों में रसाई तृप्ति देखी, अकुलाई अस्त-व्यस्तता देखी। उसी के आधार पर उसका निष्कर्ष था-बताशा विनोद पर डोरे डाल रही है।

बताशा का भी कथन था कि वह भी कामकाजी नारी है। बीबीजी दफ्तर में काम करती है, तो वह घर में, काम तो काम ही है। शक के बीज बोते ही उगने में कितनी देरी लगती है? आभा अब उसके हर काम को ध्यान से देखती है। अलताई रंग की नेलपॉलिश बडी सफाई से लगी हुई है नाखुनों पर लगता नहीं कि किन्हीं अनपढ ने उसे लगाया है। पूरी उठान पर था उसका-श्रृंगार।

विनोद के आते ही बताशा के आरक्त चेहरे पर एक अनोखी चटखाई सुरसुरा आती है। वह उनके लिए गाढी चाय बनाने चली जाती है। यही बताशा पहले विनोद को चाय देने नहीं जाती थी। शरमाती थी। आभा को लगा वह नौकरानी से रानी बनने की चेष्टा कर रही है। आभा को पता है विनोद भी दाना डालने में माहिर है।

बताशा से किसी ने कुछ नहीं पुछा । आभा ने सोचा पहले विनोद को ठीक करें। विनोद ने जैसे ही उसकी बात सुनी उसे फटकारा और बताशा के बारें में जो कुछ बताया उससे उसके चरित्र के पहलू हमारे सामने उजागर होते हैं- यथा- ''बेचारी गौ जैसी औरत ... एक तो मन प्राण से तुम्हारी गृहस्थी संभाल रही ऊपर से बता रही थी बेचारी कि तुम्हारे काम के पीछे वह समय से औरों के यहाँ नहीं पहुँच पा रही सो उसके कई काम छूट गये।''[1] मयूर विहार नें नौकरानियों की कितनी

---

१. स्टेपनी - जिनावर - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ ८३

किल्लत थी। लोग दूसरों की नौकरानियों को बदनाम कर खुद रख देते है। औरतबाजी करने के लिए आज नौकरानियों की कोई जरूरत नहीं। कितने ही फ्लैट में वेश्या व्यवसाय चलता है। किसी को भी पता नहीं चलता।

दूसरे दिन बताशा नहा-धोकर आयी थी। उसकी देह गंध चुगली खा रही थी कि विनोद को वह निश्चित रूप से सुख देती होगी। चाहकर भी आभा उसे निकाल नहीं सकती थी। वह यदि न रहे तो चार बजे उठकर आभा को ही बर्तन कपडे धोने पडेंगे । खाना बनाना, पानी भरना पडेगा। न तो वह नौकरी छोड सकती थी न बिना नौकरानी के सारा काम कर पाती थी। आभा के शब्दों में भले ही वह स्वयं स्टेपनी और बताशा मुख्य चक्का बन गयी हो पर उसके बिना घर चल नहीं सकता कुछ पाने के लिए कुछ खोना पडता है। बताशा एक नौकरानी होकर भी नायिका के लिए महत्वपूर्ण है।

३.१.३.३ कमलाबाई : (केंचुल)

'केंचुल' कहानी की 'कमलाबाई' झोपडपट्टी में कच्ची शराब की भट्टी लगाती है। उसके कई बच्चों में से सिद्धू और सरला जीवित रहे हैं। उसके पति विष्णु की नौकरी तेरह वर्ष पूर्व चली गयी थी। अकेली कमलाबाई घर चला रही थी। भांडी कटका कर वह अपना घर चला नहीं पा रही थी। देह की ताकत ही निचुड गयी थी। तिमैया की अम्मा ने जब उसे यह धंधा सुझाया था तो वह उससे लड पडी थी। परन्तु बाद में उसे लगा था कि तिमैया की अम्मा ठीक कह रही है। कच्ची शराब का ही धन्धा है कोई जिस्म बेचना तो नहीं। यह धन्धा उसका शराबी कबाबी पति कर ही नहीं सकता था। कारण सिर्फ वह पीना जानता था। पेट के लिए जुगाड करना तो कमला का काम था।

कमला की बेटी सरना बानी की दुकान पर गुड लाने जाने से इंकार कर देती है। कारण पूछने पर सरना बताती है कि वह अश्लिल हरकतें करता है। पहले वह इसे सरना की कामचोरी समझ कर पीट देती है, लेकिन बाद में वह बानी से लडने के लिए जाती है ताकि सबके सामने उसकी इज्जत उतार सकें लेकिन रोटी की मजबूरी उसे ऐसा नहीं करने देती। बानी की छिछालेदार कर वह

कहाँ जायेगी? बानी के उस पर कितने उपकार थे। हवलदार को हफ्ता देना हो या घर की छत के कवेलु बदलने हो, वही पैसे देता था। परन्तु उसने उस दिन निश्चय किया कि वह सरना की दारू के धन्धे में मदद नहीं लेगी। न ही उसे बानी की दुकान पर भेजेगी वह उसे साग-भाजी बेचने के लिए भेजेगी। उसने उसे लोकल का पास भी बनवा दिया। माल खरीदने के लिए पंद्रह रूपए टिका दिए। उसने जितना सोचा था उससे आगे निकल गयी सरना। वह दिनभर खटती। सुबह फेरी, शाम को टेशन रोड पर पाटी। अपने लिए कभी एक पैसा भी खर्च नहीं करती थी। एक दिन सरना ने उसके हाथ में एक पॅकेट थमा दिया। पॅकेट खोलते ही कमलाबाई के चेहरे पर जो भाव आए और वह अपने पुराने अतीत में खो गयी उसका अंकन चित्राजी ने बडा ही सुंदर किया है-''डिब्बे मे उसके मन पसंद रंग की नौ वारी (नौ गज) साडी थी। सुनहेल पाड की। साथ में था कत्थई रंग का खन का कपडा। चोली के लिए।[1] बरसों पूर्व उसके प्रेमी नन्दू ने उसे ऐसा ही डिब्बा थमाकर खोली की झिटकनी चढा दी थी। उस समय डिब्बे मे बैजनी फुलोंवाली छह गज की साडी थी। अपने हाथ से पहनाया था। और उसका सब कुछ लूट लिया था। नन्दू उसके पीछे ही पडा था। कहता था वह सिर्फ हाँ कह दें। बाकी मामला वह संभाल देगा। वह उसके तबेले पर ही मिलने जाती थी। उसके पिता को इस बात का पता जब लगा तब उसने और शिब्बू दादा ने उसके साथ वही कहानी दुहराने की सोची थी जो उसकी माँ के साथ घटी थी। कमला की माँ को इन लोगों ने ही घासलेट डालकर जला डाला था। उसे डराया धमकाया गया और उससे बारह वर्ष बडे विष्णु के साथ विवाह करने को मजबूर किया था। कमला ने अपने प्रेमी को बचाया, खुद की जिंदगी बरबाद कर दी। शादी के बाद भी वह नन्दू से मिलती थी। सरना उसी की बेटी है। पर उसने यह बात न किसी को बतायी न विष्णु इस बात को जान पाया। विष्णु जब कभी उसे तंग करता नन्दू सहारा देता। हर मुसीबत झेलने की ताकत उसमें आ जाती। नन्दू की अपने मुलूक में लडाई-झगडे में मरने की खबर जब उसने सुनी, तो उसके मित्र रामसेवक से मिलने गयी तब जिस औरत को उसने देखा और जाना तो वह अपने

---

१. केंचुल - ग्यारह लम्बी कहानियाँ - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ १२१

होश खो बैठी। नन्दू की घरवाली और उसके तीन बच्चे उसके सामने बैठे थे। ''कितना फरेबी था नन्दू। उसकी कसम खाकर कहता तू मिली है तो घर-गृहस्थी करने का जी करता है। तू हाँ भर कर दे। फिर देखना कमला... तेरे को मुलूक भी ले जाऊँगा।''[१]

कमला सोचने लगी। उसके बहकावे में आकर यदि वह ब्याह करती तो उसे सौत को भी संभालना पडता। तब से उसे भैया लोगों पर विश्वास नहीं रहा। एक जोरू मुलूक में रखते हैं और एक बम्बई में फंसाते है। ताकि उनकी वासना दोनों तरफ शमित हो सके। आज रूक्मनी ताई ने जब उसे कहा कि सरना का एक भैया के साथ कुछ गुपचुप चल रहा हैं। तब उसे अपनी पुरानी कहानी दुहराती हुई नजर आने लगी। वह मौका तलाशने लगी कि सरना को रंगे हाथों पकड सके। शक जब मन में बीज बोता है तब हर कार्य एक नया अर्थ देने लगता है। सरना पहले चोटी करती थी। अब वह जुडा बनाने लगी थी। सेवंती या मोगरे का गजरा डालने लगी थी। सलीके से कपडे पहनने लगी थी। घर दस-ग्यारह बजे के पहले नहीं आती थी। रात का खाना भी ठीक ढंग से नहीं खाती थी। कमला को रंगे हाथो पकडने की गुँजाइश सरना ने नहीं दी। उसने साफ कह दिया कि ढेरी नौ बजे उठते ही वह कल्पू के साथ उसकी खोली पर जाती है। 'खोली पर जाती' इन शब्दों से उसे आग लग गयी। उसे अपना जमाना याद आया। वह नन्दू की खोली पर जाती थी तब वहाँ वह उसके साथ क्या बर्ताव करता था, उसे पता था। इसलिए उसका आक्रोश देखिए -''खोली पर जाती क्या... क्या नई करती होयेगी तू? हाँ ... मूँ काला किया न मेरा... बोत तन के चलती न मैं... मिट्टी किया न आबरू... खलास करके सोडेगी उस सआले भैइये के बच्चे को...।''[२] परन्तु कल्पू में उसके नन्दू से भी ज्यादा हिम्मत थी। उसने सीधा उससे पूछा कि वह सरना से ब्याह करना चाहता है। उसने सीधा जवाब दिया दोनों की जात बिरादरी अलग-अलग है। वह घाटी है और कल्पू भैया। रीत-रिवाज सब अलग-अलग है। भैया लोगों की चालाकी वह जानती है। एक मुलूक में एक

१. केंचुल - ग्यारह लम्बी कहानियाँ - चित्रा मुद्‌गल, पृष्ठ १२८
२. केंचुल - ग्यारह लम्बी कहानियाँ - चित्रा मुद्‌गल, पृष्ठ १२६

बम्बई। ऐसी शादी को वह मंजूरी नहीं दे सकती। कल्पू ने बार-बार कहा कि सरना के साथ उसकी पहली शादी होगी। पर कमला को विश्वास नहीं आता क्योंकि नन्दु ने उसे धोखा दिया था। कमला सरना की शादी के लिए इसलिए तैयार हुई क्योंकि सरना ने उसे चुनौती दी। उसने कहा-घाटी और भैया में यह फर्क रहता है कि भैया लोग अपनी औरत को घर पर रखते है। उनसे धन्धा-पानी नहीं करवाते। दूसरी बात न तो वह माँ के जैसी भट्टी लगायेगी। उसके जैसा पियक्कड और जोरू की लात मारनेवाला दुल्हा नहीं करेगी। उसकी बेटी ने जो सच्ची बात उसके मूँह पर कही उससे कमलाबाई के तन बदन में आग लग गयी। चित्रा जी ने प्रतिक्रिया का अंकन देखिए कितना चित्रात्मक किया है - ''हाथ में जो भी आया दनादन पटकने लगी उस पर। अपने पर जैसे काबू ही नहीं रहा। बुरी तरह थरथरा रही थी। मूँह से फेच्कुर बज-बजाने लगा- 'हराम खोर कुत्ती ! मेरे कोच बोल मारती कि मेरे सरखा नौरा नई माँगता। आई कोच ! आँख का पानी मर गया न हलकट ? उस भैइये के पिच्छे।''[1] शब्द ऐसे तीर से थे कि कमला के मारने वाले हाथ निर्जीव होकर झूल गये।

कमला सोचने लगी सरना और कल्पू ने उसे बता दिया। यदि न बताकर भाग जाते तो वह क्या करती? रात के ग्यारह बजे जब सरना लौटी तो कमला को लगा कि कल्पू को दरवाजे से बाहर ही धर-दबोचना चाहिए। इतनी कुट्म्मस करनी चाहिए कि सरना तिलमिलाकर बोमा-बोम कर दे। उसके दिल में अंगार लगाकर कैसी खामोश बैठी है। कल्पू की खोली पर खा-पीकर ऐंठ दिखा रही है। उसने कल्पू को खोली के अंदर बुलाकर जब पूछा कि क्या वह सरना से शादी करना चाहता है? उसकी हाँ सुनते ही उसने उसे कहा-'जल्दी कर शादी देर नहीं मांगता ... भरोसा नई तेरा... कभी मुलूक को चला गया तो? वापस नहीं आएगा तूम ... भैया लोगों का ऐतबार नई मेरे को ... ।''[2] उसकी शब्दावली से भले ही कल्पू और सरना को लगे कि वह पीकर बोल रही है। पर सच तो यह है कि उसका अपना विगत अपनी बेटी के भविष्य को बचाना चाह रहा था। वह अब तक चढाये बैठी

---

१. केंचुल - ग्यारह लम्बी कहानियाँ - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ १३१
२. केंचुल - ग्यारह लम्बी कहानियाँ - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ १३४

केंचुल उतार फेंकती है, केवल सरना के लिए।

३.१.३.४ अंजा : (इस हमाम में)

'इस हमाम में' कहानी की प्रमुख पात्र 'दिवा' होते हुऐ भी अपने कार्य से सबका ध्यान आकर्षित करनेवाली 'अंजा' पाठकों के स्मरण में रहती है। बाई कचरा कहकर वह हरे फ्लैट के सामने जाती है और हर घर का कचरा अपने प्लॅस्टीक के भारी झाबे में उंडेलती है। खाली डिब्बा यथास्थान रखती है। अंजा का रूप-रंग देखिए- 'मुहाँसे भरे साँवले गालों की उभरी गोलाईयों के नीचे कुछ अधिक फटे होठों में वह अर्धपूर्ण मुस्कुराती थी'[१] उसने जब नायिका से सुना कि कचरे का खाली डिब्बा उसके साहब को अपशकुन लगता है तो वह कहती है-'साब इतना सिखेला-पढेला मानुस होकर ये सब बात मानता है क्या?'[२] वह अनपढ होकर इसे मानती नहीं। एक मामूली कचरेवाली ने साहब का मजाक उडाया था। दिवा जानती थी कि उसका पति कितना अंधविश्वासी है।

जब कभी अंजा को पानी पीना होता वह ठंडे पानी की आशा से नायिका के पास ही आती क्योंकि वह अंजा को - 'वोईच बरतन में पानी पिलाता है जिसमें तुम खुद पीता है, नई तो ... अपुन को लोग उसीच कप में पानी पिलाता है, जो कचरे में फेंकनेवाला होता है। समझते है हम इन्सान नहीं मैला है'।[३] जांत-पांत माननेवालो से वह नफरत करती है।

अंजा ने एक बार दिवा से किराये का घर लेने के लिए पैसे माँगे थे। क्योंकि उसका पहला घर असुविधा से भरा था। वहाँ की असुविधाएँ उसी की जुबान से सुनिए - 'पिच्छू जहाँ हम रहता था न, वहाँ पानी का बोत दिक्कत था। बम्बा से पानी भरके लाना पडता था, और संडास?... सुनेगा तो तुम हँसेगा विश्वास नई करेगा -एकदम सुबू उठकर सडक का बाजू में ...'[४] अंजा

---

१. इस हमाम में - इस हमाम में - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ ८४
२. इस हमाम में - इस हमाम में - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ ८५
३. इस हमाम में - इस हमाम में - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ ८९
४. इस हमाम में - इस हमाम में - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ ९०

अशिक्षित होते हुए भी पुरूषों के बारें में अपने विचार स्पष्ट रूप में रखती है। वह पुरूष की सत्ता के अधिन हो तिल-तिल नहीं मरना चाहती। इसलिए अपने दो पति छोडकर अब अपने तीसरे पति के साथ रह रही थी। कारण उसका अपना सिद्धांत था।'' मरद जात कोई-कोई छोड के बोलेंगे तो ... पक्का भडवा होता है। अपनने हिम्मत छोडी के समझो गये उनके खीसे में।''[1] इसलिए उसने मेमसाहब को सलाह दी कि ऑफिस-वाफिस में काम देख लो। दिनभर घर में बैठकर क्या करती हो? परन्तु सोमेश ने जब उसकी नौकरी के लिए मना किया तो उसे अंजा की याद आयी।

दूसरे दिन अंजा ने अपने पहले पति, दूसरे पति और उनके बच्चों की कहानियाँ सुनायी। अंजा न केवल बोल्ड थी अपितु इतनी दुनियादार थी कि हर घर की सच्चाई कचरे के आधार पर जान जाती थी। मिस्टर पंजवानी के बारें में उसने सच्चाई बताई कि यह विदेश जाकर नहीं आया अपितु तीन महीने जेल काटकर आया है। वह बहुत बडा स्मगलर है। चौंतीस नम्बरवाली मेमसाब डांस क्लास नहीं चलाती अपितु छोकरियों से धन्धा करवाती है। हर घर की बात वह कैसे जानती है, पूछने पर उसने बताया कि कचरे के साथ बहुत सारी बाते ये लोग खुद ही बाहर फेंक देते हैं। उसकी बुद्धि की कुशाग्रता पर नायिका का कथन उसके व्यक्तित्व की विशेषता व्यक्त करता है कि ''कैसी आत्मविश्वास से पगी औरत है यह। कितनी तेज बुद्धि, कितने आँधी तूफान झेले मगर छीज-छीजकर भी लडाई लड रही है।''[2] परन्तु लडाई में सैनिक का घायल होना अनिवार्य है। उसके तीसरे मर्द ने जब उस पर हाथ उठाया तो उसने कुछ खा-पी लिया। काफी घंटो तक होश नहीं आया। बूढे की अंजा के चरित्र पर की गई टिप्पणी देखिए-''जिसकी एक के साथ नहीं निभी, दस के साथ क्या निभेगी ! ... फिर आदमी और जगह बदल लेने से जिन्दगी थोडे ही बदल जाती है।''[3] अंजा ने प्रयास किया था, परन्तु थी तो भारतीय नारी। अपनी जिंदगी बदल नहीं सकी।

---

१. इस हमाम में - इस हमाम में - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ ९५
२. इस हमाम में - इस हमाम में - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ ९९
३. इस हमाम में - इस हमाम में - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ ९९

३.१.३.५ लक्ष्मी : 'भूख'

'भूख' कहानी की केन्द्रिय पात्र 'लक्ष्मी' है। लक्ष्मी का पति मिस्त्री था। लेकिन एक दिन काम करते समय पन्द्रहवें माले से गिरकर मर गया। सेठ ने साबित कर दिया कि काम करते समय मिस्त्री पिये हुए था अत: लक्ष्मी को हजार रूपये देकर उसकी मृत्यु की जबाबदारी से मुक्त हो जाता है। तब लक्ष्मी सात महिने की गर्भवती थी।

पहले वह पति के साथ ही काम किया करती थी। जचगी के बाद उसे कोई काम नहीं मिलता। बनिये के यहाँ अनाज चुनने का काम भी उसके तीन बच्चों को देखकर नहीं मिल पाता। यदि वह डिपॉझिट में गहना रखे तो बनिया काम देने का तैयार है। लेकिन 'यदि दागिना होता तो आज वह उससे मजूरी मांगने आती? छैनी-हथोडा न खरीद लेती और गली-गली हाँक लगाती घूमती कि 'टाँकी लगवा लो, टाँकी ।'[१] वह आधी मजुरी पर सडक पर पत्थर कुटने को भी तैयार थी लेकिन वह काम भी नहीं मिलता। वह मेहनती है, काम करनें को तैयार है लेकिन काम ही नहीं मिलता। उसे पता है गाँव लौट जाने पर भी उसे काम नहीं मिल पायेगा । काम न मिलने पर निराशा में वह आत्महत्या करने की बात भी सोच बैठती है। उसकी जिजीविषा उसे हारने नहीं देती। वह आस का साथ नहीं छोडती। अपने निष्पाप बच्चों को केवल मुट्ठी भर भात के लिए वह मौत के मुँह में नहीं ढंकेल सकती।

लक्ष्मी काम पाने के सारे प्रयत्न करती है लेकिन किस्मत उसका साथ नहीं देती। तब कलाबाई उसके सामने प्रस्ताव रखती है कि वह भीख मांगनेवाली औरत को अपना छोटू किराये पर दे दे। सुनकर लक्ष्मी ताव खा जाती है कि ऐसी नीच बात कलाबाई ने सोची कैसे? लेकिन काम न मिलने की हालत में वह अपने द्वंद्व से उबर आती है कि 'अगर वह छोटे को उस औरत को किराये पर उठा दे तो? ... छोटे का तो पेट भरेगा ही भरेगा, दो रूपये जो ऊपर से मिलेंगें उसमें किल्लो भर मोटा चावल आ जायेगा बडे और मंझले के पेट मे भी दाने पड जायेंगे। फिर कौन उसे हमेशा के लिए देना

---

१. भूख - इस हमाम में - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ १२

चाहती है। कुछ ही दिनों की तो बात है।'[1]

छोटू को भिखारन को दिये हफ्ता बीत जाता है। इस दौरान उसके रोने की आदत बढ गयी है। भिखारन रोज अंधेरा होने से पहले ही छोटू और दो रूपये दे जाती है। लक्ष्मी हमेशा शंकित बनी रहती है कि जग्गूबाई किसी पचडे मे न फंस जाये और उसके छोटू को तकलीफ हो। एक दिन खाना खिलाने के लिए जब वह बडे और मंझले का मुँह धुला रही थी कि छोटू ने रो-रो कर घर सिर पर उठा लिया और बैंया-बैंया रेंगते हुए भात की थाली तक पहुँच थाली उलट दी। गुस्से में लक्ष्मी छोटू को थप्पड जड देती है। लेकिन छोटू आँखे उलट देता है। लक्ष्मी घबरा कर अक्का के साथ उसे अस्पताल ले जाती है। ढाई घंटे की जद्दो जहद् के बाद भी डॉक्टर छोटू को नहीं बचा पाते। डाक्टर लक्ष्मी से पूछते है -'बच्चे को खाने को नहीं देती थी क्या ? बच्चा भूख से मर गया। उसकी आंते सूखकर चिपक गयी थी...।'[2]

लक्ष्मी सुनकर बेहोश हो जाती है। उसे भिखारन ने दिखायी दूध की बोतल, बिस्कीट और मरे हुए बच्चे की लाश दिखायी देती है। वह बार-बार बडबडाती है कि उसने कहा था कि बच्चे को बिस्कीट खिलाएगी, दूध पिलाएगी। उसने चाहा था कि वह छोटू को किराये पर देकर छोटू के साथ ही अन्य दोनों बेटों की भूख मिटा सकेगी। उसकी लाचारगी स्तब्ध कर देनेवाली है। लक्ष्मी का चरित्र पाठक को हिला कर रख देता है।

३.२. चित्रा मुद्‌गल की कहानियों के पुरूष पात्र :

३.२.१ मध्यवर्गीय पुरूष पात्र :

३.२.१.१ रवि : (पाली का आदमी)

'रवि' फैक्टरी में काम करता है, जहाँ रात या दिन पाली में काम करना होता है। इसीलिए उसे सोने के लिए मूड बनाने की आवश्यकता नहीं होती। दिन में रात का आलम तैयार करने के लिए

---

१. भूख - इस हमाम में - चित्रा मुद्‌गल, पृष्ठ २१
२. भूख - इस हमाम में - चित्रा मुद्‌गल, पृष्ठ २६

वह पर्दो पर मोटे कत्थई रंग के पर्दे डाल लेता है और सो जाता है। जब वह रात पाली में कार्यरत होता है तब नीरू घर पर होती है और जब वह घर होता है तो नीरू दफ्तर गयी होती है। जैसा शिफ्टों में बंटा उसका कार्यालयीन जीवन है वैसा ही वैवाहिक जीवन भी। वह आत्मसीमित व्यक्ति हैं।

आदमी के ऊँचे उडने की ललक को चित्राजी ने रवि के बचपन की घटना से जोडा है। अम्मा जब कंडे पाथने घर के पिछवाडे जाया करती थीं तब वह तसलों में गोबर भर कर पहुँचाता था और कंडो की मीनार बनाता था। गाँव की परम्परा के अनुसार जल्द ही उसकी शादी भी हो गयी। जब बहन के यहाँ एम.ए. करने जाता है, तब खबर आती है कि वह एक बच्ची का पिता बन गया है। लेकिन गाँव का जीवन उसके सपनों की दुनियाँ से विपरीत था। यही से उसके मन में दरार पड जाती है और वह फिर कभी गाँव लौटकर नहीं जाता। उसकी पत्नी शापग्रस्त अहिल्या-सा जीवन बिताती है। वह अपनी बच्ची का मुँह भी नहीं देखता। उसकी माँ के शब्दों में उसके चरित्र की रेखाएँ अंकित होती है - ''कैसा बाप है? छीन भर दुलरा के भी नहीं देखता।... मया-हया हैं ही नहीं सत्यानासी को।''[1]

लल्ली के ब्याह की तैयारियाँ चल रही थी। तब लल्ली का पत्र आया था। स्नेह से पगा हुआ लेकिन वह जड ही बना रहता है। बहन ने भी लिखा था कि कुछ रूपयों के इंतजाम के साथ ब्याह के कुछ दिन पहले आ जाये। रवि के मन में रूपये भेजने की इच्छा उठती भी है लेकिन वह डर जाता है कि कहीं यूँ ही सिलसिला न शुरू हो जाए। वह इस फर्ज को जबरन थोपा मानता था । उसने नीरू से भी अब तक अपना अतित छिपा कर रखा था। वह सच बताना भी नहीं चाहता था क्योंकि 'मेयबेकर' कंपनी की पैंकिग विभाग में कार्यरत एक लडकी ने इसीलिए आत्महत्या कर ली थी कि उसे बहुत बाद में पता चला कि उसका प्रेमी नाडकर्णी तीन बच्चों का बाप है। वह उसकी बेवफाई नहीं सह पायी। वह सोचता था कि सत्य जान कर यदि नीरू भी कुछ उल्टा-सीधा कर बैठे तो?

---

१. पाली का आदमी - लाक्षागृह - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ २९

वह नीरू और सोनू के बिना जिंदगी की कल्पना भी नहीं कर सकता। अत: लल्ली का पत्र फाडकर सोनू की गुडिया की शादी के लिए छुट्टी ले लेता है।

रवि यांत्रिक युग का चरित्र है, जिसका जीवन भी यंत्रमय हो गया है और उसमें उसकी मानवियता खो गयी है। अपने स्वार्थ से जुडकर केवल स्वत: के सुख के लिए वह गाँव में रह रही पत्नी एवं बच्ची के प्रति अपने दायित्वों को भूलना चाहता है। वह इस यांत्रिक युग का पाली का आदमी है।

३.२.२. बाबूजी : (दशरथ का वनवास)

'दशरथ का वनवास' कहानी के अप्रत्यक्ष नायक 'बाबूजी' है। परन्तु लेखिका ने उनके बाहरी रूप का वर्णन नहीं किया है। पूरी कहानी में बाबूजी के व्यवहार के परिणाम के रूप में उनका चरित्र उपस्थित होता है। केदारसिंह अर्थात बाबूजी अत्यन्त सख्त मिजाज व्यक्ति है। बचपन में नायक रमानाथ को बिच्छु काट खाया था। उसने सोचा था कि उसके कठोर बाबूजी के होश गुम हो जायेगे लेकिन वे उससे यह सत्य जान कर कि सांप ने नहीं बिच्छु ने काटा हैं, 'सुअर ! पक्का स्वांगी है।' कह कर चले जाते है। बाबूजी ने अपनी इकलौती संतान को न कभी महावीरजी का मेला दिखलाया, न रंगीन चश्मा, गुब्बारा दिलाया। एक बार सुबह देर तक सोने के कारण उन्होंने रमानाथ की खटिया ही उलट दी थी। मनौतियों के बाद पैदा हुए पुत्र के प्रति ऐसा बर्बर बर्ताव देख माँ बीच में तन गयी थी तो पिता ने माँ को बेंत से सबके सामने पीटा था। तब रमानाथ ने माँ से कहा था- 'अबकी अगर बाबूजी ने तुम्हारे ऊपर हाथ उठाया तो ठीक नहीं होगा। दहलीज में टंगी उन्हीं की दुनाली उतारकर न उन पर दाग दूँ तो रघुराजसिंह का नाती नहीं।'[1]

आठवीं-नववीं तक पहुँचते-पहुँचते रमानाथ को भी साइकिल लेने की इच्छा जागृत होने लगी। वह घडी भी चाहता था और फुलपैण्ट भी। लेकिन बाबूजी से मांगने का साहस वह कर न

---

१. दशरथ का वनवास - ग्यारह लम्बी कहानियाँ - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ ८५

सका। बाबूजी अपनी साइकिल को किसी को हाथ नहीं लगाने देते थे। एक दिन जब बाबूजी कानपुर जाते है तो अवसर देख रमानाथ साइकिल की सवारी कर आता है। साइकिल पंक्चर हो जाती है। इस घटना पर बाबूजी ने उसे बुरी मारा। 'बेंत की मार ने देह के कई हिस्सों की खाल उधेड दी। दुआरे के बीचों बीच खडे बूढे नीम से उसे बांध दिया गया था।'[१] तब भी बाबूजी के प्रति प्रतिशोध की यही भावना पनपी थी कि वह उन्हें दुनाली से दाग दे।

आगे की पढाई के लिए वह ईश्वर अंकल के पास इलाहाबाद आ जाता है। तब भी बाबूजी कभी उसे खत नहीं लिखते ईश्वर अंकल के पत्रों में उसके लिए एकाध पंक्ति ही होती। उसी में उसके लिए आशिष भेजते। लगता था जैसे उनमें ममता का स्रोत सूख गया था। नौकरी के लिए साक्षात्कार देने जाते समय उसने बाबूजी को आशिर्वाद के लिए खत लिखा था। उसका भी वे जवाब ईश्वर अंकल के खत में ही देते है। साक्षात्कार से लौटता है कि उसे गाँव का बुलावा आ जाता है। माँ सख्त बीमार हैं। माँ के प्राण उसे देखने के लिए अटके रहते है। उसका नाम पुकारते ही माँ स्वर्गवासी हो जाती है। मृत्यू के बाद माँ को जब सजा-धजा कर अरथी पर लेटाया जाता है तो माँ के अब तक अनदेखे सौन्दर्य से अभिभूत हो जाता है। जीते जी रमानाथ ने अपनी माँ को कभी भी इस तरह सजा हुआ नहीं देखा था। पिता के सख्त स्वभाव के कारण माँ का जीवन निरस ही बीता था।

माँ के न रहने पर रमानाथ उनकी इच्छा के विरूद्ध विवाह कर लेता है। दो बच्चों का पिता भी बन जाता है लेकिन कभी गाँव नहीं जाता। पत्नी के आग्रह पर भी नहीं जाता। जब बाबूजी सख्त बीमार हो जाते है तो गाँव से कई खत आते है कि आकर मिल ले- 'बाप का जी है, कहते नहीं तो क्या।'[२] लेकिन वह नहीं जाता। उनकी मृत्यू के बाद के काम में भी वह शामिल नहीं होता। तब ईश्वर अंकल उसे बिल्टी भेजते है। बाबूजी ने उसके लिए साइकिल खरीदी थी वही साइकिल वे

१. दशरथ का वनवास - ग्यारह लम्बी कहानियाँ - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ ८७
२. दशरथ का वनवास - ग्यारह लम्बी कहानियाँ - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ ९४

रेल्वे से भिजवा देते है। वस्तुत: रमानाथ ने अपने पिता से प्रतिशोध लेना चाहा था कि जैसे उसका बचपन उनसे स्नेह पाने को तरसता रहा वैसे ही अब वे भी अपने बेटे-बहू और पोतों के आदर, स्नेह से वंचित रहे। अकेलापन भुगतें। किसी समय दशरथ ने राम को वनवास दिया था। अब इस कहानी में बेटे ने पिता को वनवास दे दिया। लेकिन साइकिल और पिता का पत्र पाकर रमानाथ बाबूजी के हृदय की सही पहचान कर लेता है। वे जितने सख्त, नियमों के पाबंद थे उतने ही भीतर से स्नेहसिक्त थे।

३.२.२. निम्नवर्गीय पुरूष पात्र :

३.२.२.१ मोट्या : (मामला आगे बढेगा अभी)

'मोट्या' पन्द्रहवर्षीय किशोर है जिसके पिता ने दूसरा विवाह कर लिया है। उसकी माँ की दूसरी शादी एक दोहाजू लडके के साथ करवा दी है। दूसरे बाप ने मोट्या को अपने पास नहीं रखा। अत: उसके नाना ने उसे पाला-पोसा है। नाना ने बडी मुश्किल से उसे छटी तक पढाया है। आगे वह कुछ कमा सके इसलिए खानदानी मोची का धंधा सिखाने के उसके प्रयत्न बेकार हो जाते है। क्योंकि मोट्या को न मोची का काम पसंद है और न ही बरतन-कपडे धोने का औरतोंवाला काम पसंद है। डिब्बे-बोतल आदि खरीदने-बेचने का भी धंधा वह नहीं कर सका। तब बुढे मोची ने तावडे वाचमैन की सहायता से उसे सक्सेना साहब के यहां कार धोने के काम पर लगवा दिया।

मोट्या ने अपने काम से जल्दी ही मेमसाहब के दिल में जगह बना थी। साहब के दफ्तर जाते ही वह मेमसाहब के सारे काम करता था। जैसे 'सिगरेट खत्म हो गई तो ला देना। बियर के क्रेट लाना और फटाफट बोतलों को ठिकाने लगाना। 'नीलम' से सींक कबाब या 'फिश रोल्स' ले आना। लिकिंग रोड जाकर ब्यूटी आर्ट में मेम साब के कपडे धोने के लिए डाल आना आदि।'[१] मोट्या मेमसाहब का सम्मान ही नहीं करता बल्कि उनके प्रति विशेष लगाव भी उसमें पैदा हो जाता

---

१. मामला आगे बढेगा अभी - लाक्षागृह - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ १६

है। तभी तो वह उन्हे मम्मी कहने की छुट लेने लगता हैं और साहब की रखैल की गाडी के इंजन में किलो भर शक्कर डाल देने की बात करता है। बडे लोगों के चोचलों से ना वाकिफ इस उम्र में तो कई छोकरे पक्की मिट्टी-से पक जाते है।'[१] मोट्या की अनुभव हीनता के कारण ही बीमारी में काम पर न आने पर खाडा कट जाने पर उसे दु:ख होता है। लेकिन मेम साब पर उसकी आस्था बहुत दिनों तक बनी रहती हैं लेकिन जब साहब उसे झापड मार कर धक्के दे कर निकाल देते है तो उसका क्रोध फूट पडता है। वह साहब की गाडी को पीट-पीट कर डिब्बा बना देता है।

मोट्या के क्रोध को चित्राजी ने इन शब्दों में व्यक्त किया है- 'धक्का दे के निकाला न मेरे कू दरवाजे से? काय को? पूरा पैसा मांगा न इसी वास्ते ?... काट, बोलना अबी अच्छा तरीके से खाडा काट ... देखता ... मैं... बरोबर देखता ... भौत धांधलसैन किया ... अब्बी सिद्धा होयेगा वो ...।'[२] लेकिन उसका क्रोध नपुंसक हैं। वह साहब से ज्यादा मेमसाहब से छला जाता है। जिन्होंने उसकी ममता की प्यास पहचान कर स्नेह करने का नाटक किया लेकिन कभी मदद नहीं की। जब शोर सुनकर मेमसाहब नीचे आती है मोट्या पूरे आवेश में है- 'हँाफते हुए मोट्या ने सरियेवाला हाथ लगभग पूरी ताकत से आक्रामक मुद्रा में तान लिया। ... उसका चेहरा ... पानी से लथपथ थर्रा रहा था। बल्कि पूरा शरीर ही पत्ते की तरह कांप रहा था।[३] लेकिन मेमसाहब के आगे बढकर सरिया ले लेने पर वह घुटनों में मूँह छिपा रो पडता हैं। उस पर भीड टूट पडती हैं। तब लगता है जैसे चित्रा जी मोट्या के साथ न्याय नहीं कर पायी। मामला आगे बढकर भी मोट्या के नपुंसक क्रोध के कारण आगे नहीं बढ पाता। फिर भी मोट्या आकर्षित करता है।

३.२.२.२ छंटकिया : (बेईमान)

'बेईमान' कहानी का चार फुटिया 'छंटकिया' गाँव से भागकर आया है। माँ की मृत्यू के पश्चात मामी उसे अपने साथ ले गयी थी लेकिन दिन भर जानवरों की देखभाल करने पर भी उसे

---

१. मामला आगे बढेगा अभी - लाक्षागृह - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ २०
२. मामला आगे बढेगा अभी - लाक्षागृह - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ १०
३. मामला आगे बढेगा अभी - लाक्षागृह - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ २३

भर पेट भोजन नहीं मिलता था। गाँव से आने पर प्लेटफार्म पर बुकस्टॉल वाले बाबू भाई ने ही उसे पनाह दी थी। वह उन्हीं के बुक-स्टॉल के नीचे सोता था। बाबू भाई को बीस पैसे कमीशन पर भला कोई और लडका पत्रिका बेचने के लिए कहाँ मिलता? और छटंकिया को केवल बाबू भाई का ही सहारा था।

छटंकिया अनपढ हैं। बाबू भाई के बुक स्टॉल से पत्र-पत्रिकाएँ ले कर वह रेल में बेचता है। पत्रिकाओं को वह पढकर नहीं जान पाता। पत्रिकाओं पर छपी तस्वीरों से ही वह पत्रिकाओं को वह पहचानता है जैसे - राजीव गांधी की तस्वीर वाली है 'नई इंडिया टुडे' ! बिकनी पहने खडी हुई डिम्पल के तस्वीर वाली है 'स्टारडस्ट' ![1] छटंकिया के बाल मन पर डिम्पल को गदराये उरोजों की तस्वीर का बडा प्रभाव पडता है। लेकिन यह प्रभाव उस तस्वीर के सौन्दर्य का नहीं है। उसे वह तस्वीर इसलिए प्रभावित करती है क्योंकि उसकी अम्मा के वक्ष ऐसे दूध भरे नहीं थे। बचपन में माँ का खूब दूध न पी पाने की अधुरी इच्छा ही इससे झलकती है।

छटंकिया की 'चार फुटी कृशकाया ! उपर से दस किलों के लगभग पत्रिकाओं का बोझ लादे हुए उसके सुन्न पडते बाजू फेरी पूरी होते न होते कंधो से अलग होने लगते।'[2] लेकिन वह झुनझुना रही कोहनियों को झटके देकर राहत पाता रेल्वे में घूम-घूम कर पत्रिकाएँ बेचता है। टिकट चेकर अक्सर उसे 'बाप की गाडी है क्या' का ठेना देते हुए उसकी पत्रिकाओं के ढेर से एकाध पत्रिका उठा लेता है जिसके दाम उसे ही चुकाने पडते है। अनुभव से वह यह भी समझने लगा है कि महिलाएँ स्वास्थ्य सम्बन्धी तो पुरूष समाचार पत्रिकाओं में रूचि रखते है। युवकों को उत्तेजित करनेवाले चित्रों की पत्रिकाएँ पसंद आती है और यह भी कि 'बासी अखबार लम्बी यात्रा की उबन नहीं ढो पाते।'[3]

---

१. बेईमान - जगदंबाबाबू गाँव आ रहे है - चित्रा मुद्‌गल, पृष्ठ ८३
२. बेईमान- जगदंबाबाबू गाँव आ रहे है - चित्रा मुद्‌गल, पृष्ठ ८३
३. बेईमान- जगदंबाबाबू गाँव आ रहे है - चित्रा मुद्‌गल, पृष्ठ ८२

छटंकिया को ठंडी गाडी बहुत पसंद है। उसके लिए ठंडी गाडी का डिब्बा 'सुरगलोक' है और इस गाडी के यात्री भी दूसरे लोक के वासी हैं। जो बडे ही साफ-सुथरे, सौम्य और शांत है। दूसरी गाडीयों में उसे जरा अच्छा नहीं लगता वह मन ही मन सोचता है कि 'सरकार सारी ही गाडियों को ठंडी गाडी में क्यों नहीं तब्दील कर देती ? गाडियों के बदलते ही शर्तिया सवारियों के चेहरे बदल जायेंगे, फिर उसे भूखे भुतहे चेहरों के बीच डोल-डोलकर पत्रिकाएँ बेचने की विवशता से मुक्ति मिल जायेगी। सूखे चेहरे पत्रिकाएँ देखते अधिक है, खरीदते कम।'[१] लेकिन इन ठंडी गाडियों की सवारियों से ही छटंकिया बेईमानी सीखता है। भद्र दिखने वाली महिला उससे पत्रिका लेकर भी पैसे देते वक्त इन्कार कर देती है। यह कह कर कि ये पत्रिकाएँ वह घर से लाई है। ऐसे-पढे लिखे व्यक्तियों से ही वह बेईमानी करना जान जाता है। एक दिन एक बूढे द्वारा पत्रिका खरीदे जाने पर पचास की नोट का छुट्टा लाने के बहाने वह उसके पचास रूपये लेकर प्लेटफार्म पर ही छुप जाता हैं और ट्रेन चली जाती है।

अब तक सवारियों की चालाखी की वजह से वह अपनी मेहनत की कमाई से पत्रिकाओं के पैसे भरता रहा था और बक्कल वाली निकर पाने का सपना कभी सच में नहीं बदल पा रहा था। लेकिन बेईमानी सीख कर वह भी अपने सपने साकार करना सीख जाता है। चित्राजी ने छटंकिया के माध्यम से ऐसे कई मेहनतकश लडकों की वेदना को प्रस्तुत किया है, जो सभ्य कहलाने वालों से अनेक बुरी आदतें सीख जाते है। छटंकिया यह सवाल पाठकों को आत्मपरिक्षण करने के लिए बाध्य करता है कि पढे-लिखे लोग ऐसे होते है? 'अम्मा उसे ऐसा ही पढा-लिखा बनाने का सपना देख रही थी।'[२] छटंकिया का चरित्र पाठकों के सामने यह बात उजागर करता है कि बालमन कोरी स्लेट-सा होता है यह समाज ही उसे अच्छा या बुरा बनाता है।

---

१. बेईमान- जगदंबाबाबू गाँव आ रहे है - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ ८१-८२
२. बेईमान- जगदंबाबाबू गाँव आ रहे है - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ ८९

३.२.२.३ बंडू : ('त्रिशंकु')

'त्रिशंकु' कहानी का केन्द्रिय पात्र 'बंडू' है। माँ उसे पढाना चाहती है ताकि वह बडा आदमी बन सके लेकिन बंडू जानता है कि पढे लिखे व्यक्ति से धंधा करनेवाला व्यक्ति कहीं ज्यादा कमाता है। वह अपनी माँ को पिता से पिटता नहीं देख सकता लेकिन वह अपनी माँ को पिता की मार से नहीं बचा पाता क्योकिं वह बहुत छोटा है। वह चाहता है रफिक के समान वह भी धंधा करे- 'फेरी करेगा केले की या फिर कंघे, शीशे, आलपिन्स बेचेगा, लोकल ट्रेन्स में।... माँ चार घर भांडी घिसती है, उसे एकदम छुडाकर बिठा देगा।'[१] लेकिन माँ उसे धंधे के लिए पैसे ही नहीं देती। मजबूरन वह सरकारी राशन की दूकान के सामने हमाली करने के लिए खडा हो जाता है। दिन भर की हमाली के बाद केवल तीन रूपये इकट्ठे कर पाता है। लेकिन श्रम की आदत न होने से उसका पूरा शरीर पके फोडे सा दर्द देने लगता है।

अपने मित्र रफीक से जब काम के लिए बात करता है तो वह ब्लेक में सिनेमा के टिकट बेचने का धंदा बताता है । शुरु में वह घबराता है लेकिन बाद में तैयार हो जाता है। धंधे के पहले ही दिन वह इस धंधे के प्रतिस्पर्धियों से पीट जाता है । उससे उसकी रेजगारी और टिकट छीन लिये जाते है।बात गैंग लीडर तक पहुँचती है। रफीक बंडू को लीडर से मिलवा कर उनकी दोस्ती करवाता है । वह धंधे में खूब कमाने लगता है। लेकिन एक दिन पुलिस द्वारा पकडा जाता है और उसे जेल की हवा खानी पडती है। चित्रा जी ने संगठीत अपराध जगत का और उसमें फंसते जाते किशोर बंडू का अत्यन्त यथार्थ चित्रण किया है।

बंडू वास्तव में नेक काम करना चाहता था, वह मेहनत से रोजी रोटी कमाना चाहता था। लेकिन उसकी विवशता उसे ब्लेक में टिकट बेचने का धंधा करने पर बाध्य करती है। जेल में उसका परिचय कादिर से होता है जिसकी कहानी सुन वह भी ठान लेता है कि अपने बदचलन बाप को वह भी सजा देगा। लेकिन जब वह जेल से छुट कर आता है तो पाता है कि पिता तो रखेल के साथ रहता

---

१. त्रिशंकु - लाक्षागृह - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ ३९

ही था, माँ ने भी दुसरा ब्याह कर लिया है तो वह जड हो जाता है। उसकी अवस्था त्रिशंकु सी हो जाती है। बंडू का चरित्र पाठकों की सहानुभूती अर्जित करता है। परिस्थितीयों के जाल मे फंसा बाल-मजदूर बंडू निम्नवर्ग की आर्थिक आवश्यकताओं को तो उजागर करता ही है साथ ही मजबूर लोगों को अपने जाल में फांसने वाले अपराध जगत को भी बताता है।

३.२.२.४.राम खिलावन : (ब्लैड)

'ब्लैड' कहानी का नायक रामखिलावन एक अधिकारी का ड्राइव्हर है। उसकी औकात कौडी भर भी नहीं है। 'घर में नगदी कमाने वाला अकेला वह। ऊसर - बंजर मिला कर कुल जमा पाँच बिघहा खेत तिस पर खाने वाले बडे भैया और उनकी पहली - दुसरी, छाती पर सिल सी धरी मँझली रांड भौजी और उनके अभागे तीन मोडा-मोडी,खटिया पोंकती अम्मा और घुघुनू समेत अपनी जगधरी।'[१] परिवार की आवश्यकताओं के लिए वह अक्सर साहब से एडव्हॉन्स मांग लिया करता है। उसके अडव्हॉन्स मांगने पर अक्सर साहब को लगता है वह झूठे बहाने गढ रहा है । वेतन के अतिरिक्त वह लगभग चार सौ रुपये अधिक ले चुका है।

राम खिलावन के पास घर से चिठ्ठी आयी है कि बटेसुर बाबा की मानता के बाद जन्मी उनकी इकलौती बेटी घुघुनू की टांग टूट गयी है। डॉक्टर ने प्लास्टर चढाने को कहा है अत: पैसों का शीघ्र इंतजाम कर भेज दे। खबर आने के बाद से ही उसका ध्यान अपने काम से उचट गया है। लेकिन वह साहब से फिर से एडवांस मांगने का साहस भी नहीं जुटा पा रहा। हिम्मत करके जब वह साहब से रूपयों की बात करता है तो साहब अपनी गरजों की बात बताकर मदद से इन्कार कर देते है और उसे ही सुझाव देने लगते है कि पगार होने में कम ही दिन रह गये है। तब तक किसी से मांग कर काम चला ले। रामखिलावन भी जानता है-'जब साहब सुझाव पर सुझाव देने लगे तो समझ लो उन्होंने गैंडे की खाल ओढ ली है। अब वह चाहे जितना रो- गिडगिडा ले, उन पर किसी बात का

---

१. ब्लेड - इस हमाम में - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ ६६

कोई असर नहीं होनेवाला।'[१]

रामखिलावन एक सीधा आदमी है। जब जमाल ने उसे अपनी सूखी रोटी तर करने का फार्मूला बताया था तो 'वह भडक गया था-तुम हमें हेरा-फेरी सिखा रहे हो भैया?'[२] लेकिन अब जब उसकी आवश्यकता उसके सामने मुँह फैलाए खडी है तो वह अपनी नेक नियती नहीं संभाल पा रहा। चित्रा जी के पात्रों की यह एक विशेषता है कि उनमें विवेक जागृत है। इसीलिए उनमें अन्तर्द्वंद्व चलता है। रामखिलावन भी इसी द्वंद्व में उलझा है- 'यह चोरी है... बेईमानी है... क्यों, चोरी कैसे ? ... जिसमे से वह हिस्सा मांगने जा रहा है वह रकम तो साहब ने सोच समझ कर स्वयं ही सरदारजी को देनी स्वीकार की है ... साहब सीटें बनवाने के लिए पैसे खर्च कर सकते हैं तुम्हारी घुघुनू की टांग टूटी रहे तो टूटी रहे...'[३] और वह सरदारजी से सीट बनवाई में से ढाई-सौ के कमीशन पर बात तय कर आता है और दूसरे दिन कमजोर सिलाईवाले हिस्सों पर स्वयं ही ब्लैड चला देता है।

आर्थिक विषमता को व्यक्त करता रामखिलावन जीवन संघर्ष में जीने के फार्मूले सीख ही जाता है। रामखिलावन निम्नवर्ग की आर्थिक विवशताओं को चित्रित करता है। जो चाह कर भी अपनी अच्छाईयों को बनाए नहीं रख पाते और हेरा-फेरी करना सीख लेते है।

३.२.२.५ असलम मियाँ : (जिनावर)

'जिनावर' कहानी का 'असलम' अपने पशु प्रेम के कारण पाठकों के दिलो-दिमाग पर छा जाता है। अपनी रोजी-रोटी के साधन तांगे को खींचने वाली घोडी सरवरी के प्रति असलम मियाँ की जो भावनाएँ है वो उसके भीतर की मानवियता के दर्शन कराते है। असलम मियाँ की घोडी बूढी हो चली है और ग्लेन्डरासन धोक्या नामक बीमारी से ग्रस्त है। असलम मियाँ की हर पल यही कोशिश होती है कि वे सरवरी को बचा सकें। उससे उनका स्नेह होना स्वाभाविक भी है क्योंकि- 'आँखे

---

१. ब्लेड - इस हमाम में - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ ६९
२. ब्लेड - इस हमाम में - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ ७१
३. ब्लेड - इस हमाम में - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ ७३

खोलते ही तांगा देखा। लोरी की जगह घोड़ों की हिनहिनाहट सुनी। उन्हीं की टाँगो के बीच गुल्ली-डंडा खेला, लीद से लफोंदी जमीन पर फिरकियाँ नचाई। अब्बा तांगा चलाते थे। अब्बा के अब्बू तांगा चलाते थे।'[१] नौचन्दी के मेले से खरीदी सरवरी से असलम मियाँ को बहुत लगाव था क्योंकि उसने सुख और दुख के समय उनके साथ काटे है।

सरवरी की तिमारदारी के लिए असलम ने नीम-हकीम, झाड-फूँक, गण्डे-ताबीज और डाक्टरों के यहाँ तक की खाक छान मारी। अपनी दूसरी बीबी की झाँझ बेचकर डॉक्टर की फीस भरी लेकिन रोग बहुत बढ गया था अत: उसकी हालत में कोई सुधार नहीं हुआ। लेकिन बीमारी की हालत में भी असलम को सरवरी को तांगे में जोतना पडता है क्योंकि घर में फाँके चल रहे है। सरवरी की डूबती हालत होते हुए भी वह सवारियाँ ले जाता है। पहली सवारियाँ उतारता है तब तक दूसरी सवारियाँ मिल जाती है। लेकिन असलम का मन डांवाडोल है- 'सब्र से काम लो। जितनी दिहाडी बन पडी है उसी पर संतोष करो। ... उसकी आँखो में एक बार फिर देखा उसने। नजर घूम गई उसकी। दिल दहल उठा। कैसी नजरों से देख रही है? लगता है तबियत अधिक बिगड रही हैं सरवरी की। आंखे पानी भरी कटोरी में तैर रही जैसे।'[२] लेकिन मजबूरी में उसे सवारियाँ बैठानी पडती है। सवारी उतार जब अकेला ही घर की ओर लौट रहा होता है तो वह सरवरी के बारे में ही निरंतर सोचता है।

तभी वह सोचता कि यदि वह अपनी सरवरी को बचा नहीं सकता तो कम से कम उसकी कीमत तो वसूल कर ही सकता है और वह बीच रास्ते में तांगा ले आता है। सामने से आ रही एक कार से सरवरी टकरा कर ढेर हो जाती है। वह जोर-जोर से रोने लगता है। लडकी ने अभी-अभी कार चलाना सीखा था। वह घबरा जाती है। बात थाने तक पहुँचती है। थानेदार लडकी के पिता को बुला लेता है। कोर्ट-कचहरी के चक्कर से बचने के लिए और बदनामी के भय से लडकी के पिता

---

१. जिनावर - जिनावर- चित्रा मुद्गल, पृष्ठ ५५
२. जिनावर - जिनावर - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ ५६

असलम से समझौता कर लेना चाहते है। थानेदार की कोशिश से बात दो हजार पर तय हो जाती है। वह पैसे ले घर लौट आता है।

घर आ कर वह रात में बहुत जोर-जोर से रोने लगता है। चित्राजी ने असलम के मन के अपराध बोध को इन शब्दों में अंकित किया है-'नहीं वह जुदा नहीं हुई ... उसके जुदा होने से पहले ही मैने मार दिया। ... मैने उसकी मौत से सौदा कर लिया बीबी !... जान बुझकर उसे गाडी से भेड दिया। ... यही सोचकर, अपनी मौत तो वह मरेगी ही आगे-पीछे किसी गाडी से भेड दूँगा तो मरते-मरते वह अपनी कीमत अदा करती जायेगी। ... ये नोट नोट नहीं है ... मेरी सरवरी की बोटियाँ है।'[१] असलम मियाँ एक ओर तो परिवार का सदस्य बन गयी सरवरी से असीम स्नेह करते है। दूसरी ओर आर्थिक स्थिती इतनी खराब है कि उसे न तो खिला सकते है न ईलाज करवा सकते है। मजबूरन वह दुर्घटना में मरवाकर मुआवजा वसूल कर लेता है। लेकिन उनकी अंतरात्मा उसे धिक्कारती रहती है। असलम की आर्थिक मजबूरी उसे अमानवीय ढंग से सरवरी की हत्या का पाप करवा देती है। उसका पशु-प्रेम और उसकी आर्थिक डगमगाती स्थिती पाठक को सोचने के लिए बाध्य करती है? चित्राजी की कहानियों के पात्र संघर्षशील, जुझारू पात्र हैं। उनकी कहानियों के पात्र परिचित भावभूमि के सच्चे पात्र हैं। उनके पात्रों की संघर्ष करने की वृत्ति, समाज में घटित होनेंवाली घटनाओं पर प्रतिक्रिया व्यक्त करने की समझ, जीने की उद्दाम लालसा उन्हें पाठकों के निकट ला देती हैं।

४. चरित्र चित्रण के साधन :

कहानीकार वर्णन, संकेत, कथोपकथन, घटना, अन्तर्द्वन्द आदि साधनों के प्रयोग से चरित्र को प्रस्तुत करता हैं। चित्राजी ने इन्हीं साधनो से अपने पात्रों को प्रस्तुत किया हैं। इनका विवेचन निम्नांकित प्रकार से करने का यत्न किया हैं-

---

१. जिनावर - जिनावर - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ ६५

४.१ वर्णन :

पात्रों के चरित्र को उद्‌घाटित करने के लिए लेखक स्वंय या अन्य कोई पात्र किसी पात्र का वर्णन करता है। यह चरित्र चित्रण का सर्वाधिक प्रयुक्त होने वाला साधन है। चित्रा जी ने इस साधन का यथोचित प्रयोग किया है। अपनी कहानी 'जगदंबाबाबू गाँव आ रहे है' में सुमेर सिंह के रोबीले व्यक्तित्व का वर्णन इस प्रकार वर्णित किया है - ''बलिष्ठ सुदीर्घ कायावाले ठाकुर सुमेर सिंह बैसवाडा के प्रतिष्ठित ठाकुरों में से हैं। पक्की चार गोंईवाले। लेकिंन अब न वह तालुकेदारी रही, न वह शानो-शौकत। फिर भी हाथी मरा तो सवा लाखवाला दबदबा जवार में कायम हैं। पिछले वर्ष तक वे लगातार गाँव के प्रधान चुने जाते रहे हैं। इस साल जनता पार्टी के पंडित भुवनेश्वर बाजपेयी से मात खा गये। अब बीस बिसुआई पेंठ और बैसवाडी ठकुराई में गले-गले तक ठनी हुई हैं, मजाल है कि ठाकुर सुमेरसिंह की मूछों की तुर्राहट कहीं से भी ढीली नजर आ जाये। गाँव की प्रधानी हाथ से सरकी तो सरकी, युवा कांग्रेस के पिछडे वर्ग के प्रातींय सचिव तो वे हैं ही।''[१] 'बावजूद इसके' के गोयल की अमानुषिकता उसके शालीन व्यवहार के कारण कभी लोगों को नजर नहीं आती। उसके इस दोगले व्यक्तित्व को चित्रा जी ने इन शब्दों मे वर्णित किया हैं-''गोयल की ओढी हुई शालीनता हमेशा उसके सम्पर्क में आनेवालों को अभिभूत कर लेती। उसके मैनेरिज़्म इस तरह वशीकरण फेंकते कि कोई उसकी भीतरी तहों की कंटीली फेसिंग से न तो टकरा पाता, न उसके अहंकारी स्वभाव से उसका साक्षात्कार हो पाता। वास्ता बहुत ऊपरी पडता, धारणा भी उसी पर खडी हो जाती हैं।[२] ''बंद' कहानी के 'मेनका' के मालिक थे अधेड उम्र मल्होत्रा साहब। मल्होत्रा साहब किसी जमाने में फिल्मों में नायक बनने आये थे। एकाध फिल्मों में खलनायकी का काम मिला भी पर सम्पादन में वह भी कट गया। नतीजतन कभी निर्माता बनें तो कभी निर्देशक। मगर इनमें से दुर्भाग्यवश कोई भी फिल्म पूरी नहीं हो पायी। अन्त में उन्होंने 'मेनका' निकालने का निश्चिय किया

---

१. जगदंबाबाबू गाँव आ रहे हैं - जगदंबाबाबू गाँव आ रहे है - चित्रा मुद्‌गल, पृष्ठ ४०
२. बावजूद इसके - ग्यारह लम्बी कहानियाँ - चित्रा मुद्‌गल, पृष्ठ १३६

और पिछले आठ-दस सालों से वे 'मेनका' निकाल रहे है।'[1] 'ब्लेड' कहानी के रामखिलावन की भोली-भाली, नन्ही सी बिटिया का ममताभरा वर्णन चित्राजी ऐसे करती हैं-'उसकी बिटिया घुघुनू ... राजकुमारी चन्द्रावल ! कडवे तेल से तर भूरे घुंघराले बालों में उलझा हुआ गन्दुमी गोल चेहरा... दिप्-दिप् करती गोल चमकीली आँखें... मिन-मिन करती हुई लडियायी बोली-'बापू-बापू जे दिल्ली तें हमऊँ मैक्सी लेंगे... अबकी हमाये लिये लेत आइयो ...।'[2] इस प्रकार वर्णन के माध्यम से चित्राजी ने अपने पात्रों को उनकी विशिष्टता के साथ उपस्थित किया है।

४.२ अंतर्द्वन्द्व :

पात्र के मन में चलने वाला द्वन्द्व भी पात्र के चरित्र को उद्‌घाटित करता हैं। यह अंतर्द्वन्द्व पात्र के व्यक्तित्व को, उसकी भावनाओं, विचारधारा को अभिव्यक्त करता हैं। उसके भीतर का यह द्वन्द्व ही उसकी आगे की गतिविधियाँ निर्धारित करती हैं। हर व्यक्ति परिस्थितियों से प्रभावित होता हैं। एक ही परिस्थिती या परिवेश अलग-अलग व्यक्तियों पर अलग-अलग ढंग से प्रभाव डालती हैं, इसीलिए हरेक का व्यक्तित्व अलग प्रकार का दिखाई देता हैं।

मनुष्य के जीवन का महत्वपूर्ण अंग द्वन्द्व चित्रा जी के पात्रों में दिखायी देता है। 'अनुबन्ध' के नायक का द्वन्द्व कहानी में बहुत अच्छे से उभरा है। दो-तीन कलात्मक फिल्में बनानें के बाद भी वह बेकार है। बेकारी के बावजूद भी वह अशोक'दा के सहायक का काम करना नहीं चाहता। अपनी कमजोर आर्थिक स्थिती के बाद भी उसे यह प्रस्ताव उसका अपमान लगता है-'वह वाकई बेकारी झेलने की स्थिति में कहाँ है? यह कौन सी लडाई है जो वह लड रहा है ? क्यों ! किसलिए ?[3] वह तो दुग्गल की मंशा पर भी शक करने लगता है- 'दुग्गल, अशोक'दा के प्रस्ताव को निरन्तर उसके इर्द-गिर्द सुरक्षा कवच-सा बुन रहा है। क्यो न बुने? वह तो चाहता ही होगा।

---

१. बंद - ग्यारह लम्बी कहानियाँ - चित्रा मुद्‌गल, पृष्ठ १८०
२. ब्लेड - इस हमाम में - चित्रा मुद्‌गल, पृष्ठ ६०
३. अनुबन्ध - ग्यारह लम्बी कहानियाँ - चित्रा मुद्‌गल, पृष्ठ १६

उसकी बिरादरी का बन्दा बन जाए वह ।'[१] लेकिन फिर अपनी ही सोच से वितुष्ट हो जाता हैं- 'दुग्गल तिकडमी जरूर हैं, स्वार्थी भी हैं पर छोटा आदमी कतई नहीं हैं।... दूसरा कोई मुख्य सहायक होता तो मौका देना, दिलवाना तो दूर, अपने लिए खतरा महसूस कर प्रोजेक्ट में घुसने भी न देता और वह हैं कि ... '[२] नायक का यह मानसिक संघर्ष उसके मित्र की मित्रता को तोलते हुए उसके विवेक को जागृत रखता हैं और उसके व्यक्तित्व को उभारता हैं।

चित्रा जी के पात्र अपने अंतर्द्वन्द्व से गुजरते हुए जीवन को बेहतर ढंग से जीने का यत्न करते है लेकिन कभी-कभी वे स्वार्थी भी हो जाते हैं-'वह जीना चाहता है, किन्तु पग-पग पर आने वाले संकटों और खोखले मूल्यों के बीच भयातुर हो डगमगाने लगता है और साथ ही अपने जीने के लिए वह इतना अधिक मचल उठता हैं कि वह अपने को दूसरों के साथ जोडने का ख्याल ही भूल जाता हैं।'[३] फिर चाहे वह 'अनुबन्ध' का नायक हो या 'पेशा' का 'प्रणव'। उचित-अनुचित के अन्तर संघर्ष के बाद भी वे अपने लिए जीने का मोह नहीं टाल पाते।

चित्रा मुद्गल के कुछ पात्र अशिक्षा, गरीबी में जकडे हुए हैं लेकिन उनमें अदम्य जिजीविषा हैं। यह गरीबी ही है जिसने उन्हें एक-दूसरे से जोड रखा हैं। लक्ष्मी की नाजुक आर्थिक परिस्थिति को देखकर सावित्री उसकी मदद के लिए दौडी आती हैं। सावित्री अक्का लक्ष्मी के बुरे दिनों को अपनी आँखों से देख रही हैं और उसकी हर तरह से मदद करना चाहती हैं। वह चाहती है कि लक्ष्मी अपने सबसे छोटे बच्चे को भीख मांगने वाली औरत को किराये पर दे ताकि सबके पेट में दो-चार दाने जा सकें। यद्यपि वह स्वंय भी पहले पहल कलाबाई का यह प्रस्ताव सुन कर विचारमग्र हो गई थी कि 'कोई अपने कलेजे के टुकडों को भीख मांगने वाली औरत को किराये पर कैसे दे सकता हैं ? ऐसी गलीज हरकत से तो डूब मरना अच्छा । ... पूरी रात वो करवटें बदलतें सोचती रही थी कि उचित-

१. अनुबन्ध -ग्यारह लम्बी कहानियाँ - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ २५
२. अनुबन्ध -ग्यारह लम्बी कहानियाँ - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ २५-२६
३. द्वितीय महायुद्धोत्तर हिन्दी साहित्य का इतिहास - डॉ. लक्ष्मीसागर वार्ष्णेय, पृष्ठ १४८

अनुचित क्या हैं ? तो उन्हे यही लगा कि जो समय लक्ष्मी का चल रहा हैं उसमें सोच-विचार की गुंजाइश नहीं हैं।'[1]

उचित-अनुचित के इस द्वन्द्व में रामखिलावन भी फंसा हैं। घुघुनू के पैंरो के ईलाज के लिए पैसों की सख्त जरूरत है। मालिक से अब तक बहुत एडवाँस ले चुका है। ऐसे में उसे एक ही रास्ता सूझ पडता है- गाडी की सीट बनाने वाले सरदार से मिलकर वह अपना कमीशन कमा ले। इधर साहब की गाडी दुकान में सीट बनवाई के लिए गई नहीं कि उसे अपना कमीशन का पैसा हाथ में मिल जाएगा। लेकिन 'भीतर स्वंय से ही हाथापाई शुरू हो गयी। ठीक वैसी ही सनसनी भरी धुक-धुकी सीनें में घुमडती महसूस हुई जैसे वह किसी चिज को लोगों की आँखें बचाकर जेब में डाल लेने की फिराक में हो और पूरी सतकर्ता से निकल भागने की भी। यह ... चोरी है ... बेईमानी है ... क्यों. चोरी कैसे ? साहब के घर में सेंध मारी है क्या ? सेंध नहीं मारी तो फिर ... फिर कुछ नहीं ... जिसमें से वह हिस्सा मांगने जा रहा है वह रकम तो साहब ने सोच-समझकर स्वंय ही सरदारजी को देनी स्वीकार की है ... वह तो उसी में से ... नहीं ... फिर बेवकूफी ... फालतु की टिटिर-पिटिर में पडते रहोगे तो राम भजो ... साहब सीटें बनवाने के लिए पैसे खर्च कर सकते है तुम्हारी घुघुनू की टांग टूटी रहे तो टूटी रहे... ।'[2]

चरित्र का यह अनर्द्वंद्व पात्र को संघर्ष करने की प्रेरणा भी देता है। शिल्पा को बडी खूबी से बिजी ने कटघरे में बंद किया था। पायलट बेटे मुकेश के न रहने पर शिल्पा को बडी चालाखी से देवर सुरेश के साथ ही ब्याह दिया था कि मुकेश के मौत के बाद मिलनेवाले पैसे घर ही में रहे। बाद में उन्ही पैसों से सबकी 'जरूरतें' पूरी होने लगी। जब तक शिल्पा चेतती है हालात बडे खराब हो गये थे। वह अस्पताल में पडी-पडी सोचती है-'क्यों वह अपनी विवेक बुद्धि गिरवी रख उनके षडयंत्र का हिस्सा बनी ? क्यों निरन्तर उनकी ज्यादतियों के समक्ष नैतिकता और मर्यादा की आड

---

१. भूख - इस हमाम में - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ १८
२. ब्लेड - इस हमाम में - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ ७३

ओढे-बिछाये कठपुतली-सी संकेतो पर ठुमकती रही ? ... वह पढ़ी-लिखी युवती थी, नौकरी कर सकती थी आत्मनिर्भर बन सकती थी... तब तो किशू भी नहीं हुआ था। इन लोभी सियारों की मांद में उनके टुकडों पर आश्रीत होकर अपना आत्मसम्मान बचा सकती है वह ? बचा सकती है ! ... अब भी बचा सकती है, बस इस नरक को अस्विकार करने का साहस जुटाना होगा उसे।'[1] और सचमुच पुलिस के आते ही वह ससुराल वालों की पोल खोल देती हैं। अपने भीतरी संघर्ष से ही प्रेरित हो वह मार्ग पा लेती है।

'पाली का आदमी' का रवि अपने अतित और वर्तमान के बीच द्वंद्वग्रस्त है। उसका अतीत 'एक पीछे छुटी अर्थहीन जिंदगी !'[2] है। वह वर्तमान की दुनियाँ में जीना चाहता है। गाँव मे छूट गयी पत्नी और बेटी लल्ली से उसे कोई सरोकार नहीं। लेकिन लल्ली का पत्र पाते ही वह फिर द्वन्द्व के चक्रव्यूह में फंस जाता है - 'लल्ली ने उसे पत्र क्यों लिखा? अब न वह सीढियाँ चढने का आदी रहा, न उतरने का। अपने पैंरों की ताकत का इस्तेमाल उसने बंद कर दिया है। वह लिफ्ट से आता-जाता है। कितनी ऊँचाई पर है उसका घर। उस घर में खडे होकर वह सबसे ऊपर हो उठता है। यहाँ तक कि सडकों पर गुजरती हुई भीड उसे आदमियों की न होकर, कीडे-मकोडो की लगती है, जो अपने गंतव्य की ओर चल नहीं रही, रेंग रही है। [3] उसका यह द्वन्द्व उसके जीवन की यांत्रिकता को ही स्पष्ट करता है।

४.३ कथोपकथन :

पात्रों के मध्य होने वाले संवादो से भी पात्र की चारित्रिक विशेषताएँ स्पष्ट होती है। पात्रों का वार्तालाप उनके स्वभाव और विचारों को अभिव्यक्त करते है। चरित्र चित्रण का यह साधन भी कथाकारों को सर्वाधिक प्रिय है। चित्राजी ने भी कथोपकथन के माध्यम से पात्रों की चारित्रिक

---

१. अभी भी - जगदंबाबाबू गाँव आ रहे हैं - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ ३७
२. पाली का आदमी - चर्चित कहानियाँ -चित्रा मुद्गल, पृष्ठ ११२
३. पाली का आदमी - चर्चित कहानियाँ - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ ११०

विशेषताओं को उद्घाटित किया है। चित्रा जी ने भी दो पात्रों के आपसी संवाद से अन्य पात्र के चरित्र को उद्घाटित किया है। 'इस हमाम में' की नायिका के चारित्रिक गुणों का ज्ञान अंजा के संवाद से होता है। अंजा कहती है - 'बाई, एक तुम्हीच हो जो अपने को वोइच बर्तन में पानी पिलाता है जिसमें तुम खुद पीता है नई तो -।'[1] गोयल का छोटा भाई जानता है कि भाई भाभी के साथ अमानुषिक व्यवहार करता है और उसमें परिवर्तन की संभावना भी नहीं हैं। भाभी से कहता है-'यह बाल-बच्चे वाला झंझट भी गले डाल लिया, पर सच कहूँ , भाभी! चलेगा नहीं यह ज्यादा दिन ... अपने को खत्म करना तय ही कर लिया है तो अलग बात है ... मैं तो चाहता था कि तुम नई जिंदगी शुरु कर लेती।' [2] जतिन के ये गिने चुने संवाद भाभी के प्रति उसकी सद्भावना को व्यक्त करते है तो भाई के अत्याचारी व्यवहार की झलक भी देते हैं।

'बंद' कहानी के मल्होत्रा साहब अपने दफ्तर के कर्मचारियों का शोषण करते है। उनका घाघ चरित्र संवादों से खुलकर सामने आता है। बंद के दौरान रद्दी बेचकर भूख शमन करने वाले कर्मचारियों को मजदूरी देते समय रद्दी के पैसे काट कर मजदूरी देते है लेकिन बात बडी मीठी करते है -

''जी बहुत वाजिब काम किया आप लोगों ने और करते भी क्या। गलती तो मेरी ही थी। जी रद्दी बिकी कितने में?''

''एक तो कल गरज अपनी थी सर। भाव वाजिब नहीं दिया साआले ने ।'' नवल ने बरबस रोककर जबान काटी - ''यही कोई इक्कीस रुपये साठ पैसे।''

''चलिये जो भी मिला सो मिला। कल दुकान खोलकर कौन मुसीबत मोल लेता। मुझे तो खुशी है कि रैक्स भी तरतीब हो गये और कल का आपका मेहनताना भी निकल आया तो? वे तनिक विचार मग्न हुए।'' ''आप लोगों के कल के छह-छह रूपये काट कर बचे जी, ... तीन रूपये साठ पैसे,

१. इस हमाम में - चर्चित कहानियाँ - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ ८९
२. बावजूद इसके - ग्यारह लम्बी कहानियाँ - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ १३७

यानि इसमें से पर हैड एकतीस, आज की किस्त में से घटाया जाय तो? ... लीजिये, आप लोग आज की पहली किस्त ले जाइये। दो रूपये सत्तर पैसेईच, ... ठीक है न जी हिसाब।''[१] 'अभी भी' कहानी की बिजी की चलाखी उन्हीं के संवाद द्वारा व्यक्त होती है और उनकी व्यावहारिक चतुराई शिल्पा की समझ में आ जाती है। बिजी अनिल से कहती है - 'बाप तो नौकरी करवाने ले जा रहा था ... नौकरी करती तो साल-देढ साल के भीतर ही किसी संगी-साथी से दीदे लडा मेरे बेटे की सारी कमाई डकार ले जाती डायन! तुम सबों का ऊँचा-नीचा सोच होशियारी बरती मैने ... घर का पैसा घर की ही चुनाई में लगे, आबरू ऊपर बनी रहे ... मगर तू ... न सब्र से काम लेना जानता है न लल्लो-चप्पो से निकलवाना ... ।'[२] अनजाने ही कैद में कर दी शिल्पा चौंक पडती है कि सहानुभूति व्यक्त करनेवाली बिजी ही वास्तविक नाटक की सूत्रधार हैं।

किशोर मोट्या बिमारी में काम पर नहीं आ सका और साहब के कोप का शिकार हुआ। पूरी पगार मांगने पर उसे साहब धक्के मार कर घर से निकाल देते हैं। और जिन मेमसाहब को वह माँ जैसी मानता रहा वे यह अन्याय देखती रही। उसका आक्रोश इन शब्दों मे फूट पडता हैं 'धौस नहीं खाने का मैं। .... बोत चमकाया इस साली की बाडी को . . . अब्बी देख हाल। अक्खा कॉलोनी उठ गया वो सोता क्या उप्पर? नईं . . . सोता नई, डर के ऊप्परच बेइठा ! आने तो दे निच्चू। खोपडी नई तोडा उसका तो ? वो जाडिया मेमसाब पन आएगी न, मैं उसको भी नहीं सोडेगा . . . नईं सोडेगा ! . . . साब के सामने कइसी भीगी बिल्ली सरखा बइठी होती ? बोलने को नई सकती ? ताप (बुखार) मे होता मैं ? ''[३] मोट्या के किशोर हृदय के टूटने की किरचन इस संवाद में है। उसका भोला मन साहब और मेम साहब के व्यवहार को नहीं पचा पाता।

उपर्युक्त उदाहरणों से स्पष्ट हैं कि चित्रा जी ने पात्र की चरित्रगत विशिष्टताओं को कथोपकथन के माध्यम से व्यक्त करने में सफलता हासिल की है।

---

१. बंद - ग्यारह लम्बी कहानियाँ - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ १९०-१९१
२. अभी भी - जगदंबाबाबू गाँव आ रहे है - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ ३६
३. मामला आगे बढेगा अभी - चर्चित कहानियाँ - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ ११५

४.४ घटना :

कभी-कभी कथाकार पात्र के जीवन में घटीत छोटी-छोटी घटनाओं का जिक्र करता चलता है और उनमें उसकी प्रतिक्रियाओं, व्यवहार के माध्यम से उसके विचार या उसका चरित्र प्रकट होता चलता है। चित्रा मुद्‌गल जी ने 'इस हमाम में' के नायक सोमेश के अंधविश्वासी, रूढीग्रस्त चरित्र को छोटी-छोटी घटनाओं के माध्यम से प्रस्तुत किया है। जैसे कचरे का खाली डिब्बा देखना उसे अपशकुन प्रतित होता है। इसी प्रकार का एक अन्य प्रसंग यूँ है, - 'सोमेश दफ्तर के लिए निकल रहे थे और सहसा उनके दरवाजे के बाहर होते ही मुझे याद आया था कि मैं जल्दबाजी में उन्हें रूमाल देना भूल गयी हूँ। लपक कर दरवाजा खोल कारीडोर में पहूँची तो पाया कि वे लिफ्ट के सामने खडे उसके ऊपर आने की प्रतिक्षा कर रहे थे - 'सुनिये !' मैने रूमालवाला हाथ आगे बढाकर उन्हे पुकारा ! तो व एकाएक मुडे और तमतमाये से मेरे करीब आकर तकरीबन बाँह से घसीटते हुए भीतर खींच ले गये। और इतनी जोर का धक्का मारा कि मेरा पूरा शरीर जड से उखडे पेड की तरह ड्राइंग रुम की दिवार से टकारा गया। . . . आइन्दा ऐसी हरकत मत दोहराना . . . एक बार मैं घर से निकल गया तो समझो निकल गया - पीछे मुडकर कभी न बुलाना ... ।'[१] पढे-लिखे सोमेश के दकियानुसी विचार इस घटना के माध्यम से प्रकट होते है।

'एक ज़मीन अपनी' की अंकिता का चरित्र भी छोटे-छोटे प्रसंगो से उद्‌घाटित होता है। प्रेम विवाह के बाद पति के सामंती व्यवहार को वह दृढता से ठुकरा देती है। 'तुम्हारी ऐयाशियों और ज्यादतियों को सती-साध्वी बनी मांग में सजाए इस मुगालते में रहना कि मैं स्त्रीत्व की पूर्णता का भ्रम जीती रहूँगी।'[२] कहकर उससे सम्बन्ध तोड लेने वाली अंकिता बरसों बाद भी माँ के देहावसान के बाद सुधांशु के पुन: एकत्रित होने के प्रस्ताव को ठुकरा देती है। मैथ्यू की पार्टी में सक्सेना के अशिष्ट व्यवहार के प्रसंग में भी वह दृढ बनी रहती है। नौकरी करते हुए समझौतो से काम नहीं लेती।

---

१. इस हमाम में - इस हमाम में - चित्रा मुद्‌गल, पृष्ठ ८७-८८
२. एक जमीन अपनी - (उपन्यास) - चित्रा मुद्‌गल, पृष्ठ १९

मि. भोजराज जी के आरोपों को सुन कर इस्तीफा दे देती है। इन छोटी-छोटी घटनाओं से अंकिता का संघर्षशील, संस्कारित और पारम्परिक होते हुए भी आधुनिक स्त्री का चरित्र उभरता है।

'रूना आ रही है' कहानी में छोटी-छोटी घटनाओं के माध्यम से ही रूना और निमा के चरित्र उद्‌घाटित होते है। दोनो के बीच का स्नेह, मैत्री, प्रगाढता और फिर दोनों के बीच बढने वाली दूरी, वैमन्स्यता छोटे-छोटे प्रसंगो से ही प्रकट होते है। 'अग्निरेखा' की संशयी मनु का चरित्र जो शरीर से अधिक मन से अपाहिज़ हो चुकी है, छोटे-छोटे प्रसंगो से ही पाठकों के सम्मुख प्रस्तुत होता है।

५) निष्कर्ष :-

समग्रालोचन के आधार पर कहा जा सकता है कि कहानी विधा की आवश्यकता के अनुरुप ही उनकी कहानियों में सीमित पात्र है। उनके उपन्यास 'एक ज़मीन अपनी' में भी पात्रों की संख्या मर्यादित ही है। यदि पात्रों की संख्या कुछ बढी भी है तो उन पात्रों की सार्थक आवश्यकता रही है। गौण पात्र मुख्य पात्र की अक्षुण्णता बनाये रखते है। जैसे नीता का पात्र अंकिता की अक्षुण्णता बनाए रखता है। वह कही भी मुख्य पात्र पर हावी नहीं होता और न ही अंकिता का पात्र नीता के चरित्र को निरर्थक करता है। बल्कि वे एक दूसरे को सहयोग देते हुए विकसीत होते है। नीता का पात्र तो अंकिता को महत्त्वपूर्ण बनाता है। चित्रा जी के चुस्त-दुरुस्त कहानी के गठन में पात्रों का प्रकाशन सधे ढंग से होता है।

...

<u>पंचम अध्याय</u>

चित्रा मुद्गल के कथा साहित्य का भाषा व शैलीगत अध्ययन

पंचम अध्याय

चित्रा मुद्गल के कथा साहित्य का भाषा व शैलीगत अध्ययन

१. प्रस्तावना :

कहानीकार अपनी बात कहने के लिए जिन युक्तियों का प्रयोग करता है - वही शिल्प कहलाता है। इन युक्तियों के अंतर्गत कहानी में संवाद, स्थिति या वातावरण, भाषा-शैली आदि का समावेश रहता है। वस्तुत: कथ्य एवं शिल्प अलग अलग नहीं है लेकिन 'पिछले दिनों तक कथानक का गठन, नाटकीयता, वातावरण का सुष्ठु संयोजन, संवादों की संक्षिप्तता व इन्हीं जैसी और-और सतही बातों का चलन था, जिनसे कथा के औसत शिल्प को समझ पाना भी कठिन था।'[1] शिल्प संरचना किसी भी अभिव्यक्ति के शिल्प के रूप में उसकी समग्र संरचना का ही रूप हैं।[2] शिल्प के अन्तर्गत ही रचनात्मक लेखन की शैली का समावेश हो जाता है। डॉ. नगेन्द्र के शब्दों में- 'लिखने का ढंग ही तो शिल्प है। शिल्प अंग्रेजी के क्राफ्ट का पर्याय है जिसका अर्थ है - कारीगरी (टेक्निक, मैथड-पद्धति) साहित्य समीक्षा में इसका अर्थ प्राय: कला लिया जाता है, यहाँ शिल्प का अर्थ है निर्मित कौशल।'[3]

वास्तव में रचना में कथ्य और शिल्प को अलग करके नहीं देखा जा सकता। प्रेमचंद आदि के काल में ही कहानी की आत्मा और स्वरुप को भिन्न रूपों में देखा जाता रहा और कहानी को भिन्न-भिन्न शैलियों में विभाजित किया जाता रहा कि अमुक कहानी वर्णनात्मक या ऐतिहासिक शैली में लिखी गयी है, अमुक कहानी आत्मकथानत्मक या फिर डायरी शैली में लिखी गयी है, या अमुक का शिल्प पत्रात्मक या पूर्वदीप्ति या संभाषण प्रधान है। युगीन परिवर्तन के साथ ही कहानी के शिल्प में भी परिवर्तन आया है। श्री सुरेन्द्र के मतानुसार- 'अब शिल्प चेष्टित नहीं होता बल्कि वस्तु की

---

१. नई कहानी - दशा, दिशा और संभावना - श्री सुरेन्द्र, पृष्ठ ३६८
२. नई कहानी - दशा, दिशा और संभावना - श्री सुरेन्द्र, पृष्ठ ३६८
३. नई कहानी - दशा, दिशा और संभावना - श्री सुरेन्द्र, पृष्ठ ३६८

आंतरिक विवशता का परिणाम होता है'।[1] अंतर्गत वस्तु और भाषा तथा शैली को अलग नहीं किया जा सकता।

प्रेमचंद ने जिस वस्तु को कहानी में अभिव्यक्त किया है उसे उतने ही प्रभावी ढंग से अज्ञेय या जैनेन्द्र के द्वारा प्रयुक्त शिल्प में अभिव्यक्त नहीं किया जा सकता। 'मार्क शोरर ने बुफाँ के सुप्रसिद्ध कथन 'स्टाईल इज द मैन' को बदलकर 'स्टाईल इज द सब्जैक्ट' कर लेने की सिफारिश की हैं।' वे शिल्प की या प्रविधि (तकनीक) की परिभाषा इस प्रकार करते हैं- द डिफरेन्स बिटविन कण्टेण्ट और एक्सपीरियन्स एण्ड अॅचीवड कण्टेण्ट ऑफ आर्ट, इज टैकनीक। अर्थात कथ्य अथवा अनुभव, तथा सिद्ध कथ्य अथवा कला के बीच का अंतर ही शिल्प है। शोरर की दृष्टि को स्पष्टत: समझनें के लिए उनका निम्नांकित उद्धरण आवश्यक प्रतीत होता है।' शोरर ने कहा है कि जब हम शिल्प की बात करते हैं तब हम लगभग हर चीज की बात करते हैं। क्योंकि शिल्प ही वह साधन है जिसके माध्यम से लेखक का अनुभव, जो कि उसकी विषय वस्तु है, उसे अपनी ओर ध्यान देनें के लिए विवश करता है, शिल्प वह एकमात्र साधन है जिसके द्वारा वह अपने विषय को खोजता है, उसकी छानबीन करता है, उसका विकास करता है, जिसके माध्यम से वह उसके अर्थ को संप्रेषित करता है और अंतत: उसका मूल्यांकन करता है।'[2] शोरर का कथन शिल्प के महत्व को रेखांकित करता है। डॉ. गुलाबराय ने भी शिल्प के समग्र स्वरूप को स्पष्ट करते हुए लिखा है कि- शैली का सम्बन्ध कहानी के किसी एक तत्व से नही वरन् सब तत्वों से हैं और उसकी अच्छाई या बुराई का प्रभाव पूरी कहानी पर पडता है। कला की प्रेषणीयता का अर्थात दूसरों को प्रभावित करने की शक्ति शैली पर ही निर्भर करती है। किसी बात के कहने या लिखने के विशेष प्रकार को शैली कहते है। इसका सम्बन्ध केवल शब्दों से ही नहीं हैं वरन् विचार और भावों से भी है।

यह निर्विवाद सत्य है कि कच्चे या उधार के अनुभव कलाकृति नहीं बन सकते और यह भी

---

१. नई कहानी - दशा, दिशा और संभावना - श्री सुरेन्द्र, पृष्ठ ३६८
२. क्रिटीकल एप्रोचिज टु फिक्शन-सं. शिव के. कुमार एवं कीथ मैक्कीन (न्यूयार्क) - १९६८, पृष्ठ २८२

कि अनुभवों की थोडी सी कच्ची पूँजी शिल्पगत क्रीडाएँ कर रचना का रूप धारण नहीं कर सकती। अत: श्रेष्ठ रचना के लिए कथ्य और शिल्प, जीवन और रूप का होना आवश्यक है।

२. चित्रा मुद्‌गल की कहानियों का शिल्प :

अष्टम दशक के शिल्प का विचार करने पर हम पाते है कि उसका शिल्प पुराने शिल्प का ही अगला कदम है। चित्रा जी की कहानियों का शिल्प आधुनिक कहानी का शिल्प है। कथ्य और शिल्प के कलात्मक रचाव से ही कहानी का संपूर्ण रूप बंध निर्मित होता है। चित्रा मुद्‌गल के साहित्य का शिल्पगत अध्ययन करने के लिए शैली तत्व को दो पक्षों में विभाजित किया गया है - भाषा पक्ष एवं विधान पक्ष। चित्रा जी ने कहानियों के शिल्प का रचाव आधुनिक कहानी की सभी शिल्पगत विशिष्टताओं के साथ किया हैं।

२.१ भाषा पक्ष :

कहानी में लेखक के अभिष्ट के अभिव्यक्तिकरण के लिए भाषा की उपयुक्तता सबसे पहली आवश्यकता है। कहानी के सीमित फलक के लिए सहज, सरल, मुहावरों व कहावतों से युक्त, भाव प्रवण, प्रवाहमयी भाषा ही उपयुक्त रहती है। वह कहानी को विश्वसनीय और प्रभावपूर्ण बनाने में सहायक होती है। निरर्थक शब्द योजना, अकलात्मक शब्दाडम्बर, दुरूह वाक्य जाल कहानी के भाषा पक्ष को हीन बना देते है। वस्तुत: भाषा की सार्थकता कहानी की सफलता के लिए आवश्यक होती है और रसानुभूति में सहायक होती है। अत: कहानी में भाषा की सहजता, अनालंकृतता, स्फूर्ति और प्रभाव अपेक्षित है। मुंशी प्रेमचंद भाषा में जनसाधारण की भाषा को महत्व देकर उसके प्रभाव पर जोर देते है और कहते हैं कि 'किसी भाषा का मुख्य गुण उसकी सरलता नहीं बल्कि उसका मुख्य गुण तो अभिव्यक्त करने की शक्ति है।'[1]

---

१. साहित्य का उद्देश्य - प्रेमचंद, पृष्ठ २१६

सर्वश्रेष्ठ कहानीकार प्रेमचंद भाषा के परिवर्तित रूप के संदर्भ में अपने विचार रखते हुए लिखते हैं- 'भाषा साधन है, साध्य नहीं, अब हमारी भाषा ने वह रूप प्राप्त कर लिया है कि हम भाषा में आगे बढकर भाव की ओर ध्यान दें और इस पर विचार करें कि जिस उद्देश्य से यह निर्माण कार्य आरम्भ किया गया था, वह क्योंकर पूरा हो। वही भाषा जिसमें आरम्भ में 'बागोंबहार' और 'बेतालपचीसी' की रचना ही सबसे बडीं साहित्य सेवा थी, अब इस योग्य हो गयी है कि उसमें शास्त्र और विज्ञान के प्रश्नों की भी विवेचना की जा सके।'[१] स्पष्ट है कि हिन्दी कहानी ने भाषा के क्षेत्र में निरन्तर विकास किया है। कहानी में भाषा के क्षेत्र में नित नूतन प्रयोग भी हो रहे हैं जो उसकी महत्ता को ही सिद्ध करते है। शुरुआती दौर की कहानियों से लेकर वर्तमान की कहानियों पर जब हम दृष्टिक्षेप डालते हैं तो यह स्पष्ट हो जाता है कि पहले के कहानीकारों की अपेक्षा आज का कहानीकार भाषा के प्रयोग के प्रति कहीं अधिक सजग है। कहानी के स्वरूप के अनुरूप ही कहानी की भाषा प्रयुक्त हुई है। दार्शनिक एवं प्रतीकवादी कहानियों में भाषा का एक रूप को मिलता है तो वैज्ञानिक एवं तकनीकी विषयों पर लिखी कहानियों में एक भिन्न प्रकार की भाषा देखने को मिलती है। आंचलिक कहानी में लोकभाषा और ग्रामीण भाषा का सफल और सजीव प्रयोग दृष्टिगत होता है। तात्पर्य यह कि विषय और भाव की आवश्यकता के अनुरूप ही भाषा प्रयुक्त की जा रही है।

चित्रा मुद्‌गल जी की कहानियाँ अपनी प्रवाहमयी, सरल, सहज भाषा के कारण पाठकों की प्रिय कहानियों में गीनी जाती हैं। वे भाषा प्रयोग में अपनी सजगता का परिचय देती हैं। यही कारण है कि उनकी कहानियों की भाषा पात्रों के अनुकूल लगती है और कहीं भी बोरियत का अनुभव नहीं होता। वे भाषा में सरलता, सहजता और कलात्मकता की आग्रही हैं लेकिन इसका यह तात्पर्य कतई नहीं है कि लेखक कलात्मक भाषा के रचाव में कहानी की आत्मा को ही भुला बैठे। कहानी में भाषा की भूमिका के सम्बन्ध में अपने विचार प्रकट करते हुए ये कहती हैं कि- 'भाषा की कारीगरी और कलात्मकता वहीं तक जरूरी है जहाँ तक वह चरित्रों और स्थितियों को अपने समूचे दायरे और

१. साहित्य का उद्देश्य - प्रेमचंद, पृष्ठ २

दबावों के बीच उभारने में समर्थ हो और कथ्य के रचाव को बौद्धिक विलास बनने से बचाती हो।'[१] इसीलिए उनके कहानियों की भाषा न अधिक अलंकृत है और न ही सहजता के नाम पर रूक्ष है। उनकी कहानियों में भाषा का समन्वित रूप दिखाई देता हैं। जो पात्रों के भावों को समर्थ रूप से वहन करता है। चित्रा जी की कहानियों के भाषिक विधान को विशिष्टताओं को निम्नलिखित बिंदुओं के आधार पर जाना जा सकता है-

१) प्रवाहात्मकता	२) चित्रात्मकता	३) प्रतीकात्मकता
४) व्यंग्यात्मकता	५) नाटकीयता	६) भावात्मकता

२.१.१ चित्रा जी के कथा साहित्य में प्राप्त भाषा के गुण :

२.१.१.१ प्रवाहात्मकता :

वर्णनात्मक शैली में लिखी गयी कहानियों में प्रवाहात्मकता का गुण अपेक्षाकृत अधिक पाया जाता है। किसी प्रसंग विशेष, घटना या दृष्य के वर्णन में भाषागत प्रवाह की विशेषता दृष्टिगत होती है। चित्रा जी की कहानियों में प्रवाहपूर्ण भाषा के दर्शन बार-बार होते है। 'शून्य' कहानी की सरला राकेश के चरित्र को ऐसी प्रवाहात्मक भाषा में ही प्रस्तुत करती है- 'वही पुरानी आदत। अपनी, बस अपनी कहने की हुमक। उसकी भावनाओं की, उसके सोचने-समझने की परवाह न उन्हें तब थी न अब है। लेकिन अब वह सुने क्यूँ ? ... बहुत दिनों तक सुनती रही थी। हैसियत को भुलाकर। कटघरे में खडी कर दी गई अभियुक्त-सी। कि तुम औरत हो। और हमारे निर्णय तुम्हारी जिंदगी है ... तब ... सिर झुकाये उसने सब कुछ स्वीकार कर लिया था। अपनी नियति मानकर। और यह मानकर कि किसी के मन में अपने लिए बलात् कोई कोना पैदा नहीं किया जा सकता। न सप्तपदी की प्रदक्षिणा को आजीवन ढाल बनाए पत्नीत्व का हक जिया जा सकता है। सब एक तरफ थे। अम्मा, बाबूजी, जीजी। इधर माँ जी। कि तुम तैश मे आकर उसे न कुछ लिखकर दोगी, न तलाकनामे पर

१. लोकशासन - १९ जुलाई ९५

हस्ताक्षर करोगी। बच्चा भी तुम्हारे हक में है। फिर दूनिया का कोई कानून तुमसे तुम्हारा अधिकार नहीं छीन सकता।'[१] 'जगदंबाबाबू गाँव आ रहे हैं' कि सुक्खन भौजी अपने अवधी के विशिष्ट लहजे में आजकल की नई बहुओं पर टिप्पणी करती है तो उसका प्रवाहपूर्ण बोलना अवधी की कहावतों-गीतों से सजकर और मोहक हो जाता है- 'भला इन आजकल की दुलहिनों को हो क्या गया है ! चूल्हा चौका निपटाकर बासन समेटती है तो कोई पूछे इनसे कि बरतनों को भिगोकर क्यों नहीं रखती? रगडते-छुडाते उनकी गदेलियाँ छरछराने लगती है। तीस पर कभी भूले-भटके परात, बटलोई में अन्न का दाना चिपका रह गया तो समझ लो कटिया-जुद्ध ! बरैय-सी बर्राने लगेगी, - अई सुक्खन भौजी, बासन खंगाल के धरि गयी हो का? तनिक जांगर चलावा करो? सेंत मेत में तो मंजतिव नहीं ... बीस ठो नगद, कलेवा ऊपर से अउ तीज-त्योहार का नेग कौछु सो अलग ! ... कहौ तो दोना-पत्तरिन पर खवावें लागी?'[२] 'एक जमीन अपनी' उपन्यास में कई-कई स्थलों पर प्रवाहपूर्ण भाषा दिखाई देती है। फिर चाहे प्रसंग बाबी ठाकुर और गौरा सुधाकर की फ्रीस्टाइल लडाई का तिलक द्वारा किया गया प्रवाहपूर्ण वर्णन हो या इस प्रसंग पर अंकिता की टिप्पणी हो, अंकिता की माँ की मृत्यु का प्रसंग हो या नीता की आत्महत्या की घटना, ऐसे ही अन्य कई प्रसंग। उदाहरण के तौर पर नीता के विज्ञापन का वर्णन लिया जा सकता हैं- 'पर्दे पर मोमबत्ती की कांपती हुई नन्हीं-सी लौ उभरती है और वायलिन के मंद सुरों के साथ पूरे पर्दे पर फैलने लगती है। दीप्ति सागर की स्वर माधुरी में कपडों से मनुष्य के रिश्ते की बात करती हुई गीत की पंक्तियाँ कहीं दूर ... पहाडों के दालनों में सरसराते चिडों के रेशमी चेहरों को छूकर आती हुई महसूस होती है। ... सलवार कुर्ते के अनेक परंपरागत और आधुनिक लुभावने नमूने पर्दे पर उभरने लगते है। नीता के साथ प्रेमी के रूप में है सुप्रसिद्ध पुरुष मॉडल विवेक साहनी ... कैमरा अचानक पीछे लौटता है और पुन: भित्ति शिल्प पर घूमते हुए एक रूपसी के साथ दो प्रेमियों की आकृति को अपने फ्रेम में ले लेता

---

१. शून्य - ग्यारह लम्बी कहानियाँ - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ १९५
२. जगदंबाबाबू गाँव आ रहे हैं - जगदंबाबाबू गाँव आ रहे हैं - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ ३९

है ... रूपसी का चेहरा आहिस्ता से विलीन हो नीता की मोहक मुद्राओ में परिवर्तित होने लगता है।'[1]

चित्रा जी की कहानियों में भाषा की प्रवाहात्मकता का गुण पाठक को कहानी से बांधे रखता है। कहानी की गति भी इससे बनी रहती हैं। चित्रा जी की कहानियों में ऐसे कई-कई प्रसंग आते हैं जहाँ उनकी प्रतिभा से भाषा सहज रूप से प्रवाहमयी हो गयी है। 'हस्तक्षेप' कहानी में नीता और अंकिता में स्त्री की अस्मिता, स्वतंत्रता और समता के विषय पर चलने वाली लंबी बहस चित्रा जी की प्रवाहात्म भाषा का सुंदर उदाहरण हैं। लम्बे-लम्बे संवादों के बाद भी कहानी में रूचि बनी रहती है। यद्यपि इस कहानी में कथ्य के नाम पर सिर्फ लम्बी बहस ही है लेकिन अपने प्रवाहपूर्ण संवादों के माध्यम से यह कहानी पाठकों पर अपना असर छोडती है।

इस प्रकार चित्रा जी ने प्रवाहपूर्ण भाषा से अपने दमदार कथ्य को उपस्थित किया है। जो अत्यन्त सधे हुए ढंग से पाठक को बांधे रखता है और कथ्य को प्रभावशाली रूप में प्रस्तुत करता है।

२.१.१.२ चित्रात्मकता :

अब तक प्राकृतिक दृष्यों अथवा अनुभूत्यात्मक प्रसंगों के संदर्भ में ही भाषा में चित्रात्मकता का गुण समावेष्टित होता रहा लेकिन नई कहानी में यह गुण अपनी विशिष्टताओं में प्रयुक्त हुआ है। चित्रा जी ने चित्रात्मक भाषा का सफल प्रयोग किया है। जहाँ कहीं भी उन्हें काव्यात्मक अभिव्यक्ति का वर्णन दृष्यमानता के तत्व के साथ करना पडा है, उनकी भाषा में चित्रात्मकता के गुण आ गये हैं जैसे 'रंग बिरंगी रोशनी की पींगे भरते टुकडे फर्श पर थिरकते जिस्मों को रहस्यमय स्वप्निल वातावरण से सर-सरापा जकडे हुए है।'[2] जहाँ चित्रा जी किसी विशेष स्थल का वर्णन करना पडा है वहीं भाषा में चित्रात्मकता आ गयी है। बंबई के यातायात का चित्र देखिए- 'कैसा गुत्थम-गुथा हुआ यातायात ! चींटियों सदृश रेंगता। चाहे सामने देखों या अगल-बगल, गाडियाँ ही गाडियाँ ... जलता हुआ डीजल, पेट्रोल ... धुँआ ... बदबू के भभके। आँखों में दीर्घ रुदन-पश्चात की किरकिरी भरी

---

१. एक जमीन अपनी - (उपन्यास) - चित्रा मुद्‌गल, पृष्ठ १०४
२. अपने-अपने गिरेबान - इस हमाम में - चित्रा मुद्‌गल, पृष्ठ ७७

जलन ... गाडी लेकर निकलना उसे इंगलिश चैनल पार करने जैसा लोमहर्षक संघर्ष प्रतीत होता है।'[१] जहाँ कहीं भी स्थिति या पात्र प्रमुख हो जाता है, चित्रा जी ने बिम्बों या चित्रों के माध्यम से उसकी महत्ता को सजाया है। चित्रा जी के कथा-साहित्य में प्रयुक्त हुई चित्रात्मक भाषा के कुछ उदाहरण इस प्रकार बताये जा सकते है-

(क) 'होंठों पर लगी संकोच की सांकल खोल देता।'[२]

(ख) 'कहानी की डूबती नैया की रक्षा हेतु अनायास कुछ चप्पू उनके हाथ लग गये हो और अब कहानी के जीवन के प्रति आवश्वस्त हो गए हो।'[३]

(ग) 'सन्दिग्धता के सहारे ही वह किसी पुख्ता जिल्द में सुरक्षित दीमक चटे पुष्ठों-सी अपने को सहेजे भी रहती...।'[४]

(घ) 'हम अपने शरीर पर चढ आये अजनबियत के लबादों को उतार चिन्धी-चिन्धी कर देंगे।'[५]

(ड) 'तुम पड़ाव हो सरला।'[६]

(च) 'रात-भर किसी मलबे के नीचे दबी पडी क्षत-विक्षत जीवित लाश की मर्मान्तक पीडा वह अपनी देह पर झेलता रहा।'[७]

(छ) 'धड़धड़ाती भागी जा रही लढ़िहा के चक्कों-सी धडकनें तेज हो उठी।'[८]

(ज) 'हफ्तों तक अविश्वास से भरी उसकी आँखे बिछली हुई सी अपने ही कोरो में कहीं बिला गये उस सपने को चिंहुक-चिंहुककर तलाशती रही थी।'[९]

---

१. एक जमीन अपनी - (उपन्यास) - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ १८५
२. ब्लेड - इस हमाम में - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ ६३
३. होना संपादक की पत्नी - एक लेखिका का - इस हमाम में - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ ११८
४. मोर्चे पर - ग्यारह लम्बी कहानियाँ - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ ६२
५. रूना आ रही है - ग्यारह लम्बी कहानियाँ - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ १७५
६. शून्य - ग्यारह लम्बी कहानियाँ - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ १९७
७. अनुबंध - ग्यारह लम्बी कहानियाँ - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ १५
८. जगदंबाबाबू गाँव आ रहे है - जगदंबाबाबू गाँव आ रहे है - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ ४२
९. अभी भी - जगदंबाबाबू गाँव आ रहे है - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ ३३

(झ) 'सफलता का उद्दाम कुछ रोज जी लेने के बाद उतरती बाढ़ के नग्न-सत्य-सा मनुष्य अपनी तलहटी की ओर दृष्टि टिका सकता है।'[१]

(न) 'जैसे उनकी काया लौट रही है गाँव ... प्राण उनके अपनी बहिनी के पास ही गिरवी हो गये है।'[२]

(ट) 'हाथ डालकर तलछट के खरपतवार बीन क्यों नहीं लेती।'[३]

(ठ) 'जतन से ढंक-मूद दी गई अपनी कुंठाए जो सुई मे तागा डालने की असमर्थता के चलते पैबंद सी उधड गई?'[४]

(ढ) 'जुडाव-लगाव का पुल !'[५]

२.१.१.३ प्रतीकात्मकता :

स्वातंत्र्योत्रर युगीन कहानियों में भाषा मे प्रतीकात्मकता का समावेश अधिक हुआ है। बौद्धिकता की प्रवृत्ति के विकास के साथ ही प्रतीकात्मकता की वृद्धि हुई है। प्रतीकात्मक भाषा के माध्यम से पात्र कोई गहरी बात कहता है जो उसे केवल अनुभव से प्राप्त होती हैं। 'एक जमीन अपनी' उपन्यास में चित्रा जी ने ऐसी भाषा का यथास्थान प्रयोग किया है। नीता विज्ञापन जगत की सच्चाई से वाकिफ कराते हुए अंकिता से कहती है कि इस क्षेत्र मे प्रवेश किये बिना, उसका हिस्सा बने बगैर उसे समझा नहीं जा सकता है। वह कहती है - 'तुम कगार पर खडी हुई पानी में उतरने से इसलिए नहीं कतरा रही कि पानी की गहराई से भयाक्रांत हो, तुम मगरमच्छों से आशंकित हो ... मगर कूदो पानी में, मगरमच्छों से बच सको तो अपने को बचाते हुए मंझाओं उसे ... आखिर मछलियों और पानी के अन्य जीव-जंतुओं ने उनके साथ रहने का साहस किस तरह जुटाया

१. हस्तक्षेप - जगदंबाबाबू गाँव आ रहे है - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ ७५
२. लकडबग्घा - जगदंबाबाबू गाँव आ रहे है - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ ९६
३. अपनी वापसी - चर्चित कहानियाँ - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ २४
४. अपनी वापसी - चर्चित कहानियाँ - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ २६
५. अपनी वापसी - चर्चित कहानियाँ - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ २८

होगा ...?'[1]

इसी प्रकार 'फातिमाबाई कोठे पर ही नहीं रहती' कहानी में नायिका अपनी गलती को अंत में जान जाती है कि वह पढी लिखी, समझदार स्त्री होकर भी रेल में मिली एक असहाय लडकी की सहायता न कर सकी और उसकी मजबूरी के कारण वह कोठे तक पहुँच गयी। कोठे पर जब वह उस मजबूर लडकी को वेश्या बना देखती है तो उसे बडी वेदना होती है तभी कोठे की मालकिन वहाँ आती है। तब नायिका का अपराध बोध प्रतीकात्मक भाषा में ही व्यक्त होता है कि- 'परदा सरकाकर फातिमाबाई को प्रवेश करते देख वह अपने भीतर चौंक पडी। वह तो बैठी है फिर कमरे में कैसे प्रवेश कर रही है।'[2]

रेल्वे प्लेट फार्म पर फैली हुई अव्यवस्था से सारे यात्री परेशान रहते है। यात्री अक्सर रेल प्रशासन से शिकायतें भी करते हैं पर कोई उपाय नहीं होते। रेल्वे स्टेशन पर अक्सर पॉकेटमारी होती है जिनका सम्बन्ध प्राय: वहाँ घूमने वाले भिखारियों से होता है। ऐसी ही एक घटना के बाद उत्तेजित भीड का लाभ उठा नायक भिखारियों के विरूद्ध मोर्चा बना लेता है लेकिन वहाँ उपस्थित एक भिखारिन सचाई बता देती है कि पुलिसवाले उसकी देह से, तो रेल्वे के कर्मचारी 'हफ्ता' लेकर उन्हें स्टेशन पर बैठने का हक देते है तो वह स्तब्ध हो जाता है लेकिन सचाई सुनकर भी भीड पर कोई असर नहीं होता। नायक चाहता है कि वह रेल प्रशासन को चुनौती दे लेकिन 'उसे सारी भीड खिडकी के भीतर मेजों पर झुकी नजर आ रही थी।'[3] तात्पर्य यह कि सभी लोग अपने में बंद है। सब स्वार्थी है, केवल अपने तक ही सीमित। वे केवल नीरीह, मजबूर, बेबस लोगों के विरूद्ध आवाज उठाते हैं। अनैतिक, भ्रष्टाचारी व्यवस्था के विरूद्ध कोई भी लडने का साहस नहीं करता। खिडकी के भीतर और खिडकी के बाहर के सारे लोग एक से ही है।

---

१. एक जमीन अपनी - (उपन्यास) - चित्रा मुद्‌गल, पृष्ठ ८०
२. फातिमाबाई कोठे पर ही नहीं रहती - इस हमाम में - चित्रा मुद्‌गल, पृष्ठ ४४
३. चेहरे - इस हमाम में - चित्रा मुद्‌गल, पृष्ठ ५८

'सौदा' कहानी की मंगला आश्रय के लिए भाग कर आयी गेंदा से जब यह जानती है कि उसी का पति गाँव की मजबूर लडकियों को शहर लाकर वेश्या व्यवसाय में लगा देता है तो वह एकबारगी कांप जाती है। लेकिन उसे विश्वास करना पडता है। क्योंकि चित्रा जी ने प्रतिकात्मक भाषा के माध्यम से गेंदा के विश्वास की दृढता को व्यक्त किया है कि यही वह व्यक्ति है, जिसने उसे बरबाद करने का यत्न किया। चित्रा जी के शब्द कहानी में इस प्रकार है- 'गेंदा के स्वर की दृढता चोट खायी नागिन की तरह फन काढ़े उसकी समूची चेतना पर फुफकार रही है।'[१] ऐसे ही प्रतीकात्मक भाषा के कुछ अन्य उदाहरण इस प्रकार है-

(क) 'तुम्हारी आँखे सचमुच खूबसूरत हैं दिवा, पर देखने के लिए उन्हें चश्में के सहारे की जरूरत है।'[२]

(ख) 'यह हस्तक्षेप और कुछ नहीं ... कंधे पर हाथ के स्पर्श से अपने होने की अनुभूति से गुजरने देना है।'[३]

(ग) 'नागराज की पूँछ पर कब पांव पडा पछाँहवाली का।'[४]

(घ) 'एक भयानक तूफान ने उसके घर को जड से उखाड फेंका है। वह मांस के बेजान लोथडे-सी उसमें उडी जा रही है। दो खौफनाक पक्षी उसके गरीब सिमट आये हैं और अपनी सूर्ख चोंचे खोलकर उसे निगल जाने के लिए झपट पडे हैं। वह उनकी सूर्ख चोंचो में समाती जा रही हैं।'[५]

(ङ) 'छतें भी कितनी अकेली होती है।'[६]

(च) 'अचानक उन्हें महसूस हुआ कि उनकी हथेली के नीचे 'ग' के जकडे कंधे की जगह किसी

---

१. सौदा - जगदंबाबाबू गाँव आ रहे है - चित्रा मुद्‌गल, पृष्ठ २४
२. इस हमाम में - इस हमाम में - चित्रा मुद्‌गल, पृष्ठ ८६
३. हस्तक्षेप - जगदंबाबाबू गाँव आ रहे है - चित्रा मुद्‌गल, पृष्ठ ८९
४. लकडबग्घा - जगदंबाबाबू गाँव आ रहे है - चित्रा मुद्‌गल, पृष्ठ १०३
५. अग्निरेखा - ग्यारह लंबी कहानियाँ - चित्रा मुद्‌गल, पृष्ठ ११४
६. रूना आ रही है - ग्यारह लम्बी कहानियाँ - चित्रा मुद्‌गल, पृष्ठ १७०

की सख्त नुकीली बालों भरी पीठ आ गयी है।'[१]

(छ) 'द्वंद्व के कई-कई मोर्चे खुल गए हैं मगर हर मोर्चे पर बाबूजी की सिर्फ पीठ है।'[२]

(ज) 'उसकी आंतों में तेजाब से भरा भीमकाय देग खौल रहा। देग से लपटों सी उठती भाप में सबसे पहले उसकी खोपडी झुलसी। भीतर का भेजा पिघली हुई रबड-सा कनपाटियों से चूने लगा।'[३]

(झ) 'हरीन्द्र के कंधो पर टिका हुआ चेहरा अचानक सूख आया था ... अकाल में दरकी भूमि-सा ... जिसके अतल गर्भ में छिपी अजस्त्र धाराएँ भी बाहर सूखे का सामना करते-करते एक बिंदू पर पहुँच कर बाष्प होने लगती है और बाहर का सूखा ... भीतर रेत होने लगता है।'[४]

(ञ) 'ऊपर छितरी विरल दूब की गहरी जडों-सी ! मिट्‍टी से गहरे आबद्ध !'[५]

(ट) 'चिजें पकती रहती हैं भीतर ... उनके सामने आते ही पता नहीं क्यों यही अनुभूति होती है कि अचानक इसी क्षण घटा हैं जबकि वह उसके प्रकट होने की एक क्रिया मात्र है ...।'[६]

२.१.१.४ व्यंग्यात्मकता :

हास्य-व्यंग्य प्रधान कथाओं में व्यंग्यात्मकता की बहुलता रहती है। भाषा का यह गुण भारतेन्दु युगीन कथा साहित्य से लेकर वर्तमान काल तक के कथा साहित्य में मिलता है। रचनाकार व्यंग्यात्मक भाषा का प्रयोग सामान्य ढंग के व्यंग्य-विनोदपूर्ण विषय के लिए तो करता ही है साथ ही जहाँ कहीं विकराल सामाजिक समस्या को वह प्रस्तुत करता है, वहाँ उसकी भाषा व्यंग्यात्मक हो जाती है। चित्रा जी ने सामाजिक विषमता को अभिव्यक्ति के लिए और कटू यथार्थ को व्यक्त करने के लिए व्यंग्योक्ति का प्रयोग किया है।

---

१. बाघ - जिनावर - चित्रा मुद्‍गल, पृष्ठ ३६
२. प्रेतयोनी - चर्चित कहानियाँ - चित्रा मुद्‍गल, पृष्ठ ६०
३. जिनावर - जिनावर - चित्रा मुद्‍गल, पृष्ठ ५७
४. एक जमीन अपनी - (उपन्यास) - चित्रा मुद्‍गल, पृष्ठ १५२
५. एक जमीन अपनी - (उपन्यास) - चित्रा मुद्‍गल, पृष्ठ १९४
६. एक जमीन अपनी - (उपन्यास) - चित्रा मुद्‍गल, पृष्ठ २४०

२.१.१.४.१ विनोदपूर्ण भाषा :

(क) 'काश में किसी डॉक्टर, इंजिनियर, वकील, कम्पाउण्डर, क्लर्क, हवलदार या चाहे किसी घसियारे की ही बीवी होती पर किसी सम्पादक की पत्नी न होती।'[१]

(ख) 'गनीमत समझो कि मैं तुम्हें अपनी गाडी में ले जाता हूँ वरना तो एंबुलेंस को फोन करना पड जाए- ''फालो हर''।'[२]

(ग) 'शेरनी का चित्र बनाया है, डरने से कैसे काम चलेगा।'[३]

(घ) 'डोंट लॉफ दिस मच ... साला द्विवेदी का बचा फौरन केबिन से बाहर निकल आयेगा। तुम तो चुप्पी साध लोगी ... मगर अपना तो भाजीपाला हो जायेगा। आधा घण्टा वह कंधे उचका-उचका कर तौर तरीकों पर भाषण पिलाते हुए मुहब्बत फरमायेगा।'[४]

(ङ) 'मेरी बीवी की नजर कमजोर हो सकती है, पर इट डजन्ट मीन दैट ही ... ब्लडी लाइन मोरो टू माई वाईफ?'[५]

(च) 'सोचा अगर तुम्हें फोन कर दूंगा तो तुम उस उल्लू के पट्ठे को भी खबर कर दोगी ... और काम-धाम छोडकर मूसलचंद साक्षात् हमारे बीच होगा। बाय दि वे खलनायक है कहाँ?'[६]

(छ) ''यकिन कीजिए ... मैने इंदिरा गांधी को नहीं मारा ... बंदे को सरदार सुखविंदर सिंह कहते हैं।'[७]

(ज) 'एक लादा था ... लादा बोत गलीब था।'[८]

---

१. होना सम्पादक की पत्नी - एक लेखिका का - इस हमाम में - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ ११७
२. मोर्चे पर - ग्यारह लम्बी कहानियाँ - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ ६४
३. अग्निरेखा - ग्यारह लम्बी कहानियाँ - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ १०५
४. बावजूद इसके - ग्यारह लम्बी कहानियाँ - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ १४५
५. रूना आ रही है - ग्यारह लम्बी कहानियाँ - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ १५८
६. अपनी वापसी - चर्चित कहानीयाँ - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ २४
७. एक जमीन अपनी - (उपन्यास) - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ ७२
८. एक जमीन अपनी - (उपन्यास) - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ २१४

२.१.१.४.२ व्यंग्यात्मक भाषा :

(क) 'यहाँ वे मुखौटे नहीं है जो अम्मी अब्बा की पाक सूरत की आड में, नीच कर्म को विवश करते है।'[१]

(ख) 'कचरे के साथ बहुत सारी बातें ये लोग खुद ही बाहर फेंक देता हय।'[२]

(ग) 'जिसकी एक के साथ नहीं निभी, दस के साथ क्या निभेगी ... फिर आदमी और जगह बदल लेने से जिंदगी थोडे ही बदल जाती है।'[३]

(घ) 'देखा जाय तो बेचारे लेखक-लेखिकाओं को एक आदर-सत्कार ही तो है जो भरपूर खुले हाथों मिलता है बाकी तो मात्र 'पत्रम-पुष्पम्' होता है।'[४]

(ङ) 'समझ नहीं पाई कि मैं अच्छा इसलिए बोलती और लिखती हूँ कि मैं एक सजग लेखिका हूँ या इसलिए कि सम्पादक पत्नी हूँ! आखिर मुझे बोलने के लिए बुलाया जाता है या रचनाएँ तोलने के लिए।'[५]

(च) 'तुम्हें तो किसी मंदिर में होना चाहिये। ... वहाँ कुछ करना नहीं पडेगा। पुजारी घण्टा-घडियाल टुनटुनाते रहेंगे और तुम उन प्रस्तरों में से एक ओर जडवत् मूर्ति-सी ...।'[६]

(छ) 'भैया लोगों में औरत को घर पे रखते ... धन्ना पानी नई करवाते ... उसका कमाई नई खाते ... ।'[७]

(ज) 'नरेन्द्र के ब्याह होने-न-होने में तुम्हें इतनी दिलस्पी क्यों हैं ? भई अपनी बहन के लिए फाँसने का चक्कर-वक्कर तो नहीं है कहीं ? जाता-आता तो बहुत है तुम्हारे घर ...।'[८]

---

१. फातिमाबाई कोठे पर ही नहीं रहती - इस हमाम में - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ ३४
२. इस हमाम में - इस हमाम में - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ ९८
३. इस हमाम में - इस हमाम में - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ ९९
४. होना संपादक की पत्नी - एक लेखिका का - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ १२१
५. होना संपादक की पत्नी - एक लेखिका का - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ १२६
६. बावजूद इसके - ग्यारह लम्बी कहानियाँ - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ १४५
७. केंचुल - ग्यारह लम्बी कहानियाँ - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ १३१
८. पेशा - ग्यारह लम्बी कहानियाँ - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ ३१

(झ) 'लोगबाग अध्यापिका के घर साग-सब्जी क्यों भिजवाते है ? सीधा-पिसान क्यों नहीं भिजवाते ...।'[१]

(ञ) 'बासन खंगाल के धरि गयी हो का ? तनिक जांगर चलावा करो ? सेंत मेत में तो मजतिंव नही ... कहौ तो दोना ... पत्तरिन पर खवावे लागी ?'[२]

(ट) 'इन खब्तियों के दिमाग में अंग्रेजी की श्रेष्ठता का कीडा घुसा बैठा हुआ है। इन्हे लगता है- दूनियाँ में जो कुछ भी बेहतर सोचा समझा, समझा जा सकता है- वह अंग्रेजी में।'[३]

(ठ) 'अंग्रेजी वाले उस महिला के समान हैं जो स्लीवलेस पहनकर अपने को परम आधुनिक समझने का भ्रम पाल लेती हैं।'[४]

(ढ) 'कुछ लोग जीवन में सिर्फ बिच्छु होते हैं, वे किन्ही भी परिस्थितियों में अपनी प्रकृति नहीं भूल पाते।'[५]

२.१.१.५ नाटकीयता :

प्राय: मनोविज्ञान या दर्शन पर आधारित कहानियों में नाटकीय भाषा का प्रयोग दृष्टिगत होता है। चित्राजी की कहानियों में कहीं-कहीं ही नाटकीयता के गुण मिलते है। समस्याओं से जुडी कहानियों में यूँ भी भाषा में नाटकीयता नहीं आ पाती है। कुछेक उदाहरण इस प्रकार है-

(क) 'हम अलमस्त घुनकी में थे और मिसेज फलाँ को अपने हिस्से में पाने की खुशी में अन्धे। ... भई वह वक्त तो बांहो में अनायास स्वर्ग समा जाने जैसा था ... फिर मिसेस फलाँ। ओफ्फ ... क्या चीज है साहब ! ... पार्टी के हर सदस्य के लिए आकर्षण को विषय। सो हम तो अपनी किस्मत को सलाम ठोकते गाडी ले उडे ... 'ऐण्ड आई रियली टेल यू ... वह

---

१. अनुबन्ध - ग्यारह लम्बी कहानियाँ - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ १८
२. जगदंबाबाबू गाँव आ रहे है - जगदंबाबाबू गाँव आ रहे है - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ ३९
३. एक जमीन अपनी - (उपन्यास) - एक जमीन अपनी - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ २६
४. एक जमीन अपनी - (उपन्यास) - एक जमीन अपनी - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ ९९
५. एक जमीन अपनी - (उपन्यास) - एक जमीन अपनी - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ २२८

एक खूबसूरत रात थी ऐण्ड ... शी वाज वण्डरफुल ... वेरी कोऑपरेटिव ...' ।'[१]

(ख) 'वह टहलते हुए अनुमान लगाने लगी कि अब निगम ने बेसमेंण्ट में गाडी पार्क की, अब लिफ्ट में दाखिल हुए, अब लिफ्ट ऊपर सरकने लगी है। वह 'लिफ्ट' के सामने आ खडी हुई। सूचना पट्ट पर अंक गुलाटी खा रहे है। छह, सात, आठ, नौ, दस, ग्यारह। 'हिच्' करती लिफ्ट ठहट गयी है। स्वचलित दरवाजे धडधडाते से खुलने लगते है।'[२]

(ग) 'लगता है तुमने अपने माथे पर डूबता हुआ सिन्दुरी सूरज टांक लिया है, मनू ... ।'[३]

(घ) दो हफ्ते से बिस्तर पर पडा है बच्चा, किसी रोज दिक्कत हुई क्या ? कोई तकलीफ दी उन्हें बच्चू ने ? उठ पाता है तो अपने आप निर्देशानुसार दवा खा लेता है। दूध ले लेता है। बच्चू से लगाव नहीं हैं, न सही। लेकिन सामान्य दया-माया पाने का भी अधिकारी नहीं है वह।[४]

(ड) 'यह कौन सा स्वांग है ? काहे दुलहिन, काहे न उठि है ?'
'हम कोप म हन दिदिया ...'
'हां, हां, कोप म।'[५]

(ट) 'शहर को खतरा यूँ है जनाब कि आज बिना टिकट दो तन्वंगियां की फ्री स्टाइल कुश्ती देखने को मिली ... बाबा-रे-बाबा क्या झोंटापछाड दाँव मारा बाबी ठाकुर ने ... आई शपथ! बेबान स्टेडियम में उनका मुकाबला रख दिया जाए तो हार-जीत के फैसले पर शहर में दंगा हो जाए, दंगा ... नहीं क्या ?'[६]

ठ) 'तीन ओर सागर से घिरे बंबई की हवाओं में ही नमक नहीं है, यहाँ की पहाडियों, घाटियों, हरियाली और चेहरों पर भी उसकी आब महसूस की जा सकती है। यह कतई अलग बात

---

१. अपने अपने गिरेबान - इस हमाम में - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ ७८-७९
२. जरिया - इस हमाम में - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ १०१
३. अग्निरेखा - ग्यारह लम्बी कहानियाँ - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ १००
४. ताशमहल - जगदंबाबाबू गाँव आ रहे है - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ ५६
५. लम्बी - जगदंबाबाबू गाँव आ रहे है - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ ९८
६. एक जमीन अपनी - (उपन्यास) - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ ४३

है कि निरंतर बढती जद्दोजहद ने चेहरों के नमक को सोख कर उसे लोन लगी दिवारों में तब्दील कर दिया है। जो एक सीमा के बाद उसे खोखला करने लगता है।'[१]

२.१.१.६ भावात्मक :

भावात्मक भाषा का प्रयोग कथा-साहित्य में करुणाजन्य प्रसंगों में होता है। चरित्र के विकास की दृष्टि से भी यह भाषा उपयुक्त होती है। चित्राजी की कई कहानियाँ सर्वहारा वर्ग के शोषण की कहानियाँ है। ऐसी कहानियाँ में कई-कई स्थानों पर उनकी भाषा भावपूर्ण हो जाती है। 'भूख' कहानी में सावित्री के कई प्रयासों पर भी लक्ष्मी को काम नहीं मिल पाता। जिस सेठ के यहाँ सावित्री काम करती है वहाँ भी सेठ लक्ष्मी से डिपाजिट मांग कर काम नहीं देता। सेठ का इन्कार सावित्री को ऐसा लगता है 'जैसे उसे ही नौकरी से निकाल दिया। जो औरत अनाज के कचरे में से उसके बच्चों के लिए घुघरी बनाने के लिए दाने चुन लाती है वह ..., सावित्री के चेहरे की लाचारगी और पीडा निश्चित ही उसके मर्माहत होने से कम नहीं होगी।'[२] 'लेन' कहानी की महेन्दरी पति पर जानलेवा हमला करने वालो को लाखों में भी पहचान लेने का दावा करती है - 'मैं ओ माणस को कैसे भूल सकती हूँ जिसने मेरे सुहाग को ... मेरे बाल-बच्चे के आसरे को मिटाणा चाहा। मैं ... मैं उस हत्यारे को लाखों-करोडों में पिचाण सकती हूँ ... मेरे सामने हाजिर करो उसे ढिले मार-मार कुत्ते की जाण लूंगी ... उसकी बोटी-बोटी मुहल्ले के कुत्तों को खिलाऊंगी !'[३] ऐसे ही अन्य कई कहानियों से उदाहरण दिये जा सकते है। जैसे -

(क) 'उसकी बेटी घुघुनू ... राजकुमारी चन्द्रावल। कडवे तेल से तर भूरे घुंघराले बालों में उलझा हुआ गन्दुमीं चेहरा ... दीप्-दीप् करती गोल चमकीली आँखे ...'[४]

(ख) 'व्यक्ति व्यक्ति से अलग होता है ... मैं तुम्हें अब भी ... तुम्हारे लिए सही मायनों में साथी

---

१. एक जमीन अपनी - (उपन्यास) - चित्रा मद्गल, पृष्ठ ८८
२. भूख - इस हमाम में - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ १२
३. लेन - इस हमाम में - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ १३६
४. ब्लेड - इस हमाम में - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ ६०

होना चाहता हूँ शुभू। बच्चू के लिए सचमुच पिता। तुम पाओगी, मैं जो कुछ कह रहा हूँ, मात्र मेरा सोचना भर ही नहीं है, न कोरी भावुकता की उडान।'[१]

(ग) 'बाबू, अम्मा नहीं रहे तो नैहर नहीं रहा, मगर नैहर की सौंधी स्मृतियाँ उन्हें कभी बनवारी काका के दशहरी आमों के बागों मे डोलती रही, तो कभी किसी गुइयां की सोहगिलों के गीत-गवाती रही, तो कभी उन्हें कोयलपादी अमिया के पीछे लडाती-भिडवाती रहीं, तो कभी मदरसे से लौटते हुए खेतों की मेड़ उतर चेलियों की बेलें टटोलवाती रही।'[२]

(घ) 'मेमसॉब उसे अपनी छोटी-सी जिंदगी में देखी गई उन तमाम औरतों से भिन्न लगी, जो मोहल्ले के रिश्ते से उसे अपनत्व दे दुलराती रहीं ... आँखों से छत का पतरा एकदम ओझल हो गया। इतनी लबलबा आई। जैसे फूल खूंपटने को लचायी हुई टहनी अचानक डाल समेत चरमरा कर पेड से अलग हो गयी।...'[३]

(ङ) 'विरोध प्रदर्शन की खबर वह अपनी आँखों से पढना चाहती है। शब्द-शब्द टटोलना चाहती है कि आखिर ये कौन लोग हैं जो उसके स्त्रीत्व के अपमान और तिरस्कार से स्वयं अपमानित और आहत हुए हैं ? बैचेन हुए हैं ? क्यों नही वे प्रतिक्रिया में खामोश बैठ गए ? उसके परिवार वालों की भांति ? जो घटा, मात्र उसके मूकदर्शक-से।'[४]

(च) 'उसने अपने चारों ओर जडता की दीवार खडी कर ली है ... मैं इस जडता से ऊब चुका हूँ ! शकून, ऊब गया हूँ बेतरह। बच्चे कट गये हैं ... उससे दूर-दूर रहते हैं ... मेरा कहीं निकल भागने को जी चाहता है ... मैं जीना चाहता हूँ ... मैं जी नहीं पा रहा ... लगता है, एक और भयंकर युद्ध हो ... पाकिस्तान के साथ और मैं बच कर न लौटूं ...'[५]

---

१. ताशमहल - जगदंबाबाबू गाँव आ रहे है - चित्रा मुद्‌गल, पृष्ठ ६०
२. लकडबग्घा - जगदंबाबाबू गाँव आ रहे है - चित्रा मुद्‌गल, पृष्ठ ९३
३. मामला आगे बढेगा अभी - लाक्षागृह - चित्रा मुद्‌गल, पृष्ठ १८
४. प्रेतयोनि - जिनावर - चित्रा मुद्‌गल, पृष्ठ २१
५. अपनी वापसी - चर्चित कहानियाँ - चित्रा मुद्‌गल, पृष्ठ ३५

(छ) 'सोचा था बडी संपन्न हूँ ... कुछ मित्र अपने हिस्से में हैं, जिंदगी उनके कंधो पर सर रख अपने दुख-सुख काट लेंगी मगर ... नहीं सोचा था कि पांव के नीचे फुट-भर जमीन की तलाश अपने ही मित्र के हाथों भ्रुण हत्या को प्राप्त होगी ...'[1]

(ज) 'नीता की ये तस्वीरें क्यों खिंचवा रही हो मां ! यह नीता नहीं है ... यह कोई कमजोर लडकी है ... पलायनवादी ... अपनीही रची घुटनमें घुटती ... इन्हें कहीं न दिखलाइएगा ... न देखिएगा माँ।'[2]

२.१.२ चित्राजी के कथा – साहित्य में भाषा के विविध रूप :

चित्राजी के कथा साहित्य में भाषा भाव की अनुगामिनी प्रतीत होती है। उनके कथा लेखन में भाषा का वैविध्य दृष्टिगोचर होता हैं। कथानक और पात्रानुरूप भाषा का प्रयोग उन्होंने किया है। उनके कथा साहित्य में भाषा का प्रौढ और परिष्कृत रूप मिलता है तो गाँव की सौंधी महक लिए ग्रामीण बोली के रूप भी मिलते है। इसी प्रकार उन्होंने मराठी, बंगाली, गुजराती आदि भाषाओं और अवधी, ब्रज आदि बोलियों के शब्द प्रयोग से भाषा को जींवतता प्रदान कर कथा को बल तो दिया है ही, साथ ही चरित्र को उभारने में भी सफलता अर्जित की है।

हिन्दी लेखन में अन्य भाषाओं और बोलियों के शब्द प्रयोग के संदर्भ में विवाद उठते रहे है। यह तो निर्विवाद सत्य है कि अन्य भाषाओं और बोलियों के शब्द प्रयोग से हिन्दी समृद्ध ही हुई है। जीवन की वास्तविकताओं को प्रकट करने के लिए यदि हम अपनी अंचलीय बोलियों से शब्द लें तो इससे हमारी राष्ट्रभाषा की समर्थता बढेगी और कथन में अधिक प्रामाणिकता आयेगी।[3] महादेवी वर्माजी कहती है कि ''जहाँ तक हिन्दी का प्रश्न है, वह अनेक प्रादेशिक भाषाओं की सहोदरा और एक विस्तृत विविधता भरे प्रदेश में अनेक बोलियों के साथ पल कर बढी हुई है। अवधी, ब्रज,

---

१. एक जमीन अपनी - (उपन्यास) -चित्रा मुद्‌गल, पृष्ठ ३३
२. एक जमीन अपनी - (उपन्यास) - चित्रा मुद्‌गल, पृष्ठ २५०
३. हिन्दी उपन्यास - एक अन्तर्यात्रा - डॉ. रामदरश मिश्र, पृष्ठ १९२
'खडी बोली हिन्दी में अपने शब्द कितने हैं जो हमारे समूचे जीवन की विविध वास्तविकताओं को व्यक्त करने में समर्थ हैं। विभिन्न बोलियों के शब्दों के प्रयोग से हिन्दी का शब्दकोष और भी समृद्ध होगा।'

भोजपुरी, मगही, बघेलखंडी आदि उसकी धूल में खेलने वाली सहचारियाँ है। इनके साथ कछार और खेतों में, मचान और झोपडियो में, निर्जन और जनपदों में घूम घूम कर उसने उजले आँसू और रंगीन हँसी का संबल पाया है।''[१]

२.१.२.१ परिनिष्ठित हिन्दी के शब्द प्रयोग :

(क) 'अंजा के ये शब्द व्यस्तता के बावजूद मस्तिष्क के संवेदन तन्तुओं में दुबके हथौडे की धमक से निरन्तर बजते रहे।'[२]

(ख) 'इधर हिन्दी के कुछ शीर्षस्थ कथाकारों ने इस दिशा में संयुक्त प्रयास आरंभ किया है, नाटककारों के साथ बैठकर मंच की तकनीक की जानकारी से भिज्ञ हो नाटक लिखने की।'[३]

(ग) 'हृदय प्रकोष्ठ के इन कोने में वह सदैव-सदैव अकेला है।'[४]

(घ) 'वह अन्यमनस्क हो उठी थी। पता नहीं ये उसके लिए प्रशंसा उद्‌गार थे या उस दृष्य से अभिभूत होकर कहे गये वाक्य।'[५]

(ड) 'उठते हुए एक पल के लिए जो उसके चेहरे पर सख्ती खिंची थी, वह कितनी सवाक् थी ! मेरी सामर्थ्य की अकिंचनता का उपहास उडाती।'[६]

(च) 'प्रेम का उद्‌दाम जहाँ एक के प्रति समर्पण की अति को छूता है, वहीं दूसरे के प्रति कितना निर्मम, उपेक्षापूर्ण हो उठता है।'[७]

(छ) 'ललीता का डॉ. कोठारी के प्रति मोहग्रस्त साधिकार आचरण मात्र श्रद्धा नहीं हो सकती ... न बॉस के प्रति औपचारिक आदरभाव।'[८]

---

१. मेरे प्रिय संभाषण - महादेवी वर्मा, पृष्ठ २६
२. इस हमाम में - इस हमाम में - चित्रा मुद्‌गल, पृष्ठ ८५
३. जरिया - इस हमाम में - चित्रा मुद्‌गल, पृष्ठ ११०
४. दशरथ का वनवास - ग्यारह लम्बी कहानियाँ - चित्रा मुद्‌गल, पृष्ठ ९४
५. अग्निरेखा - ग्यारह लम्बी कहानियाँ - चित्रा मुद्‌गल, पृष्ठ १००
६. रूना आ रही है - ग्यारह लम्बी कहानियाँ - चित्रा मुद्‌गल, पृष्ठ १७५
७. शून्य - ग्यारह लम्बी कहानियाँ - चित्रा मुद्‌गल, पृष्ठ २११
८. प्रमोशन - जगदंबाबाबू गाँवआ रहे है - चित्रा मुद्‌गल, पृष्ठ ७०

(ज) 'अपने भ्रम पर उसे वितृष्णा हुई।'[1]

(झ) 'अवहेलनापूर्ण उपेक्षित जीवनचर्या में जैसे वे प्राणों में ऊर्जा के स्फुलिंग फूँक देते हों।'[2]

(ञ) 'व्यक्ति के साथ दीवारों का कोई अर्थ होता है किन्तु व्यक्ति विहीन होकर भी कभी-कभी उसके अस्तित्व का आभास अपनी निर्जीवता-बोध की परतें निकालकर सहसा आपके सामने प्रकट हो आपके अकेलेपन को आश्रय ही नहीं देता, अपने हाथ होने के गहरे बोध से भी संपन्न करता है।'[3]

(ट) 'पर्याप्त सुविधाएँ और सहयोग व्यक्ति की परिश्रम क्षमता और उसकी विचारशक्ति को अधिक उर्जावान, गहन और पैना बनाती है।'[4]

(ठ) 'मुक्त मनुष्य अनाथ नहीं होगा। समाज के रूढ़ि नियम,धर्म के घोर अनुशासन में आबद्ध होकर क्या जीना इतना ही क्रुर, अमानवीय नहीं है ? तब जीना अगर कठीन होगा उसके लिए तो वह मनुष्य के अस्तित्व की स्वायत्तता का संघर्ष होगा।'[5]

(ड) 'नीता के जाने के बाद शिद्दत से महसूस हो रहा है विपरीत ध्रुवों-सी मानसिकता के बावजूद उनके लगाव की जड़ें कितनी सूक्ष्म और गहरी थी। कठोर अतल भूमि-तहों के नीचे डूबे स्त्रोत्र-सी !'[6]

२.१.२.२ उर्दू भाषा के शब्द :

हिन्दी और उर्दू जुडवा बहनों के समान है। उर्दू के कई शब्द हिन्दी में ऐसे घुले-मिले हैं कि वे हिन्दी के ही शब्द लगते हैं। चित्राजी ने उर्दू के कई शब्दों का प्रयोग अपने लेखन में किया है। खासतौर से यदि मुसलमान पात्र हैं तो उनकी भाषा उर्दू मिश्रित ही है।

---

१. पाली का आदमी - चर्चित कहानियाँ - चित्रा मुद्‌गल, पृष्ठ १११
२. अपनी वापसी - चर्चित कहानियाँ - चित्रा मुद्‌गल, पृष्ठ ३२
३. एक जमीन अपनी - (उपन्यास) - चित्रा मुद्‌गल, पृष्ठ ६८
४. एक जमीन अपनी - (उपन्यास) - चित्रा मुद्‌गल, पृष्ठ ९९
५. एक जमीन अपनी - (उपन्यास) - चित्रा मुद्‌गल, पृष्ठ २०४
६. एक जमीन अपनी - (उपन्यास) - चित्रा मुद्‌गल, पृष्ठ २४९

(क) 'बाकी सब तो खैरियत है पन मैं बोलती कि कुछ इसके बारे में भी आप लोग लिखिए कि सरकार हमारी इमारतें भी थोडा दुरूस्त कराये। पानी हफ्ते-हफ्ते ऊपर नहीं चढता।'[१]

(ख) 'पुलिस बन्दोबस्त तो जबरदस्त है पर ... वारदात हो जाने के बाद ही वह मुस्तैद होती है।'[२]

(ग) 'नामुरादो ! कहाँ से लाऊं दोनों जून तुम्हारे पेट में डालने को ... एक मैं ही साबुत बची हूँ इस घर में सो कहो तो अपनी बोटियां काट के चढा दूं हांडी में पकने। ... और भी जानें हैं कुनबे में कम्बख्त। उनकी है परवाह मर्दुए ?'[३]

(घ) 'खुदा का खौफ खा बदजुबान ... आग लगे तेरी गजभर की जुबान को कुत्तिया ! जिस रोज बैठ गयी न ये तेरी सौत, संखिया खाने की नौबत आ जायेगी पूरे कुनबे की !'[४]

इसके साथ ही चित्राजी के लेखन में कई उर्दू शब्द आये हैं- आबरू, औकात,औलाद, इलाज, इसरार, इश्क, इज्ज़त, ईमानदारी, उसूल, कहर, कचहरी, कब्रिस्तान, काश, ख्याल, खुदानखास्ता, खिलाफ, खत, ग़म, गज़ल, जिंदगी, जेहन, जुदा, जमीन, तनखाह, तबाह, तकरीबन, तारीफ, तौर-तरीके, दमन, दुआ, दरमियान, दरख्त, नाउम्मीदी, नामुकिन, नाबदानी, नीम-हकीम, नसीब, फर्ज, फकीर, बरबाद, बिरादरी, बेशऊर, बगलगीर, मुनासिब, मेहरबानी, मलाल, मरहम, मर्ज, मुआवजा, मुरदे, वास्ता, वजूद, वक्त, वाहियात, सब्र, सिफारिश, शिनाख्त, शरीक आदि।

२.१.२.३ अंग्रेजी भाषा के शब्द :

हिन्दी में उर्दू की तरह अंग्रेजी भाषा के भी शब्दों का प्रयोग प्रचुर मात्रा में हुआ हैं। पढे-लिखे लोग अंग्रेजी के शब्दों का बहुतायत से प्रयोग करते हैं। चित्राजी ने अपने कथा-साहित्य में सुशिक्षित

---

१. फातिमाबाई कोठे पर ही नहीं रहती - इस हमाम में - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ ३१
२. बंद - ग्यारह लम्बी कहानियाँ - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ १७८
३. जिनावर - जिनावर - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ ५३
४. जिनावर - जिनावर - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ ५४

पात्रों के मुँह से अंग्रेजी के शब्द और कहीं कहीं पूर्ण वाक्य ही अंग्रेजी से उच्चारित करवाये हैं। निम्नवर्ग के अनपढ़ पात्र भी अंग्रेजी के शब्दों का प्रयोग करते चित्रित हुए लेकिन वहाँ शब्दों का रूप अशुद्ध है या देसीपन में रंगा हुआ है।

२.१.२.३.१ संपूर्ण अंग्रेजी वाक्य :

(क) 'नॉट एट ऑल ... दे एंज्वाय इक्वली ...'[१]

(ख) 'डू यू थिंक, दैट पापा इज विद अस ?'[२]

(ग) 'दे आर क्वाईट मच्यौर।'[३]

(घ) 'वेरी राइट ... टेक योर ओन टाईम'[४]

(ङ) 'आई कॅन सेव यू फ्राम दिस प्राब्लम। बट ... लेट मी नो अबाउट योर डिसीजन।'[५]

(च) 'व्हाट अबाउट पेमेन्ट्स !'[६]

२.१.२.३.२ हिन्दी – अंग्रेजी मिले–जुले वाक्य :

(क) 'वह एक खूबसूरत रात थी ऐण्ड ... शी वाज वण्डरफूल ... वेरी को-ऑपरेटिव'[७]

(ख) 'व्हाट मीराबाई ! इन सफेद साडी ... सी, यू लुक लाइक हंसिनी ! समझी मदाम?'[८]

(ग) 'विच आई कैन नोट बी ... आई कैन नोट बी ... न वह बच्चों के लिए सुदीप बन सकती है न उनकी जगह हो सकती है फिर कैसे इनसे कहे ... सुदीप इज नो मोर ... व्हेन सुदीप इज वैरी मच विद दैम !'[९]

---

१. अपने अपने गिरेबान - इस हमाम में - चित्रा मुद्‌गल, पृष्ठ ७८
२. मोर्चे पर - ग्यारह लम्बी कहानियाँ - चित्रा मुद्‌गल, पृष्ठ ७८
३. रूना आ रही हैं - ग्यारह लम्बी कहानियाँ - चित्रा मुद्‌गल, पृष्ठ १५९
४. पेशा - ग्यारह लम्बी कहानियाँ - चित्रा मुद्‌गल, पृष्ठ ३८
५. बावजूद इसके - ग्यारह लम्बी कहानियाँ - चित्रा मुद्‌गल, पृष्ठ १४६
६. एक जमीन अपनी - (उपन्यास) - चित्रा मुद्‌गल, पृष्ठ १५
७. इस हमाम में - इस हमाम में - चित्रा मुद्‌गल, पृष्ठ ७९
८. मोर्चे पर - ग्यारह लम्बी कहानियाँ - चित्रा मुद्‌गल, पृष्ठ ६४
९. मोर्चे पर - ग्यारह लम्बी कहानियाँ - चित्रा मुद्‌गल, पृष्ठ ७८

(घ) 'मेरी बीवी की नजर कमजोर हो सकती है, पर इट डजन्ट मीन दैट ही ... ब्लडी लाईन मारो टू माई वाईफ ? ... पापा डोण्ट वरी ! कम्पनशियेट करूँगा। एकाध चान्स में अपनी गर्ल फ्रेन्ड से अलाऊ कर दूँगा ... डन ?'[१]

(ङ) आप रियक्ट कर गई अंकिता।[२]

इनके अतिरिक्त भी अंग्रेजी के शब्दों का प्रयोग चित्राजी की कहानियाँ में हुआ है जैसे - असोशियेट डायरेक्टर, प्रोजेक्ट, कर्न्विसिंग पावर, प्राडक्शन, फिनान्स, रिहर्सल, प्राइवेट, कैण्डीडेट, वैरीफाई, किचिन गार्डन, कनेक्शन, चेंजर, पॉट, स्नोफीलिया, सेलीब्रेट, इम्पोर्टेड, मैनेरिज़्म, एक्जिक्यूटिव, ट्रेनिंग, लवली कपल, रियली, आफ कोर्स, फैन्टास्टिक, प्लेस, अराइवल, लिफ्ट, क्यू, टोन, एस्टीमेट, थिंक, कीप पेशेन्स, इम्प्रेस, रीजनेबल आदि।

अशिक्षित या अल्पशिक्षित पात्रों द्वारा प्रयुक्त अंग्रेजी के शब्द इस प्रकार से है- कारड, टिरेन, सिलो, डिरेवर, टरम, बिलैक, कूंसीलर, टिरेनिंग, टैम, लंबर, इंसल्टी, रिसक, किलास, पेशल, फिलैट आदि।

२.१.२.४ मराठी भाषा के शब्द :

चित्राजी की कुछ कहानियाँ मुंबई के परिवेश की है। ऐसी कहानियों में कुछ पात्र मराठी भाषी भी है अत: चित्राजी ने कुछ मराठी वाक्यांशों का या शब्दों का प्रयोग अपनी रचनाओं में किया है। कुछ उदाहरण इस प्रकार से है-

(क) 'आजी कुठे गेली ?'[३]

(ख) 'पळ लवकर ...'[४]

(ग) 'घबर नई लक्ष्मा, मैं दूसरा जागा पन कोसिस करेगा।'[५]

---

१. रूना आ रही है - ग्यारह लम्बी कहानियाँ - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ १५८
२. एक जमीन अपनी - (उपन्यास) - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ ९९
३. एक जमीन अपनी - (उपन्यास) - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ ९०
४. केंचुल - ग्यारह लम्बी कहानियाँ - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ ११५
५. भूख - इस हमाम में - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ १८

(घ) 'मैं घाई-घाई में फास्ट टिरेन में चढी हो पिच्छू वो खार किदर रुकने की? बोरीवली उतरी कि ताबडतोड सिलो टिरेन पकडी अउर अब्बी इधर पोंची।'[१]

(ड) 'शेन्डी लगाता हरामखोर।'[२]

(च) 'हरामखोर कुत्ती ! ... मेरे कोच बोल मारती कि तेरे सरखा नौरा नई मंगता ? आई कोच ? आँख का पानी मर गया न हलकट ?'[३]

(छ) 'मुंबई आमची। ... अब्बी बोलता कि दूसरा जात वालों को बाहर हकालो।'[४]

(ज) ये सेठी साब हैं न, बोत चालू है। मेरी माँ को मुलुक में फकत बीस रूपया मेना भेजता हय। मन कू आता है कि दूसरा हॉटल पकड लूँ। जास्ती पगार मिलेगा ... पिच्छू आप लोगों का ख्याल आता है तो सोडने को दिल नई करता। आप लोग नौकरी सोडके दूसरा जागा जायेगा तो मैं पन इधर का नौकरी सोड देगा।[५]

(झ) 'जब तलक मैं शहर में आक्खा गोदाम जिम्मेवारी मेरे को सौंपा ... लोडिंग-अन लोडिंग ... सब्ब मेरा ताबे में।'[६]

(ञ) 'हलकट, मेलया, कुत्तरा, हरामखोर ... बोला था न तेरे कू सुबू ? विसरलास ! पण कईसा ... पन कईसा तेरे को याद नई हुआ कि मेरे को सेठानी के साथ खरीदी को जाना है ... चढी तेरे को चरबी ? अब्बी, सेठानी का बूमा-बूम कौन सुनेगा। तू।'[७]

(ट) 'ये ये ... सुबू-सुबू एइसा भांडना ! रात पाली करके आया मैं। खालीपीली भंकस नइ मंगता ... एकदम बोमडी नईं। सोने का है मेरे को।'[८]

---

१. भूख - इस हमाम में - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ २३
२. केंचुल - ग्यारह लम्बी कहानियाँ - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ ११६
३. केंचुल - ग्यारह लम्बी कहानियाँ - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ १३१
४. बंद - ग्यारह लम्बी कहानियाँ - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ १८६
५. बंद - ग्यारह लम्बी कहानियाँ - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ १८८
६. सौदा - जगदंबाबाबू आ रहे है - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ २६
७. त्रिशंकु - चर्चित कहानियाँ - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ १३९
८. त्रिशंकु - चर्चित कहानियाँ - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ १४७

इनके अतिरिक्त भी अन्य कई मराठी शब्द आये है उदाहरणार्थ - तूप, आइकलास, पोरगी, देवा, पावली, ताप, कुतरी, परत, खातरी, शपथ, मावसी, जामिन, लगेच, पोट, कचले, धोयेला, हलु-हलु, सोढने, हऊ, भात, ईस्वास, घाई, प्रेमालू, नक्कीच, खाडा, उसल-पाव आदि।

२.१.२.५ अवधी बोली के शब्द :

चित्राजी के कथासाहित्य में अवधी बोली का प्रयोग अधिक हुआ है। चूँकिं वे अवध प्रांत से जुडी है अत: वहाँ के ग्रामीण वातावरण और पात्रों को उन्होंने अपनी कहानियों में स्थान दिया है।

(क) 'अरे वहि दहिजार कैन हिम्मत कैसे परी रे ... बेटवा-बेटार तो भगवान का प्रसाद होति है। नहीं तो मनई तरिस जात है ... देवी-देवता मनावत है ... कथा भागवत सुनत है। टोना टोटका करावत है। तौनेऊ पै औलाद नहीं नसीब होति है ... और फिन्, अबै तो जिया बैठी है छाँह धरे ... हमरे तीज-त्यौहार करेवाली ... नेग-न्यौछावर धरे वाली ।'[१]

(ख) 'बबुन का कनिया मो उठाई लियो तो ... सरपट लेई चलो घरै।'[२]

(ग) 'अई सुक्खन भौजी, बासन खंगाल के धरि गयी हो का ? तनिक जांगर चलावा करों ? सेंत-मेत में तो मंजतिंव नहीं ... बीस ठो नगद, कलेवा ऊपर से अउ तीज-त्यौहार का नेग, कौछु सो अलग ! कहौ तौ दोना-पत्तरिन खवावे लागी ?'[३]

(घ) 'हमका पक्का प्रबंध चही ... पुनिया हमरी भांति जाहिल-काहिल न रही ... आज हम चार अक्षर पढी-लिखी तौ कोहू के आसरे चौका बासन निबटावति पडी रही होतिन ! हमार जिनगी कढिलत-घसिटत बीत गीयी। हमार भाग्य। मगर हम अपनी बिटिया का पढैबै ... इंहा संभव न होई तो हम वोहिका अपनी बहिनी के घर इलाहाबाद म राखि के पढैबै।'[४]

(ङ) 'होनी क गटई का फंदा बनाय के न पहिने रहब ... तुम कोहुक पसंद कई लेओ बिट्टी,

---

१. दुलहिन - ग्यारह लम्बी कहानियाँ - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ ५३
२. दशरथ का वनवास - ग्यारह लम्बी कहानियाँ - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ ८३
३. जगदंबाबाबू गाँव आ रहे है -जगदंबाबाबू गाँव आ रहे है - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ ३९
४. लकडबग्घा - जगदंबाबाबू गाँव आ रहे है - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ १००-१०१

जात-बिरादरिही म कौन लपकौरे धरे हं ? फिर कबै तलक अकेल जिन्गी ढोइहों ? बिटिया-बेटार के खातिर घर की देहरी तबै तक ... जबै तक महतारी-बाप जियत है अऊर अब तो महतारी-ही-महतारी बची हय बिट्टी ... ।'[१]

इनके अतिरिक्त कई शब्द अवधी बोली के आये है जैसे -मनई, बइठब, वहिमा, लेब, जौन, पैठारी, रोकिबे, तोहरे लगे, मकराहट, कऊनो, दुई-चार, तेहिन, खमसार, उपासे, बहुरिया, मेहरिया, फिन्, तुम्हुक, झूठी-फुरी, पेट-पोंछन, सौर, नेग-नेगार, बियाव, अखिनकिरिया, नासिकटौनू, सरौना आदि।

२.१.२.६ अन्य भाषाओं और बोलियों के शब्द :

चित्राजी ने अपने कथा साहित्य में पात्रानुकूल भाषा बोलियों का प्रयोग कर कथ्य एवं पात्रों को जीवंत बना दिया है। उनकी कुछ कहानियों में पंजाबी, गुजराती भाषाओं के एवं ब्रज, हरियाणवी बोली के वाक्य एवं शब्द प्रयुक्त हुए है। उदाहरण के तौर पर-

(क) पंजाबी भाषा के शब्द - बाश्शाओ, गड्डी, बकत, सिद्धे-सिद्धे, काके, अस्मान में सिड्डी, बिजी, दिदे, भैन जी, बंदा आदि।

(ख) गुजराती भाषा के शब्द - तपासा, बेन, बा, चौक्कस, आत्मघात, तमारो, परवडे, बेवडा आदि।

(ग) ब्रजबोली के शब्द - 'बाको कहनो है कि टाँग पै जाँच-फाँक के बाद पलस्तर चढेगा सो प्रीवेट करवाने से इलाज अच्छा होगा ... अब खर्चा-पानी जो लगेगो सो लगेगो पर मोडी की जिनगी बेदाग रहि जायगी ... जमानौ तो जनताई हो ... साबुत हाड-गोड वारी के डोले उठने मुश्किल है जे लुली लंगडी बनी रही तो कोन छप्पर-टप्पर देइगो ?'[२] इसी प्रकार एक

---

१. एक जमीन अपनी - (उपन्यास) - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ १५
२. ब्लेड - इस हमाम में - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ ६१-६२

अन्य उदाहरण है - 'बियाब बाबा ने तय किया है, जे बिनकी जबान मिथ्या करने का मतलब है बिरादरी में थुक्का फजीहत ... अलाय-बलाय निन्दा कि पता नहीं क्यों जबान तोडी ? मोडा जे तो वश नहीं है या दाल में कुछ काला है।'[1]

(घ) हरियाणवी बोली के शब्द - 'साब, उसको छोडणा णहीं सॉब ... फाँसी चढवाणा उसको फाँसी ... कोई दोष था मेरे मरद का ? कुछ बिगाडा था उसका ? जाण लेणे में कसर छोडी थी उसणें वो तो भगवाण णे बेसहारे की प्रार्थणा सुण ली ... नही तो ?'[2]

२.१.३ उक्तियाँ-सूक्तियाँ :

उक्ति से तात्पर्य है-कथन, वाक्य या कवित्वमय वचन[3] और सूक्ति का मतितार्थ है अच्छी उक्ति या बढिया बात।[4] गहन अनुभव से व्यक्त होने वाली विशिष्ट उक्ति ही सूक्ति है। डॉ. धनराज मानधने के अनुसार - 'सूक्ति जीवन के अनुभव का गहरा निचोड होता है। सूक्ति जीवन के अनुभव का गहन चिंतन और लेखक की प्रतिभा और क्रांतदर्शिता का उत्कृष्ट उदाहरण है। वास्तविक स्थिति का अनुभवों के बल पर किया गया वर्णन सूक्तियों के अतिरिक्त अन्य किसी विधा में नहीं मिल सकता।'[5] चित्राजी के कथा-साहित्य में अनेक ऐसी सूक्तियाँ यत्र-तत्र मिलती है जो उनके संघर्षमय जीवन के अनुभव का सार प्रस्तुत करती है। साथ ही उनके पात्रों का द्वंद्व और संघर्ष भी उनसे व्यक्त होता है। ऐसे कुछेक उदाहरण निम्नानुसार है -

(क) 'जब करेजे में असहायता का अंधड उखाड-पछाड कर रहा होता है बाहर की हवा भी रंग बदल लेती है।'[6]

---

१. पेशा - ग्यारह लम्बी कहानियाँ - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ ३१
२. लेन - इस हमाम में - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ १४७
३. हिन्दी शब्दकोश - डॉ. हरदेव बाहरी, पृष्ठ १०४
४. हिन्दी शब्दकोश - डॉ. हरदेव बाहरी, पृष्ठ ८४४
५. हिन्दी के मनोवैज्ञानिक उपन्यास - डॉ. धनराज मानधने, पृष्ठ ४६५
६. ब्लेड - इस हमाम में -चित्रा मुद्गल, पृष्ठ ६३

(ख) 'जब साहब सुझाव देने लगें तो समझ लो उन्होंने गैंडे की खाल ओढ ली है।'[१]

(ग) 'आदमी और जगह बदल लेने से जिन्दगी थोडे ही बदल जाती है।'[२]

(घ) 'पहचान का आईना दिखानेवाला व्यक्ति स्वयं भी कितना महत्वपूर्ण हो जाता है।'[३]

(ङ) 'मां-बाप पर पूरी तरह से निर्भर लडके का अपना कोई मोर्चा हो भी कैसे सकता था।'[४]

(च) ''निज' को जीवित बनाए रखने के लिए समय रहते अगर साधन न भुनाए गए तो ... प्रगती का ग्राफ कहीं छीजने लगता है।'[५]

(छ) 'जब तक किसी बडे का साया सिर पर होता है, आदमी छोटा ही बना रहता है ... जिस दिन वह नहीं रहता उसकी उम्र अपनी लम्बाई ओढ़ लेती है।'[६]

(ज) 'सहना कोई बांट सकता है।'[७]

(झ) 'कैसे कोई मरना चाहता है और कैसी मौत मर जाता है। हमारा अख्तियार हमारी मौत पर क्यों नहीं होता।'[८]

(ञ) 'ऐब न हो तो मर्द कैसा।'[९]

(ट) 'लात घूंसों से भी अधिक पीडादायक जख्म होता है अधिकार च्युत होने का।'[१०]

(ठ) 'जिसके माँ नहीं होती, बाप पहले ही मर जाता है।'[११]

(ड) 'क्या हिदायतों, सलाहों, सुझावों, सान्तवनाओं के सहारे जिंदगी को जिया जा सकता है।'[१२]

---

१. ब्लेड - इस हमाम में -चित्रा मुद्गल, पृष्ठ ६९
२. इस हमाम में - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ ९९
३. अनुबन्ध - ग्यारह लम्बी कहानियाँ - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ १२
४. पेशा - ग्यारह लम्बी कहानियाँ - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ ३२
५. पेशा - ग्यारह लम्बी कहानियाँ - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ ४४
६. दुलहिन - ग्यारह लम्बी कहानियाँ - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ ५९
७. मोर्चे पर - ग्यारह लम्बी कहानियाँ - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ ६८
८. मोर्चे पर - ग्यारह लम्बी कहानियाँ - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ ६९
९. बावजूद इसके - ग्यारह लम्बी कहानियाँ - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ १३८
१०. बावजूद इसके - ग्यारह लम्बी कहानियाँ - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ १४३
११. रूना आ रही है - ग्यारह लम्बी कहानियाँ - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ १६३
१२. शून्य - ग्यारह लम्बी कहानियाँ - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ १९६

(क) 'मुहब्बत भी साली कोई दिखाने की चीज है।'[१]

(ख) 'ललक को हम जबरन मार डालेगें तो सिवा जड़ता के हमारे पास शेष क्या बचेगा?'[२]

(ग) 'मन:स्थिती निर्वस्त्र हो या लुकाऊ, आत्मीय सहलाहट दोनों ही स्थितियों में अपेक्षित होती है।'[३]

(घ) 'अत्याचार दिल और आँखों का पानी मार देता है।'[४]

(ड) 'कोई एक व्यक्ति न जिंदगी का अंतिम पडाव होता है न पर्याय।'[५]

(च) 'तकलीफों की शायद यही कसौटी होती है, वह व्यक्ति की संवेदना को अपार सहिष्णु और अधिक व्यापक बना देती है या फिर भोथरा ! विपन्न !'[६]

(छ) 'मजबूती अपने अंतरमन में होती है।'[७]

(ज) 'शराब बडी खूबसूरत चीज है, बशर्ते आप उसे कायदे से लें।'[८]

(झ) 'अंतर्मन विक्षोभ की आंच में उत्तप्त हो सुर्ख अवश्य हो उठता है, गलता नही।'[९]

(ण) 'आत्मविश्लेषण, आत्म स्वीकारोक्ति विवेक जागृत व्यक्ति ही कर सकता है।'[१०]

२.१.४ कहावतें एवं मुहावरें :

'कहावत अर्थात मसल, लोकोक्ति।'[११] किसी घटना, प्रसंग अथवा प्रतीक का वर्णन करते समय प्रयुक्त होने वाले रूढ़ और मार्मिक कथन को कहावत कहते है। 'श्यामचन्द्र कपूर के अनुसार

---

१. अपनी वापसी - चर्चित कहानियाँ - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ ३०
२. अपनी वापसी - चर्चित कहानियाँ - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ ३५
३. पाली का आदमी - - चर्चित कहानियाँ - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ १११
४. त्रिशंकु - चर्चित कहानियाँ - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ१५९
५. एक जमीन अपनी - (उपन्यास) - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ २३
६. एक जमीन अपनी - (उपन्यास) - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ ७५
७. एक जमीन अपनी - (उपन्यास) - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ ८४
८. एक जमीन अपनी - (उपन्यास) - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ १५९
९. एक जमीन अपनी - (उपन्यास) - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ १८५
१०. एक जमीन अपनी - (उपन्यास) - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ १८६
११. हिन्दी शब्दकोश - डॉ. हरदेव बाहरी, पृष्ठ १५६

मनुष्य समाज के प्रसिद्ध अनुभव के सार को लोकोक्ति या कहावत कहते है। यह थोडे से शब्दों का एक स्वतंत्र वाक्य होता है।'[1] मुहावरे से तात्पर्य 'रूढ वाक्य' है।[2] जब कोई भी शब्द अपने मूल या सामान्य अर्थ को छोडकर किसी विराट या लाक्षणिक अर्थ में प्रचलित हो जात है तो उसे मुहावरा कहते है। श्री कपूर के अनुसार 'जो वाक्यांश अपने सामान्य अर्थ को न बताकर किसी विशेष अर्थ को बतलाता है और प्राय: क्रिया का काम देता है उसे वाग्धारा या मुहावरा कहते है।'[3]

लेखकगण अपनी रचना में कहावतों और मुहावरों का प्रयोग इसलिए करते है ताकि उनकी भाषा जनभाषा के अधिक निकट हो सके। लोकोक्ति का प्रयोग आधुनिक हिन्दी में समाप्त-सा हो गया है। परिष्कृत हिन्दी में इसका प्रयोग अपरिष्कृत और पुरानी शैली का लक्षण माना जाता है। कहावतों में ग्रामिणता की छूत लगी होने के कारण शिक्षित लोगों द्वारा इसका प्रयोग कम ही किया जाता है। लेकिन गाँवों और कस्बों में रहनेवाले ग्रामीण जनों में कहावतों एवं मुहावरों का प्रयोग प्रचुरता से होता है। कहावतों का अर्थ गंभीर, रोचक और प्रभावोत्पादक होता है। अत: अपनी बात के स्पष्टीकरण के लिए या उदाहरण के लिए ग्रामीण जन इन कहावतों का प्रयोग करते है। इन कहावतों को कभी-कभी आप्त वाक्य के रूप में भी मान्यता प्राप्त हो जाती है। कहावतों एवं मुहावरों के प्रयोग से रचना में सौंदर्य भी बढता है।

चित्रा मुद्‌गलजी की कहानियों में कहावतों एवं मुहावरों का प्रयोग मिलता है। उनकी कहानियों के कथ्य शहरी एवं ग्रामीण दोनों धरातलों पर है। ग्रामीण पृष्ठभूमि पर रची गयी कहानियों के पात्र तो कहावतों-मुहावरों का प्रयोग करते ही है क्योंकि कहावते-मुहावरें उनके जीवन में रचे-बसे है। लेकिन कई नगरीय पात्र भी इनका प्रयोग करते है क्योंकि उनकी जड़ें भी कहीं गाँवो से ही जुडी होती है। कई पात्र ऐसे भी हैं जो गाँवो से विस्थापित हो महानगरों में झोपडपट्‌टी की शरण में गाँव बसाए हैं। ऐसे पात्रों ने कहावतों-मुहावरों का प्रचुर मात्रा में प्रयोग किया है। चित्राजी ने

---

१. व्यावहारिक हिन्दी व्याकरण - श्यामचन्द्र कपूर, पृष्ठ १७८
२. हिन्दी शब्दकोश - डॉ. हरदेव बाहरी, पृष्ठ ६६७
३. व्यावहारिक हिन्दी व्याकरण - श्यामचन्द्र कपूर, पृष्ठ १७८

कहावतों एवं मुहावरों के प्रयोग से जहाँ ग्रामीण वातावरण जीवन्तता से निर्मित किया है वहीं पात्रों के चरित्र उद्घाटन में भी वे सहायक बने है। उनके कथा-साहित्य से चुनी हुई कुछ कहावतें इस प्रकार है-

'गरीबी में आटा गीला',[१] 'होम करें हाथ जले',[२] 'देर है अन्धेर नही',[३] 'हाथी मरा तो सवा लाख वाला',[४] 'उपासे के आगे मोदक',[५] 'चौदह वर्ष में तो घूरे के दिन भी फिरते है',[६] 'नमक का हक अदा करना',[७] 'सावन सूखे न भादो हरे',[८] 'सांच को आंच क्या',[९] 'अंधा क्या मांगे दो आँखे',[१०] 'शिकार के समय कुतिया हगासी !',[११] 'गधे के सिर से सिंग',[१२] 'भागते भूत की लंगोटी भली',[१३] 'कहाँ राजा भोज कहां गंगू तेली',[१४] 'डायन भी सात देहरी छोड़ देती है',[१५] 'नहले का दहला',[१६] 'ढाक के तीन पात',[१७] 'भूखे के सामने मोदक भरा थाल,'[१८] 'तेल देख लें, तेल की धार देख ले,'[१९] 'ऊंट के मुंह जीरे के समान,'[२०] इत्यादि।

चित्राजी के कथा साहित्य में मुहावरों का प्रयोग भी बहुत हुआ है। कुछेक उदाहरण इस प्रकार है-

---

१. लेन - इस हमाम में - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ १२९
२. लेन - इस हमाम में - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ १४८
३. लेन - इस हमाम में - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ १५०
४. जगदंबाबाबू गाँव आ रहे है - जगदंबाबाबू गावं आ रहे है - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ ४०
५. जगदंबाबाबू गाँव आ रहे है - जगदंबाबाबू गाँव आ रहे है - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ ४३
६. जगदंबाबाबू गाँव आ रहे है - जगदंबाबाबू गाँव आ रहे है - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ ४६
७. जिनावर - जिनावर - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ ५२
८. जिनावर - जिनावर - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ ५८
९. जिनावर - जिनावर - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ ६०
१०. जिनावर - जिनावर - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ ६२
११. शिनाख्त हो गयी है - चर्चित कहानियाँ - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ ८६
१२. त्रिशंकु - चर्चित कहानियाँ - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ १५१
१३. त्रिशंकु - चर्चित कहानियाँ - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ १५१
१४. एक जमीन अपनी - (उपन्यास) - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ ३१
१५. एक जमीन अपनी - (उपन्यास) - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ ३३
१६. एक जमीन अपनी - (उपन्यास) - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ ४८
१७. एक जमीन अपनी - (उपन्यास) - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ ५१
१८. एक जमीन अपनी - (उपन्यास) - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ ९३
१९. एक जमीन अपनी - (उपन्यास) - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ ९४
२०. एक जमीन अपनी - (उपन्यास) - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ ९८

(क) अब वापसी में 'सुरसा का मुँह हो' रही है।[१]

(ख) पर सम्बन्धित अधिकारियों के 'कान में जूँ' तक नहीं रेंगी।[२]

(ग) अभी किसी विधान सभाई या म्यूनिसिपल कार्पोरेट को 'चूना लग' गया होता तो आप 'जमीन-असमान के कुलांचे भरते' नजर आते।[३]

(घ) यह तो सोलह आने 'कडहिया में हाथ देने' वाली बात हुई।[४]

(ड) वह नहीं पडने वाला इस 'निन्यानबे के फेर में।'[५]

(य) तू तो 'अस्मान में सिड्डी लगा' रहा है।[६]

(छ) ... तुम्हारी तो 'पौ बारह' ... कमाल तो देखो, तुम रहती हो फिल्म नगरी बम्बई में ... पर इधर किसी ने तुम्हारी कहानियों को 'घास नहीं डाली ?'[७]

(ज) इसी एका के चलते कोठी वालों की 'दाल नहीं गलती।'[८]

(झ) लेकिन उस पर जो 'राहू केतु की कोप दृष्टि' पडी हुई है वह जीने दे तब न।[९]

(ञ) तनिक 'साँस में साँस' आये तो इनकी खबर जम के ले ...।[१०]

(ट) वह हफ्ता भर माथेरान में बिताकर आया था ... वह भी तीन-चार सौ रुपये पर 'पानी फेर के'...।[११]

(ठ) 'कोंरू का खजाना' गडा है हमरे लगे।[१२]

---

१. भूख - इस हमाम में - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ १७
२. चेहरे - इस हमाम में - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ ४८
३. चेहरे - इस हमाम में - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ ५२
४. ब्लेड - इस हमाम में - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ ६५
५. ब्लेड - इस हमाम में - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ ७१
६. ब्लेड - इस हमाम में - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ ७४
७. जरिया - इस हमाम में - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ १०३
८. लेन - इस हमाम में - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ १४२
९. लेन - इस हमाम में - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ १४३
१०. लेन - इस हमाम में - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ १५२
११. पेशा - ग्यारह लम्बी कहानियाँ - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ ३२
१२. दुलहिन - ग्यारह लम्बी कहानियाँ - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ ५६

(ड) मेरे कोच 'बोल मारती' कि तेरे सरखा नौरा नई मँगता ? आई कोच ? 'आँख का पानी मर गया' न हलकट ?[१]

(ढ) नये-नोखे की नौकरी हाथ लग गयी है तो 'धरती असमान न उठा।'[२]

(ण) ... 'तिल-तिलकर मारो।'[३]

(त) सबको 'सिंगे पर रक्खे हूँ।'[४]

(थ) प्रेम का 'ज्वार उतर गया ?'[५]

(द) 'ओखली में सिर देता' क्या ?[६]

(ध) वह इससे भूख और कडकी का 'रण्डी-रोना' रोकर नोट झाड ले जाता है।[७]

(न) कल दुकान खोलकर कौन 'मुसीबत मोल लेता ?'[८]

(प) अखिर उनका पुरुषार्थ क्या 'घास खाकर बैठा' है।[९]

(फ) पर वह अपने निर्णय पर 'टस-से-मस' नही हुई।[१०]

(ब) यह क्या मजाक है ... तबियत हमारी 'नक्शे दिखा रही है और तोरई आप हो रहे है ... ।'[११]

(भ) ऐसी जगह पर भर्त्सना करना उसे 'नंगा करना' नही होता ... अलबत्ता अपने 'कपडे जरूर उतर जाते' है ... ।[१२]

(म) इधर मिट्टी का तेल 'सोन चिरैया हो गया' है।[१३]

---

१. केंचुल - ग्यारह लम्बी कहानियाँ - चित्रा मुद्‌गल, पृष्ठ १३१
२. बावजूद इसके - ग्यारह लम्बी कहानियाँ - चित्रा मुद्‌गल, पृष्ठ १४६
३. बावजूद इसके - ग्यारह लम्बी कहानियाँ - चित्रा मुद्‌गल, पृष्ठ १५१
४. रूना आ रही है - ग्यारह लम्बी कहानियाँ - चित्रा मुद्‌गल, पृष्ठ १५७
५. रूना आ रही है - ग्यारह लम्बी कहानियाँ - चित्रा मुद्‌गल, पृष्ठ १७५
६. बंद - ग्यारह लम्बी कहानियाँ - चित्रा मुद्‌गल, पृष्ठ १७८
७ बंद - ग्यारह लम्बी कहानियाँ - चित्रा मुद्‌गल, पृष्ठ १७९
८. बंद - ग्यारह लम्बी कहानियाँ - चित्रा मुद्‌गल, पृष्ठ १९१
९. शून्य - ग्यारह लम्बी कहानियाँ - चित्रा मुद्‌गल, पृष्ठ २०८
१०. शून्य - ग्यारह लम्बी कहानियाँ - चित्रा मुद्‌गल, पृष्ठ २१०
११. एक जमीन अपनी - (उपन्यास) - चित्रा मुद्‌गल, पृष्ठ १०
१२. एक जमीन अपनी - (उपन्यास) - चित्रा मुद्‌गल, पृष्ठ ३४
१३. एक जमीन अपनी - (उपन्यास) - चित्रा मुद्‌गल, पृष्ठ ६९

२.१.५ गीत या काव्य का प्रयोग :

चित्राजी ने अपने कथा साहित्य में काव्य पंक्तियों का प्रयोग किया है। विशेष तौर पर ग्रामीण परिवेश पर रचित कहानियों में लोकगीतों को स्थान मिला है। ग्रामीण जीवन में लोकगीत रच-बस गये हैं। कहीं-कहीं भजन या गज़ल की पक्तियाँ भी प्रयुक्त हुई है। इनका कहानी में सार्थक प्रयोग हुआ है। गीत की पंक्तियाँ पात्र की मनोदशा, परिस्थिती को अभिव्यक्त करनें में समर्थ हुयीं हैं।

'ब्लेड' कहानी के राम खिलावन की मनौतियों के बाद जन्मी बेटी घुघुनू की टाँग टूट गयी है। उसके ईलाज के लिए उसे गाँव पैसे भेजने है। पैसों की जुगाड में चिंतित रामखिलावन बेटी के ख्यालों में खो जाता है कि गाँव जाने पर उसके पांवो पर झुला झुलती वह गीत गाती थी-

घुन मनैया; ... कौडी पैंया ... गंग बहैंया
गंगा हमका बालू दिन ...
बालू ले भडभुजा क दीन ...
भडभुजा हमका लावा दीन ...
लावा-लावा बीन चबाव... ठुर्री-ठुर्री गइया क दीन ...
गइया हमका दुध्दा दीन ...
दुध्दा लै हम खीर पकावा
सब कोऊ खावा ...
टु टुं रू ... टू ऽऽऽऽ'[1]

और उसका स्वप्न भंग हो जाता है जब पैरों पर से घुघुनू को उतार छाती पर बैठाने का यत्न करता है और वह देखता है कि उसकी टांगे निर्जीव-सी झूल रही है। घुघुनू का पैरों पर खेलना और फिर उसकी टांगों का बेजान हो जाना प्रस्तुत गीत के प्रयोग के कारण और अधिक मार्मिक बन पडा है।

'शून्य' कहानी में भी इस प्रकार लोक गीत का प्रयोग हुआ है। 'सरला' के विवाह में जीजी खूब नाची थी। 'बीडे से रचे होंठ, चम्पई माथे पर कांच की चम-चम टिकुली, कानों में झम-झम्

---

१. ब्लेड - इस हमामें में - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ ६९

करते बडे-बडे बुन्दे और पांवों में घुँघरू, स्वर में किसी षोडशीय गले की कच्ची उठान -

> ''गोरी चली नेहरवा बलम सिसकी दै दै रोवे।
> बागन में रोवें बगीइचा में रोवें,
> देहरी पै सिर दे मारे बलम सिसिकी दै दै रोवे ...'[1]

लेकिन सरला के जीवन में ठीक विपरीत प्रसंग आये। उसके पति राकेश बेला से प्यार करते है। उसे पति का प्यार प्राप्त ही नहीं हो पाया। इसी लिए प्रस्तुत गीत में व्यक्त भाव सरला के दुख को और गहरा करता है।

'जगदंबाबाबू गाँव आ रहे है' कहानी की दीनापूरवाली बहू सुक्खन भौजी के काम में हमेशा मीन-मेंख निकालती रहती है। संभवत: सिपाहियों के घर की बेटी होने के कारण ही वह सबको तुच्छ समझती है। यदि और ऊँचे घराने की होती तो और अधिक रोब झाडती। तभी तो सुक्खन भौजी लोकगीत की पंक्ति कह उठती है- ''पीतर की नथनी पे इत्ता गुमान, सोने की होती तो चलती उतान।''[2]

'रूना आ रही है' कहानी में रूना लैला की गायी गज़ल की पंक्ति बडे सार्थक रूप में प्रयुक्त हुई है। निमा गैर - बिरादरी में ब्याह के करने कारण अपने परिजनों से दूर हो गयी है। उसकी हमउम्र भतिजी रूना भी उससे दूर हो गयी है। वही रूना जो उसकी अंतरंग सखी भी थी। लेकिन निमा के शौकत से विवाह करने के कारण रूना का तयशुदा विवाह टूट गया। वर्षों बाद निमा की बेटी मुनिया के पत्र के कारण रूना निमा के यहाँ आने वाली है। अपने परिजनों की स्मृति में निमा खोयी है और ट्रांजिस्टर पर गज़ल के बोल रेंगते चले आते है- ''आ फिर से मुझे छोडकर जाने के लिए आ ... रंजिश ही सही ... ।''[3] निमा का रूना को शिद्दत से याद करना इस पंक्ति के उल्लेख के कारण और अधिक गहराता है।

---

१. शून्य - ग्यारह लम्बी कहानियाँ - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ २००-२०१
२. जगदंबाबाबू गाँव आ रहे है - जगदंबाबाबू गाँव आ रहे है - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ ३९
३. रूना आ रही है - ग्यारह लम्बी कहानियाँ - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ १६१

'एक जमीन अपनी' में टुन्नी को अम्मा गाडी के सहारे चलना सिखाती है तो लेखिका को 'ठुमक चलत रामचंद्र बाजे ...'[1] याद आ जाता है तो 'जगदंबाबाबू गाँव आ रहे है' में सभा मंडप में 'रघुपति राघव राजा राम'[2] की धुन बजने का वर्णन लेखिका ने किया है।

चित्राजी ने जहाँ कहीं भी काव्य का प्रयोग किया है, वहाँ वह प्रयोग अत्यन्त सार्थक सिद्ध हुआ है। लोकगीतों का प्रयोग तो अनूठा है- उनकी कहानी को आंचलिक कहानी के निकट लाता हुआ सा। लेकिन उनकी कहानी को हम आंचलिक कहानी नही कह सकते। क्योंकि उनकी कहानी में अंचल को नायकत्व प्रदान नहीं किया गया है। लेकिन ग्रामीण परिवेश अवश्य ही उससे उभरता है साथ ही पात्र की मन:स्थिती को चित्रित करने में सहायता प्राप्त हुयी है।

२.१.६ कोरस का प्रयोग :

यूँ तो कोरस से तात्पर्य 'समवेत गान या वृंदगान'[3] होता है। लेकिन यहाँ हमने ध्वनि साम्य मूलक गद्य राग पैदा करने वाले वाक्यों के सम्बन्ध में इसका प्रयोग किया है। ऐसे वाक्य जो एक के बाद एक ध्वनि की समानता लिए काव्य के समान लयात्मक रूप में एक साथ प्रयुक्त होते है, उन्हें कोरस कहा है। ऐसे वाक्यों का प्रयोग चित्राजी की अपनी विशिष्टता है। उदाहरणार्थ कुछ अंश इस प्रकार से है-

(क) 'वारदात भी है। भीड भी है। भीड में आक्रोश भी है। उत्तेजना भी है, प्रतिशोध भी है' -[4] प्रस्तुत वाक्य अवसर के महत्व को रेखांकित करता है।

(ख) 'भीड ! जो बडी मजमेबाजी, चक्करबाजी, नारेबाजी, भाषणबाजी, झण्डेबाजी, दुर्घटनाबाजी, आन्दोलनबाजी, हडतालबाजी से पैदा होती है।'[5] - भीड बनने के कई-कई कारण इकट्ठे ही प्रस्तुत कर दिये गये है।

---

१. एक जमीन अपनी - (उपन्यास) - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ १५७
२. जगदंबाबाबू गाँव आ रहे है - जगदंबाबाबू गाँव आ रहे है - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ ४८
३. हिन्दी शब्दकोश - डॉ. हरदेव बाहरी, पृष्ठ १८१
४. चेहरे - इस हमाम में - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ ५३
५. चेहरे - इस हमाम में - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ ५४

(ग) 'सोमेश महसूस ही नहीं करते कि अब मैं पढते-पढते थक गयी हूँ, सोते-सोते थक गयी हूँ, दिन भर टेबल-कुर्सियाँ, कुशन झाडते-पोंछते थक गयी हूँ - सिर्फ उनकी और उनकी ही बातें सुनते-सुनते थक गयी हूँ।'[1] - पुरूष के दंभ से आहत नायिका की ऊब इस कोरस से अभिव्यक्त हुयी है।

(घ) बेटी समान सरना पर बानी की बुरी नजर पडती है। सरना कमला से जब बानी की गलीज हरकत का बयान करती है तो वह अपना आक्रोश कुछ इस तरह से व्यक्त करती है जो कोरस में चित्राजी ने अभिव्यक्त किया है- 'पिच् से उसने अपने दाहिने तरफ पड रही बिना प्लास्टरवाली रामरती की चाल पर थूका। पाण्डे की बाकडेनुमा पान की दूकान को लक्ष्य कर थूका। गोबर पुते वागले मोची के झोंपडे पर थूका। मन ही मन तय कर लिया कि ठीक ऐसे ही वह बानी की गल्ले ठुँसी दूकान पर थूकेगी और बानी के सामने पहुँच कर, उसके पपीते जैसे लम्बोतरे चेहरे पर थूकेगी।'[2]

२.१.७ लेखिम स्तर :

चित्राजी के लेखिम स्तर में यह बात विशिष्ट रूप से दिखायी देती है कि उन्होंने अपनी प्राय: सभी रचनाओं में बिन्दू का प्रयोग किया है। डॉ. बैकुंठनाथ ठाकुर का कहना है कि 'वाक्यांत में और कभी कभी वाक्य के मध्य में भी कुछ बिन्दुओं (...) का प्रयोग किया जाता है। कथा साहित्य में इस चिह्न (...) का अत्यधिक प्रयोग होता है। मैने इसका नाम अपूर्णता वाचक चिह्न (...) दिया है। इस चिह्न (...) के प्रयोग से केवल वाक्यों की अपूर्णता ही लक्षित नहीं होती, बल्कि मनोभावों की अपूर्णता भी परिलक्षित होती है। विचार प्रवाह का टूटना, मनोभावों का बिखरना तथा बिबों का खंड रूप में उभरना इन चिह्नों (...) के द्वारा स्पष्ट हो जाता हैं। चूँकि वाक्य रचना का सम्बन्ध मन:स्थितियों से है अत: वाक्य में इस चिह्न (...) का उत्तरदायित्व और भी महत्वपूर्ण हो जाता

---

१. इस हमाम में - इस हमाम में - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ ९१
२. केंचुल - ग्यारह लम्बी कहानियाँ - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ ११८

है।'[१] इसी प्रकार का प्रयोग अप्रिय या अमर्यादित कथन से बचने के लिए भी किया जाता है। द्वंद्व, निराशा, खीज, विद्रोह भी बिन्दु प्रयोग से व्यक्त होते है। डॉ. रमेशचन्द्र कहते हैं कि- ''भाषा की जीवंतता केवल उपयुक्त मुहावरेदार शब्दों और वाक्यों में ही नहीं बल्कि उनके बीच के अंतरालों में भी नीहित है।''[२]

(क) 'बजाय वहाँ बैठे-बैठे मुदित होने के उठकर भीतर जा सकती थी। मगर वे ...'[३]

(ख) 'कॉलेज में हुई मोहब्बत ... कपूर से हुई सगाई ... डेढ साल तक कपूर के साथ सरे आम घूमना-फिरना ... और ठीक शादी से महीने भर पहले कपूर का ब्याह से मुकर जाना ...'[४]

(ग) 'इहां लाके लालू दलाल के हाथ बिका दिया ... चार हजार का सौदा पटा ... लालू हमसे धंधा करवाने को मार-कुटाई करने लगा ... हम हाथ-गोड जोडते रहे ... हमका छांडि दे ... हमसे नहीं होगा ... आज सुबह बहुत जबरई किया ... हम खिडकिया से कूदि के भागे ...'[५]

(घ) 'स्कूल, पास पडोस, बगीचों ... रेल्वे ... प्लेटफार्म ... पुलिस स्टेशन ... ट्रेफिक दुर्घटना सूची ... रेल्वे दुर्घटना सूची ... बाल सुधार गृह ... निखिल विक्षिप्त से स्कूटर लिए दौड रहे थे।'[६] अपने खोए हुए पुत्र को ढुंढते व्याकुल पिता के सारे प्रयत्न साकार हो उठे है।

(ड) 'लगता है ... कभी दृष्टि नितांत कार्यमुक्त हो ... फुरसत में जहाँ चाहे वहाँ देखने को स्वतंत्र हो इर्द-गिर्द ... अपनेअंदर-बाहर ... किसी की आँखो की राह उसके हृदय प्रकोष्ठ की सीढियाँ उतरती, फलांगती उसमें झाँक सके ...'[७]

---

१. हिन्दी कहानी का शैली विज्ञान - डॉ. बैकुंठनाथ ठाकुर, पृष्ठ १११
२. हिन्दी कहानी की पहचान और परख - डॉ इन्द्रनाथ मदान, पृष्ठ २२०
३. दुलहिन - ग्यारह लम्बी कहानियाँ - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ ५१
४ मोर्चे पर - ग्यारह लम्बी कहानियाँ - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ ७०
५. सौदा - ग्यारह लम्बी कहानियाँ - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ ७०
६. शिनाख्त हो गयी है - चर्चित कहानियाँ - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ ८६
७ एक जमीन अपनी - (उपन्यास) - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ १८६

२.१.८ विचलित वाक्य प्रयोग :

अपने कथ्य या कथन को प्रभाव पूर्ण बनाने के लिए प्राय: रचनाकार वाक्य विचलन का प्रयोग करता है। विचलित वाक्यों का संयमित प्रयोग जहाँ सर्जनात्मकता को बढाता है वहीं भाषा में सौंदर्य निर्मित कर कथन को अग्र प्रस्तुत करता है। चित्राजी की कहानियों में विचलित वाक्यों का प्रयोग मिलता है- ऐसे वाक्य जो क्रम-भंगपरक है। कुछ उदाहरण दृष्टव्य हैं-

(क) 'गलत कहाँ कहा था जतिन ने।'[१]

(ख) ''पत्नी में तुम्हारी बन नहीं सकती''[२]

(ग) ''जन्मजात गूंग-बहरी हैं दोनों।''[३]

(घ) ''यही कहती कि खुद ही चली आयी हूँ बीमारी की खबर सुनकर।''[४]

(ङ) 'महेन्द्र भैया के एकमात्र गहरे दोस्त बन गये थे श्रीमन्त।'[५]

(च) 'तरस गई है उन्हें उनकी पहली रंग-उमंग में दखने को।'[६]

(छ) 'मान गया है वह अपने बडे भाई को बेवा से ब्याह को ...'[७]

(ज) 'साक्षात दुर्गा ढाल बनी खडी है उसकी रक्षा को।'[८]

(झ) मैंने सी.पी.सिंह से बात की है, उसके साप्ताहिक 'आरंभ' में तुम्हारे नियमित स्तंभ की।[९]

(ञ) 'आप कुछ कहना चाह रहे थे शायद।'[१०]

(ट) 'उसे लग रहा था कि अंधेरे में डूबे चेहरे पर्दे से विमुख हो सिर्फ उसे देख रहे है लगातार।'[११]

---

१. बावजूद इसके - ग्यारह लम्बी कहानियाँ - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ १४०
२. बावजूद इसके - ग्यारह लम्बी कहानियाँ - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ १४४
३. रूना आ रही है - ग्यारह लम्बी कहानियाँ - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ १६२
४. रूना आ रही है - ग्यारह लम्बी कहानियाँ - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ १६३
५. रूना आ रही है - ग्यारह लम्बी कहानियाँ - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ १६५
६. शून्य - ग्यारह लम्बी कहानियाँ - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ २००
७. अभी भी - जगदंबाबाबू गाँव आ रहे है - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ ३२
८. अभी भी - जगदंबाबाबू गाँव आ रहे है - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ ३२
९. एक जमीन अपनी - (उपन्यास) - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ ७३
१०. एक जमीन अपनी - (उपन्यास) - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ २१६
११. एक जमीन अपनी - (उपन्यास) - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ २३३

२.१.९ नवीन मौलिक प्रयोग :

रचनाकार अपने लेखन में कई प्रकार के प्रयोग करता है। कभी मन:स्थिती की अभिव्यक्ति के लिए तो कभी व्यक्तित्व रचने के लिए, तो कभी प्रभावान्विति के लिए ऐसे नूतन प्रयोग होते है। चित्राजी ने भी अपने साहित्य सृजन में ऐसे मौलिक प्रयोग किये है- 'मन 'धुप्प' से बुझ गया'[१], 'फौरन दुविधा झटक अन्तर्द्वंद्व के कपाट बन्द कर दिये।'[२], 'शैला के सामने उसकी हतप्रभ वाक् शक्ति संवाद के लिए मनोबल जुटा रही है'[३], 'क्षण भर पहले बंधी आशा तपते तवे पर पडी पानी की बुंद-सी छन्न हो गयी'[४], 'पूरी रात अजगर-सी पडी है।'[५], 'कही आना जाना भी हो तो सोमेश की कडी निगरानी के आतंक-सा मन को बन्धक बनाये रहता'[६], 'ऊंगलियों का संकेत भर हूँ'[७], 'लहकदार आवाज ने चुबंक-सा खींच लिया।'[८], 'कनपटियों पर विदीर्ण भावनाओं का ज्वार परनाले-सा बहने लगा'[९], 'रात भर किसी मलबे के नीचे दबी पडी क्षत-विक्षत जीवित लाश की मर्मान्तक पीडा वह अपनी देह पर झेलता रह'[१०], 'अपने में बौराया-बौराया-सा घुमड रहा है।'[११] 'वह अपने से अलग हुआ'[१२], 'हफर्नी सांसो की घरघराहट दहलीज की गोबर पुती फर्श पर नासूर-सी दब गयी।'[१३], 'बी.जी. पना'[१४], 'अजनबियत के लबादों को उतार चिन्धी-चिन्धी कर देंगे ...'[१५], 'प्रौढता को हताशा की खोह बना लिया है'[१६], 'उसने नींद की गोली नही एक अदद राहत

---

१. भूख - इस हमाम में - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ १५
२. फातीमाबाई कोठे पर ही नही रहती - इस हमाम में - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ ४२
३ फातीमाबाई कोठे पर ही नही रहती - इस हमाम में - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ ४२
४. ब्लेड - इस हमाम में - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ ६८
५. ब्लेड - इस हमाम में - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ ७१
६. इस हमाम में - इस हमाम में - चित्रा मुद्गल, ९१
७. इस हमाम में - इस हमाम में - चित्रा मुद्गल, ९३
८. इस हमाम में - इस हमाम में - चित्रा मुद्गल, ९५
९. लेन - इस हमाम में - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ १४५
१०. अनुबन्ध - ग्यारह लम्बी कहानियाँ - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ १५
११. अनुबन्ध - ग्यारह लम्बी कहानियाँ - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ १६
१२. अनुबन्ध - ग्यारह लम्बी कहानियाँ - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ २४
१३. दशरथ का वनवास- ग्यारह लम्बी कहानियाँ - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ ८८
१४. दशरथ का वनवास- ग्यारह लम्बी कहानियाँ - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ ९०
१५. रूना आ रही है - ग्यारह लम्बी कहानियाँ - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ १७५
१६. अपनी वापसी - चर्चित कहानियाँ - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ ३५

निगली',[१] 'चेहरे पर आंच उग आयी।'[२], 'अनझिप' [३] इत्यादि।

२.१.१० उपमाओं का सार्थक प्रयोग :

प्रत्येक रचनाकार रचना को सौन्दर्य प्रदान करने के लिए और अपने विचारों को प्रभावी रूप से प्रस्तुत करने के लिए उपमाओं का प्रयोग करता है। चित्राजी ने भी अपने कथा-साहित्य में पूरी सजगता के साथ उपमाओं का प्रयोग किया है। उनकी उपमाएँ कही चरित्र निर्धारित करती है तो कहीं चरित्र के मनोभावों, द्वंद्व, विचारों को उद्घाटित करती है। उनके कथा साहित्य से कुछेक उपमाओं के उदाहरण इस प्रकार उद्धृत किये जा सकते है।

'दूसरों के गढे आइनें'[४], 'कोढ सदृश'[५], 'लावारिस कुत्तों की तरह'[६], 'राक्षस के मायावी पिंजरे में कैद चिडिया की शक्ल में छटपटाती राजकुमारी चन्द्रावल के प्राणों की तरह।'[७], 'रूई के फाहे-सा हलका'[८], 'द्रोपदी की चीर-सी असमाप्त कविताए'[९], 'जड से उखडे पेड की तरह'[१०], 'मीन-सी खिंची आँखे'[११], 'ततैया-सा'[१२], 'जैसे वे सिगरेट की राख नहीं उन्हें झाडकर एश ट्रे में डाल चुके है'[१३], 'गठरी ढकी-सी'[१४], 'किसी पुख्ता जिल्द में सुरक्षित दीमक चटे-पृष्ठों सी'[१५], 'शरद-पूनो का ज्वार उमड आया'[१६], 'उबले आलू से थोबडे'[१७], 'आँखे पानी भरी कटोरी में तैर

---

१. एक जमीन अपनी - (उपन्यास) - चित्रा मुद्‌गल, पृष्ठ २६
२. एक जमीन अपनी - (उपन्यास) - चित्रा मुद्‌गल, पृष्ठ २७
३. एक जमीन अपनी - (उपन्यास) - चित्रा मुद्‌गल, पृष्ठ २४०
४. फातिमाबाई कोठे पर ही नही रहती - इस हमाम में - चित्रा मुद्‌गल, पृष्ठ २९
५. फातिमाबाई कोठे पर ही नही रहती - इस हमाम में - चित्रा मुद्‌गल, पृष्ठ २९
६. चेहरे - इस हमाम में - चित्रा मुद्‌गल, पृष्ठ ४८
७. ब्लेड - इस हमाम में - चित्रा मुद्‌गल, पृष्ठ ६०
८. ब्लेड - इस हमाम में - चित्रा मुद्‌गल, पृष्ठ ७५
९ अपने अपने गिरेबान - इस हमाम में - चित्रा मुद्‌गल, पृष्ठ ८१
१०. इस हमाम में - इस हमाम में - चित्रा मुद्‌गल, पृष्ठ ८७
११. अनुबन्ध - ग्यारह लम्बी कहानियाँ - चित्रा मुद्‌गल, पृष्ठ १३
१२. अनुबन्ध - ग्यारह लम्बी कहानियाँ - चित्रा मुद्‌गल, पृष्ठ ३०
१३. अनुबन्ध - ग्यारह लम्बी कहानियाँ - चित्रा मुद्‌गल, पृष्ठ ३७
१४. दुलहिन - ग्यारह लम्बी कहानियाँ - चित्रा मुद्‌गल, पृष्ठ ५९
१५. मोर्चे पर - ग्यारह लम्बी कहानियाँ - चित्रा मुद्‌गल, पृष्ठ ६२
१६. केंचुल - ग्यारह लम्बी कहानियाँ - चित्रा मुद्‌गल, पृष्ठ १२१
१७. जिनावर - जिनावर - चित्रा मुद्‌गल, पृष्ठ ५५

रही हैं जैसे'[१], 'दबाव का पेपरवेट'[२], 'जैसे देह वे, देह की दोनों बाजू वह'[३], 'लोहमेरू-सी तनी'[४], 'पूजते वट वृक्ष सदृश जैसे परिंदों को रैन बसेरा दिये'[५], 'गोड चढे झांझ-सी रूनकती-झुनकती-सी'[६], 'दीर्घ कारावास से छूटे हुए कैदी सदृश'[७], 'गांठ-सा कसा हुआ स्वर'[८], 'तनी उंगली-से प्रश्न भाले हो उठते'[९], 'कलमदानी में सूख गई स्याही-सा संताप'[१०] आदि।

२.१.११ विशेषणों का प्रयोग :

चित्राजी ने नये-नये विशेषणों का भी अपनी रचनाओं में प्रयोग किया है। चित्राजी ने अपने लेखन का आरंभ कविताओं से किया था संभवत: इसीलिए उनका कवि मन विशेषणों के प्रयोग में दक्ष है। कुछ उदारण दृष्टव्य हैं - 'आशास्पद भाव'[११], 'विद्रुप सचाईयाँ'[१२], 'घोडमुखा बाबू'[१३], 'पिशाची कायेद-कानून'[१४], 'दारुण उचाटपन'[१५], 'बोनी समर्थता'[१६], 'शुभचिन्तना'[१७], 'जहरीली लिसलिसाहट'[१८], 'तटस्थता का मुखौटा'[१९], 'आत्मघाती आकर्षण'[२०], 'हीनत्वबोध से आक्रांत व्यक्ति'[२१], 'कुंभकरना'[२२], 'अपच दर्शन'[२३], 'निचाट-विरक्त मन'[२४],

---

१. जिनावर - जिनावर - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ ६२
२. जिनावर - जिनावर - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ ५६
३. अपनी वापसी -चर्चित कहानियाँ - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ ३१
४. मुआवजा - जगदंबाबाबू गाँव आ रहे है - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ ४१
५. जगदंबाबाबू आ रहे - जगदंबाबाबू गाँव आ रहे - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ ४१
६. लकडबग्घा - जगदंबाबाबू गाँव आ रहे - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ १०१
७. एक जमीन अपनी - (उपन्यास) - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ ५६
८ एक जमीन अपनी - (उपन्यास) - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ १७३
९. एक जमीन अपनी - (उपन्यास) - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ १८४
१०. एक जमीन अपनी - (उपन्यास) - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ १८९
११. भूख - इस हमाम में - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ २६
१२. फातिमाबाई कोठे पर ही नहीं रहती - इस हमाम में - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ २९
१३. चेहरे - इस हमाम में - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ २९
१४. ब्लेड - इस हमाम में - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ ६०
१५. अनुबन्ध - ग्यारह लम्बी कहानियाँ - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ ८
१६. अनुबन्ध - ग्यारह लम्बी कहानियाँ - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ १४
१७ अनुबन्ध - ग्यारह लम्बी कहानियाँ - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ १६
१८. दुलहिन - ग्यारह लम्बी कहानियाँ - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ ४९
१९. बावजूद इसके - ग्यारह लम्बी कहानियाँ - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ १५५
२०. अपनी वापसी - चर्चित कहानियाँ - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ ३२
२१ अभी भी - जगदंबाबाबू गाँव आ रहे है - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ ३७
२२. जगदंबाबाबू गाँव आ रहे है - जगदंबाबाबू गाँव आ रहे है - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ ५१
२३. एक जमीन अपनी - (उपन्यास) - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ १०
२४. एक जमीन अपनी - (उपन्यास) - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ ९०

'विद्रोहिणी पुत्री'[१], 'रिसता साहस'[२] आदि।

२.१.१२ ध्वनियों का प्रयोग :

साहित्य में अनुकरणमूलक शब्दों का प्रयोग कोई नया नहीं है। विशेषत: आंचलिक कथा-साहित्य में अनुकरणमूलक ध्वनियों का प्रयोग हुआ है। चित्राजी ने कुछ स्थानों पर ऐसी ही अनुकरणमूलक ध्वनियाँ प्रयोग में लायी है। अपने पात्रो के रोने, खांसने आदि क्रियाओं और अन्य जड वस्तुओं की ध्वनियों का अंकन किया हैं।

यथा -

(क) ''छन्नक'' ! कांच फूटने की ध्वनि।[३]

(ख) 'खरर ... ' माचिस की तीली-सुलगाने की ध्वनि।[४]

(ग) 'खट खट-खट खट' टिकट खिडकियाँ बंद कने की ध्वनि।[५]

(घ) 'हिच्' लिफ्ट रूकने की आवाज।[६]

(ङ) 'खू खू खू खू' खाँसी की आवाज।[७]

(च) 'सी ऽऽऽ' मौन रहने का संकेत।[८]

(छ) 'पों, पों, पों' वाहनों के भोंपू की ध्वनि।[९]

(ज) 'शु ऊं ऊं' शावर की ध्वनि।[१०]

---

१. एक जमीन अपनी - (उपन्यास) - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ १९४
२. एक जमीन अपनी - (उपन्यास) - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ १९६
३. मामला आगे बढेगा अभी - लाक्षागृह - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ १०
४ फातिमाबाई कोठे पर ही नहीं रहती - इस हमाम में - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ २९
५. चेहर - इस हमाम में - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ ५५
६. जरिया - इस हमाम में - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ १०१
७. दुलिहन - ग्यारह लम्बी कहानियाँ - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ ५२
८. सौदा - जगदंबाबाबू गाँव आ रहे है - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ २२
९. जिनावर - जिनावर - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ ५८
१०. अपनी वापसी - चर्चित कहानियाँ - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ ३१

(झ) 'किर, र, र, र, र ...' घंटी की कर्कश ध्वनि।[1]

(ञ) 'औ हॅं हॅं हुँ ह' रूदन का स्वर।[2]

इनके अतिरिक्त भी कई अनुकरणात्मक ध्वनियों का प्रयोग हुआ है। जैसे हथौडे की आवाज 'ठक्क, ठक्क', दरवाजे पर दस्तक 'ठक-ठक', एडियों की 'टक-टक', पतरा पीटने की 'ताड-ताड', गंडासी से काटने की 'खच्च-खच्च', बालों में ब्रश की 'सर सर' आवाज। इसी प्रकार तालियों की गडगडाहट, जोर से दरवाजा बंद करने की झन्नाहट, स्वचालित दरवाजे का धडधडाते खुलना और रंग-बिरंगे बिजली के लट्टुओं का 'लुप्प' 'लुप्प' जगमगाना आदि।

इस प्रकार द्रष्टव्य है कि चित्राजी के कथा साहित्य का भाषा पक्ष अत्यन्त समृद्ध है। भाषा अपनी सरलता, सहजता और नूतन प्रयोग से सजी-धजी संप्रेषणीय है।

२.२ विधान पक्ष :

शिल्प के अन्तर्गत रचनात्मक लेखन की शैली का समावेश हो जाता है। चित्राजी का शिल्प-पक्ष भी विशिष्ट है। उनके कथा-साहित्य में पूर्व दीप्ति शैली का प्रयोग अधिक हुआ है। साथ ही उन्होंने वर्णनात्मक, विश्लेषणात्मक, आत्मकथात्मक आदि शैली का प्रयोग किया है।

२.२.१ वर्णनात्मक शैली :

इस शैली का जन्म कहानी के जन्म के साथ ही हुआ था - ऐसा कहा जाय तो गलत न होगा। वर्णनात्मक शैली को कथात्मक शैली भी कहा जाता है। 'कहानीकार पात्रों के वर्णन, घटनाओं के चित्रण और कहानी के समस्त तत्वों को अपनी वर्णनात्मकता में समेट कर कहानी को पूरा करता है। स्थान-स्थान पर बौद्धिक विवेचन, भावनात्मक वर्णन और विश्लेषण आदि को भी स्थान मिलता है।'[3] प्रकृति या वातावरण चित्रण के साथ ही रूप वर्णन में भी इस शैली को अपनाया

---

१. एक जमीन अपनी - (उपन्यास) - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ ३६
२. एक जमीन अपनी - (उपन्यास) - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ १५१
३. हिन्दी कहानी की शिल्पविधी का विकास - डॉ. लक्ष्मीनारायण लाल, पृष्ठ ३१२

जाता है। चित्राजी ने इस शैली का बखूबी प्रयोग किया है। उदाहरण के तौर पर कुछ कहानियों के अंश प्रस्तुत है-

(क) 'सुबह कितने ताव से सावित्री अक्का से ऐंठ गयी थी कि अक्का ने उसकी मदद की खातिर इतना नीच रास्ता कैसा सोचा ? क्यों वह इस औरत को उसके पास ले आयी?'[१]

(ख) 'यह पहला मौका है, जब नरेन्द्र ने कोई अनुबन्ध प्राप्त करके न उससे उसके विषय में कोई परामर्श किया न किसी प्रकार के सहयोग का आग्रह न अपनी परेशानी जाहिर करके उसके महत्व के दर्प को सन्तुष्ट किया कि 'क्या होगा' और 'कैसे होगा' ।'[२]

(ग) 'धोती की कसावट से मुक्त हुआ चेहरा एक किशोरी का था ! फूटते कल्लों का सा उभार लिये उसकी लगभग सपाट छाती, कोसों दौडाई के बाद सहिताने को वृक्ष के तने से टिकी-सी दम साधने के प्रयास में साधे नहीं सध रही थी।'[३]

(घ) 'मोट्या गाडी का पोर-पोर पीटे डाल रहा था। जैसे ही वह उसे धर दबोचने के लिए पैंतरा बदलता, पता नहीं कैसे उसको आभास हो जाता और वह पलटकर उसके सामने सरिया तान लेता। निरूपाय वह सिर से लेकर पाँव तक सिवा कांपने के कुछ नहीं कर पा रह था।'[४]

(ङ) 'दरअसल पत्र अगर अंतरंगों के हों तो उन्हें प्राप्त कर वह इस महानगर में अपने को उन कुछेक घरों के सानिध्य-सुख से प्लावित अनुभव करती है जिनका अभाव उसे यहाँ अक्सर अकेला और उपेक्षत महसूस कराता रहता है।'[५]

२.२.२ विश्लेषणात्मक शैली :

'इस शैली के अन्तर्गत अमूर्त से अमूर्त, सूक्ष्म से सूक्ष्म अन्तर्गतों की अभिव्यक्ति

---

१. भूख - इस हमाम में - चित्रा मुद्‌गल, पृष्ठ १८
२. पेशा - ग्यारह लम्बी कहानियाँ - चित्रा मुद्‌गल, पृष्ठ ४१
३. सौदा - जगदंबाबाबू गाँव आ रहे है - चित्रा मुद्‌गल, पृष्ठ २१
४. मामला आगे बढेगा अभी - लाक्षागृह - चित्रा मुद्‌गल, पृष्ठ १०
५. एक जमीन अपनी - (उपन्यास) - चित्रा मुद्‌गल, पृष्ठ ६७

स्वाभाविकता से हो जाती है।'[१] अन्तर्गत के चित्रण में यह शैली अत्यन्त उपयुक्त है। विशेषत: जिन कहानियों में एक ही चरित्र प्रधान होता है। अन्य सभी चरित्र गौण होते है उन कहानियों के लिए यह शैली अत्यन्त उपयुक्त है।[२] चित्राजी ने इस शैली का प्रयोग मनोजगत के चित्रण के लिए सफलतापूर्वक किया है। चित्राजी ने नारी मन के द्वंद्व को और आम आदमी के अन्तर्द्वंद्व को इस शैली से अभिव्यक्ति दी है। उनके कथा-साहित्य से कुछ प्रसंग उदाहरणार्थ प्रस्तुत है-

(क) 'एक शख्स के इतने हिस्से कैसे कर दिये जाते है ? बेटी, बहू, पत्नी, माँ, नारी ... पैदा होते ही उसे समझाना शुरु कर दिया जाता है कि उम्र के हर टूकडे को दूसरों की सुविधाओं के अनुकूल आत्मसात कर जीने में ही उसका जीना है - एक निर्धारित स्वीकार, ... क्यों ... आखिर क्यों ?'[३]

(ख) 'अजीब हो गयी है वह। अजीब-अजीब खयालातों में डूबी रहती है। समझ ही नहीं पाती वह ही बदल गयी है या ... ऐसा क्यों हो गया है उसके साथ ? इसलिए कि वह चौदह बाई दस के कमरे में कैद होकर रह गयी है ? इसलिए कि उसकी दूनिया न इस कमरे के विस्तार को लाँघ पाती हैं न बाहर फैला हलचलों का सैलाब उस तक पहुँच पाता है। यह अपंगता ... यह असमर्थता ... क्या उसकी कुण्ठा बन गये है ...?'[४]

(ग) 'क्यों नहीं महसूस कर पा रही कि मेहता उसे उन दांव-पेचो के दंगल में इसिलिए ले जानेकी दृष्टता बरत रहा है ताकि वास्ता पडने पर वह अनपेक्षित परिस्थितियों से उचाट होकर निकल न भागे। उसे चुनौती के रूप में ग्रहण करे। बहुत कुछ यहाँ ऐसा है जो स्त्री की सक्रिय भागीदारी के बावजूद उसके अनुभव जगत् का नग्न सत्य नहीं बन पाया। वह सतह के सत्य से भिन्न है।'[५]

---

१ हिन्दी कहानियों की शिल्पविधी का इतिहास - डॉ. श्री लक्ष्मीनारायण लाल, पृष्ठ ३१४
२. आधुनिक हिन्दी का इतिहास - डॉ. श्रीकृष्ण लाल
३. इस हमाम में - इस हमाम में - चित्रा मुद्‌गल, पृष्ठ ९४
४. अग्निरेखा - ग्यारह लम्बी कहानियाँ - चित्रा मुद्‌गल, पृष्ठ ९७
५. एक जमीन अपनी - (उपन्यास) - चित्रा मुद्‌गल, पृष्ठ १४२

(घ) 'मन की बात और है। वह कोना न आत्मनिर्भर होकर लहलहाता है न पराश्रयी होकर उजडता है। उसे कुछ और चाहिये ... संवेदनाओं का संवेग। संग ! सोच ! समझना ! परस्पर सम्मान ! न मिले प्रतिदान तो क्या जीवन का यह नितांत अलग पक्ष है। उसकी अपनी दूनिया। ... असंतुलन के शून्य को सिर्फ इसलिए भर लेना उसके लिए जरुरी नहीं कि बिना पुरुष के संपूर्ण सुरक्षाभाव पूरा नहीं होता ... ।'[१]

२.२.३ आत्मकथात्मक शैली :

रचनाकार जब प्रथम पुरूष के रूप में अपनी आत्मकथा के समान कथा का वर्णन करता है या कथा का अन्य कोई पात्र लेखक का स्थान ग्रहण पाठकों से संवाद स्थापित करता है, वहाँ आत्मकथात्मक शैली होती है। इसका प्रयोग आधुनिक युग में अधिक हो रहा है। 'मैं' के धरातल से लिखी गयी कहानियों में रचनाकार भोक्ता या साक्षी के रूप में कथा का वर्णन करता है। इस शैली का कुछ ही स्थानों पर चित्राजी ने प्रयोग किया है। कुछ उदाहरण अवलोकनीय हैं-

(क) मैने रूमाल वाला हाथ आगे बढाकर उन्हें पुकारा। तो वे एकाएक मुडे और तमतमाये से मेरे करीब आकर तकरीबन बाँह से घसीटते हुए भीतर खींच ले गये। और इतनी जोर का धक्का मारा कि मेरा पूरा शरीर जड से उखडे पेड की तरह ड्राइंग रूम की दीवार से टकरा गया।[२]

(ख) हे मेरे पाठक बन्धु-बांधवियों ! मैं बहुत मुश्किल में हूँ। पिछले डेढ-दोन महीने से मैंने अपने नाम आए पत्रों को पढना तो दूर, खोलना भी बंद कर रखा है। खोलते हुए मेरा संवेदनशील हृदय कांपता है।[३]

(ग) 'और सहसा यह मेरे पास आने का निर्णय ? क्या रूना ने मुझे कारण मुक्त कर दिया ? जिन्हे वह अपने स्वप्न संसार के दहने का आधार करार दे एक कसैली चुप्पी की तरह कैद

---

१. एक जमीन अपनी - (उपन्यास) - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ १८७
२. इस हमाम में - इस हमाम में - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ ८७
३. होना संपादक की पत्नी - एक लेखिका का - इस हमाम में - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ ११६

हो गयी थी। जिसके लिए उसे श्रीमन्त को जिम्मेदार ठहराना चाहिये था, उसने मुझे ठहराया था।'[१]

२.२.४ पूर्व दीप्ति शैली :

पूर्व दीप्ति शैली या स्मृतिपरक शैली आधुनिक रचनाकारों में प्रिय शैली है। अतीत-वर्तमान की धुप-छांह के बीच कथावस्तु विकसीत होती है। अतीत की घटनाओं पर पात्र अपनी प्रतिक्रियाएँ अभिव्यक्त करते है। उनके अतीत का उनके वर्तमान जीवन पर गहरा प्रभाव पडा होता है। चित्राजी ने इस शैली का अधिक प्रयोग किया है। उनकी कहानियों से कुछ उद्धहरण उदाहरण के तौर पर प्रस्तुत हैं-

(क) 'सुदीप से हुई पहली मुलाकात का वाकया स्मरण हो आया ... मौसीजी के घर पर मिली थी उससे। बिन्नी भैया के अरसे बाद मिले दोस्त के रूप में। साधारण कद-काठी और आर्मीवाले अंदाज।'[२]

(ख) 'यही कोई बारह, तेरह साल का रहा होगा। उस दिन मदरसा न जाकर बहुरे के साथ पक्के ताल में सिंघाडे चुनने घुस गया था। कमीज सिंघाडों से भर गयी तो बाहर आने के लिए पलटा कि तभी कौवों की काँव-काँव अपने सिर पर मंडराती दिखी भयभीत हो हकबका गया।'[३]

(ग) 'ऐसे ही एक दिन उसने पाया, कि सोने वाले कमरे के एक कोने में पडी पापा की अध्ययन मेज की ऊपरी दीवार उसके अजीबो-गरीब चित्रों से भरी पडी है।'[४]

(घ) '... नन्दू ने ऐसे ही तो एक शाम उसे डिब्बा थमाकर खोली की सिटकनी चढा दी थी !

---

१. रूना आ रही है - ग्यारह लम्बी कहानियाँ - चित्रा मुद्‌गल, पृष्ठ १५७
२. मोर्चे पर - ग्यारह लम्बी कहानियाँ - चित्रा मुद्‌गल, पृष्ठ ६९
३. दशरथ का वनवास - ग्यारह लम्बी कहानियाँ - चित्रा मुद्‌गल, पृष्ठ ८०
४. अग्निरेखा - ग्यारह लम्बी कहानियाँ - चित्रा मुद्‌गल, पृष्ठ १०४

''खोल के देख, कमला ?'' ठीक इसी तरह आग्रह करता रहा था। इसी तरह वह अचरज से भरी उससे पूछती रही थी कि आखिर डिब्बे में क्या हैं।'[1]

(ड) 'सत्रह साल कम तो नही होते ?...'

'अपनी तरफ मुडकर देखती हूँ। सोलह का नसीम 'दून' अकादमी में पढ रहा है। बिल्कुल शौकत की कदकाठी पायी है। बस शौकत थोडे से भारी है। लुंगी और कुर्ते में होता है तो यह अंतर भी छिप जाता है।'[2]

(घ) ब्याह के बाद -

सम्भवत: तीसरा दिन था या चौथा। ठीक से याद नहीं। राकेश के सहकारी मिस्टर मेहता के घर से वे ड्रिंक और डिनर का आमंत्रण पूरा कर लौट रहे थे। टैक्सी में सिर्फ वे दोनों थे। चुप्पी थी। और 'लैंम्प पोस्टों' की रोशनी से रह-रहकर टूट जानेवाला अंधेरा था ...।[3]

३. निष्कर्ष :

अन्तत: कहा जा सकता है कि चित्राजी ने नूतन प्रयोगों को अपनाकर भाषा और शैली के माध्यम से अपनी रचनाओं को सजीवता प्रदान की है। उनकी रचनाओं की भाषा अपने आप में विशिष्ट है। भावपूर्ण प्रवाहमान, मंजी हुई भाषा के प्रयोग से रचनाओं का सौन्दर्य बढा है। चित्राजी ने कई भाषाओं और बोलियों के शब्दों का प्रयोग किया है लेकिन यह प्रयोग भाव के प्रवाह में बाधक नहीं है बल्कि इससे भाषा जन-भाषा के समीप पहुँच गयी है। वह प्रयोग आंचलिक कहानियों का सा भी नहीं है। वातावरण निर्माण में बोलियों का प्रयोग सफल हुआ है। पात्रानुकूल एवं भावानुकूल भाषा-प्रयोग सफल अभिव्यक्ति में सहायक हुआ है। कहानियों का सहज शैली में प्रस्तुतीकरण उनकी एक अन्य विशेषता कहीं जा सकती है। चित्राजी ने वर्णनात्मक, विश्लेषणात्मक, आत्मकथनात्मक, पूर्व

---

१. केंचुल - ग्यारह लम्बी कहानियाँ - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ १२१
२. रूना आ रही है - ग्यारह लम्बी कहानियाँ - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ १५७
३. शून्य - ग्यारह लम्बी कहानियाँ - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ २०२

दीप्ति शैली का प्रयोग प्रमुख रूप से किया हैं। लेकिन यह भी सत्य है कि कुछ रचनाओं में एक से अधिक शैलियों का उपयोग करके ही कहानी सही रूप में आगे बढती है। चित्राजी ने भी कुछ कहानियों में एक से अधिक शैलिय़ों का प्रयोग उचित अवसर पर किया है। इसीलिए कहीं-कहीं डायरी-शैली, पत्र शैली, रिर्पोताजमयी शैली और विज्ञापन शैली, आदि का प्रयोग भी हुआ है। संक्षेप में चित्राजी का कथा-साहित्य शैल्पिक दृष्टि से सधा हुआ है।

...

षष्ठं अध्याय

चित्रा मुद्गल के कथा साहित्य कथ्य का अन्य महिला रचनाकारों के कथा साहित्य से तुलनात्मक अनुशीलन

षष्ठं अध्याय

चित्रा मुद्गल के कथा साहित्य का अन्य महिला रचनाकारों के कथा साहित्य से तुलनात्मक अनुशीलन

१. प्रस्तावना :

चित्रा मुद्गलजी के साहित्य का संपूर्ण अध्ययन करते समय यह बात तीव्रता से महसूस हुई कि उनकी रचनाओं का विश्लेषण तब तक अधूरा-सा रहेगा जब तक कि उनकी रचनाओं को अन्य रचनाकारों के लेखन के बीच जाँचा नहीं जायेगा। प्रस्तुत अध्याय के माध्यम से यह जानने का यत्न किया गया है कि उनका लेखन कितना मौलिक है। तुलना के माध्यम से यह भी स्पष्ट करने का प्रयास किया है कि किन स्थानों पर कथ्य, चरित्र, शिल्प या शीर्षक आदि की दृष्टि से अन्य रचनाकारों से वे प्रभावित हैं या अन्य रचनाकारों पर उनका प्रभाव पडा है।

चित्राजी के कथा साहित्य में केवल स्त्री-समस्याओं को ही प्रमुख स्थान मिला हो, ऐसा नहीं है। बल्कि जीवन-जगत से जुडे अन्य प्रश्न भी उनके साहित्य के केन्द्र में हैं। यह अवश्य है कि स्त्री-समस्याओं को चित्रित करते समय उनकी संवेदनाएँ सहानुभूति के भाव से भरी, अधिक मार्मिकता से रची गयी हैं। इसका कारण यह हो सकता है कि एक स्त्री होने के नाते वे स्त्री के मनोभावों को अधिक गहराई से अनुभूत कर पायी हो। इसीलिए हमने उनके रचनाओं की तुलना केवल महिला रचनाकारों की रचनाओं से की है।

२. महिला रचनाकारों की परंपरा :

दादी-नानी द्वारा मौखीक रूप से सुनायी जाने वाली कहानी परंपरा से लेकर आधुनिक युग की कलमबद्ध हो, प्रकाशित होने वाले कथा-साहित्य तक की परंपरा में महिला रचनाकारों का महत्वपूर्ण योगदान रहा है।

२.१ श्रीमती राजेन्द्रबाला घोष :

सर्वप्रथम द्विवेदी काल में जिस महिला रचनाकार का नाम प्रमुखता से आया वे श्रीमती राजेन्द्रबाला ही हैं। वे हिन्दी की प्रथम मौलिक कहानी लेखिका हैं, जो साहित्य जगत में बंग महिला के नाम से ख्यात है। 'लेखिका के रूप में बंग महिला का नाम चिरस्मरणीय है। इनका वास्तविक नाम श्रीमती राजेन्द्रबाला घोष है।'[१]

श्रीमती राजेन्द्रबाला का जन्म कलकत्ता के पास चन्द्रनगर के किसी गाँव में हुआ था। इनके पिता श्री. रामप्रसन्न घोष मिर्जापूर के प्रतिष्ठित व्यक्ति थे। उनका विवाह श्री पूर्णचंन्द्रजी के साथ हुआ था। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल की प्रेरणा और संपर्क से वे हिन्दी लेखन की ओर प्रवृत्त हुयीं। आरम्भ में आपने अपनी मातृभाषा बंगाली की कहानियों का हिन्दी में अनुवाद किया। फिर मौलिक हिन्दी कहानी लेखन का प्रयास किया। इन कहानियों में 'दुलाईवाली' इनकी प्रसिद्ध कहानी है। 'इस कहानी को हिन्दी की मौलिक कहानी होने का श्रेय दिया जाता है। प्रस्तुत कहानी १९०७ ई. की सरस्वती भाग ८ संख्या ५ में प्रकाशित हुयी थी। स्थानीय रंगत, यथार्थ चित्रण और पात्रानुकूल भाषा की दृष्टि से यह कहानी दृष्टव्य है।'[२] उनकी यह कहानी आधुनिक हिन्दी कहानी के विकास का प्रमुख सोपान है।

बंग महिला की कहानियों का संग्रह 'कुसूम संग्रह' के नाम से प्रकाशित हुआ था।

बंग महिला अहिन्दी भाषिक हिन्दी रचनाकार थी। यह विशेष उल्लेखनीय बात है कि आधुनिक हिन्दी कहानी के आरंभ का श्रेय अहिन्दी भाषिक रचनाकार को प्राप्त है। सन् ५० के आसपास उनका स्वर्गवास हुआ।

२.२ उषादेवी मित्रा :

प्रेमचंदोत्तर काल की प्रमुख कहानी लेखिकाओं में उषादेवी मित्रा का नाम उल्लेखनीय है। जबलपूर निवासी श्री. हरिश्चन्द्र दास और श्रीमती विनोदिनी देवी की सुपुत्री उषादेवी का जन्म १९०१ में

---

१. साहित्य कोश भाग २ - सं. धीरेन्द्र वर्मा पृष्ठ ३४०
२. साहित्य कोश भाग २ - सं. धीरेन्द्र वर्मा पृष्ठ ३४१

हुआ। श्री क्षितीशचन्द्र मित्रा के साथ वे विवाहबद्ध हुयी। पारम्पारिक दृष्टि से उन्होंने केवल मैट्रिक तक ही शिक्षा पायी थी। लेकिन रूचि के कारण संगीत और शिल्पकला में भी निपुणता प्राप्त की थी। साहित्य के साथ ही संस्कृत का भी उन्होंने अध्ययन किया था।

आपकी पहली कहानी 'हँस' पत्रिका में सन् १९३३ में प्रकाशित हुयी थी। कहानी का शीर्षक था 'मातृत्व'। तब से आपकी कहानियाँ हिन्दी की प्रतिष्ठित पत्रिकाओं में स्थान पाती रही हैं। आपके अब तक के प्रमुख कहानी संग्रह हैं-आँधी के छंद, नीम चमेली, महावर, मेघ-मल्हार, संध्या-पूरबी, पथवारी, रातरानी आदि। कहानी के साथ ही आपने उपन्यास भी रचे हैं जैसे-वचन का मौल (१९३६), पिया (१९३७), जीवन की मुस्कान, नष्ट नीड (१९४५), सोहनी (१९४६) आदि।

'रोमानी जीवन की घटनाओं में अनुभूति का एक सर्वथा नया बिन्दू ढूंढ निकालना और समस्त कहानी के रचना विधान में उस एक छोटे बिन्दू को ऐसे केन्द्र में रखकर समस्त घटना को नया संदर्भ और नया परिप्रेक्ष्य दे देना यह सर्वथा नया अनुभव आपकी कहानी की विशेषता है।'[१] इस दृष्टि से वे तत्कालीन कहानी लेखको में अपना अलग स्थान रखती हैं। उनकी कहानी की एक अन्य विशेषता है - उसकी सोद्देश्यता। उषादेवी की कहानियों का रचाव समस्या, प्रतिक्रिया और उद्देश्यपूर्ति के रूप में ढला है। प्राय: उनकी कहानी का केन्द्र बिंदू समसामायिक समस्या या स्थितियाँ रही है। कभी वे व्यक्ति के स्तर पर तो कभी समाज के स्तर पर उभरती है। उनकी यह विशेषता उनकी आरंभिक कहानियों से लेकर उत्कर्ष काल तक की कहानियों में बनी रही है।

उषादेवीजी की कहानियों के कथ्य सामाजिक और पारिवारिक पृष्ठभूमि से अधिक लिये गये हैं। नारी की समस्याओं को चित्रित करते हुए उन्होंने नारी के प्रताडित रूप को विशेष मुखरता दी है। यही कारण है कि इनके नारी पात्र करूणा से भरे हैं। उन्होंने नारी के उदात्त रूप को प्रकट किया है। उनके कई नारी पात्र उत्सर्ग और त्याग के लिए तत्पर दिखायी देते हैं।

---

१. साहित्य कोश भाग - २ सं. धीरेन्द्र वर्मा, पृष्ठ ५३

उषादेवी मित्रा ने विकासकालीन कहानी लेखन में अपना महत्वपूर्ण योगदान दिया है। हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग ने आपकी महत्वपूर्ण कृति 'संध्यापूरबी' पर 'सेक्सरिया पुरस्कार' प्रदान कर आपका सम्मान किया।

२.३ सुभद्राकुमारी चौहान :

बुंदेले हर बोलों के मुँह, हमने सुनी कहानी थी,
खूब लडी मर्दानी वह तो, झाँसी वाली रानी थी।

प्रस्तुत कविता के माध्यम सें जन-जन के मानस पर अपनी छवी अंकित करनेवाली कवयित्री और लेखिका सुभद्राकुमारी चौहान हिन्दी की प्रमुख रचनाकार हैं। सुभद्राजी का जन्म सन् १९०४ में हुआ। जबलपूर के ख्यात वकील ठाकुर लक्ष्मणसिंह के साथ उनका परिणय हुआ।

लगभग पन्द्रह वर्ष की आयु से आपने लिखना आरंभ किया। परिवार के पोषक वातावरण में उनका लेखन समृद्ध होता रहा। कविता उनका पहला प्यार था, तो कहानी रचनें में भी उन्हें सुख मिलता था । उस समय सारा देश राष्ट्रीयता की भावना से ओतप्रोत था। सुभद्राजी भी इससे अछूती नहीं रही। उनके साहित्य में राष्ट्रीयता की भावना ओजपूर्ण ढंग से प्रकट होती है। साथ ही उन्होंने तत्कालीन युग से जुडी, दैनंदिन जीवन से जुडी समस्याओं को भी कहानी में उठाया है। 'इनकी कहानियाँ राष्ट्रीय भावनाएँ, आदर्श और यथार्थ के मर्मस्पर्शी संघर्षो पर आधारित हैं। समसामायिक राष्ट्र की मानसिक स्थिती का पूर्ण परिचय इनकी कहानियों द्वारा होता है।'[१] स्त्री की मूक व्यथा को आपकी कहानियों ने मुखरता दी हैं। आपके प्रमुख कहानी संग्रह सन् १९३२ में प्रकाशित 'बिखरे मोती', सन् १९३४ में प्रकाशित 'उन्मादिनी' और सन् १९४७ में प्रकाशित 'सिधे-सादे' चित्र हैं।

सुभद्राजी की कहानियों का जितना स्वाभाविक कथ्य है उतना ही सहज शिल्प भी है। स्त्री की कोमल भावनाएँ, उसकी सहनशीलता और मार्मिकता को अत्यन्त स्वाभाविकता से कहानी में उभारा है। कहानी की भाषा सरल, सहज और बोलचाल की है।

---

१. साहित्यकोश भाग २ सं. धीरेन्द्र वर्मा, पृष्ठ १०३

सुभद्राजी छायावादी युग की रचनाकार है फिर भी उनकी कहानियों में छायावादी वायवी दूनियाँ या स्वप्नलोक नहीं है। उन्होंने अपने युग की आवश्यकता के अनूरूप यथार्थ और सत्य स्थितीदर्शक कहानियों का लेखन किया, जो उनकी लेखकीय प्रतिबद्धता को दर्शाता है। 'बिखरे मोती' और 'उन्मादिनी' कहानी संकलनों पर उन्हे दो बार 'सेक्सरिया पुरस्कार' प्राप्त हुआ है। सन् १९४८ में आपका देहावसान हुआ।

२.४ कमला चौधरी :

कमला चौधरी का जन्म उत्तरप्रदेश के लखनऊ में सन् १९०८ में हुआ। हिन्दी कहानी के इस विकासात्मक दौर में प्रेमचन्द के समान ही प्राय: सभी रचनाकार आदर्शपरक साहित्य की रचना कर रहे थे। कमला चौधरीजी ने भी परम्परानुरूप रचनाएँ लिखी हैं। आपने कहानी और कविताओं का सृजन किया।

आपकी पहली कहानी सन् १९३३ में 'पागल' शीर्षक से प्रकाशित हुयी थी। आपके प्रमुख कहानी संग्रह इस प्रकार है-उन्माद (१९३४), पिकनिक(१९३९), यात्रा(१९४६) और प्रसाद कमण्डल (१९५९)।

प्रचलित परम्परापुसार उन्होंने भी नारी का आदर्शोन्मुख, संघर्षशील रूप ही चित्रित किया है। प्रतिकूल परिस्थितियों में भी इनके पात्र पराजय नहीं स्वीकारते । पारिवारिक जीवन से जुडी छोटी-छोटी घटनाओं को लेकर ही आपने कहानी का गठन किया है। आपकी कहानियाँ नारी चरित्र प्रधान हैं। लेकिन आपके नारी पात्रों में सामाजिक दबाब के तहत प्रेम का कुंठीत रूप अधिक दिखाई देता है।

तत्कालीन रचनाकारों में कमला चौधरी इस दृष्टि से भी अपना विशिष्ट स्थान रखती हैं कि उन्होंने मनोवैज्ञानिक दृष्टि से कहानी का सृजन किया है। नारी के विभिन्न मनोभावों जैसे प्रेम, स्नेह, वात्सल्य, ईर्ष्या, द्वेष, आकांक्षा, वेदना, करूणा आदि का सूक्ष्म और मौलिक विश्लेषण किया है। तरूणियों के मानस की अस्पष्ट अनुभूतियों का, उनके अंतर्जगत का सफल चित्रण कमलाजी की कहानियों में मिलता

है। 'नारी सुलभ कोमलता के साथ-साथ शिल्प में नये यथार्थ के आयामों के घटित होने से विभिन्न प्रकार की विपन्नता हमें सहज दिखाई पडती है। इनकी रचनाओं में सहज मानवीय वेदनाएँ बहुत ही गंभीर होकर व्यक्त हुई हैं। इनकी कहानियों में दूसरी विशेष बात यह है कि वे प्रेमचन्द के आदर्शवाद को एक भिन्न प्रकार का पुट देकर मानव जीवन की स्थितियों का चित्रण करती है।'[1] इस प्रकार हम देखते है कि श्रीमती कमला चौधरी विकासकाल की एक महत्वपूर्ण रचनाकार हैं।

२.५ श्रीमती आशापूर्णा देवी :

दूरदर्शन पर प्रसारित 'प्रथम प्रतिश्रुति' के माध्यम से हर भारतीय नारी के मन में स्थान पा लेनेवाली लेखिका आशापूर्णा देवी का जन्म सन् १९०९ में हुआ। आशापूर्णाजी को घर में कलात्मक वातावरण मिला। पिताजी श्री महेन्द्र गुप्त प्रसिद्ध चित्रकार थे। तेरह वर्ष की आयु में ही 'शिशु-साथी' कविता लिख कर लेखन का आरंभ किया। पति श्री कालीदास गुप्त ने भी साहित्य सृजन के लिए प्रेरित किया। संयुक्त परिवार के कारण वे रात में ही लिख पाती थी।

श्रीमती आशा पूर्णादेवी ने उपन्यास एवं कहानी विधाओं को अपनाया। उनके प्रमुख उपन्यास अग्निपरीक्षा (१९५२), मुखर रात्रि (१९६१), प्रथम प्रतिश्रुति (१९६४), युगे-युगे प्रेम (१९६५), सुवर्णलता (१९६६), बकुलकथा (१९७४) आदि है। उनके प्रमुख कहानी संग्रह श्रेष्ठ गल्प (१९५३), गल्प पंचाशत (१९५९), नवनीड (१९६०), सोनाली संध्या (१९६२), जलछवि (१९६३), काँच पूरी हीरे (१९६७), एक आकाश अनेक तारा (१९७७), रचना संभार-३ खण्ड, हिन्दी संस्करण जीवन संध्या, प्रथम प्रतिश्रुति, सुवर्णलता, बकुल कथा।

आशापूर्णा देवी ने अपने साहित्य के माध्यम से मानवीय पीडा, वेदना और कुंठाओं का चित्रण किया है। मूलत: आप बंगाली लेखिका हैं अत: बंगाल का जन-जीवन आप की कथाओं में अभिव्यक्त होता हैं। संयुक्त परिवार में रहने के कारण नारी की विविध समस्याओं, विवशताओं और उनमें नीहित शक्ति को

---

१. साहित्य कोश, भाग २ - सं. धीरेन्द्र वर्मा, पृष्ठ६४

उन्होंने देखा है। उनका प्रसिध्द उपन्यास 'प्रथम प्रतिश्रुती' एक परिवार की तीन पीढियों की नारीयों से सम्बन्धित है, जिसमें माँ, बेटी और पौत्री का जीवन चित्रित है। परिवर्तित काल के अनुसार स्त्री की समस्याओं में, बंधन के स्वरूप में,व्यथाओं में परिवर्तन आता रहता है। लेकिन उसे समानता का हक मिल नहीं पाता। आपने नारी को पुरुष के समकक्ष लाने का यत्न किया। परिपक्व भाषा और सधा हुआ शिल्प, गहन कथ्य को बल देते हैं।

अपनी साहित्य साधना के कारण आपको अनेक पुरस्कार प्राप्त हुए हैं। जिनमें से प्रमुख इस प्रकार हैं-लीला पुरस्कार (१९५४), भुवन माहिनी स्वर्णपदक, कलकत्ता विश्वविद्यालय,रविन्द्र पुरस्कार(१९५६), 'प्रथम प्रतिश्रुति' पर 'भारतीय ज्ञानपीठ पुरस्कार' (१९७६), 'पद्मश्री' (१९७६) एवं फेलोशिप आदि से आप सम्मानित हुयी है।

साहित्य को मात्र मनोरंजन का साधन न मानकर राष्ट्रसेवा का, भविष्यनिर्मिती का साधन मानने वाली आशापूर्णा देवी का देहावसान १३ जुलाई १९९५ को हुआ।

२.६ अमृता प्रीतम :

चर्चित रचनाकार अमृता प्रीतम का जन्म गुजरौंवाला (वर्तमान पाकिस्तान के पंजाब में) सन १९१९ की अगस्त माह की ३१ तारीख को हुआ। राजबीबी और करतार सिंह इनके माता-पिता थे। किशोर वय से ही कविता, कहानी और निबन्ध लिखने शुरू कर दिये। आपकी संपूर्ण शिक्षा लाहौर में ही हुई। अपनी उम्र से छह वर्ष छोटे इमरोज से अन्तर्जातीय विवाह किया।

मूलत: आप पंजाबी लेखिका है। अब तक लगभग पचास पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं और महत्वपूर्ण रचनाएँ छत्तीस भाषाओं में अनुदित हो चुकी है। आपकी प्रमुख कृतियाँ इस प्रकार हैं - प्रमुख उपन्यास - यही सच है, कच्ची सडक, जलावतन, कोई नहीं जानता, जेबकतरे, एक थी अनिता, नागमणि, दिल्ली की गलियाँ, तेरहवाँ सूरज, बंद दरवाजा, रंग का पत्ता, नगरवधू, यात्री आदि एवं प्रमुख कहानी संग्रह - एक शहर की मौत, वह आदमी वह औरत, मेरी प्रिय कहानियाँ, तीसरी आँख, औरत :

एक दृष्टिकोण आदि हैं। परिवार और समाज द्वारा प्रताडित अवश नारी के दर्द को आपने बखूबी उभारा है। दाम्पत्य जीवन के कटु, तिक्त अनुभवों के साथ ही मधुर और मार्मिक जीवन के चित्रों को उकेरा हैं। सामाजिक रुढियाँ, पश्चिमी रंग-ढंग का बनावटी जीवन और वर्गगत अन्याय के विरूद्ध वे सदा लिखती रहती है। अमृताजी जब गद्य रचना लिखती है तो वह लयबद्ध हो थिरकती-सा होता है और जब लेखन का स्वरूप पद्यात्मक होता है तो उसमें गद्य की सी सहजता, सरलता आ जाती है।

अमृताजी अपनी उत्कृष्ट रचनाओं के आधार पर सदैव सम्मानित होती रहीं हैं। लगभग छह विश्वविद्यालयों ने डी.लिट्. की उपाधि से विभूषित किया है। साथ ही साहित्य अकादमी पुरस्कार (१९५६), भारतीय ज्ञानपीठ पुरस्कार (१९८१) तथा पंजाब सरकार के भाषा विभाग के अनेकों पुरस्कार प्राप्त कर चुकी हैं। सन् १९८६-९२ के लिए आपको संसद सदस्य मनोनित किया गया था।

२.७ चन्द्रकिरण सौनरेक्सा :

विकास काल की अन्य अग्रणी रचनाकारों में चंन्द्रकिरण सौनरेक्सा का नाम भी अपनी अलग पहचान बनाता है। १९२० में पेशावर जिले नौशहदरा में श्री नामफल मांगलिक के यहाँ उनका जन्म हुआ। इनके पति श्री कांतिचन्द्र सौनरेक्साजी है। सन् १९३६ में आपने हिन्दी रत्न की परीक्षा पास की। आपने हिन्दी के साथ ही उर्दू, बंगला, संस्कृत आदि भाषाओं का भी अध्ययन किया। सन् १९३१ में 'घीसू चमार' कहानी कलकत्ता से प्रकाशित होनेवाली 'विजय' मासिक पत्रिका में प्रकाशित हुई। यह आपकी प्रथम कहानी थी।

आपकी अब तक कई कहानियाँ देश की श्रेष्ठ पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित हुई हैं। कई श्रेष्ठ कृतियाँ बंगला, मराठी, गुजराती आदि देशी भाषाओं के साथ रशियन जैसी विदेशी भाषा में भी अनुदित हुई है। प्रमुख रचनाएँ इस प्रकार हैं- आदमखोर, उठती दीवारें, दूसरा बच्चा, तीसरी कोशिश, प्रेम और मार्क्स आदि।

चन्द्रकिरणजी ने प्रेमचन्द की धारा से आगे बढकर लेखन किया। उनकी कहानियों में सामाजिक बुराईयों के विरूध्द विद्रोही स्वर दिखाई देते हैं। सोये हुए समाज को जगाने के लिए और परम्परागत रूढियों से मुक्त करने के लिए उन्होंने अपनी लेखकीय प्रतिभा का उपयोग किया। समाज के सर्वाधिक उपेक्षित वर्ग-मजदूर, शोषित और महिलाओं को न्याय देने का यत्न किया। उनकी गहरी संवेदनशीलता के कारण यथार्थ को व्यक्त करने वाले पात्र सजीव बन गये हैं। उनकी इस विशेषता की प्रशंसा करते हुए प्रभाकर माचवेजी लिखते हैं -'भारतीय जीवन की टूटती हुई गिरस्ती, नारी की तकलीफों और आर्थिक विषमता की रस्साकसी में जीवन का आधि-व्याधि-जर्जरित होना यह सब बहुत की यथार्थ रूप लेकर उनकी लेखनी में उतरा हैं।'[1]

एक लम्बे अरसे से वे लखनऊ आकाशवाणी से जुडी हैं। जीवन के यथार्थ को, नारी की पीडा को और घटनाओं को सूक्ष्मता से पकडकर साहित्य में उभारने में ये अत्यन्त सफल रही है।

इनके अतिरिक्त भी अन्य कई रचनाकारों ने पचासवें दशक तक साहित्य-सृजन कर हिन्दी कहानी के विकास में महिलाओं के योगदान को पुख्ता बनाया हैं। ऐसी ही अन्य लेखिकाओं में शिवरानी देवी, होमवती देवी, सुमित्राकुमारी सिन्हा, कमला त्रिवेणीशंकर, तेजरानी पाठक आदि प्रमुख हैं। अपनी सीमाओं के बावजूद भी उनका प्रयास महत्वपूर्ण है। भारतीय समाज में नारी का स्थान सदैव ही दूसरे दर्जे का रहा है। वह निरन्तर अपनी अस्मिता की खोज के लिए प्रयत्नशील रही। उसकी इस व्याकुलता को स्वतंत्रता-आंदोलन के दौरान सही मायने में मुखरता प्राप्त हुयी। लेकिन नींव का पत्थर बनने की महती उपरोक्त लेखिकाओं की हैं। इनमें से कई लेखिकाओं ने कल-परसों तक भी साहित्य सृजन में योगदान दिया हैं तो कुछ अब भी सृजनरत हैं।

---

१. वीणा पत्रिका - मार्च १९४६, पृष्ठ२१२.

३. चित्रा मुद्‌गल एवं अन्य लेखिकाओं के साहित्य का तुलनात्मक अनुशीलन :

स्वतंत्रता संग्राम के पश्चात ही लेखिकाओं ने लेखन में बढ-चढ कर हिस्सा लिया। नारी के लिए हर क्षेत्र के द्वार खुल गये थे। संविधान भी उनकी सुरक्षितता के लिए वचनबद्ध था। परिणामत: अपने नये व्यक्तित्व के निर्माण में नारी शिक्षा के सहयोग से आगे बढने लगी। लेकिन परम्परागत मूल्य अभी भी नहीं बदले थे। पुरूष का अहंकार नारी को समानता का अवसर नहीं दे रहा था। नारी घर और बाहर दो स्तरों पर संघर्षरत थी। ५० वें दशक से ही महिलाओं ने अपनी लेखकीय क्षमताओं को पहचान कर भारतीयों को उनकी गंभीर उपस्थिती का अहसास दिलाया। लेखिकाओं के बारें में 'महिलाओं का लेखन' वाला उपेक्षित दृष्टिकोण बदलनें में एक लम्बा अरसा बीत गया। आज मन्नू भंडारी, शिवानी, कृष्णा सोबती, मालती जोशी, ममता कालिया, उषा प्रियंवदा, मंजुल भगत, निरूपमा सेवती, सूर्यबाला, मृणाल पाण्डे, सुधा भटनागर आदि अनेक लेखिकाएँ कहानी को गंभीरता से लिख रही हैं। उनका लेखन विविधांगी है। अपनी परेशानी, छटपटाहट, मूक वेदना, छल, प्रपंच सभी व्यक्त करनें में उन्हे कोई कठिनाई नहीं होती। ऐसी ही प्रमुख रचनाकारों के मध्य चित्राजी की कहानियों को रखा गया है जो उनकी प्रतिभा को तो दिखाती है ही समसामयीक प्रश्नों पर उनकी गहरी पकड के दर्शन भी कराती हैं।

३.१ शिवानी :

श्रीमती गौरा पन्त 'शिवानी'जी का जन्म गुजरात के राजकोट शहर में १७ अक्तूबर १९२३ को विजयादशमी के दिन हुआ। स्व. शुकदेव पंत आपके पति थे। पुत्री मृणाल पाण्डे एक पत्रकार एवं लेखिका के रूप में स्थापित है। आपकी शिक्षा-दीक्षा कलकत्ता में हुई। गुरूदेव रविन्द्रनाथ टैगोर के शांति निकेतन में ९ वर्ष तक आप रही। प्रारंभ में आप गौरा पन्त के नाम से लिखती थी। बाद में 'शिवानी' नाम से लिखने लगी। आपको भारत सरकार ने पद्मश्री से अलंकृत किया है। भारतेंन्दू हरिश्चन्द्र हिन्दी, उर्दू अकादमी ने सन्‌ १९७९ में 'साहित्य ऊँचाई पुरस्कार' से सम्मानित किया।आपके पुरस्कारों की लंबी सूचि है- राज्य साहित्य पुरस्कार (१९७०-७१), प्रेमचंद पुरस्कार (१९७४-७५), महीयसी महादेवी वर्मा पुरस्कार(१९८९), केन्द्रीय हिन्दी संस्थान, आगरा(१९९२), महाराष्ट्र राज्य हिन्दी अकादमी सम्मान(१९९६) डॉक्टरेट, कानपूर विश्वविद्यालय(१९९४) आदि।

आधुनिक युग में शरदचंद्रिय भावुकता, प्रेमचन्दीय यथार्थवादीता एवं देवकीनंदन खत्री की उत्सुकता एवं पाठकों के मन को बांधकर रखने की क्षमता यदि किसी में है तो वह शिवानीजी में है। आपके प्रसिध्द कहानी संग्रह पुष्पहार, स्वयंसिद्धा, उपहार, रथ्या, अपराधिन, कस्तुरीमृग, चिरस्वयंवरा आदि है। आपकी कहानियों में व्यक्ति-विशेष को महत्व प्राप्त है, ऐसे व्यक्तित्व बहुत है जो उदात्तता की सीमा को स्पर्श करते है। नारी जीवन से जुडी विविध समस्याओं को आपने उठाया है।

शिवानीजी एवं चित्राजी के लेखन में प्रखरता से दिखाई देनेवाला साम्य है-अश्लिल वर्णन से परहेज। चाहे फिर वेश्या जीवन हो या कॉलगर्ल, उन्होंने उनके जीवन का ताना-बाना ऐसा बुना है कि अश्लिलता की गुंजाईश हो कर भी साहित्य में अश्लिलता नहीं आ पाती। 'फातिमाबाई कोठे पर ही नहीं रहती' कहानी में अश्लिलता आ सकती थी, लेकिन चित्राजी ने ऐसा नहीं किया। शिवानीजी की कहानियों में जैसे नाटकीय मोड हैं वैसे ही चित्राजी की कहानियों में भी हैं।

शिवानीजी की 'दो स्मृति चिन्ह' कहानी में अन्तर्जातिय विवाह का चित्रण हैं। बिंदू देवेश से माता-पिता की इच्छा के विरूध्द अन्तर्जातिय विवाह करती है। क्रोधवश माता-पिता उससे सम्बन्ध तोड लेते हैं। 'रूना आ रही है' कहानी में चित्राजी ने अन्तर्जातिय विवाह को कथ्य बनाया है। निमा ब्राह्मण हो कर भी स्क्वाड्रन लीडर शौकत से विवाह कर लेती है जो मुस्लिम है। लेकिन इस विवाह के कारण निमा की भतिजी रूना की सगाई टूट जाती है और फिर रूना किसी से विवाह न कर कुँवारी ही रहती है। जैसे अन्तर्जातिय विवाह से बिंदू सुखी है वैसे ही निमा भी खुशहाल है। लेकिन समाज उन्हे नहीं स्वीकारता । चित्राजी और शिवानीजी दोनो ने ही समाज की इस वृत्ति को व्यक्त किया है। चित्राजी ने स्वयं भी अर्न्तजातिय विवाह किया है। उनके पति श्री अवधनारायण मुद्गल ब्राह्मण परिवार से हैं जब कि चित्राजी ठाकुर परिवार से हैं।

'रूना आ रही है' कहानी में बुआ के अन्तर्जातिय विवाह करने से भतिजी की सगाई टूट जाती है वैसे ही शिवानीजी के उपन्यास 'श्मशान चंपा' में चंपा की बहन के अन्तर्जातिय विवाह करने से चंपा की सगाई टूट जाती है।

शिवानीजी और चित्राजी दोनो ने ही मॉडेलिंग करनेवाली नायिकाओं को चुना है। शिवानीजी की 'कृष्णकली'की नायिका 'कृष्णकली 'और 'एक जमीन अपनी' की 'नीता' मॉडल है। मॉडेलिंग करने की इनकी अपनी अलग-अलग वजहें है लेकिन अंततः दोनो ही अपने प्रेमियाँ द्वारा छली जाती है और आत्महत्या करती है।

शिवानीजी और चित्राजी दोनो ने ही अद्भूत कथानकों का चयन किया हैं। नायिकाओं के सौन्दर्य वर्णन में दोनो ही पारंगत है। शिवानीजी की नायिकाएँ पहाडी सौन्दर्य से मंडीत हैं तो चित्राजी की नायिकाएँ उत्तरप्रदेश के ग्रामीण और शहरी भागों के सौन्दर्य को धारण किए हैं।

चित्राजी की कहानियाँ शिवानीजी की कहानियों की तुलना में अधिक यथार्थवादी हैं। शिवानीजी की कहानियाँ भावुकतापूर्ण अधिक हैं।

३.२ कृष्णा सोबती :

कृष्णाजी का जन्म वर्तमान पाकिस्तान के गुजरात में १८ फरवरी १९२५ में हुआ। आपकी शिक्षा-दीक्षा दिल्ली, शिमला एवं लाहोर में हुई। आपने लम्बे समय तक सरकारी सेवा में अध्यापन का कार्य किया और फिर स्वतंत्र लेखन में निरंतर कार्यरत है। आपकी प्रमुख कृतियाँ हैं यारों के यार, तीन पहाड, ऐ लडकी - कहानी संग्रह एवं डार से बिछुडी, मित्रो मरजानी, जिन्दगी नामा, जिन्दा रूख, दिलो-दानिश-उपन्यास हैं। आपको अनेक पुरस्कार मिले हैं, जैसे जिन्दगीनामा पर 'साहित्य शिरोमणी' और 'साहित्य आकादमी पुरस्कार' (१९८०) 'पंजाब विश्वविद्यालय की फेलोशिप' (१९८०-८२) 'मैथिलीशरण गुप्त राष्ट्रीय सम्मान' (१९९६-९७)।

कृष्णा सोबती की कहानियाँ पंजाब की मिट्टी की गंध लिये हैं। कृष्णाजी को आधुनिक बोध की कथा लेखिका कहा जाता है। क्योंकि उन्होंने समाज की परम्परागत मान्यताओं, नैतिकता, श्लील-अश्लील आदि बातों को चुनौती दी हैं। उनके पात्र अत्यन्त निडर हैं, उन्हे न समाज का भय है, न समय की धारा का और न ही स्वंय के भविष्य का। केवल सर्वत्र रुमानी एप्रोच है। संख्या में कम होकर भी

उनकी कहानियाँ विशिष्ट स्थान रखती हैं। आधुनिक युग की नारी अपनी दमित भावनाओं को खुलकर प्रकट करती है, युगानुरूप उनकी मानसिक स्थिति भी परिवर्तित हुई हैं। कृष्णा सोबतीजी ने आधुनिक युग की नारी के इस परिवर्तित चरित्र को साहस के साथ आपनी कहानियों में अभिव्यक्त किया है। बेबाक चित्रण, गहरी संवेदनशीलता और तटस्थता उनके कहानी लेखन की अन्य विशिष्टताएँ हैं।

कृष्णाजी के सभी उपन्यासों में नायिका के अनेक पुरूषों के साथ या अन्य पुरुषों के साथ सम्बन्ध दिखाये गये हैं। क्योंकि इनकी कहानियों के स्त्री पात्र छायामयी रमणी नहीं अपितु हाडमांस की स्त्री है। जिसकी अपनी भौतिक एवं शारीरिक आवश्यकताएँ हैं। जिनकी पूर्ति वह पाप-बोध से मुक्त होकर करती हैं। उनके उपन्यास 'मित्रो मरजानी' की नायिका मित्रो अतृप्त कामवासना की पूर्ति के लिए विवाहेतर सम्बन्ध बनाती है। 'कुछ नहीं कोई नहीं' की नायिका 'शिवा' भी परपुरुष के आकर्षण से बंधी अपने पति 'रुप' को छोडकर चली जाती है। चित्राजी ने 'एक जमीन आपनी' में मेहता की पत्नि कोकिला को कामवासना की पूर्ति हेतु देवर से सम्बन्ध बनाते हुए चित्रित किया है। इसी उपन्यास की सहनायिका नीता भी उन्मुक्त सेक्स की हिमायती है। वह कहती है कि 'आखिर इसी समाज में पुरूष का वर्जनाहीन जीवन कभी बिसुरता नहीं कि वह नष्ट हो गया। ..... समाज में अब उसका कोई स्थान नहीं। स्त्री क्यों नहीं मुक्त होती इन फरेबी मर्यादाओं से।'[1] वह कहती है कि आखिर स्त्री सेक्स से आक्रांत क्यों है? उसे अपने हक पुरूष से लड कर या मांग कर नहीं मिलेंगे। इसके लिए उसे अपनी 'दृष्टि परिमार्जित करनी है- यानी सेक्स से पवित्र-अपवित्र होने की भावना से स्वंय को मुक्त होना हैं।'[2] इस प्रकार चित्राजी ने ऐसे पात्र उपस्थित किये हैं जो खुले और स्वच्छन्द सेक्स को महत्व देते है।

लेकिन चित्राजी मूलत: भारतीय संस्कारों को मानने वाली, इसी देश के परिवेश से जुडी हुई हैं। 'एक जमीन अपनी' में नायिका अंकिता के माध्यम से उन्होंने यही चित्रित किया है। अंकिता एक स्वाभिमानी, स्वावलंबी नारी है। जिसने प्रेम भी किया, अन्तर्जातिय विवाह भी किया, विवाह-विच्छेद

१. एक जमीन अपनी - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ ११७
२. एक जमीन अपनी - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ ११६-११७

की पीडा को भी भोगा पर कहीं भी हवस को अपने पर हावी नहीं होने दिया। इस उपन्यास के अंत में इसी विदेशी भावबोध की पराजय को व्यक्त करते हुए नीता कहती है-'इस देश की स्त्री को यहीं का खुला हवा पानी चाहिये . . . . यहाँ की मिट्टी का पौधा यहीं के मौसम के अनुशासन में जी सकता है। बाहरी और उधार लिया हवा पानी उसे पच नहीं सकता। पच पाता तो सुधीर के छोड देने पर यह मन अपने लिए कोई अन्य अहलूवालिया या श्रीधर क्यों नहीं तलाश पाया !' [१]

'अपने-अपने गिरेबान' और 'अढाई गज की ओढनी' में भी उन्हें सोबतीजी जैसी बोल्डनेस दिखाने के अवसर थे। लेकिन उन्होनें परिणामों को समझते हुए ऐसा नहीं किया क्योंकि उनका मानना हैं कि 'जो समाज में अश्लील है वह साहित्य में भी अश्लील है।'[२] ऐसे स्थलों पर वे संकेतो से काम लेती हैं।

३.३ मन्नू भंडारी :

मन्नू भंडारीजी का जन्म श्री सुखसंपत राय के यहाँ ३ अप्रेल १९३१ के मध्यप्रदेश में भानपुरा नामक ग्राम में हुआ। उनकी इंटर तक को शिक्षा अजमेर में हुई। बी.ए. की शिक्षा कलकत्ता से तो एम.ए. (हिन्दी) की डिग्री बनारस विश्वविद्यालय से ग्रहण की। कलकत्ता में वे छोटे बचो को पढाती थी बाद में प्राध्यापिका बनी। अब वे स्वतंत्र रूप से लेखन कार्य में मग्न है। सन १९५० के आसपास उन्होने 'मैं हार गयी' कहानी के माध्यम से साहित्य जगत में प्रवेश किया।

उनकी प्रमुख साहित्य कृतियां इस प्रकार है - मैं हार गई, तीन निगाहों की तस्वीर, यही सच है, एक प्लेट सैलाब, त्रिशंकु (कहानी संग्रह), एक इंच मुस्कान (यादवजी के साथ), कलवा (बाल उपन्यास), आपका बंटी, महाभोज, स्वामी (उपन्यास) आदि। उन्हें कई पुरस्कार भी प्राप्त हुए। प्रसिद्ध कृति 'महाभोज' के लिए राजकुमार भुवालका एवं उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान द्वारा पुरस्कार, केन्द्रीय हिन्दी निदेशालय द्वारा अहिन्दी भाषी क्षेत्र की हिन्दी लेखिका के रुप में सम्मान तथा पीपल्स अवार्ड से सम्मानित किया गया। आपने सन् १९७६ में 'पद्मश्री' पुरस्कार को सविनय अस्वीकार किया।

---

१. एक जमीन अपनी - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ २५५
२. राष्ट्रीय सहारा - २३ सितम्बर १९९३

स्वातंत्र्योत्तर काल में सर्वाधिक चर्चित लेखिकाओं में मन्नूजी का नाम आता है। जिंदगी के यथार्थ को प्रामाणिकता के साथ चित्रित करने वाली, प्रेम के त्रिकोण को नई दृष्टि से उठाने वाली और ग्रामीण और शहरी नारी की विविध समस्याओं को परखने और समझने वाली मन्नूजी एक ख्यात लेखिका है। उन्होने हर स्तर के, हर वर्ग के, विभिन्न स्वभाव वाले पात्रों का चित्रण किया है। अकेली, सयानी बुआ, एक कमजोर लडकी की कहानी में अलग-अलग दो स्त्री पात्रों को उन्होंने चित्रित किया है। उन्होंने नारी के दुर्बल और सक्षम रुप का चित्रण किया है। कहीं-कहीं उनके पात्र परम्परागत, रुढीगत, संस्कार बद्ध है तो कहीं-कहीं अत्यन्त आधुनिक, उन्मुक्त हैं। मन्नूजी ने प्रेम के साथ ही नैतिकता और अश्लिलता को भी परिवर्तित बोध के रुप में रेखांकित किया है। विघटित परिवार के बच्चे की मानसिकता को 'आपका बंटी' के माध्यम से उन्होनें सुंदर तरीके से अभिव्यक्त किया है। कामकाजी महिलाओं की समस्याओं को सबसे पहले सशक्त ढंग से प्रस्तुत करनेवाली लेखिका के रुप में मन्नूजी का नाम लिया जा सकता है। शिल्प की दृष्टि से मन्नू भंडारी कहानियाँ सहज एवं सपाट हैं। उनकी भाषा सजीव एवं पात्रानुकूल है। मन्नूजी की कहानियों में अनुभूति की वैयक्तिकता है। जो उनके गहरे अनुभवों से आयी है।

मन्नू भंडारी की कहानी 'त्रिशंकु' एवं चित्राजी की कहानी 'त्रिशंकु' में शीर्षक साम्य तो है ही साथ ही इस अर्थ में भी साम्य दिखायी देता हैं कि मन्नूजी की नायिका 'तनु' अपनी मम्मी को समझ नहीं पाती जो एक ओर तो आधुनिक होने का दंभ भरती है तो दुसरी ओर उसके प्रेमी से मिलने-जुलने पर प्रतिबंध लगा कर परम्परागत रुढीयों में जकडी माँ लगती है। तनु सोचती है कि - 'इतने ही बंधन लगाकर रखना था तो शुरू से वैसे पालती।'[1] इस प्रकार तनु की स्थिती त्रिशंकु के समान हो जाती है। 'त्रिशंकु' कहानी में चित्राजी ने बंडू की त्रिशंकु सी स्थिती चित्रित की है। पिता के अत्याचार से वह माँ को मुक्त करना चाहता है। माँ उसके और कमली के लिए हरदम परेशान रहती है। बंडू को ब्लैक के धंधे में लगाने वाली रफीक की माँ से वह तब लड पडती है जब बंडू धंधे में पकडा जाता है। वह कहती है कि उसका सीधा-सादा बेटा रफीक की संगत से बिगड गया। बच्चों से अत्याधिक स्नेह करने वाली माँ जब दूसरी शादी कर

१. त्रिशंकु - त्रिशंकु - मन्नू भंडारी, पृष्ठ ८१

लेती है तो बंडू माँ के इस रुप को समझ नहीं पाता कि बच्चों के मोह से मुक्त हो वह कैसे दूसरा विवाह रचा सकती है ?

मन्नूजी की 'बंद दराजों का साथ' कहानी से मिलता-जुलता कथ्य चित्राजी की 'ताशमहल' कहानी का है। अपने पूर्व विवाह से प्राप्त बच्चे के साथ 'शोभना' निशिथ के साथ दूसरा विवाह करती है। लेकिन इस बच्चे के कारण पति-पत्नी में तनाव पैदा हो जाता है। अंत में शोभना पति से अलग हो जाती है। 'बंद दराजों के साथ' की मंजरी भी पुनर्विवाहित है। मंजरी का पति अपनी पत्नी के पहले पुत्र से उपेक्षापूर्ण व्यवहार करता है। 'मंजरी' और 'शोभना' दोनो ही अपने पतियों से यह अपेक्षा करती हैं कि उन्हे उनकी समग्रता के साथ स्वीकार किया जाय। लेकिन वे केवल उसे वस्तु रुप में ही स्वीकारते हैं।

मन्नूजी की 'तीसरा आदमी' और चित्राजी की 'अग्निरेखा' शक को आधार बना कर लिखी गयी कहानियाँ हैं। चित्राजी ने शक के बीज स्त्री में चित्रीत किये है तो मन्नूजी ने उसे पुरुष में दिखाया है। इस प्रकार कई स्थानों पर ऐसा लगता है कि चित्राजी कथ्य के मूल बीज को कहीं न कहीं अवश्य मन्नूजी से प्रेरित हो कर लिखती हैं। यद्यपि पूरी कहानी मात्र उनकी अपनी मौलिक होती है। दृष्टी और विचार उनके स्वत: के होते हैं।

३.४ उषा प्रियवंदा :

उषाजी का जन्म कानपुर शहर में २४ दिसम्बर १९३१ को हुआ था। आपने अंग्रेजी विषय में एम.ए. तथा डी.फिल. की डिग्री प्राप्त की। आपकी शिक्षा इलाहाबाद में हुई। लेडी श्रीराम कॉलेज में प्राध्यापिका के पद पर कार्यरत रही। प्रसिद्ध भाषाविद किम विल्सन के साथ विवाहबद्ध होकर अमरीका चली गयीं। वर्तमान में डिपार्टमेन्ट ऑफ इंडियन स्टडीज, यूनिवर्सिटी ऑफ विस्कॉन्सिन (अमेरिका) से सम्बद्ध हैं।

आपकी प्रसिद्ध औपन्यासिक कृतियों में पचपन खम्भे लाल दिवारें, रूकोगी नहीं राधिका, शेष यात्रा आदि हैं। प्रमुख कहानी संग्रहों में जिंदगी और गुलाब के फूल, वापसी, कोई नहीं, खुले हुए दरवाजे, जाले, झूठा दर्पण आदि हैं।

आजादी प्राप्त होने पर जिस प्रकार सारा देश परिवर्तन को ग्रहण कर रहा था भारतीय नारी भी अपने व्यक्तित्व में परिवर्तन स्वीकार कर रही थी। लेकिन इस प्रक्रिया में उसे बहुत-सी दुविधाएँ घेर रहीं थी। पुरानी मान्यताएँ और पुराने मूल्य टूट रहे थे और नई मान्यताओं और मूल्यों की स्थापना हो रही थी। इस दौर में उसके कई चयन गलत सिद्ध हो रहे थे। वह आधुनिकता और परम्परागतता में तालमेल नहीं बैठा पा रही थी। नारी के इस रूप का सूक्ष्म विश्लेषण उषाजी की कहानियों में मिलता हैं। 'जिंदगी और गुलाब के फूल' की कहानियाँ भौतिकवाद का विरोध करती हुई यथार्थवादी कहानियाँ है। आधुनिक युग में अर्थ प्रधान है, संवेदनाओं, भावनाओं और नैतिक मूल्यों को कोई स्थान नहीं है। नगरीय जीवन अकेलेपन, ऊब, उदासी और घुटन से भरा है। ऐसी परिस्थितियों और प्रवृत्तियों का अंकन बहुत ही उत्तम प्रकार से उषा प्रियंवदा ने किया है।

आप पर अस्तित्ववादी दर्शन का गहरा प्रभाव है। परिणाम स्वरूप आपके कथा साहित्य के पात्र अनास्था, संत्रास और भय से पीडित हैं। कठीन, दुविधाग्रस्त स्थितियों में लड़ने का उनमें साहस नहीं हैं। ऐसी स्थिती का प्रभावशाली चित्रण आपने किया है। खासकर नारी चित्रण में उषाजी ने यह दिखलाने का यत्न किया है कि विश्व के किसी भी देश की नारी अपनी वर्तमान स्थिती से विद्रोह अवश्य करती है लेकिन वह नई स्थिती में स्वंय को पूर्ण रूप से सहज नहीं कर पाती।

उषाजी की 'पूर्ति' कहानी में नायिका तारा कुरूप है। कुरूपता के कारण ही विवाह नहीं हो पाता। वह आर्थिक रूप से सबल है-अध्यापिका है। परिवार में केवल माँ हैं। अन्य दायित्व नहीं हैं लेकिन वह अपने आप को अधूरा महसूस करती है। मसूरी में नलिन से उसकी मुलाकात होती हैं। अचानक लाइट चले जाने से हुए सम्बन्ध से वह स्वंय को परिपूर्ण मानने लगती है। चित्राजी की 'लाक्षागृह' की सुनीता भी कुरूप है। स्वावलम्बी है और परिवार के रूप में केवल माँ है। 'पूर्ति' की नायिका को परिपूर्णता का अहसास तो होता है। लेकिन 'लाक्षागृह' की सुनिता सिन्हा से धोखा खाती है। वह उससे नहीं वरन् उसकी नौकरी से प्यार करता है वह कहता है 'हर सौदे की शक्लसूरत पर नहीं जाना चाहिये। मैं जीवन

और व्यावहारिकता को एक दूसरे का पूरक मानता हूँ।[1] लेकिन सुन्नी इस धोखे से निराश नहीं होती और वह सिन्हा से विवाह नहीं करती।

उषाजी की 'सम्बन्ध' कहानी पाश्चात्य मान्यता पर आधारित है। अविवाहित श्यामला विवाहित एवं तीन बच्चों के पिता सर्जन से सम्बन्ध रखती है। श्यामला और सर्जन बंधनहीन स्वतंत्र जीवन जीना चाहते हैं। चित्राजी के उपन्यास 'एक जमीन अपनी' की नीता भी पाश्चात्य विचारधारा की है। उसने भी शादी-शुदा और दो बच्चों के पिता सुधीर से सम्बन्ध बनाये थे। विवाह असे आवश्यक नहीं लगता। वह कहती है-'हम प्रेम करते हैं। हमारा प्रेम मात्र आवेग नहीं है। न क्षणिक उन्माद ! यह परस्पर संवाद है। परिपक्व! परिपक्व मानसिक जुडाव। हम वर्जनाहीन होकर जिएंगे ! .... बंधनहीन होकर बंधेंगे।... रूढि मुक्त हो मानसिक वरण !'[2] 'सम्बन्ध'की श्यामला और 'एक जमीन अपनी' की नीता दोनो के ही व्यक्तित्व में बिखराव आ जाता है और नीता तो मौत का चुनाव कर लेती है। दोनो के असफल सम्बन्ध के माध्यम से उषाजी और चित्राजी ने ऐसी आधुनिकता का विरोध किया है।

३.५ मालती जोशी :

मालती जोशी का जन्म औरंगाबाद में ४ जून १९३४ में हुआ। उनके पिता जज थे तथा पति इंजिनियर है। आपकी शिक्षा एम.ए. हिन्दी विषय में हुयी है। लेखन का आरंभ बाल साहित्य से किया। आपने कहानी लेखन में विशेष सफलता अर्जित की। साथ ही आपने उपन्यास, रेखाचित्र एवं नाटक भी लिखे हैं।

आपकी प्रमुख रचनाओं में प्रमुख उपन्यास हैं-पटाक्षेप, सहचारिणी, पाषाण युग, समर्पण का सुख आदि एवं कहानी संग्रह हैं-मध्यान्तर, दादी की घड़ी, एक घर सपनों का, जीने की राह, विश्वास गाथा, पराजय, राग-विराग, शोभा यात्रा आदि।

---

१. लाक्षागृह - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ ६४
२. एक जमीन अपनी - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ १९९

मालती जोशीजी ने सामाजिक एवं पारिवारिक समस्याओं पर अधिक लिखा है। आपका दृष्टीकोण आस्थावादी है। नारी के मनोभावों को गहराई से समझ कर उतनी ही संवेदनशीलता और गहनता से कहानी में चित्रित करने में आपकों सफलता मिली है। नारी जीवन से जुडी हर वर्ग की समस्याओं को जैसे-किशोरियाँ, प्रौढ कुमारिको, विधवा, पुनर्विवाहिता, कामकाजी महिला, अशिक्षीता, आधुनिका आदि की समस्याओं को उन्होंने स्थान दिया है। आधुनिक युग के बदलते हुए परिवेश में भी उनमें भारतीय संस्कृति, धर्म, विवाह-संस्कार, भारतीय जीवन मूल्य और नैतिकता पर पूर्ण विश्वास है, जो उनकी कहानियाँ में परिलक्षित होता है। उनकी कहानियों पाठकों के मनोभावों के इतनी अनुकूल होती हैं कि वे उसके साथ अनुरागमय रिश्ता बना लेते हैं। यही वह रिश्ता होता है जो लेखक की अलग पहचान बनाता है और उसे चर्चा के केन्द्र में ले आता हैं।

मालतीजी ने स्त्री और पुरूष को एक दूसरे का पूरक माना है। स्त्री के बिना पुरूष अधुरा है तो पुरूष के बिना स्त्री भी अपूर्ण है। दोनों ही कभी एक दूसरे के शोषक बन जाते हैं तो कभी एक दूसरे के सहायक बन जाते हैं। कभी कोई पुरूष किसी स्त्री को प्रताडित कर उसका भविष्य अंधकारमय कर देता है तो कभी प्रेरणा का कारण बन जाता है। उसी प्रकार कहीं स्त्री पति या प्रेमी के लिए मार्गदर्शक ज्योतिस्तंभ बन जाती है तो कहीं विकास के राजमार्ग का रोडा बन जाती है। उनके शिल्प की स्वाभाविकता और भाषा की सरलता दर्शनीय है। बोलचाल की भाषा के, सहज, लघु संवाद पाठकों के हृदय को स्पर्श कर जाते है। भाषा में पाण्डित्य प्रदर्शन कहीं भी नहीं है। न ही उलझावभरें प्रयोग ही हैं। परिणाम स्वरूप जीवन के छोटे-छोटे अनुभव, सीदी-साधी भाषा में पाठक के मन पर अमिट छाप छोड जाते हैं।

मालतीजी ने कामकाजी नारी के दोहरे शोषण को वाणी दी हैं। उनकी कहानी 'मध्यान्तर' की विमल का पति अपनी नौकरी करने वाली बीवी को शक की निगाह से देखता है। यही पति आधुनिकता के दंभ में पत्नी से नौकरी करवाता है और बाद में उससे यह अपेक्षा रखता है कि वह अपने दफ्तर के सहयोगियों से बातचित भी न करें। वह उसे केवल यंत्र के समान मानता है। जो दफ्तर में जाकर पैसे तो

कमाए लेकिन सदा पति नामक पुरूष के ईशारों पर चले। चित्राजी नें पुरूष की इस सामंती वृत्ति पर 'प्रमोशन' कहानी लिखी है। जिसमें वे बताना चाहती है कि स्त्री की कार्य कुशलता को पुरूष उसकी क्षमता नहीं मानता वरन् वह किसी बॉस की कृपा का परिणाम मानता है। 'प्रमोशन'की ललीता नौकरी में पदोन्नती पाती है तो पति को लगता है कि वह मि.कोठारी की ही कृपा है। उसकी कुंठीत मानसिकता देख ललीता सोचती है-'क्या सोचकर ब्याह के विज्ञापन में नौकरीशुदा लडकी को प्राथमिकता वाला वाक्य जुडवाते हैं। खुश हुई थी वह .. कि चलो कोई ऐसा लडका तो मिला जो स्त्री की स्वतंत्रता और उसके स्वावलंबन का पक्षधर है। क्या मालूम था कि वह स्त्री के स्वावलंबन को महत्व देना नहीं अपितु उसे पैसों की टकसाल मानकर इस्तेमाल की राजनीति है...।'[१] चित्राजी के पात्र हारने वालों मे से नहीं है। ललीता भी अपने पति को अपनी चेतना का प्रमाण देते हुए स्पष्ट कह देती हैं कि-'तुम्हारी कुंठाओं द्वारा रचा हुआ सत्य मेरी नियति नहीं बन सकता।' चित्राजी के पात्र अपनी इसी चेतनता के कारण प्रभावशाली लगते हैं।

मालतीजी की कहानी 'एक घर सपनों का'की बसंती एवं चित्राजी को कहानी 'लकडबग्घा'की पछांहवाली की स्थिती एक सी है। बसंती पति द्वारा अपमानित हो कर हर जगह तिरस्कृत होती है। 'पति से तिरस्कृत नारी की हर जगह दुर्गति होती है। चाहे ससुराल में हो चाहे पीहर में। वह तो बिना पैंदे की लुटिया होती है। जिधर चाहा लुढका दिया। बिना पैसे की नौकरानी होती है-जब चाहा जैसा चाहा, काम लिया और बस छुट्टी।'[२] 'लकडबग्घा' कहानी की पंछाह बहू का जीवन तो न सधवा में है, न विधवा में। गौने के एक महिना बाद ही पति कहीं गायब हो गया। आधी जायदाद की हकदार हो कर भी उसे कोई अधिकार नहीं है और अधिकार की मांग करने पर उसे षडयंत्र रच मार दिया जाता है।

समाज के रीति-रिवाजों और परम्पराओं का बाल मन पर गहरा प्रभाव पडता है। मालतीजी की 'गुडिया का दहेज' और चित्राजी की 'अढाई गज की ओढनी'इस दृष्टि से समान हैं। कामकाजी माता-पिता के बचे स्कूल से लौटकर बैचेनी से माता-पिता के लौटने का इंतजार करते है। 'पराजय' में मालतीजी ने तो 'ताशमहल' में चित्राजी ने इस प्रतिक्षा का सुंदर, भावपूर्ण वर्णन किया है।

---

१. प्रमोशन - जगदंबाबाबू गांव आ रहे है - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ ७३
२. एक घर सपनों का - एक घर सपनोंका - मालती जोशी, पृष्ठ २९

३.६ राजी सेठ :

राजी सेठ का जन्म उत्तरप्रदेश के नौशहदरा शहर में २१ अक्तूबर १९३५ में हुआ। आपने १९४२ तक लाहौर में निवास किया तथा देश विभाजन के बाद शाहजहाँपुर (उत्तर प्रदेश) में रहीं। आपने स्नातक की पदवी लखनऊ से प्राप्त की। एम.ए. अंग्रेजी विषय के साथ कर रही थी कि पूर्वार्ध के पश्चात आपका विवाह हो गया। तत्पश्चात लगभग पन्द्रह वर्ष बाद सन् १९७२ में आपने एम.ए. उत्तरार्ध किया। राजी सेठ ने गुजरात विश्वविद्यालय से 'तुलनात्मक धर्म और भारतीय दर्शन' विषय पर विशिष्ट अध्ययन भी किया है।

आपकी पहली कहानी 'समान्तर चलते हुए' सन् १९७४ में 'प्रतीक' पत्रिका में प्रकाशित हुई। आपने मुख्यत: कहानियाँ लिखी है। प्रमुख कहानी संग्रहो में-अंधे मोड से आगे, तीसरी हथेली, यात्रा मुक्त, दूसरे देशकाल में तथा सदियों से हैं। उनका चर्चित उपन्यास 'तत्सम' है। उन्होंने उम्र के पैंतालिस वर्ष बाद लिखना शुरू किया। जो आश्चर्य में डालने वाली बात है। लेकिन उनके लेखन की परिपक्वता तथा यश लिप्सा से निरपेक्षता पाठकों को उनके लेखन की ओर आकृष्ट करती है।

उनका लेखन किसी विचारधारा द्वारा धकियाया हुआ नहीं है। उनके लेखन में मानवीय सम्बन्धों के द्वन्द्व और अन्तर्द्वंद्व, आंतरिक विकलता दिखाई देती है। कथ्य का चयन वे अन्तश्चेतना के माध्यम से करतीं हैं। अपने लेखन के माध्यम से आपने पुरानी रूढियों और मान्यताओं का विरोध किया है। कहानी में मंथर प्रवाह और गहराई है। शिल्प का रचाव बडे धीरज के साथ करती है। नारी की शक्ति, संभावनाएँ, उसके सत्य, उसके जीवनानुभव तथा उसकी नियति को वे सृजनात्मक रूप में उपयोग में लाती हैं।

राजी सेठ का कथा साहित्य एकल या सामूहिक रूप से मन को मथकर दूरगामी प्रभाव छोडता है। कहानी पढकर समाप्त होते ही पाठक के मन में मंथन आरंभ हो जाता है। राजी सेठ बाह्य घटना की नहीं अपितु मनुष्य के आन्तरिक रचना की लेखिका हैं। कथ्य का प्रयोग औजार के समान करती हैं। केवल कथा कहना उनका उद्देश्य नहीं है अपितु मन के भीतर होनेवाली संवेदनाओं, अनूभूतियों और

परिवर्तनों को बुनना है। उनकी कहानी 'नॉट टू रीड बट टू रीड' वाली प्रकृति के योग्य हैं। राजी सेठ की 'गलत होता पंचतंत्र' के माँ और बेटे के बीच का रिश्ता समय गुजर जाने पर बे-मतलब हो जाता है वैसे ही चित्रा मुद्गलजी की 'दशरथ का वनवास' में पिता और पुत्र का रिश्ता समय के बीतने के साथ बेमानी हो जाता है। 'अनावृत कौन' के पात्र अनावृत होने और वहशी संसार के सामने अपनी एनॉटमी उघड जाने की कल्पना से पीडित है। नायिका अपने सिद्धान्तों के कारण कैबरे देखने नहीं जाना चाहती क्योंकि 'कैबरे देखते हुए मुझे लगता है कि केवल मैं ही नहीं...आसपास की ... संसार की सभी स्त्रियाँ अनावृत होती जा रही है.... और तुम सब उन्हे देख रहे हो, आँखे गडाये...वहशियों की तरह !'[1] चित्राजी ने 'हस्तक्षेप' कहानी में यही भाव व्यक्त किया हैं जब अंकू की सहेली नीता जो प्रसिद्ध मॉडल है विज्ञापन में बहुत कम कपडों में काम करती हैं। अंकू कहती है कि नीता संपूर्ण वस्त्रों में भी सुंदर दिखती है। वह किन मूल्यों के आधार पर जीना चाहती है-'किन की वकालत कपडे उतारकर कर रही हो...लोगो की दृष्टि में लपलपाती उत्तेजना तुम तालियों की गडगडाहट में महसूस नहीं कर पायी....कि उन दृष्टियों को चीर कर न जाने कितनी जोडी उंगलियाँ लपककर उन तनियों का फंदा खींच लेने के लिए व्याकुल हो रही थीं जो नाम मात्र को ही सही तुम्हारे देह की आड बनी हुई थी। मैं नहीं झेल पायी...लगा था कि हॉल मे उजाला होते ही कही ये लोलूप उंगलियाँ मेरी देह न टटोलने लगें...।'[2] चित्राजी ने उच्चभ्रु कहलाने वालों की जिंदगी की गंदगी को खोल कर दिखाया हैं। ढोंग भरे जीवन के खोखलेपन को उजागर किया है।

३.७ मंजूल भगत :

मंजूल भगत युवा पीढी की रचनात्मक लेखिका है। आधुनिक परिवेश के कटु सत्यों को समर्थता से व्यक्त किया है। उनका जन्म २२ जून १९३६ में हुआ। आपका विवाह श्री ललीतमोहन भगतजी के साथ हुआ। हायर सेकेण्डरी की परिक्षा आपने दिल्ली शिक्षा बोर्ड से प्रथम श्रेणी के साथ उत्तीर्ण की। दिल्ली विश्वविद्यालय से सन् १९५५ में बी.ए. की डिग्री में सर्वोच्च स्थान प्राप्त करनेवाली विद्यार्थिनी रही।

आपने साहित्यीक जीवन की शुरूआत सन् १९७० से की। 'साप्ताहिक हिन्दुस्तान' में आपका

---

१. अनावृत कौन - राजी सेठ, पृष्ठ २२
२. हस्तक्षेप - जगदंबाबाबू गाँव आ रहे है - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ ७६

उपन्यास 'खातुल' प्रकाशित हुआ था। तब से अब तक आप निरंतर साहित्य-सृजन में रत हैं। हिन्दी के साथ ही अंग्रेजी में भी आपने लिखा है। आपने स्वयं अपनी कहानियों को अंग्रेजी में अनुदित कर बारह कहानियों का संग्रह प्रकाशित किया। आपकी कहानियों का मराठी, गुजराती, उर्दू एवं रूसी भाषाओं में अनुवाद हुआ है।

अनारो, टुटा हुआ इन्द्रधनुष, खातुल, तिरछी बोछार, बेगाने घर में आपके प्रमुख उपन्यास है। क्या टूट गया, आत्महत्या से पहले, बावन पत्ते और एक जोकर, कितना छोटा सफर, गुलमोहर के गुच्छे आपके प्रसिद्ध कहानी संग्रह हैं।

सामर्थ्यवान रचनाकार मंजुल भगत ने कथानकों की विविधता के अनुरूप ही पात्रों का वैविध्य बनाए रखा है। एकरसता उनके लेखन में नहीं है। उनके साहित्य में चरित्रों की विवशता, घुटन और अन्तर्द्वंद्व को संकेत के साथ शिष्ट रूप में व्यक्त किया गया है। उनके पात्र कायर नहीं हैं न ही विद्रोही। मात्र स्थितियों से संघर्ष करने की वृत्ति उनमें हैं। जिसमें से जीने का मार्ग ढूंढ ही निकालते हैं। नारी जीवन की विविध समस्याओं और कटु-तिक्त स्थितियों का साक्षात्कार उनकी कहानियों में होता है। अनुभूति की प्रामाणिकता और विश्वसनियता के धरातल पर उनकी कई कहानियाँ खरी उतरती हैं।

मंजुलजी की कहानी 'रसप्रिया' की सास सोलह वर्ष की आयु गें ही विधवा हो गयी थी। गोद लिए बृजमोहन की बहु के आ जाने पर उसके अभिसार में ही उन्हे अपना यौवन अंगडाई लेता दिखता। फिर पोते गिरीश की भी बहू आ जाती है। वक्त के बदलने के साथ ही बहुओं का श्रृंगार भी परिवर्तित होता रहता है। रसप्रिया ददियासास हर नई दुलहिन के साथ फिर अपने यौवन को लौटता महसूस करती है। चित्रा मुद्‌गलजी ने भी 'दुलहिन'कहानी की सास को सदा तरूणी रहती चित्रित किया हैं। क्योंकि अभी उसकी सास जीवित हैं। लेकिन जिस रोज उसकी सास नहीं रहती वे करूणा से रो पडती है-'अब हमका दुलहिन कहिके को पुकारी....आज हम बुढा गईन रे छोटू बुढा गईन....जब तक जिया जियत रही....हम का

यहै लागत रहा कि हम बहुरियाहन.... भले हमरे जवान-जहील बहु-बेटवा, नाती-पनाती है तो का।'[1] मंजुल की रसप्रिया की सास अपनी पुरानी यादों के साथ अंत तक जवान बनी रहती है तो चित्राजी की 'दुलहिन' की सास अंत तक स्वंय को इसलिए दुलहिन समझती है कि जब तक उससे बडे व्यक्ति जिवित है वे छोटी ही रहेगीं। जिस दिन बडे नहीं रहते छोटों की उम्र बढ जाती है।

मंजूलजी एवं चित्राजी ने अपने कथ्य को बल देने के लिए उपकथ्य और गौण चरित्रों की रचना की है। मंजूल की कहानी 'नागपाश' की शिवानी अपने शराबी पति के अत्याचारों से त्रस्त है। लेकिन वह सब कुछ सहती रहती है। उसी कहानी में जमादारिन का प्रसंग है जो जमादार के हाथ का तमाचा खा जोर से बुक्का फाड कर रो-रो कर भीड इकट्ठा कर लेती है। शिवानी को तब वह प्रसंग याद आ जाता है जब नशे में प्रशांत बहस करते-करते शिवानी को तमाचा जड देता है। 'उस अपमान को पीकर झट उसने कमरे की खिडकियाँ बंद कर दी थी, दरवाजे का परदा खींच दिया था-कहीं किसी ने देख तो नहीं लिया ! क्या सोचेगा कोई ! छी ! ऐसी गँवार हरकत ! ....शिवानी ने सोचा ''तो मध्यवर्ग की शिक्षीत महिला ही सबसे अबला है-मान मर्यादाओं के नीचे कुचली हुई !''[2] शिवानी जमादारिन की तुलना में स्वयं को अधिक कमजोर पाती है। चित्राजी की कहानी 'इस हमाम में' का नायक अत्यन्त अंधविश्वासी और सामंती विचारों का है। उसकी पत्नी दिवा ऐसे घुटन भरे माहोल से मुक्त होना चाहती है। उसके यहाँ प्रतिदिन कचरा उठाने आनेवाली अंजा उसे बहुत ही आत्मविश्वासी लगती हैं जो छीज-छीजकर भी संघर्षरत है। उसके और अंजा के जीवन स्तर में बहुत अंतर है लेकिन दोनों ही पुरूष द्वारा शोषित हैं। दिवा भी अंत में इस बात पर सहमत सी लगती है जो बूढे व्यक्ति ने कही थी-'आदमी और जगह बदल लेने से जिन्दगी थोडे ही बदल जाती है।'[3]

बाल मनोविज्ञान पर मंजुलजी और चित्राजी ने कहानियाँ लिखी है। बच्चों के व्यक्तित्व को बनाने में हमारा ही हाथ होता हैं। बच्चें निश्छल होते हैं। उनमें पाप भावना नहीं होती और न ही वे अपराधी वृति

---

१. दुलहिन - ग्यारह लम्बी कहानियाँ - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ ५९
२. नागपाश - गुलमोहर के गुच्छे - मंजुल भगत, पृष्ठ ६४
३. इस हमाम में - इस हमाम में - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ ९९

के होते है। समाज और बडों से ही वे गुण-अवगुण ग्रहण करते हैं। मंजुलजी की 'पावरोटी और कटलेटस्' कहानी में अखबार बेचने वाला लडका अपनी भूख दबाये, भीख की लालच से बचता हुआ अखबार खरीदने वाला ग्राहक ढूढता रहता हैं। लेकिन एक मेमसाहब बडी बेरूखी से उसे दस पैसे भीख दे देना चाहती है क्योंकि वह अखबार नहीं लेना चाहती। वह लडका आखीर अखबार बेच कर एक सूखी पावरोटी खरीद ही लेता है और उस मेमसाहब को जो उसकी बेइज्ञती कर गयी थी ताना मारता हैं। चित्राजी की 'बेईमान'कहानी में छटंकी पूरी ईमानदारी से स्टेशन पर पत्रिकाएँ बेचता हैं। लेकिन एअर कंडिशन गाडी में बैठनेवाले पढे लिखे लोग उस छोटे से बच्चे को धोखा देकर पत्रिकाएँ रख लेते हैं और पैसे नहीं चुकाते। वह सोच में पड जाता हैं कि क्या 'पढे लिखे लोग ऐसे होते है? अम्मा उसे ऐसा ही पढा-लिखा बनाने का सपना देख रही थी![1] वह भी आखीर बडों की बेईमानी सीख जाता हैं। जहाँ मंजुलजी की कहानी 'पावरोटी और कटलेटस'का अखबार-विक्रेता बच्चा लालच दबाये ही रहता हैं वहाँ चित्राजी की 'बेईमानी' कहानी का छंटकी बडों से ही 'बेईमानी'का गुर सीख जाता हैं।

३.८ चन्द्रकान्ता :

चन्द्रकांताजी का जन्म सितम्बर १९३८ में श्रीनगर, कश्मीर में हुआ। उन्होंने बी.एड. तक की शिक्षा श्रीनगर, काश्मीर में ही प्राप्त की। तत्पश्चात हिन्दी विषय में एम.ए. की डिग्री पिलानी से ग्रहण की। आपकी पहली कहानी सन् १९६७ मे 'कल्पना' पत्रिका में छपी थी। आपने उपन्यास एवं कहानी विधा को अपनी अभिव्यक्ती का माध्यम बनाया। आपकी प्रमुख औपन्यासिक कृतियाँ अर्थान्तर, अंतिम साक्ष, बाकी सब खैरियत है आदि है तो प्रमुख कहानी संग्रह सलाखों के पीछे, गलत लोगों के बीच, पोशूनल की वापसी, दहलीज पर न्याय, सूरज उगने तक, कोठे पर कागा, काली बर्फ, प्रेम कहानियाँ आदि हैं।

चन्द्रकांताजी की कहानियाँ जीवन को प्रभावित एवं निर्धारित करनेवाली सामाजिक-आर्थिक स्थितियों और मुद्दों की है जो हमारे समसामयिक समाज का दर्पण भी है। इस आइने में हम समसामयिक सामाजिक, आर्थिक और राजनैतिक संदर्भो से उत्पन्न व्यवस्था प्रश्नों और परिणामों से रूबरू हो सकते

---

१. बेईमान - जगदंबाबाबू गाँव आ रहे है, पृष्ठ ८९

हैं। विघटित मूल्यों और बदलते मानवीय रिश्तों की ये कहानियाँ मनुष्य की संवेदना व मानवीय स्थिती से हमें परिचित कराती हैं। आम जनता के सुख-दुख, उनकी समस्याओं से सरोकार रखती ये कहानियाँ वादों की सीमाओं से बाहर हैं। जाने पहचाने संदर्भो से जुडी होकर भी अनछूए पहलुओं को ढूँढती ये कहानियाँ कथ्य के अनुरूप ही भाषा शिल्प से सजी हुई हैं। उनकी प्रसिद्ध कहानियाँ वितस्ता का जहर, काली बर्फ, आत्मबोध, कित्थे जाणा पुत्तर आदि में कश्मीर और पंजाब का लहू लुहान चेहरा है तो 'पोशूनल की वापसी' में निश्छल स्नेह का छलकता सागर है। 'पहाड पर वर्षा' में प्रेम के विविध वर्णी रंगों के कोलाज है तो 'नूराबाई', 'कोठे पर कागा' और 'दहलीज पर न्याय' में अपनी अस्मिता के लिए जद्दोजहद् करती नारियों का संघर्ष है। 'वनवास' में वृद्धों की पीडा है तो 'साऊथ एक्स की सीता' में विवाह सम्बन्धी विडम्बना है। चन्द्रकांताजी ने अपनी कृतियों के माध्यम से समय के सत्य को आईना दिखाकर वक्त के चेहरे को संवारने की कोशिश की है।

चन्द्रकांताजी की कहानी 'नूराबाई' में सेठ और जद्दे मिलकर नूराबाई की दस-बारह साल की अबोध लडकी पर बलात्कार करते हैं। नूराबाई जद्दे पर लोहे की ओखली दे मारती हैं। चित्रा मुद्गल की कहानी 'केंचूल' में सेठ कमला की बेटी सरना को बुरी नजर से देखता है और अश्लील हरकतें करता हैं। लेकिन परिस्थितियों के जाल में फंसी कमलाबाई बेटी सरना के अपमानका बदला नहीं ले पाती। उसका क्रोध केवल बेजान वस्तुओं पर निकलता है-'पिच् से उसने अपने दाहिने तरफ पड रही बिना प्लास्टर वाली रामरती की चाल पर थूका। पाण्डे की बाकडेनुमा पान की दुकान को लक्ष्य कर थूका। गोबर पुते बागले मोची के झोंपडे पर थूका।'[1] लेकिन मन में तय किये निर्णयनुसार बानी के मूँह पर नहीं थूक पायी क्योंकि -'बानी के एहसान जो छाती पर लदे बैठे हैं। कैसे कुलबुलानें लगे थे वे जैसे ही थूकने को तत्पर हुई।'[2] चन्द्रकांता की 'वनवास' कहानी में बदलते समय में वृद्धों की आन्तरिक एवं बाह्य पीडा है, स्मृतियों में जीने की विवशता है उसी प्रकार चित्रा मुद्गल की 'दशरथ का वनवास'में एक वृद्ध पिता की पुत्र को ठीक से न समझ पाने की मजबूरी और सीने में बंद स्नेह की अव्यस्त पीडा है।

---

१. केंचुल - ग्यारह लम्बी कहानियाँ - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ ११८
२ केंचुल - ग्यारह लम्बी कहानियाँ - चित्रा मुद्गल पृष्ठ ११९

३.९ मृदुला गर्ग :

मृदुला गर्गजी का जन्म २५ अक्तूबर १९३८ को हुआ। आपने अर्थशास्त्र विषय में दिल्ली विश्वविद्यालय से एम.ए.की पदवी ग्रहण की। वहीं पर सन् १९६० से १९६३तक अध्यापन कार्य करती रहीं।

आपके प्रमुख उपन्यास इस प्रकार से हैं - उसके हिस्से की धूप, वंशज, चितकोबरा, अनित्य, मैं और मैं, कतार से बाहर, टच ऑफ ए सन (अंग्रेजी में), आपके प्रमुख कहानी संकलन-कितनी कैंदे, टुकडा टुकडा आदमी, डेफोडील जल रहा है, ग्लेशियर से और दुनिया का कायदा आदि है। आपने एक नाटक 'एक और अजनबी'भी लिखा हैं। आपकी कहानी 'कितनी कैदें' को सन् १९७२ में 'कहानी' पत्रिका द्वारा सर्वश्रेष्ठ कहानीका पुरस्कार प्राप्त हुआ है और नाटक 'एक और अजनबी'को १९७७ में आकाशवाणी का वार्षिक पुरस्कार प्राप्त हुआ है।

मृदुला गर्गजी का व्यक्तित्व आत्मविश्वास से भरा, स्वाभिमानी और लोगों के सुख-दु:ख से जुडने वाला है। उनके व्यक्तित्व की ये खूबियाँ उनके साहित्य की भी विशेषता है। उनके कथा-साहित्य में पारदर्शी वेदना की सूक्ष्म किरण है। अपने और औरों के बनते बिगडते रिश्तों को पूरी ईमानदारी और समझदारी से जाँचने के साथ ही समाज की उन झूठी मान्यताओं का उपहास भी है , जिनके चलते लोग मुखोटे चढा कर जीते हैं। जीवन की कडवी-मीठी अनुभूतियों तथा सूक्ष्म मन:स्थितियों को पैने व्यंग्यों द्वारा उभारने का उनका प्रयास प्रशंसनीय है। अपनी कहानियों के माध्यम से जो महत्वपूर्ण बात मृदुला गर्ग व्यक्त करती हैं वह यह कि अपने जीवन में जितना हम औरों को छलते हैं उससे कहीं अधिक अपने को और इस छलने में न जाने कितनी कैदें खुद अपने लिए तैयार कर लेते है।

मृदुला गर्गजी ने आधुनिक युग के बदलते जीवन मूल्यों को सार्थक अभिव्यंक्ति दी हैं। उन्होंने आधुनिक संदर्भो में सामाजिक विघटन को यदि वाणी दी है तो साथ ही जीवन में आर्थिक पहलू की महत्ता को भी महत्व दिया है। विशेषत: मध्य वर्ग आर्थिक दबावों और शोषण से मुक्त होने के लिए दृढ संकल्प हो

कर संघर्ष करता व्यक्त हुआ है। भाषा की सरलता और सहज संप्रेषणीयता पाठकों के मन पर कहानी का गहरा प्रभाव छोडती है।

मृदुलाजी की कहानी 'वितृष्णा'में पति-पत्नी के बीच आये ठहराव का सार्थक चित्रण हुआ है। जब तक पत्नी शालिनी में जीने की उमंग थी, अरमान थे तब तक पति दिनेश के पास उसके लिए समय ही नहीं था। अब जब पति रिटायर हो चुका है उसका सारा उत्साह ठंडा पड चुका है। उसका मन वितृष्णा से भर गया है। चित्रा मुद्‌गलजी की कहानी 'अपनी वापसी' में 'शकुन' के जीवन में आये ठहराव को चित्रित किया गया है। वास्तव में वह जैसे-जैसे प्रौढ हो रहीं है उसने स्वयं को सबसे अलग कर लिया है। लेकिन उसे अपनी गलती का अहसास तब हो जाता है जब मेजर अपनी पत्नी के विषय में बताते हैं- 'पता नहीं, कैसे पहलेवाली सुनीता अब संशय, विरक्ती अपेक्षा और स्वार्थ की प्रतिमूर्ति बन गई... प्रौढता को उसने हताशा की खोह बना लिया है, सोचती है कि उसके जीने के दिन चुक गये...नहीं समझती कि उम्र के हर मोड का अपना रंग होता है।'[१] शकुन के जीवन में ये उदासी, हताशा उम्र के साथ आयी है। जबकि मृदुलाजी की 'वितृष्णा' कहानी में अंत में दिखायी देनेवाली वितृष्णा शुरू से शालिनी की गयी उपेक्षा के कारण हैं। मृदुलाजी की कहानी 'डेफिडोल जल रहे है' में मृदुलाजी ने मातृत्व की कामनासे कसमसाती मीता की कहानी कही है। जिसका पति खुद के भविष्य की खातिर मीता के गर्भ में पनपते अंकुर को नष्ट करना चाहता हैं। मीता सोचती हैं कि-'मैं अपने बच्चे का खून इसलिए करवा रही हूँ क्योंकि..... नहीं, पति नहीं, केवल मेरा प्रेमी है प्रेमी भी नहीं केवल एक नपुंसक पुरूष है अपने पुंसत्व से लाचार। नपुंसक का हृदय लिए एक पुरूष देह बस।'[२] विवाहापरांत प्रेम-संबंध को लेकर रचित कहानियों में मृदुलाजी की 'अगर यों होता' और चित्राजी की 'मामला आगे बढेगा अभी' में काफी समानता हैं। मृदुलाजी की 'दो एक फूल में शान्तमा अपने पति से पिटकर भी उसे देवता मानती हैं। स्त्री की इसी भावना को चित्राजी ने 'दशरथ का वनवास' में व्यक्त किया है।

---

१. अपनी वापसी - चर्चित कहानियाँ - चित्रा मुद्‌गल, पृष्ठ ३५
२. डेफिडोल जल रहे है - मृदुला गर्ग, पृष्ठ ५५

३.१० मणिका मोहिनी :

युवा रचनाकार मणिका मोहिनी साठोत्तरी दशक की महत्वपूर्ण रचनाकार है। आपका जन्म श्री रमानाथ चोपडाजी के यहाँ २० मई १९४० को दिल्ली में हुआ। दिल्ली विश्वविद्यालय से एम.ए. तथा प्री. पीएच.डी.की शिक्षा प्राप्त की।

आपने लेखन जगत में १९६२ में प्रवेश किया आपकी पहली कहानी 'ज्ञानोदय' में 'चुप के दायरे में' प्रकाशित हुई थी। आपके प्रमुख कहानी संकलन इस प्रकार से हैं - खत्म होने के बाद, अभी तलाश जारी हैं, स्वप्न दंश, पारू ने कहा था, अपना अपना सच आदि।

मणिकाजी का नाम अपनी बोल्डनेस के कारण बहुत ही चर्चित रहा है। उन्होंनें अपने कहानी संकलनों में कई चौंकाने वाली कहानियाँ दी हैं। जिनमें 'सेक्स' का खुल कर चित्रण है। नर-नारी के सम्बन्धों को समझदारी और गहराई से चित्रित किया है। स्त्री-पुरुष के सम्बन्धों की टूटन को तटस्थ भाव से भावुकता से हटकर प्रस्तुत किया है। सहजता के साथ छोटी-छोटी बातों से कथ्य को बुनते हुए पात्रों की मन:स्थिती को, उसके यथार्थ जीवन संघर्ष को व्यक्त करती हैं। भाषा का अनौपचारिक रूप और उसकी सृजनात्मक शक्ति कथ्य को सरल सहज रूप से सफल बनाती हैं। उनकी अभिव्यक्ति निर्मम और बेबाक है, उसमें दुराव-छिपाव नहीं है।

मणिका मोहिनीजी की कहानी 'हम बुरे नहीं थे' में पति पत्नी दोनों आधुनिकता का मुखौटा चढाये हैं। इसी आधुनिक बनने की होड में जब पत्नी पर-पुरूष के साथ घूमने लगती है तो पति का आधुनिक होने का दंभ टूट जाता हैं। चित्रा मुद्गलजी ने 'अपने-अपने गिरेबान' में ऐसी ही झुठी आधुनिकता का चित्रण किया है। वाइफ स्वैपी का खेल खेलने वाले पति-पत्नी आधुनिकता का दंभ भरते हुए भी घर लौट कर एक-दूसरे की कसम खाकर एक-दूसरे के प्रति एकनिष्ठता की बात करते हैं। क्योंकि वे जानते हैं कि 'सचाई कबूल दी तो सारी आधुनिकता और परिपक्कता के बावजूद हमारी जिंदगी निश्चित

ही नरक हो जाएगी. . . '[1] मणिकाजी की कहानी 'पारू ने कहा था' स्त्री पुरूष के सम्बन्धों को नई दृष्टि से देखती है। आज की स्त्री यह नहीं चाहती कि कटू हो चुका वैवाहिक जीवन यूँ ही घिसटता हुआ चलता रहे। सम्बन्धों को ढोने की बजाय सम्बन्धों को समाप्त कर देना अधिक उचित होता है। चित्रा मुद्गलजी की कहानियों में भी इसकी झलक मिलती है 'प्रमोशन' की ललीता, 'एक जमीन अपनी' की अंकू, 'बावजूद इसके' की प्रीति बिगडते सम्बन्धों को यूँ ही खिंचने की बजाय उसे पूर्ण विराम दे देती है।

३.११ ममता कालिया :

ममता कालियाजी का जन्म २ नवम्बर १९४० में हुआ था। आपकी शिक्षा दिल्ली विश्वविद्यालय से हुई। आपने अंग्रेजी मे एम.ए. तक का अध्ययन किया। आपने दिल्ली एवं मुंबई विश्वविद्यालयों में अध्यापन का कार्य किया है। संप्रति इलाहाबाद के सेवासदन डिग्री कॉलेज में प्रिंसिपल के रूपमें कार्यरत हैं। आपके पति श्री रविन्द्र कालिया भी प्रसिद्ध रचनाकार हैं।

सृजनशील रचनाकार ममताजी ने अपनी पहली कहानी 'यों ही मर जाएंगे' के सन् १९६४ में 'ज्ञानोदय' में प्रकाशन के साथ ही साहित्य जगत में प्रवेश किया। आपने उपन्यास एवं कहानी दोनों ही लिखे हैं। आपके प्रमुख उपन्यास इस प्रकार से है - बेघर, नरक दर नरक, प्रेमकहानी आदि। आपके प्रमुख कहानी संकलन - छुटकारा, सीट नं. ६, बीतते हुए, उपलब्धि, नीतांत निजी, बीमारी, अकेले और अकेले, काली साडी आदि हैं।

ममताजी ने भारतीय परिवेश की विविध समस्याओं को लेखन का केन्द्र बनाया है। भारतीय नारी की मन:स्थिती, उसकी वेदना, सेक्स सम्बन्धी अवधारणाएँ आदि का चित्रण आपने किया है। आपकी कहानियाँ आधुनिक भाव-बोध का प्रतिनिधित्व करती हैं। पारिवारिक जीवन में टूटते सम्बन्धों को उन्होनें चित्रित किया है। स्त्री की भूमिका कुँवारेपन में और विवाहिता होने पर भी घुटन भरी होती है। लेकिन आपकी कहानियों में आदर्श के झूठे आवरण नहीं है। ममताजी ने केवल महिलाओं के ही प्रश्न

---

१. अपने अपने गिरेबान - इस हमाम में - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ ८२

नहीं उठाएँ है। उन्होनें सामाजिक, आर्थिक एवं राजनैतिक स्तर पर फैले पाखण्डों को भी कहानी के माध्यम से उद्घाटित किया हैं। शिल्प की सहजता के साथ ही उनके लेखन की भाषा भी सहज, स्वाभाविक, काव्यात्मक हैं।

ममताजी ने नारी की घुटन का बडा ही स्वाभाविक चित्रण किया है। उनकी कहानी 'पीली लडकी' में उन्होंने स्त्री के व्यक्तित्व विलय की बात उठायी है कि विवाहोपरान्त उसका जीवन पति द्वारा संचालित होता हैं। यहाँ तक कि उसे अपनी बात कहने का हक भी नहीं रहता। 'सोना' यदि बहस मे भाग भी लेती है तो उसे चुप कर दिया जाता है। चित्राजी ने 'इस हमाम में' नारी की इसी अवस्था का चित्रण किया है। दिवा को भी घर में कोई निर्णय नहीं लेने दिया जाता। वह सोचती हैं कि 'क्या मैं मात्र सोमेश की उंगलियों का संकेत-भर हूँ ? वही और बस इतनी ही मेरी पहचान हैं और मेरे होने की शर्त....।'[१] ममताजी ने 'साथ' कहानी में पाश्चात्य प्रभाव युक्त विचारधारा रखी है। सुनंदा विवाहित अशोक के साथ रहती हैं जब कि अशोक की पूर्व पत्नि ने उसे तलाक नहीं दिया हैं। चित्राजी ने भी 'शून्य' कहानी में ऐसा वर्णन किया हैं लेकिन वहाँ राकेश ने बेला से तब विवाह किया जब उसके पूर्व पति ने उसे तलाक दे दिया हाँलाकि दोनों ही विवाहित होते हुए भी एक दूसरे से जुडे रहे थे। ममताजी ने अपने उपन्यास 'नरक-दर-नरक' में पति-पत्नि के प्रेम विहीन दाम्पत्य जीवन का चित्रण किया है। पति वस्त्र-आभूषण देकर ही अपने उत्तरदायित्व से मुक्त हो जाता है जबकि पत्नी प्रेम चाहती है। चित्राजी ने 'इस हमाम में'में नारी मन के इस भाव को भी रखा है। वहाँ भी पति पैसों से ही पत्नी को खुश रखना चाहता है। वह क्रोध से बडबडाता हैं-'पता नहीं हराम....क्या चाहती है, पाँच लाख का फ्लैट है.... बच्चा आराम से सिन्धिया में पढ रहा हैं.... खामखाह आँसू टपकाने की आदत पड गयी हैं।'[२] चित्राजी ने अपनी कहानियों में नारी के कोमल मन के भावों को बडी खूबसूरती से सजाया है।

---

१. इस हमाम में - इस हमाम में - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ ९३
२. इस हमाम में - इस हमाम में - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ ९३

३.१२ सिम्मी हर्षिता :

सिम्मी हर्षिता का जन्म रावलपिंडी (अब पाकिस्तान में) में हुआ। २९ नवम्बर १९४० में उनका जन्म हुआ। आपने समाजशास्त्र एवं हिन्दी, दोनों विषयों में आगरा विश्वविद्यालय से एम.ए. की पदवी प्राप्त की। तत्पश्चात आप अध्यापन से जुड गयी।

आपकी पहली कहानी 'संचेतना' के जून अंक में १९६९ में प्रकाशित हुई। उस कहानी का नाम था- 'अपने-अपने दायरे'। आपके प्रमुख कहानी संग्रहो में 'कमरे में बंद आभास', 'धराशायी' हैं और आपका चर्चित उपन्यास 'सम्बन्धों के किनारे' हैं।

सिम्मीजी का लेखन सामाजिक विषयों से सरोकार रखता है। सामाजिक जीवन में व्याप्त बुराईयों को उन्होंने सजगता से व्यक्त किया हैं। जीवन के विविध पहुलओं को अलग-अलग कोणों से देखा परखा है। उनकी सृजनात्मकता अर्थपूर्ण कृतियों में दिखलायी देती है। उनका लेखन केवल मनोरंजन से जुडा नहीं वरन् उत्तरदायित्वपूर्ण समाज के हित को निभानेवाला है।

सिम्मीजी के लेखन में नारी मन का सूक्ष्म अंकन हुआ है। फ्रायड के मनोविज्ञान के अनुसार स्त्री और पुरूष में सहज आकर्षण होता है। उनकी दृष्टि में सभी सम्बन्ध रति, काम या लिबिडों से संचालित होते है। माँ का पुत्र के प्रति स्नेह, पिता का पुत्री के प्रति स्नेह भी उसी से जुडा होता हैं। सिम्मीजी का कहानी संग्रह 'कमरे में बंद आभास' की कहानी 'चर्कभोग'के कारण बहुत चर्चित रहा। युवती तुषार से विवाह के लिए लालायित है। उसके अपने स्वप्न हैं। लेकिन पिता उसके प्रेम में बंधे हर लडके में कोई न कोई बुराई ढूंढ निकालते हैं। कुंठाग्रस्त नायिका अपनी इस स्थिती से उबर नहीं पाती। चित्राजी ने पिता का पुत्री के लिए आकर्षण अपनी कहानी में चित्रित किया है लेकिन वहाँ काम की भावना नहीं है। 'अपनी वापसी' कहानी में पिता-पुत्री में चुहल है पुत्री के खूबसूरत कपडे पहनने पर पिता उससे कहते है कि 'हम कुंआरे होते तो तुम पर जी जान से मर मिटे होते।'[1] तब पुत्री भी उत्तर देती है-'पापा नहीं होते आप मेरे

१. अपनी वापसी - चर्चित कहानियाँ - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ २६

तो इतने धांसू व्यक्तित्व को अनदेखा करना मुश्किल होता मेरे लिए।''[1] ऐसी मजाक पिता पुत्र में भी उन्होंने चित्रित की हैं। 'रूना आ रही हैं'में पिता-पुत्र में ऐसी ही चुहल है। सिम्मीजी की कहानी 'कमरे में बंद आभास' में नायिका माणिक डॉ. कपूर द्वारा प्रेम प्रस्ताव ठुकराये जाने से निराश हो आत्महत्या कर लेती हैं। 'एक जमीन अपनी' में चित्राजी ने नीता की इसी स्थिती को अंकित किया है। विवाहित सुधीर से नीता प्रेम करती है , कुमारी माता भी बनती है फिर भी सुधीर उसके प्रेम को ठुकरा देते हैं। इस आघात को सह न पाने के कारण वह भी आत्महत्या कर लेती हैं।

३.१३ दीप्ति खण्डेलवाल :

दीप्ति खण्डेलवालजी एक संवेदनशील लेखिका हैं। उनके लेखन में विषय वैविध्य नहीं है। विशेषत: उन्होंने दाम्पत्य जीवन को ही कथ्य के रूप में चुना है। दाम्पत्य जीवन के भिन्न-भिन्न कोणों को सूक्ष्मता से पकड कर बडी ही समझदारी और गहराई से प्रस्तुत किया है। रिश्तों की घुटन को बेबाकी से चित्रित किया है। नारी पात्रों का विद्रोही रूख उन्हें पर-पुरूष से यौन-सम्बन्ध बनाने तक ले जाता है। उनकी भाषा की मार्मिकता, सहजता पाठकों को आकर्षित करती है। नारी सदियों से उपेक्षित और प्रताडित रही है। दीप्तिजी ने ऐसी नारी को न्याय दिलाने का यत्न किया है। अर्थ केन्द्रित एवं कामकाजी नारी की भूमिका को उन्होंने कथ्य में स्थान दिया है।

दीप्ति की कहानी 'संधिपत्र' के नायक-नायिका रोहित और सीमा हैं। दोनों ही नौकरी करते हैं। विवाहित होने के बाद भी स्वयं के जीवन में दूसरी स्त्री को स्थान देनेवाला रोहित पत्नी पर भी संदेह करने लगता है। लेकिन अंतत: दोनों ही सुखी दाम्पत्य जीवन के लिए समझौता कर लेते हैं। शक को ही बुनियाद बनाकर चित्राजी ने 'प्रमोशन' कहानी रची है। सुभाष अपनी टायपिस्ट से जिस तरह निकटता स्थापित कर उसका प्रमोशन करता है वैसे ही वह पत्नी ललीता के हुए प्रमोशन के बारे में सोचता है। ललीता की कार्यकुशलता के बाद भी सुभाष को लगता है कि डॉ. कोठारी की अनुकंपा से ही उसका

---

१. अपनी वापसी - चर्चित कहानियाँ - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ २६

प्रमोशन हुआ है। इसीलिए वह पत्नी से कहता है-'ऐसे भद्र पुरूषों की जन्मपत्री में खूब अच्छी तरह बाँच लेता हूँ। डॉ. कोठारी के साथ तुम्हारा काम करना मुझे बरदाश्त नहीं.... पारिवारिक हित में यही उचित होगा कि तुम मेरी आँखों में धूल झोंकना छोडकर सीधे-सीधे घर बैठों....।'[१] लेकिन ललीता समझौते की बात नहीं करती। वह सुभाष को इस बात का एहसास कराती है कि वह थोपे हुए निर्णय नहीं मानेगी। दीप्तिजी की 'हत्या' कहानी के समान ही, चित्राजी की 'मुआवजा' और 'अभीभी' कहानी की नायिकाएँ आर्थिक रूप से स्वतंत्र होती है। 'फातिमा बाई कोठे पर ही नहीं रहती' के समान दीप्तिजी की 'बेहया' कहानी है। झोपडपट्टी को ध्यान में रखकर रची गयी कहानी में दीप्तिजी की 'फूलों की जमीन' हैं तो चित्राजी की 'भूख' और 'लेन' कहानियाँ हैं।

इस प्रकार दीप्तिजी और चित्राजी दोनों ही उपेक्षिता नारी की वकालत करती हैं। उनके साहित्य में गहरी संवेदनाएँ हैं और लेखन में सादगी होते हुए भी पाठक को बांध लेने की क्षमता है।

३.१४ निरूपमा सेवती :

निरूपमाजी साठोत्तरी काल की एक जानी पहचानी साहित्यकार है। आपका जन्म ३० अक्तूबर १९४३ में हुआ।

आपकी प्रथम कहानी १९६८ में प्रकाशित हुई। 'कहानी 'पत्रिका में प्रकाशित हुई इस कहानी का नाम था 'निरावरण'। आपकी अब तक कई कृतियाँ प्रकाशित हो चुकी हैं जिनमें उपन्यास, लघु उपन्यास एवं कहानी संकलन हैं। आपके प्रमुख कहानी संकलन खामोशी को पीते हुए, आतंक बीज, काले खरगोश, कचा मकान, भीड में गुम आदि हैं। 'प्रत्याधात' आपका लघु उपन्यास हैं एवं प्रमुख उपन्यासों में मेरा अपना नरक हैं, दहकन के पार, पतझड की आवाजें, बंटता हुआ आदमी आदि है। आपकी कहानियों का कई भारतीय भाषाओं जैसे-मराठी, गुजराती, बंगाली, पंजाबी, कन्नड एवं मलयालम आदि में अनुवाद हो चुका हैं।

---

१. प्रमोशन - जगदंबाबाबू गाँव आ रहे हैं - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ ७३

निरूपमा सेवती नारी की मनोदशा का वर्णन करती हैं। 'सुनहरे देवदार' कहानी में रश्मि आर्थिक तनाव के कारण पति से अलग होकर पुन:विवाह करती हैं किन्तु सुखी होते हुए भी अपने पूर्व पति की स्मृति से मुक्त नहीं हो पाती। चित्राजी ने अपनी कहानी 'पाली के आदमी' में रवि का चित्रण रश्मि जैसा ही किया है। लेकिन रवि ने दूसरा विवाह इसलिए किया क्योंकि उसकी पत्नी अनपढ, ग्रामीण लडकी थी। वर्षों बाद भी उसे पत्नी के स्थान पर केवल बच्ची के प्रति ही थोडा बहुत आकर्षण हो पाता है। लेकिन उसकी स्मृति में पत्नी-बच्ची हैं अवश्य। परन्तु अब वह उनसे जुड नहीं पाता। अब उसका दूसरा ही संसार है। निरूपमाजी ने अपने उपन्यास 'पतझड की आवाजें' में सुनीता को आधुनिका के रूप में प्रस्तुत किया है, जो अब तक कई पुरूषों के साथ सम्बन्ध बना चुकी हैं। वह विवाह को आवश्यक नहीं मानती-'नहीं सिर्फ जिस्म से ही तो विवाह नहीं करना है, नहीं ही ...सिर्फ जिस्म से ब्याह उन्हें ही मुबारक हो, जो यह नहीं जानते की संस्कारों, रस्मों का मुलम्मा, जिंदगी आसान बनने के लिए ही चढाया जाता है।'[१] 'एक जमीन अपनी' (चित्रा मुद्गल) की नीता भी विवाह को आवश्यक नहीं मानती 'पत्नी....या मात्र एक व्यवस्था? माता पिता द्वारा सौंपी गई व्यवस्था।.... जितनी खोखली रीति-नीति उतनी ही आडम्बर पुती उसकी महत्ता! ऊपर से पुष्ट, भीतर से पोली। सात फेरों के स्वांग में रची-बसी।'[२] उसे पत्नी शब्द से दासीत्व की बू आती है। चित्राजी ने नीता के चरित्र के माध्यम से यही चित्रित करने का यत्न किया है कि पाश्चात्य विचार हमारे देश के अनुकूल नहीं हैं और नारी समानता का यह भी अर्थ नहीं है कि नारी नर का रूप ले ले। उसे आत्मसम्मान युक्त समानता चाहिये। निरूपमाजी की 'टुच्चा' और चित्राजी की 'त्रिशुंक' कहानी में बहुत समानता है। पेट की भूख और जिस्म की भूख के बीच पिसती नारी स्वयं को भूलकर सब की जरूरतों के लिए जीती रहती है। चित्राजी के समान ही सेवतीजी भी संकेतों में, प्रतिकों में बात कहने में पटु हैं। महानगरीय जीवन की सडांध, संत्रास, घुटन, असुरक्षा को दोनों ही ने समान रूप से न्याय दिया है।

---

१. पतझड की आवाजें - निरूपमा सेवती, पृष्ठ ७१

२. एक जमीन अपनी - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ १९८

३.१५ कृष्णा अग्निहोत्री :

कृष्णा अग्निहोत्री आठवे दशक की प्रमुख महिला लेखिकाओं में से एक हैं। उनका जन्म राजस्थान के नमीराबाद में हुआ था। आपने हिन्दी एवं अंग्रेजी विषय में एम्.ए.की डिग्री प्राप्त की। तत्पश्चात पी.एच.डी. हिन्दी में किया। आप कुछ समय इंदौर में भी रही। गर्ल्स डिग्री कॉलेज खंडवा (मध्यप्रदेश) में व्याख्याता के रूप में कार्यरत हैं।

आपका साहित्य प्रवेश 'धर्मयुग' जैसी जानी मानी हिन्दी पत्रिका से हुआ। सन् १९६० के आसपास धर्मयुग में आपकी कहानी 'सरणी' प्रकाशित हुई। उसी वर्ष इलाहाबाद के साप्ताहिक भारत में 'मानव जाग उठा' कहानी प्रकाशित हुई। आपके प्रमुख कथा संग्रह -टीन के घेरे, बोनी परछाईयाँ, जिंदा आदमी, टेसू की टहनियाँ, गलियारे, विरासत, नपुंसक है। आपके उपन्यासों में प्रमुख हैं-बात एक औरत की, टपरेवाले, कुमारिकाएँ, टेसू की टहनियाँ आदि हैं।

कृष्णाजी ने आधुनिक काल की समस्याओं, विडम्बनाओं को अपने साहित्य में प्रस्तुत किया है। परिवार और समाज में व्यक्ति इतनी कुंठाओं और समस्याओं के बीच जीता हैं कि कृष्णाजी जैसी संवेदशनशील लेखिका उनसे उद्वेलित हो गयी । उनके मन का यहीं संघर्ष कहानियों में आया है। स्त्री पुरूष के सांमती विचारों के चक्र में फसी हुई है। उसकी मूक वेदना को कृष्णाजी ने मुखरता प्रदान की है। स्त्री के देवी-दानवी से परे मानवी रूप को कृष्णाजी स्थापित करना चाहती हैं। आधुनिकता की आड में समाज जिस ओर जा रहा है, उसके नैतिक मूल्य जिस तरह पतन की दशा को जा रहें हैं उसका चित्रण कृष्णाजी ने किया है। कृष्णाजी ने उन विसंगतियों पर भी गहरी चोट की है जो जनसामान्य को गर्त मे ले जा रही है। आदर्श और यथार्थ का मेल करते हुए अपनी अनुभूतियों को पूरी ईमानदारी से अभिव्यक्त किया है। भाषा और शिल्प का वैभव उसे अधिक प्रभावपूर्ण बना देता है।

कृष्णाजी ने 'आहट' कहानी में एक ऐसी स्त्री का चरित्र रखा है जो विवाहोत्तर पति की गैर जिम्मेदाराना हरकतों को देख कर उनसे सम्बन्ध विच्छेद कर लेती हैं और साहस के साथ अपनी

जिम्मेदारियों का निर्वाह करती है। 'आहट' की लता आस्था का प्रतिक बन जाती हैं। 'शुन्य' कहानी में चित्राजी ने भी ऐसी ही स्वाभिमानी स्त्री सरला का अंकन किया है। जो अपनी स्वत: की और बेटे की जिम्मेदारी उठाती है। पति के गैर जिम्मेदारियों की अन्य कहानियाँ भी हैं जैसे 'त्रिशंकु' आदि। किसी व्यक्ति को बदनाम करने के लिए विकृत बुद्धि लोग गुमनाम खत लिखते हैं। कृष्णाजी ने इसी शीर्षक से कहानी लिखी है। नीलिमा और आदित्य सुखी पति-पत्नी हैं लेकिन यह सुख किसी दूसरे से देखा नहीं जाता। वह आदित्य के विवाह पूर्व दिव्या के साथ वाले प्रेम-प्रकरण को गुमनाम खतों के माध्यम से बता उनका जीवन उद्धवस्त करना चाहता है। चित्राजी ने अपनी 'शून्य' कहानी में गुमनाम खत का सहारा लेकर कहानी विकसीत की है। राकेश बेला से प्रेम करता है लेकिन घरवालों ने सरला से उसका रिश्ता तय किया है। यह रिश्ता टूट जाए इसलिए राकेश सरला के घर गुमनाम खत और तस्वीर भेजता है। कृष्णाजी की कहानी 'आक्टोपस' में तलाकशुदा अपरा अनेक पुरूषो के वासनात्मक दृष्टि की शिकार बन रही है साथ ही बेटी नीता भी द्वंद मय हो जाती है। 'बावजूद इसके' (चित्रा मुद्‌गल) की प्रीति भी पति से तलाक ले रिसेप्शनिस्ट की नौकरी पाना चाहती हैं। लेकिन वहाँ भी उसे हवस के दरिन्दों का ही सामना करना पडता है। कृष्णाजी का उपन्यास 'कुमारिकाएँ' की बसंती बलात्कारिता है। वह अपना पारिवारिक और सामाजिक उत्तरदाायित्व पूरा करती है लेकिन समाज उसे नहीं अपनाता अत: वह निराश हो वेश्या व्यवसाय अपना लेती है। चित्राजी की 'फातिमा बाई कोठे पर नहीं रहती' की रेशमा को सौतेली माँ एक बूढे के घर काम पर रखती है। छोटी रेशमा माँ की सिखायी बातों से बूढे से पैसे मांगती है और बूढा उसके साथ अश्लिल हरकतें करता है। बाद में वह फ्लैट में रहनेवाली, धंधा करनेवाली औरत के साथ रहती है और फिर कोठे पर आ पहूँचती है। उसे तसल्ली इस बात की है कि 'यहाँ वे मुखोटे नहीं है जो अम्मी और अब्बा की पाक सूरत की आड में, नीच कर्म को विविश करते है।'[१] वेश्या व्यवसाय को कोई स्वखुशी से नहीं अपनाता, कोई मजबूरी ही उसे विवश कर देती हैं। समाज उन्हें अपनाने का साहस भी नहीं दिखाता। कई बार अवसर पाकर भी ये इस गंदगी भरे व्यवसाय से दूर नहीं जाना चाहती क्योंकि समाज

१. फातिमाबाई कोठे पर ही नहीं रहती - इस हमाम में- चित्रा मुद्‌गल, पृष्ठ ३४

में भी कई दरिन्दे हैं जो सफेद पोश हैं। कृष्णाजी की निम्नवर्ग की 'टपरेवाले' से मिलती जुलती चित्राजी की कई कहानियाँ है जैसे-'भूख', 'लेन', 'सुख', 'चेहरें', आदि।

३.१६ सूर्यबाला :

सूर्यबालाजी का जन्म मिर्जापुर में २२ अक्तूबर १९४४ में हुआ। उनकी संपूर्ण शिक्षा-दिक्षा वाराणसी में हुई। वाराणसी से ही 'रीतिकाव्य' पर उन्हें पी.एच.डी. की डिग्री प्रदान की गयी। पति श्री आर.के. लाल इंजिनियर है। प्रारंभ में वे सिंधिया स्टील नेविगेशन में इंजिनियर थे बाद में महाराष्ट्र के थाना जिले में ग्लैक्सो लेबोरेटरी में बतौर इंजिनियर मॅनेजर के पद पर कार्यरत हैं। सूर्यबालाजी के घर का वातावरण कलामय था। पिता कवि वृत्ति के थे तो बहनें भी संगीत-साहित्य प्रेमी थी। उनकी प्रथम कहानी सन् १९७२ में प्रकाशित हुई। अक्तूबर ७२ के 'सारिका' के अंक में उनकी कहानी 'जीजी' प्रकाशित हुई।

साहित्य की विभिन्न विधाओं पर आपने लिखा हैं। कहानी, उपन्यास, नाटक, व्यंग्य और लेख आपने लिखे हैं। 'रेस' कहानी दूरदर्शन पर नाट्यरूप में प्रसारित हो चुकी है। आपके साक्षात्कार एवं अन्य कार्यक्रम भी रेडियों एवं दूरदर्शन पर स्थान पाते रहे हैं। 'संधिपत्र' उपन्यास भी रेडिओं एवं दूरदर्शन पर आ चुका है। आपके प्रमुख कहानी संकलन-एक इन्द्रधनुष, जुबैदा के नाम, थाली भर चाँद, दिशाहीन, मुण्डेर पर, सांझवाती आदि है। प्रमुख उपन्यासों में मेरे संधिपत्र, सुबह के इंतजार तक, अग्निपंख एवं बाल हास्य उपन्यास 'झगडा निपटारक दफ्तर' हैं। आपका व्यंग्य संग्रह 'कुछ अदद जाहिलों के साथ' हैं।

सूर्यबालाजी की कहानियाँ द्वंद्व का जीवंत दस्तावेज हैं। अपने लेखन से असम्पृक्त रह कर संतुलितता के साथ रचना लिखने का कौशल उनमें हैं। मोह और विरह उनकी कहानी में साथ-साथ चलते हैं। गाँव, शहर, महानगर के हर वर्ग के हर द्वंद्व की धडकन उनकी कहानियों में सुनी जा सकती हैं। ऊपरी तौर पर सहज सी दिखनेवाली उनकी कहानियाँ करूणा और विद्रुपता की तीखी धार से युक्त हैं, जो संवदेना की अगम गहराई में जाकर बहुत कुछ मूल्यवान समेटकर ऊपर आ जाती है। विषमताओं और

संघर्षो के बाद भी इनकी कहानियों में आस्था का स्वर हैं। उन पर यह आरोप भी लगाया जाता है कि नारी जागरण, नारी चेतना के इस युग में उन्होंने दबंग और मुखर विद्रोही नारी चरित्र नहीं दिये हैं। वस्तुत: वे जीवन को गांधीवादी दृष्टिकोण से देखती हैं। नारी अस्मिता, नारी मुक्ति से भी बडी चुनौती है - इस विश्व को बचा लेने की। क्योंकि पुराना सब पिछडा ही नहीं होता। त्याग, निष्ठा, संयम, धैर्य और विवेक हर काल, हर युग में उपयुक्त और मान्य रहे हैं। अपने इन्हीं विचारों के कारण उनका रचना फलक घर-परिवार तक ही सीमित न होकर विस्तृत क्षितिज तक फैल जाता है।

सूर्यबालाजी लम्बे समय से मुंबई में हैं और मुंबई की झोपड्पट्टीयों के नरक से परिचित हैं। सूर्यबालाजी ने भी आम आदमी पर कई कहानियाँ लिखी हैं। उनकी 'भुक्कड' और 'जेब्रा' कहानी चित्राजी की 'मामला आगे बढेगा अभी' और 'त्रिशंकु' की याद दिलाती हैं। सूर्यबालाजी की कहानी 'जेब्रा' का जेब्रा और 'मामला आगे बढेगा अभी' का मोट्या के चरित्र बहुत मिलते जुलते हैं। दोनों को ही मालिक नहीं मालकिन चाहती हैं। जेब्रा को आठ आने कम मिलने पर वह तू तू-मै-मै करने लगता है। मोट्या भी खाडा काटने पर लड पडता हैं यहाँ तक की मालिक की 'टोयॉटो'कार को सरीये से पीट डालता है। इस प्रकार सूर्यबालाजी और चित्राजी दोनों ने ही किशोरों की मानसिकता स्पष्ट करने का प्रयास किया है।

३.१७ शशीप्रभा शास्त्री :

शशीप्रभा शास्त्री आठवें दशक की लब्ध प्रतिष्ठित रचनाकार हैं। आपका जन्म मेरठ में हुआ। आपका अध्ययन दिल्ली एवं जोधपुर में हुआ। दिल्ली विश्व विद्यालय से आपने संस्कृत एवं हिन्दी भाषाओं में एम.ए. की डिग्री प्राप्त की। तत्पश्चात 'हिन्दी के पौराणिक नाटकों के मूल स्रोत' विषय पर आपने डॉक्टर ऑफ फिलासफी की पदवी प्राप्त की।

आपकी कहानी 'इला' आपकी पहली कहानी हैं जो सारिका में सन् १९५६ में प्रकाशित हुई थी। साहित्य के साथ ही आपकी संगीत में भी रूचि हैं। विवाह के सात वर्ष बाद आपने अध्यापन क्षेत्र में प्रवेश

किया। आपकी रचनाएँ देश की प्रमुख पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित हुई हैं। आपकी रचनाएँ एवं झलकियां आकाशवाणी से प्रसारित हुई हैं। मराठी, गुजराती, मलयालम तथा तेलुगु भाषाओं में आपकी रचनाओं का अनुवाद हो चुका है। आपके प्रमुख उपन्यासों में है-सीढीयाँ, कर्करोग, क्योंकि, परसों के बाद,परछाइयों के पीछे, अमलतास, नावें तथा प्रमुख कहानी संग्रहो के अंतर्गत धुली हुई शाम, दो कहानियों के बीच, जोड बाकी, अनुत्तरित आदि हैं। साथ ही आपने बाल साहित्य भी प्रचुर मात्रा में लिखा हैं। उनके बाल साहित्य में है-फूल और सपना, सूनहरा, गोभी के फूल, वीरान रास्ते और झरना आदि।

शशीप्रभा शास्त्री ने नारी-चेतना को नारी पीडा के संदर्भ में प्रस्तुत किया है। नारी मनोविज्ञान एवं समस्याओं का सूक्ष्मता से अध्ययन करनेवाली शशीप्रभाजी की कहानियाँ अद्‌भूत हैं। मूल्यों की खोज एवं नविन रूढ़ी परम्पराओं के शुरूआत की कहानियाँ शशीप्रभाजी ने रची हैं। पात्रो की स्वाभाविकता, यथार्थता उसे जीवन्त बनाते हैं। शशीप्रभाजी ने नारी के रोमांटिक मूड को पकडने का यत्न किया है। नारी के प्रेम सम्बन्धी विविध दृष्टिकोण उसमें चित्रित हुए हैं। वे दाम्पत्य जीवन को महत्व देती हैं, लेकिन उसकी एकरसता से बचने के लिए नयापन भी चाहती हैं।

शशीप्रभाजी की 'पीढियाँ' कहानी में दो पीढियों के सेक्स सम्बन्धी दृष्टिकोण का अंतर व्यक्त किया गया है। एक फिल्म को देखते हुए माँ जिसे अश्लील करार देती हैं उसे बेटी 'वेरी रियल एंड आर्टिस्टीक' कहती हैं। चित्राजी की कहानी 'केंचुल' मे भी माँ-बेटी के माध्यम से यह अंतर चित्रित हुआ हैं। कमला ने भी कभी प्यार किया था लेकिन इस बात की खबर उसने किसी को न होने दी थी लेकिन सरना बिना लाग लपेट के माँ को बता देती है कि वह अपने प्रेमी के घर खाना बना कर आ रही है। साफ कह देती है कि'तेरे सरखा नौरा नई मंगता।'[१] माँ की मार खा कर भी वह बोलती है -'जितना मंगता उतना मार ....पन मेरे को घर में बैठने का.... औरत सरखा घर में रैने का.... भैया लोगों में औरत को घर पे रखते .... धन्ना पानी नई करवाते... उसका कमाई नई खातें.... ।'[२] जो बात माँ न कह सकी वही बात बेटी

१. केंचुल - ग्यारह लम्बी कहानियाँ - चित्रा मुद्‌गल, पृष्ठ १३१
२. केंचुल - ग्यारह लम्बी कहानियाँ - चित्रा मुद्‌गल, पृष्ठ १३१

नि:संकोच हो कह डालती हैं। शशीप्रभाजी ने 'नांवे' उपन्यास में कुंवारी माता मालती की कथा कही है। जो सोमजी के गर्भ को पोसती है। अपनी आत्मा का हनन न कर उसे जन्म देती है और फिर उसकी परिवरिश के लिए विजयेश से विवाह कर लेती है। चित्रा मुद्‌गलजी की 'एक जमीन अपनी' की नीता भी कुंवारी माँ बनती है। वह समाज के रूढि, नियम-धर्म से मुक्त मनुष्य चाहती हैं। किसी भी बाध्यता से मुक्त। लेकिन नीता अपने ही विचारों को आगे नहीं बढा पाती। सुधीर के अतिरिक्त अन्य किसी से जुडना नहीं चाहती। शशीप्रभा शास्त्रीजी पाश्चात्य विचारधारा को मान्य करतीसी लगती हैं लेकिन समझौते भी करती चलती है। लेकिन चित्राजी ने भारतीय संस्कृति की विशेषता को स्पष्ट किया हैं।

३.१८ मेहरून्निसा परवेज :

ग्रामीण कथानक को लेकर कहानी रचनेवाली मेहरून्निसा परवेज एक पाठकप्रिय लेखिका है। आपका जन्म १० दिसम्बर १९४४ में बेहलगाँव,जिला बाला घाट में हुआ। आपके पिता ए.एच.खान डिप्टी कलक्टर थे। अत: उन्हें तबादलों के कारण अलग-अलग जिलों में नौकरी करनी पडी। परिणाम स्वरूप मेहरून्निसाजी का भी अनुभव-विश्व बढा। आपके पति श्री रऊफ परवेज ऊर्दू के प्रसिध्द शायर है।

मेहरून्निसाजी की पहली कहानी १९६३ में 'नई कहानी'में छपी थी, जिसका शीर्षक था 'पाँचवी कब्र'। यह अक्तूबर ६३ के अंक में छपी कहानी थी उनकी इस कहानी का कई भाषाओं में अनुवाद हुआ हैं। उनके प्रमुख कहानी संग्रहों में आदम और हव्वा, बूँद का हक, गलत पुरूष, आकाश नील, अंतिम चढाई, फाल्गूनी, धूप के अहसास आदि हैं। प्रमुख उपन्यासों में - आँखों की दहलीज, उसका घर,कोरजा, पत्थर वाली गली, अकेला पलाश आदि हैं।

मेहरून्निसाजी की कहानियाँ अपने व्यापक अनुभव के कारण महत्वपूर्ण हो उठती हैं। पिता का अधिकांश समय मध्यप्रदेश के आदिवासी इलाके मे बीता। बस्तर जिले का प्रभाव मेहरून्निसाजी पर गहरा पडा है। वहाँ का आंचलिक वातावरण उनकी कहानियों में देखा जा सकता है। वे साहित्य के साथ ही

सामाजिक कार्यो में भाग लेती हैं एवं राजनीति मे भी दखल रखती हैं। नारी के विविध रूपों के वर्णन के साथ पति, प्रेमी, पिता, भाई आदि पुरूष रूपों द्वारा होनेवाला अत्याचार, उनकी क्रूरता को भी उन्होंने चित्रित किया है। बदलते स्त्री पुरूष सम्बन्ध, वैवाहिक जीवन का ठंडापन, परिवर्तित मूल्य एवं आर्थिक दबाव उनकी कहानियों के मुख्य कथ्य हैं। मध्यवर्ग एवं निम्नवर्ग की समस्याओं को उन्होंने प्रमुखता से रखा है। साथ ही मृत्युबोध और संत्रास की कहानियाँ भी उन्होंने रची हैं। मुस्लिम महिला आज तक दबी-ढकी ही घुटती रही हैं। उनके जीवन की त्रासदी को मेहरून्निसाजी ने वाणी दी हैं।

मेहरून्निसाजी ने 'आरजू के फूल' कहानी में युद्ध में गये पति के प्रति मन में उठनेवाली भावनाओं का चित्रण किया है। चित्राजी की कहानी 'मोर्चे पर' में भी युद्ध में गये पति की स्मृतियाँ हैं। मेहरून्निसाजी के 'गलत पुरूष' कहानी संकलन की अधिकांश कहानियाँ निम्नवर्गीय समाज के टूटन, जीवन बोध और मृत्यूबोध को उजागर करती हैं। 'दूसरी अर्थी' कहानी में महानगर में भाडे की खोली में रहनेवालों का कष्टमय जीवन है। चित्राजी ने 'एक जमीनअपनी'में भी भाडे की खोली के कष्टों का वर्णन किया है। नायिका अंकिता को भाडे के मकान की चेकिंग के समय किसी दूसरे के घर मे शरण लेनी पडती है। 'इस हमाम में' भी जमादारिन खोली के कष्टों का वर्णन करती है। अशिक्षित स्त्री हमेशा ही प्रताडित होती रही है। मेहरून्निसाजी ने 'अपने होने का अहसास' कहानी में ऐसी ही स्त्री की व्यथा व्यक्त की है जो पति के इशारे पर जीवनपर्यंत चलती और अपमानित होती रहती है। जीवनके उत्तरार्ध में उसका बेटा उसे न्याय दिलाता है। चित्राजी की कहानी 'त्रिशंकु' में भी बंडू अपनी माँ को न्याय दिलाना चाहता है लेकिन माँ स्वयं ही नया रास्ता चुन लेती है। मेहरून्निसाजी एवं चित्राजी ने निम्नवर्गीयों की व्यथाओं को व्यक्त किया है। मेहरून्निसाजी की कहानी 'कोई नहीं' और चित्राजी की कहानी 'शून्य' में भी बडी समानता है। दोनों ही कहानियों की नायिकाएँ पति से अलग हो गयी है। लेकिन अपने पुत्र के मन में उनके पिता की छवी को ऊँचा बनाये रखने का यत्न करती है। पति के प्रति अनजाने ही उनमे लगाव लगता है। यह भारतीय परिवेश की विशेषता हैं। जिसे मेहरून्निसाजी एवं चित्राजी दोनों ही ने मान्य किया है।

३.१९ नासिरा शर्मा :

नासिरा शर्मा मेहरून्निसा परवेज के समान ही एक क्रांतिकारी विचारधारावाली लेखिका है। उनका जन्म इलाहाबाद में सन् १९४८ में हुआ। आपकी शिक्षा-दिक्षा भी इलाहाबाद में ही हुई। आपने इलाहाबाद विश्वविद्यालय से एम.ए. की पदवी प्राप्त की। हिन्दी, ऊर्दू, फारसी, अंग्रेजी और पश्तों भाषाओं पर आपकी गहरी पकड है। आप सृजानात्मक लेखन के साथ ही स्वतंत्र रूप से पत्रकारिता भी करती हैं।

आपकी अब तक पन्द्रह के आसपास पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं। जिनमें इनके प्रमुख उपन्यास सात नदियाँ एक समन्दर, शाल्मली, ठीकरे की मंगनी, जिंदा मुहावरे आदि हैं तो प्रमुख कहानी संग्रहों में शामी कागज, पत्थर गली, संगसार, इब्ने मरियम, सबीना के चालीस चौर, खुदा की वापसी आदि हैं।

नासीरा शर्मा नई पीढी की कथाकारा है। नासीराजी ने जिस अनुभव जगत को अपनी रचनात्मकता के केन्द्र में रखा है, वह उन्हें और उनकी संवेदनाओं को पीढियों के अंतर को लांघकर और देशकाल की सीमाओं को पारकर संप्रेक्षित करता है। नासीराजी ने मुस्लिम समाज की रूढिग्रस्तता और समाज के अर्द्धांश नारी जाति की घुटन, बेबसी और मुक्तिकामी छटपटाहट को जिस सच्चाई से चित्रित किया है वैसा अन्यत्र दुर्लभ है। ये कहानियाँ नारी जाति की जातीय त्रासदी का मर्मातंक दस्तावेज हैं। सधे हुए रचनाशिल्प के कारण ये कहानियाँ और प्रभावित करती हैं। इन कहानियों में उद्घाटित यथार्थ अपने अनुभूति आवेग के कारण काव्यात्मकता से सराबोर हैं। इसीलिए लेखिका ने अभिव्यक्ति के लिए न तो भाषायी आडम्बरों का सहारा लिया हैं, न अमूर्तन का और न ही किन्ही आरोपित विचारों का। उन्होंने भारतीय परिवेश के अतिरिक्त ईरानआदि देशों से सम्बन्धित कहानियाँ भी लिखी हैं। जिसमें चित्रित पात्र भी अवसाद, छटपटाहट और बदलाव की चेतना से मंडित हैं।

दाम्पत्य जीवन तभी सफल हो पाता है जब शारीरिक, भावनिक और बौद्धिक स्तर पर पति-

पत्नी जुडें हों। इनमें से एक भी स्तर अधूरा हो तो दाम्पत्य जीवन बिखर सकता हैं। 'आइने की वापसी'(नासीरा शर्मा) में नबीला एक प्रखर बुद्धिवादी और क्रांतिकारी महिला है। पति भी समान विचारों का हैं लेकिन भौतिक सुखों का अभाव उसको दूसरी औरत की ओर आकर्षित करता है और वह दूसरा विवाह कर लेता है। लेकिन तमाम भौतिक सुख-सुविधाओं के बाद भी उसकी मानसिक आवश्यकताएँ पूरी नहीं हो पाती और वह पुन: नबीला के पास लौटता है। लेकिन नबीला उसे अस्वीकार कर देती है। 'पाली का आदमी' कहानी में चित्राजी ने कुछ इसी प्रकार का वर्णन किया हैं। रवि का विवाह उसकी पढाई के दौरान ही एक अशिक्षिता से हो जाता हैं। लेकिन शिक्षा पूरी होने पर वह अपनी पसंद की स्त्री से विवाह कर लेता हैं क्योंकि उसे भी अशिक्षिता पत्नी उसके बौद्धिक स्तर की नहीं लगती। इससे आगे बढकर 'शून्य' कहानी में सरला का चित्रण हैं, जिसका पति बेला से अपने पूर्व प्रेम के कारण विवाह करता हैं लेकिन संतान न होन की स्थिती में सरला से अपनी संतान चाहता हैं जिसे सरला दृढता से इंकार कर देती हैं। पति के सामने न झुकते हुए 'ना' कहने का साहस करना उसकी नई चेतना को ही दर्शाता हैं। प्राय: कहानी में मुसलमान पात्र हिन्दु-मुस्लिम, या शिया-सुन्नी दंगो में ही चित्रीत होते हैं। लेकिन चित्रा मुद्‌गलजी ने मुसलमान व्यक्ति का उसके आर्थिक पक्ष को लेकर पूरी ईमानदारी से वर्णन किया हैं। इस दृष्टि से 'जिनावर' कहानी मर्मातंक दर्द का दस्तावेज हैं।

३.२० सुधा अरोड़ा :

सुधा अरोड़ा नई पीढी की एक सशक्त लेखिका हैं। उनकी कहानियों में आधुनिक जीवन की समस्याएँ और उनसे उत्पन्न चिंताएं और छटपटाहट है। आधुनिक नारी बहुआयामी व्यक्तित्व को धारण करनेवाली स्त्री है। जिसका चेतनता एक विशिष्ट गुण है। सुधाजी ने आधुनिक स्त्री की चेतनता और उसके मानसिक-आंतरिक द्वंद्व का सशक्त चित्रण किया है। उनके नारी पात्र वर्तमान जीवन की विसंगति और रिश्तों की टकराहट, रूढियों और परस्पराओं के ढकोसलों के कारण अनास्था से भरी हुई है। परिवर्तित समय में समझौता न करने की स्थिती में उनके पात्र दिखायी देते हैं। यथार्थ की पीडा, द्वंद्व का

दबाब, गहन अनुभूति और नारी की अस्मिता सुधाजी की कहानियों में अभिव्यक्त हुई हैं। उनकी कहानियाँ हमारे अंधेरे पक्ष को हमारे सामने उजागर करती हैं। उनके नारी पात्र परम्पराओं के प्रति मोहग्रस्त नहीं हैं बल्कि वे जडबद्ध रूढियों को तिरस्कृत करते हैं।

सुधा अरोडाज़ी की 'महानगर की मैथिली' में आधुनिक नारी की समस्या चित्रित है। कामकाजी नारी का मातृत्व महानगरीय परिस्थितियों में त्रासद स्थिती में पहुँच जाता है। चित्रा अपनी नन्हीं बेटी मैथिली उर्फ मैथ्यु को पडोसी के यहाँ छोडकर स्कूल में पढाने के लिए जाती है। उसके पिता भी दफ्तर चले जाते हैं। शाम को दोनों ही थके-हारे होते हैं। बच्ची के बीमार होने पर भी चित्रा कुछ कर नहीं पाती, सिवाय स्कूल जाते समय उसके माथे पर चुंबन अंकित करने के। क्योंकि वे दोनों ही अपनी नौकरी के प्रति गैर-जिम्मेदार नहीं हो सकते। मध्यमवर्गीय परिवार महानगरीय विवशता एवं विद्रुपता में घिरा हैं। चित्रा मुद्‌गलजी ने 'ताशमहल' कहानी में ऐसी ही कामकाजी महिला का चित्रण किया है। जो घर और दफ्तर के पाटों में पिसती बचो के लिए समय ही नहीं निकाल पाती। वह भी बीमार बेटे की सुश्रुषा नहीं कर पाती। उसे इसके लिए औरों पर निर्भर रहना पडता हैं।

४. निष्कर्ष :

हमारे प्राचीन भारतीय साहित्य में कई कहानियाँ अपने भिन्न-भिन्न रूपों में दिखायी देती हैं। हितोपदेश, पंचतंत्र आदि के माध्यम से उपदेश और नीति की बातें कही जाती रही हैं। इस तरह कहानी के माध्यम से उपदेश करने का सिलसिला बहुत पुराना है। लेकिन कहानी की आधुनिक परिभाषा के अनुसार उसे कहानी नहीं माना जा सकता। प्राचीन कहानी काल्पनिक घटनाओं पर आधारित थी। उनमें न तो चरित्र का विश्लेषण था, न ही देशकाल वातावरण का उचित वर्णन था। प्राचीन कहानी कल्पना, अलौकिकता और आदर्श पर आधारित थी। आधुनिक कहानी यथार्थवादी, वास्तविक, विचारात्मक है। जिसमें घटना के साथ ही पात्र का चरित्र, देशकाल वातावरण चित्रण आदि भी महत्व रखते हैं।

हिन्दी कहानी का आरंभ हम बंग महिला द्वारा रचित कहानी 'दुलाईवाली'से मानते हैं। अर्थात आधुनिक हिन्दी कहानी की प्रथम रचनाकार होने का गौरव एक महिला को ही प्राप्त हैं। बंग महिला श्रीमती राजेन्द्रबाला घोष से लेकर आज तक कई नहिला रचनाकारों नेअपनी प्रतिभा से कहानी विधा को समृद्ध बनाया हैं। आरंभिक दौर में बंग महिला के साथ ही सुभद्राकुमारी चौहान, उषादेवी मित्रा, सुमित्राकुमारी, चन्द्रकिरण सोनरेक्सा, कमला चौधरी आदि कई लेखिकाओं ने अपना महत्वपूर्ण योगदान दिया। तत्पश्चात मन्नू भंडारी, शिवानी, मालती जोशी, मणिका मोहिनी, ममता कालीया, राजी सेठ,चन्द्रकांता आदि कई-कई महिलाओं नें कथा-साहित्य के विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाग़ी हैं।

महिला लेखिकाओं के लेखन को लेकर कल परसों तक भी एक अलग दृष्टिकोण हुआ करता था। चित्रा मुद्गलजी ने भी कहा हैं कि -'जब भी पुरूषों का अहं-आहत होता है वे महिला लेखन पुरूष लेखन के फतवे उछालकर स्त्री रचानात्मक को कम साबित करने पर उतर आते हैं।'[1] महिलाओं के लेखन को गंभीरता से देखने समझने का प्रयास अभी-अभी ही हुआ है। महिला लेखिकाओं को अपने व्यक्तित्व की सही पहचान अब जाकर मिली हैं। परिवर्तित समयानुसार समाज बदला, शिक्षा का व्यापक प्रसार हुआ, स्त्री की सामाजिक स्थिती बदली साथ ही उनकी बौद्धिकता एवं मानसिकता में भी व्यापक परिवर्तन हुए। इन क्रांतिकारी परिवर्तनों के कारण उसका कार्यक्षेत्र व्यापक हुआ। घर को सीमित व्यक्तिगत संसार से बाहर निकल कर दूनियाँ को देखने समझने का यत्न किया हैं।

स्पष्ट हैं कि चित्राजी के साहित्य जगत में प्रवेश के पूर्व ही कई महिला लेखिकाएँ अपने साहित्य सृजन से अपनी विशिष्ट पहचान बना चुकी थीं। हिन्दी कहानी भी कई आंदोलनों के दौर से गुजर रही थी। लेकिन इनके बीच चित्राजी बगैर किसी लेबल के कहानी का सृजन करती हैं। वे बिना किसी वैचारिक या दार्शनिक दबाव के मुक्त होकर सृजनरत हुयीं हैं। चित्राजी उम्दा रचनाकार के साथ ही प्रबुद्ध पाठीका भी हैं। वे कहती है कि प्रेमचंद नागर जी, सांकृत्यायन जी, कमलेश्वर जी, मन्नू जी, राकेश जी, अज्ञेय जी, यशपाल जी, निराला जी, भारती जी, दिनकरजी आदि के साहित्य से वे प्रभावित रही हैं। लेकिन 'मैं

---

१ राष्ट्रिय सहारा - २३ दिसम्बर १९९३, पृष्ठ १४-१५

हिन्दी के किसी भी 'ग्रेट मास्टर' से अनुकरण के दुष्प्रभाव की सीमा तक प्रभावित या अनुप्रेरित नहीं हुयी।'[१]

चित्राजी का अनुभव संसार बडा व्यापक हैं। वे 'स्वाधार' और 'जागरण' जैसे सामाजिक संगठनों की सक्रिय सदस्या रही हैं। पत्रकारिता के क्षेत्र में भी उनका गहरा अनुभव हैं। अत: उनकी रचनाओं की पृष्ठभूमि ठोस जमीन है, वायवी दूनियाँ नहीं। आम आदमी की समस्या, उसका दर्द उन्होनें गहराई से महसूस किया हैं। वस्तुत: समकालीन रचनाकारों में तुलना हो नहीं सकती लेकिन यदि की जाती हैं तो यह देखने के लिए कि रचनाकार कितना समय सापेक्ष और समाज सापेक्ष हैं। इस मायने में चित्राजी समय सापेक्ष भी है और समाज सापेक्ष भी। उन्होंने अभिजात्य वर्ग की अपेक्षा झोपडपट्टी में रह रही जिंदगी को कहानियों में स्थान दिया हैं। उनकी भूख, लेन, बेइमान, त्रिशंकु, मामला आगे बढेगा अभी, प्रेतयोनी, मुआवजा, सौदा, फातिमा बाई कोठे पर ही नहीं रहती आदि कई कहानियाँ इस बात की पुष्टि करती हैं।

चित्राजी की कुछ कहानियों के शीर्षक अन्य रचनाकारों के शीर्षको से मिलते-जुलते हैं जैसे मन्नूजी की कहानी 'त्रिशंकु' एवं चित्राजी की भी एक कहानी का शीर्षक 'त्रिशंकु'है। लेकिन ऐसे स्थानों पर केवल शीर्षक साम्य ही है। कथ्य, उसकी बुनावट और अंतिम प्रभाव बिल्कुल भिन्न रूप में है। ऐसे शीर्षक भी प्राय: मिथकीय या प्रतिकात्मक हैं। यदि कोई पात्र या कथ्य समान दिखाई भी देता हैं तो वह समसामायिक समस्याओं के संदर्भ में देखा जाना चाहिये। अपने समय की समस्याओं को बहुत ही सूक्ष्मता से उन्होंने पहचाना है। इसीलिए महानगरों के अभिजात्य वर्ग की अपेक्षा ग्रामीण जीवन और विशेषत: ग्रामीण स्त्रियों का जीवन उनकी कहानियों में है। क्योंकि-'हम २१ वी सदी में जाने का डंका पीट रहे हैं और हमारी औरत हवाई जहाज उडा रही है तब भी हमारी ग्रामीण महिलाएँ तडके लोटा लेकर शौच के लिए जाती है। ८० प्रतिशत औरतें जहां थी वहीं है।'[२] अत: हम कह सकते हैं कि उनकी

---

१. लोकप्रशासन - १९ जुलाई १९९५ , पृष्ठ ६
२. नवभारत - १४ जनवरी १९९५

रचनात्मकता मौलिकता लिए हुए हैं। अनुकरण के स्तर पर उनके लेखन में प्रभाव नहीं है। वे मानती हैं कि 'समूचे समाज और अपने समय से जुडे रहना ही महिला लेखन का मूलाधार है।'[१] उन्होंने अपने लेखन में समसामायिक समाज, स्त्रियों, किशोरों की समस्याओं को, आम आदमी के व्यथा-कथा को मौलिकता और नूतनता से अभिव्यक्ति दी है। सामयिक सरोकारों से जुडकर लिखनेवाली चित्राजी ने हिन्दी कहानी साहित्य में अपनी दमदार उपस्थिती दर्ज करायी हैं।

...

१. लोकशासन - १९ जुलाई १९९५, पृष्ठ ६

सप्तम अध्याय

उपसंहार

सप्तम अध्याय

उपसंहार

आठवें दशक की बहुचर्चित कथा-लेखिका हैं- चित्रा मुद्गल । चित्राजी का जन्म सामंती विचारधारा में जकडे हुए रूढिग्रस्त परिवार में हुआ। बाहर ही नहीं घर में भी जमींदारी का दबदबा था। घर के कठोर, निरंकुश और घुटनभरे वातावरण ने उनके मन में विक्षोभ उत्पन्न कर दिया। चित्राजी देख रहीं थीं कि परिवार में स्त्रियों की दशा शोचनीय है। मनू महाराज की संस्कृति और सत्ता के मद ने पुरूषों को तो स्वच्छंदता की सीमा तक स्वतंत्रता दी है लेकिन स्त्रियों को घर की चारदिवारी के भीतर ही कैद कर दिया है। जमींदार साहब के घर की बहू-बेटियाँ डोली और अरथी चढ कर ही कोठी के मुख्यद्वार तक आ सकती है। अन्यथा उनके सारे क्रिया-कलाप घर और पिछवाडे के दरवाजे तक ही सीमित हैं। जमींदार साहब अपनी 'परजा' के लिए तो हमदर्दी जता सकते हैं लेकिन घर की महिलाओं के लिए उनका भ्रू-संचलन ही अंतिम आदेश है। घर में देखी गयी छोटी-छोटी घटनाएँ प्रश्नों के तीक्ष्ण तीर बन कर मन मस्तिष्क को घायल करती रहती कि आखिर ऐसा क्यों है ?

इसी सामंती परिवेश में उन्हें ऐसे अनेक प्रसंग देखने को मिले जो शोषित, वंचित, दयनीय लोगों की सहमी, गूंगी व्यथाओं से भरे थे। जो गरीब और लाचार थे। जो अपनी हर समस्या का समाधान ठाकुर साहब की देहरी को ही मानते थे, ऐसों का आत्मसम्मान रौंदा जाता और चित्राजी व्यथित हो इसके विरोध की अभिव्यक्ति के लिए छटपटाने लगती। वे इस बात से भी आश्चर्यचकित होती कि अंग्रेज अफसरों की सरबराई करने वाला उनका परिवार गुप्त रूप से स्वतंत्रता सेनानियों को भी सहयोग करता है। भूमिगत रूप से स्वतंत्रता के लिए कार्य करनेवाले क्रांतिकारी उनकी कोठी में पनाह पाते और आर्थिक मदद भी प्राप्त करते थे।

अचंभित तो वे तब भी हुयीं कि जिस परिवार में महिलाओं का अक्षरज्ञान प्राप्त कर चिट्ठी पढ लेना ही शिक्षा का अंतिम उद्देश हुआ करता था उसी परिवार में उनके पिता अपनी पुत्रियों को उच्च शिक्षा के उचित अवसरों के अतिरिक्त घुडसवारी, शिकार, तैराकी जैसे अन्य खेलों में भी पारंगत करना चाहते थे। लेकिन मन में संघर्ष तब भी उठ खडा होता जब बेडमिंटन में रूचि रखनेवाली चित्राजी को गिने-चुने पल ही खेल के अभ्यास के लिए मिलते और उनके चित्रकारी और नृत्य के प्रति रूझान को- यही सब सीखना है ? का ठेना मारते हुए निम्नस्तर का समझा जाता।

तात्पर्य यही कि सामंती परिवार के परिवेशगत दबावों ने उन्हें इतना विक्षोभित, उद्वेलित यिा कि वे उन्हें व्यक्त करने के लिए व्याकुल हो गयी।

सोमैया कॉलेज के रचनात्मक वातावरण और जे.जे. आर्ट्स की इन्द्रधनुषी रंगों की दुनियाँ ने उनके भीतर के क्षोभ को अभिव्यक्त करने के मार्ग प्रदान किये। हायस्कूल से ही उन्हें उनकी लेखकीय प्रतिभा को प्रोत्साहन देने वाले गुरुजनों का सहयोग प्राप्त हुआ। उन्ही के मार्गदर्शन में उन्होंने भारतीय और विश्व साहित्य की श्रेष्ठ रचनाओं और रचनाकारों को जाना। 'जागरण' के साथ जुडकर किये गये समाजसेवा के कार्यो ने उन्हें झुग्गी-झोपडी के नासूर से टीसते दर्द से साक्षात्कार करवाये और उनके भीतर की रचनाशीलता अधिक धारदार और सजग बनती गयी।

इस बीच चित्रजी ने अवधजी के साथ अन्तर्जातिय विवाह कर परिवार के रोष को और अधिक बढा लिया। कठिनाइयों का दौर चल पडा। पारिवारिक स्तर के साथ ही आर्थिक स्तर पर भी उन्हें संघर्ष करना पडा। पिता के सुख-सुविधापूर्ण घर को त्याग कर अवधजी के साथ उन्हें दस बाई दस के कमरे में ही संसार सजाना पडा। रंगों की इन्द्रधनुषी दुनियाँ काली स्याही की गहराई में परिवर्तित होकर एक नये रूप में अभिव्यक्ति का माध्यम बनी। कविता के फलक की सीमितता ने उन्हें कथा-साहित्य की और मोडा। महात्मा गांधी और डॉ. लेहिया के विचारों ने उनकी वैचारिक चेतना को सुगठित करने में महत्वपूर्ण योगदान दिया।

एक लेखिका होने के साथ ही वे अच्छी सद्‌गृहिणी, एक स्नेहिल माँ और समंजस पत्नी भी है। अपने परिवार को खुशीयाँ उनके लिए उतनी ही महत्वपूर्ण है जितनी की उनकी साहित्य सृजनता। पति श्री अवधजी के सहयोग के कारण उनका लेखकीय जीवन उच्चता के शिखर पर पहुँच सका है तो चित्राजी के गृहकर्तव्यदक्ष रूप के कारण उनका परिवार भी स्वस्थ, सुंदर और सुसंस्कृत बना है। उनकी पाक कला निपूणता की तो मैं स्वयं भी साक्षी हूँ। घर की साज-सज्जा के प्रति वे विशेष जागरूक रहती है। लेकिन इस सारे कामों में कहीं भी ऐश्वर्य दिखाने की चाह नहीं है बल्कि अत्यन्त सादगी के साथ कलात्मक रचना के माध्यम से घर को सुंदर रूप दिया है जो उस पूरे परिवार की गरिमा, सभ्यता और सुसंस्कार को व्यक्त करता है।

चित्राजी का कृतित्व भी बहुविधात्मक है। उन्होंने कविता, कहानी, उपन्यास, नाटक, बाल-साहित्य, पटकथा, लेख आदि के माध्यम से अपने विचार अभिव्यक्त किया है। लेखन के दौर में कविता पीछे छुट गयी और अब केवल कथात्मक विधाएँ ही उनकी अभिव्यक्ति का माध्यम है। साथ ही दूरदर्शन के लिए पटकथा लेखन का कार्य भी जारी है।

वह कहानी, जो दादी-नानी के मुँह से सर्द मौसम में लिहाफ में दुबक कर सुनी जाती है, जो अलाव तापते सुनी जाती है, जो रिमझिम बरसते पानी के पार्श्व संगीत के साथ सुनी जाती है, कहानी जो सुनाते-सुनाते ही बुनी जाती है। उस कहानी की मौखिक परंपरा अत्यन्त प्राचीन है। इसकी परंपरा वैदिक साहित्य से आरंभ होकर बौद्ध जातक, जैन कथाओं, संस्कृत कथा-साहित्य, प्राकृत, अपभ्रंश तथा हिन्दी के चारण काल और मध्ययुग तक आती है। आधुनिक हिन्दी कहानी का उत्थान उन्नीसवीं शताब्दी के उत्तरार्ध से आरंभ होता है। कहानी, नई कहानी, अकहानी, सचेतन कहानी, सक्रिय कहानी, जनवादी कहानी आदि न जाने कितने विशेषणों, संज्ञाओं और अभिधानों को धारण कर कहानी निरन्तर विकसित हो रही है। आधुनिक विधाओं में कहानी की विशिष्टता यह है कि वह जीवन से कटी हुई नहीं है। वह मनुष्य के जीवन से संलग्न होकर उनके अन्तर्जगत की संवेदनाओं को स्पर्श करती है और उपन्यास अपने विशाल फलक में मनुष्य की समस्याओं को पूरी संवेदनक्षमता के साथ प्रस्तुत करता है।

मनुष्य का जीवन संघर्ष की ही कथा है। चित्राजी ने जीवन संघर्ष के विविध पहलुओं को व्यक्त किया हैं। समस्याओं भरे इस जीवन में लेखक यदि अपने समय की समस्याओं से सरोकार नहीं रखेंगे तो उनका सारा लेखन व्यर्थ, अर्थहीन, निराधार हो जाता है। चित्राजी ने अपने समय की सामाजिक, पारिवारिक, नारी समस्या, आर्थिक और राजनैतिक समस्या को समझने का, सुलझाने का यत्न कहानी के माध्यम से किया। सुलझाने का इसलिए कह रही हूँ कि चित्राजी के कथ्य समस्या से जुझने की प्रेरणा देते हैं। तभी तो उनके पात्र हारते नहीं बल्कि संघर्ष के लिए प्रस्तुत रहते हैं।

सामाजिक समस्याओं में उच्चवर्ग से लेकर निम्नवर्ग तक में पायी जानेवाली अनेक सामाजिक समस्याओं पर दृष्टिक्षेप डाला गया है। समस्या चाहे दहेज की हो या वेश्या व्यवसाय की, साम्प्रदायिकता की हो या समाज मे बढनेवाली कुप्रवृत्तियों की-चित्राजी ने सूक्ष्म विश्लेषण के साथ इन समस्याओं को प्रस्तुत किया है। विषय पर गहरी पकड होने के कारण ही समस्याओं की तह तक वे पहुँच पाती हैं। वर्तमान समय में सबसे चर्चित, विवादास्पद और जानलेवा प्रतिस्पर्धा से भरा हुआ मिडिया व्यवसाय भी उनकी लेखनी से आम आदमी तक पहुँचा है। चकाचौंध भरी फिल्मी दूनियाँ के बारे में तो आम पाठक बहुत कुछ जानता है लेकिन विज्ञापन जगत, पत्रकारिता के सम्बन्ध में वह बहुत कम जानता है। उनकी कहानियाँ 'पेशा', 'हस्तक्षेप' और उपन्यास 'एक जमीन अपनी' मिडिया की नीतियों कों स्पष्ट करती है। उन्होंने अपने लेखन से यह स्पष्ट करने का यत्न किया है कि अनेक सामाजिक समस्याओं के मूल में विघटित समाज जीवन, अशिक्षा, गरीबी और मानवीयता का अभाव है। टूटते बिखरते गाँव शहर में आकर झुग्गीयों के रूप में महानगर में बस जाता है। जहाँ उनकी समस्याएँ तो समाप्त नहीं होती बल्कि कुछ अन्य समास्याओं में वृद्धी अवश्य हो जाती है। उनका लेखन विस्तृत समाज और सामान्य जन के सुख-दुख, रहन-सहन को तो व्यक्त करता ही है साथ ही वर्तमान व्यवस्था की सच्चाई, मीडिया और प्रशासनिक व्यवस्था की असलियत को भी प्रकट करता है।

'बेईमान' कहानी के माध्यम से उन्होंने एक अत्यन्त महत्वपूर्ण प्रश्न उठाया है वह है- हमारे पढे-लिखे समझे जाने वाले वर्ग के नैतिक चरित्र का। बाल-मजदूर छंटकिया की मेहनत की कमाई को बडे सफाई से सुशिक्षित कहलाने वाला वर्ग 'ढाँप' लेना चाहता है और वह सोचने लगता है कि क्या पढलिख कर आदमी बेईमान बन जाता है? क्या यही सब पाठशाला में पढाया जाता है ? ये प्रश्न समाज की नैतिकता के ह्रास की ओर संकेत करते है।

परिवारिक और नारी जगत की समस्या पर उनका लेखन उनके उन अनुभवों को उजागर करता है जो उन्होंने गाँव में रहकर अर्जित किये थे। कुछ समस्याएँ नागरी जीवन की भी हैं- उनमें भी प्रमुखत: निम्न और मध्यवर्ग की समस्या है। महादेवीजी ने एक स्थान पर लिखा है कि - 'शिक्षा के समान ही समाज की दूसरी महत्वपूर्ण संस्था विवाह है जो विभिन्न प्रकृति तथा कर्म वाले दो व्यक्तियों को स्नेह तथा नैतिक बंधन में आबद्ध करती है। भारत में इसे पवित्र और धार्मिक अनुष्ठान माना गया है।'[१] लेकिन उस अनुष्ठान की पवित्रता की जारी जिम्मेदारी अब तक स्त्री की ही मानी गयी है। 'पाली का आदमी', 'बावजूद इसके', 'अभी भी', 'शून्य', 'प्रमोशन' जैसी कई कहानियाँ इसी सत्य का उद्घाटन करती है। चित्राजी की कहानियों में नारी के सामर्थ्य को चित्रित करने वाली कहानियाँ है तो कहीं-कहीं उसकी हार भी सामने आयी है- 'इस हमाम में' की अंजा पति के दुर्व्यवहार से लडते-लडते हार जाती हैं तभी तो 'कुछ खा-पीकर' मौत को गले लगाने का यत्न करती है। 'सर्वहारा वर्ग की नारी को पति के साथ के श्रम कार्यो में सहयोग देने का भी अधिकार है और विषम सामाजिक सम्बन्धों को तोड डालने का भी। परन्तु श्रम का आधिक्य और जीवन की सुविधाओं का सर्वथा अभाव उसकी मुक्ति की दीप्ति को मलिन करते है।'[२] तभी अंजा दो पति छोडकर भी सुखी नहीं हो पाती। उसी कहानी की नायिका दिवा जो अंजा के संघर्षशील स्वभाव से प्रेरणा पाती है वह तो अंजा की हार से ही हार माने बैठी लगती है। 'एक जमीन अपनी' की नीता भी

---

१ मेरे प्रिय संभाषण - महादेवी वर्मा, पृष्ठ ५०
२ मेरे प्रिय संभाषण - महादेवी वर्मा, पृष्ठ ५६

आत्महत्या का मार्ग चुन कर पुरूष सत्ता के सामने झुक ही जाती है। लेकिन वहीं अंकिता अवश्य जीत जाती है और आनेवाले युग की स्त्री के निर्माण का दायित्व भी ग्रहण करती है। चित्राजी ने स्त्री के दोहरे संघर्ष को यथार्थता से चित्रित किया है । एक स्तर पर वह परिवार के साथ संघर्ष करती है तो दुसरे स्तर पर वह समाज के साथ संघर्षरत है। संक्षेप में कह सकते है उन्हें परिवार की रीढ नारी को ही माना है लेकिन उसकी पारिवारिक स्थिती अभी भी उतनी सक्षम नहीं है जितनी होनी चाहिए। फिर चाहे वह सुशिक्षित और उच्च वर्ग की नारी हो या अशिक्षित, निम्न वर्ग की।

आर्थिक समस्याओं में रचित अधिकतर कहानियाँ सर्वहारा वर्ग से सम्बन्धित हैं। वस्तुत: मनुष्य जीवन की जटिलताओं का आरंभ ही अर्थ से होता है। आर्थिक विषमताएँ, गरीबी, बेकारी व्यक्ति को अपराध जगत की ओर आकर्षित करते है पेट की आग बुझाने के लिए हाथ-पैर मारने वाले और सूखी रोटी को पाने के लिए बेईमानी करने वाले पात्र अपराध करके भी पाठकों की सहानुभूति अर्जित कर लेते है। इन कहानियों की विशेषता यह है कि इनमें मानवीयता को जीवित रखा गया है न कि पेशेवर गुण्डों के निर्माण को बताया है। छोटे-छोटे अपराध करने वाले इन कहानियों के पात्र आत्मग्लानी अनुभव करते है। 'जिनावर', 'ब्लेड', 'त्रिशंकु', जैसी कहानियाँ ऐसी ही हैं। 'लकडबग्घा' कहानी पैसों के लालची मनुष्य के हाथों निरपराध स्त्री की हत्या की कहानी हैं। 'लेन', 'भूख' जैसी कहानियाँ पाठकों को स्तब्ध कर देती है। राजनैतिक कहानी में एकमात्र कहानी 'जगदंबाबाबू गाँव आ रहे है।' जो स्वार्थी राजनीतिज्ञों द्वारा आम जनता और अपंगा के भावनाओं से खेलने वाली वृत्ति को चित्रित करता है। जनसेवा का व्रत लेनेवाले निता ग्रामीण जनता से धोखाघडी, बेईमानी करते है। राजनीति में छल-कपट, अवसरवादिता, भ्रष्टाचार, जातियता की गहरी घुसपैठ है जिनसे सामान्य जन त्रस्त है। चित्राजी अपनी कहानी के माध्यम से राजनीति के इस भ्रष्ट रूप के प्रति पाठकों के मन में तिरस्कार उत्पन्न करती है और न्याय पाने की चाह भी पैदा करती है।

चित्राजी का लेखन इसलिए अधिक मार्मिक और यथार्थ लगता है क्योंकि उन्होंने जो लिखा है वह 'स्वाधार' और 'जागरण' वैसी समाजसेवी संस्थाओं में अर्जित अनुभव से लिखा है। उन्होंने झोपडपट्टी में स्वयं कार्यकर्ता के रूप में कार्य किया है और 'चाल' का जीवन खुद वहाँ संघर्ष के दिनों में रहकर अनुभव किया है। अत: इनके संवेदनशील मन पर वहाँ के जनजीवन की गहरी छाप हैं। उन्होंने घटनाओं को कल्पना का पुट देकर अपनी प्रतिभा से इन कहानियों की रचना की है तभी इनमें यथार्थ भी है और उसका कहानीपन भी बना रहा है।

चित्राजी के कथा-साहित्य में सर्वाधिक महत्वपूर्ण विशेषता है- उनके पात्रों की मौलिकता और यथार्थता। वे अत्यन्त सजीव रूप में सामने आते है। चित्राजी के स्त्री और पुरूष पात्र जुझारू है। उनके पात्र वास्तविक जीवन के प्रतीक है। उनकी भावनाएँ, गुण-दोष, विचार, समस्याएँ, प्रतिक्रियाएँ सभी यथार्थ जीवन से आयी हैं। चित्राजी ने प्राय: रंग-रूप का वर्णन करने की बजाय घटनाओं से, अन्तर्द्वन्द्व के माध्यम से पात्रों के चरित्र को उजागर करने का यत्न करने का यत्न किया है। 'जागरण' और 'स्वाध्याय' जैसी समाजसेवी संघटनाओं में कार्य करने से प्राप्त अनुभव ने उन्हें 'भूख' की 'लक्ष्मी', 'मामला आगे बढेगा' का 'मोट्या', 'त्रिशंकु' का 'बंडू', 'जिनावर' का 'रामखिलावन', 'केंचुल' की 'कमलाबाई', 'सौदा' कहानी की 'गेंदा' आदि जैसे पात्र मिले। उन्होंने स्वयं लिखा है कि ''जागरण' के लिए कार्य करते हुए वह अविश्वसनीय से लगते अपने इर्द-गिर्द फैले झोपडपट्टी के नरकसदृश्य जन जीवन के संपर्क में आयी ... वह उन घरों के संपर्क में आयी जो दिहाडी, भीख, पाकेटमारी, चोरी, देह-व्यापार, दारू, साग-सब्जी, ड्राइवरी, फेरी, सिनेमा-टिकटों की ब्लैक पर आश्रित अपनी किसी भी जून की रोटी का जुगाड करते हुए दूसरे रोज के लिए साँसो की मोहलत मांगते।'[3] उनका बचपन गांवों में बीता है अत: ग्रामीण जीवन के चित्रण पर भी उनकी गहरी पकड है। उनके कई पात्र ग्राम्य-जीवन के है जैसे 'दुलहिन' की 'अनी की सास', 'दशरथ का वनवास' के बाबूजी, 'जगदंबाबाबू गाँव आ रहे है' के पात्र, 'लकड्बग्घा' की

---

३. मेरी रचना प्रक्रिया - जगदंबाबाबू गाँव आ रहे है - चित्रा मुद्गल, पृष्ठ १०

'पछाँहवाली' आदि। शहरी जीवन के पात्रों में 'पाली का आदमी' का 'रवि', 'अग्निरेखा' की 'मनू', 'एक जमीन अपनी' की 'नीता' और 'अंकिता', 'प्रमोशन' की 'ललीता' आदि। कई कहानियों में कहानी के पात्रों की अपेक्षा समस्या का प्रस्तुतीकरण सघनता से हुआ है ऐसे स्थानों पर हमने पात्रों के चरित्र को अधिक महत्व नहीं दिया है जैसे 'फातिमाबाई' कोठे पर ही नहीं रहती' में वहाँ का वातावरण, उस व्यवसाय की गंदगी और उस गंदगी की समस्याएँ ही प्रमुख रही है। 'जगदंबाबाबू गाँव आ रहे है' में भी न जगदंबाबाबू का चरित्र मायने रखता है न ललौना का। उस कहानी में महत्वपूर्ण है तो स्वार्थप्रेरित राजनीति और अनसे छले जाते ग्रामीण जन की वेदना। ऐस स्थानों पर किसी भी पात्र को हमने चरित्र चित्रण के लिए नहीं चुना है।

प्रत्येक कहानीकार का प्रयत्न होता है कि वह अपने पात्र कों पूरी जीवन्तता के साथ प्रस्तुत करे ताकि वह पाठकों के लिए हृदयस्पर्शी हो सके। चित्राजी के पात्र इन मायनों में सफल रहे है। चित्राजी के पात्र अपने जीवन संघर्ष में नियती को मानकर बैठ नहीं जाते बल्कि वे उससे जूझते है समस्याओं से भागते रहना, अन्याय को झेलते रहना उनके पात्रों को मान्य नहीं है। तभी तो 'मोट्या' अन्यायपूर्ण ढंग से खाडा काटने पर साहब की गाडी को सरिये से पीट डालता है। 'प्रेतयोनि' की 'अनिता' परिवार के दबाव से मुक्त हो विरोध प्रदर्शन के लिए साहस संजो लेती है। 'प्रमोशन' की 'ललीता' और 'शून्य' की 'सरला' भी पुरूष की दांभिकता को जवाब दे देती है। उनकी कहानियों मे चित्रित नारी चेतना उनकी अपनी विशिष्टता कहला सकती है। उनके निम्नवर्ग के पात्र कभी-कभी परिस्थितियों के कारण अपने मन के विरूद्ध गलत कामों को करने के लिए बाध्य हो जाते हैं लेकिन उनमें द्वन्द्व चलता रहता है और वे अपराध भावना भी अनुभव करते है। ऐसे ही पात्रों में 'ब्लेड' का 'रामखिलावन', 'लेन' की 'महेन्दरी', 'जिनावर' का 'असलम', 'त्रिशंकु' का 'बंडू' आदि आते है। कह सकते है कि चित्राजी ने साहित्य के माध्यम से नैतिकता के प्रश्न को समर्थता से प्रस्तुत किया है। उन्होंने अपनी कथा साहित्य में उच्च नैतिक मूल्यों को प्रश्रय दिया है। उन्होंने कुछ ऐसे पात्र भी चित्रित किये है जो परिस्थितियों से टूट जाते है, जैसे 'अग्निरेखा' की 'मनू'

और 'एक जमीन अपनी' की 'नीता'।

चित्राजी कहानियों की शिल्प अत्यन्त सधा हुआ है। उन्होंने अपने लेखन में अलग-अलग शैलियों का प्रयोग किया है। मुख्यत: फ्लैशबॅक पद्धति का अवलंब किया है। पूर्व घटित घटनाएँ मनुष्य को कहीं दृढ बनाती है, तो कहीं कमजोर। 'दशरथ का वनवास' कहानी में रमानाथ का अतीत उसे एकांत में और अधिक अकेला कर देता है। 'अग्रिरेखा' की नायिका अतीत की तुलना में वर्तमान में स्वयं को अक्षम पा आत्महत्या को प्रवृत्त हो जाती है। 'अनुबन्ध' का नायक अतीत से सीख लेकर नन्हें के लिए दिल और घर में एक कोना ढूँढ निकालता हैं। फ्लैशबॅक के अतिरिक्त वर्णनात्मक एवं आत्मकथात्मक शैलियों का सफल प्रयोग किया है। चित्राजी ने सामान्य जन की कहानी सीधी-सरल, सहज भाषा में कही है। जन-सामान्य जीवन के अत्यन्त निकट की भाषा का प्रयोग उनके भाव को उतनी ही सहजता से जन-सामान्य तक संप्रेषित करता है। उनकी कहानियों में प्रयुक्त बंबईया हिन्दी अपने उत्कृष्ट रूप में दिखायी देती है। साथ ही अवधी-ब्रज आदि बोलियों के प्रयोग में भी उन्हें पूर्ण सफलता मिली है। कई समिक्षक उनकी ग्राम्य परिवेश की समस्याओं, अभावों और विसंगतीयों को व्यक्त करने वाली कहानियों को पढकर उन्हे रेणु या प्रेमचन्द या अन्य किसी परम्परा की कहानियों की श्रेणी में डालने की भूल कर बैठते है। लेकिन यह बात हमेशा याद रखनी चाहिये की लेखक की रचनाशीलता में उसकी स्वयं की मूल दृष्टि होती है। वस्तुत: उनकी कहानियाँ रेणू के स्थान पर प्रेमचन्दजी की कहानी परम्परा के अधिक निकट लगती है। क्योंकि उन्होंने अंचल का चित्रण नहीं किया है वरन् आम आदमी और उसका जीवन चित्रित किया है। उनकी कथा-भाषा की जीवन्तता और सशक्तता ध्यान देने योग्य है। उनकी कथा-भाषा अलंकारों के बोझ तले दबी हुयी नहीं है। चित्राजी की कहानियाँ में पात्रानुकुल भाषा प्रयोग से परिवेश की यथार्थता पुष्ट होती है और कहानी की प्रभावोत्पादक क्षमता बढी है।

चित्रा मुद्गलजी की कहानियाँ अपने कथ्य और शिल्प की दृष्टि से मौलिक है। तुलनात्मक अध्ययन से यह स्पष्ट हो जाता है कि उनका लेखन किसी से अनुकरण की सीमा तक प्रभावित नहीं

है। न ही वे महिला-लेखन की सीमा में बंधी हुई है। यदि कहीं विषय-साम्य है भी तो उसका कारण सिर्फ इतना है कि अपने समय से जुडी समस्याओं से जुडने के कारण एक-सी अनुभूति हो सकती है फिर भी कथ्य का विकास उनकी अपनी शैली में हुआ है। प्रतीकात्मक शीर्षक कई-कई रचनाकारों के मिलते-जुलते होते है। उनकी कहानियों को पढते हुये ऐसा प्रतीत होता है कि गाँव की परिचित गंध की स्मृति से नगर-महानगर में भी मुक्त नहीं हुआ जाता। वह गंध तो रोम-रोम में बसी है इसीलिए उनके नगरीय जीवन से जुडी कहानियों में भी गाँव समाया रहता है। सम्भवत: इसीलिए हम उनकी कहानियों को स्पष्टत: नगरीय जीवन की या ग्रामीण जीवन की कहानियों में नहीं बाँट पाते और न ही आंचलिकता का जामा पहना सकते है।

समग्रालोचन के आधार पर कहा जा सकता है कि चित्राजी का लेखन उनके अनुभवों पर आधारित है। उनके लेखन में अभिव्यक्त सामान्य वर्ग किसी कल्पना जगत का नहीं है। वह किसी वायवी जगत के 'आम आदमी' की गुहार भी नहीं लगाती, न ही शोषण की भयानक कथा कहती हैं। उनकी रचनाएँ मानवीय सरोकारों से जुडी, गहरी संवेदनात्मक पैठ के साथ लिखी गयी है। उनके पात्र संघर्ष करते है लेकिन कभी-कभी व्यवस्था से पराजित भी हो जाते है। उनकी कहानियों को 'सक्रिय कहानी' के घेरे में बांधने का प्रयत्न कुछ समीक्षकों ने केवल इसलिए किया, क्योंकि उनकी कहानी 'मंच' पत्रिका में छपी थी। उनकी कहानियाँ यूँ तो कहानी आंदोलन की किसी खास विचारधारा से बंधी हुयीं नहीं है लेकिन उनकी कहानियों में उनकी जनवादी सोच अवश्य दृष्टिगत होती है। चित्राजी निरन्तर अपने रचना कर्म में निरपेक्ष भाव से रत हैं। साहित्य जगत भविष्य में भी उनकी उत्कृष्ट रचनाओं से समृद्ध होता रहेगा और समाज के बदलते स्वरूप को उनके साहित्य में पाता रहेगा। चित्राजी का साहित्य निश्चित ही हमारे समाज को दिशा देने का कार्य करेगा।

...

परिशिष्ट – १

परिशिष्ट – १

साक्षात्कार

१३/११/१९९५

चित्रा मुद्‍गलजी का निवास स्थान

दिनांक ५/११/१९९५ से दिनांक १५/११/१९९५ तक मैं दिल्ली में रही। इन दिनों चित्रा जी से कई मुलाकातें हुयी। दिनांक १३/११/१९९५ को मैंने उनका साक्षात्कार रेकॉर्ड किया । इन मुलाकातों में चित्राजी ने अनौपचारिक रूप से अपने जीवन सम्बन्धी अनेक बातें बतलाई। साक्षात्कार में भी अपने पारिवारिक जीवन के सम्बन्ध में अत्यन्त आत्मीयता के साथ अनेक नीजि बातें भी बताई विशेष तौर पर अपनी स्वर्गवासी पुत्री के बारे में। उनके व्यक्तित्व का वर्णन मैंने इन बातों के आधार पर ही किया हैं। साक्षात्कार में कई प्रश्न उनके साहित्य और साहित्य लेखन से सम्बन्धित थे। यहाँ मैने केवल उनके साहित्य से जुडे प्रश्न ही लिये हैं।

प्रश्न : चित्रा जी, आपने अपने लेखन का आरंभ कब और किस विधा से किया ।

उत्तर : मीना, मैं जब हायस्कूल में पढ़ती थी तब मैंने कविताएँ लिखी थी जो स्कूल पत्रिका में छपती थी। फिर 'लहर', 'माध्यम', 'नवभारत टाइम्स' में भी कविताएँ छपी। मेरी पहली कहानी 'सफेद सेनारा' १९६४ में नवभारत टाइम्स में प्रकाशित हुयी।

प्रश्न : चित्रा जी आपको साहित्य में और व्यक्तिगत जीवन में किस-किसने प्रभावित किया?

उत्तर : आरंभ में मैंने जो पुस्तकें पढ़ी वे गुरूजनों के मार्गदर्शन से पढ़ी । धर्मवीर भारती का 'ठंडा लोहा', दिनकर जी की 'रश्मिरथी', महादेवी जी की 'दीप-शिखा', वृंदावन लाल वर्मा की 'मृगनयनी', नागर जी की 'बूँद और समुद्र', गोर्की की 'माँ', टॉलस्टाय का 'वार एण्ड पीस' प्रेमचन्दजी की 'गोदान' आदि कई पुस्तकें पढ़ी। हर बार उन्हें पढ़कर और परिपक्वता आयी। लेकिन मैं इस तरह प्रभावित नहीं हुयी कि मुझे इनके समान लिखना है।

व्यक्तिगत जीवन में भारतीजी से तो मैं बहुत प्रभावित रही हूँ फिर मन्नू भंडारीजी, कमलेश्वरजी, अमृतलरल नागरजी, यशपालजी। इन साहित्यकारों में बहुत बडप्पन हुआ करता था। बहुत वात्सल्य देते थे, आप की प्रतिभा को समझकर बढावा भी देते थे। नागरजी ने मेरे पति श्री अवधनारायण मुद्‍गलजी को ही नहीं वरन् मुझे भी बहुत प्रोत्साहित किया। सर्वेश्वर दयाल सक्सेना और राहूल सांकृत्यायन का

मलंग स्वभाव बहुत भाया। यद्यपि इनमें से कई लोगों के साथ बहुत कम समय साथ रही। हाँ, अवधजी से भी प्रभावित रही हूँ। उनके साथ हुई चर्चाओं से यह पता चलता था कि मुझे बहुत कुछ जानना है। उनकी कहानियाँ, जो कसबाई लडके की कुंठा को व्यक्त करती है, बहुत अद्भूत है। एक प्रसंग याद आ रहा है- एक बार नरेन्द्र कोहली के यहाँ हम सभी लेखक मित्र थे। मैं, अवधजी, अजीत कुमार, नरेन्द्र कोहली, डॉ. नगेन्द्र, डॉ. विजयेन्द्र स्नातक आदि सभी थे। पहले मैंने कथा पढ़ी फिर अवधीजी ने। दोनों की कहानियों पर चर्चा हुयी। अधिकांश लोग मेरी कहानी से प्रभावित हुए। डॉ. नगेन्द्र बाद में बोलने के लिए खडे हुए तो दो टूक शब्दों में बोले-सच तो यह है कि लिखेंगी तो चित्रा जी लेकिन वे मुद्‌गल जी की बराबरी नहीं कर सकती। गंभीर और गहन कहानी मुद्‌गलजी की है। उनकी कहानियों में मिथकीय प्रयोग अधिक है।

प्रश्न : आपके प्रिय लेखक कौन-कौन से है?

उत्तर : मुझे नये कहानी के दौर में सबसे अच्छे कहानीकार कमलेश्वर लगे। उनमें बहुत वैविध्य है। राजेंन्द्र यादव जी का लिखा हुआ सायास लगता है। उनसे बेहतर मन्नू जी अपनी सहजता के कारण लगती है। स्त्री की समस्याओं को बहुत अच्छी तरह अभिव्यक्त किया है। अज्ञेय जी भी पसंद है लेकिन उनके लेखन को लेकर अपने भीतर एक सीमा सी रही है। सहजता के बजाय, बौद्धिकता के स्तर पर विश्लेषण करना पडता है।

प्रश्न : हिन्दी कथा साहित्य के विभिन्न कहानी आंदोलनों के सम्बन्ध में आपके क्या विचार है?

उत्तर : कुछ आंदोंलन जो प्रयोग रूप में हुए उससे साहित्य का कुछ भला नहीं हुआ। वे या तो नेतृत्व पाने के लिए या चौंकाने के लिए हुए। लेकिन कुछ आंदोलन जैसे 'प्रगतिशील आंदोलन', इनकी एक व्याख्या थी, एक वैचारिक वामपंथीय सोच थी। प्रगतिशील आंदोलन ने अपने समय में बहुत कारगर ढंग से मनुष्य की मूलभूत आवश्यकताओं की बात कही। इससे साहित्य का संवर्धन हुआ। 'नयी कहानी' में भी आम आदमी की और स्त्री पुरूष सम्बन्धों की बुनियादी समस्याओं को उठाया। स्वस्थ समाज की परिकल्पना की। उस आंदोलन में एक साथ कई कहानीकारों ने जैसे - मोहन राकेश, मुद्राराक्षस, महेन्द्र भल्ला, कमलेश्वर, राजेन्द्र यादव, मन्नू भंडारी, उषा प्रियवंदा, कृष्णा सोबती आदि ने एक से बढकर एक कहानियाँ लिखी। एक नया आयाम दिया कहानी को।

प्रश्न : आप अपने पात्रों से कैसे जुडी है?

उत्तर : मैं यह मानती हूँ लेखक अपने पात्रों से दृष्टि के रूप में जुडा होता है। लेखक समाज के विभिन्न वर्गो से, घटनाओं, अनुभवों के माध्यम से पात्र अर्जित करता है। लेकिन रचनाओं में उसे अपनी दृष्टि से व्यक्तित्व देता है। कभी-कभी अपने व्यक्तित्व से भी उसे कुछ दे देता है। जहाँ पात्र अन्याय के विरोध में विद्रोह करते है वहाँ अपने पात्रों के साथ मैं.होती हूँ।

प्रश्न : आप अवध और ब्रज दोनों से सम्बन्धित है आपके लेखन में दोनों बोलियों का प्रयोग है।

उत्तर : अवध मेरे व्यक्तित्व में रचा बसा है। खासकर हमारा इलाका 'बैसवाडा' उसका बहुत प्रभाव पडा है। उसे लिखने में सहजता लगती है। वहाँ का लोक पक्ष मेरा देखा हुआ है। ब्रज से मैं अवधजी से विवाह के बाद जुडी हूँ अत: वह उपार्जित लगता है। इसलिए ब्रज पर केवल एक-दो कहानियाँ लिखी है।

प्रश्न : बाल साहित्य एवं किशोर साहित्य सम्बन्धि आपके विचार क्या है?

उत्तर : बाल साहित्य में मेरी रूचि अपने दोनों बच्चों की आपसी लडाई झगडे, आत्म सम्मान की टकराहट, शिकवे शिकायत, कमजोरियों आदि से जन्मी। धीरे-धीरे इनमें पास-पड़ोस, झुग्गी-झोपडी के बच्चों का भी संसार जुड गया। किशोर वय संक्रमण का वय होता हैं घर के अन्य सदस्य उसे आदर्श व्यक्ति के रूप में देखना चाहते है। उसकी इच्छा-आकांक्षाओं को कोई नहीं जानना चाहता बल्कि उस पर निर्णय लादे जाते है कि तुम्हे डॉक्टर या इंजिनियर बनना है। उसके मन में कुंठाए जन्मने लगती है। विद्रोह पैदा होने लगता है। संवाद की कमी के कारण फिर वे घर से भाग जाना चाहते हैं।

दूसरी और ऐसे भी बालक-किशोर है जो अभावों के कारण कहीं न कहीं काम करने को विवश है। किसी के घर में या सडकों पर या रेलों में रूमाल, पुस्तके आदि बेचने को बाध्य कर दिये गये है। मैंने इन पर कहानियाँ लिखी है।

प्रश्न : भविष्य में लेखन की क्या योजना है?

उत्तर : 'अवध' की पृष्ठभूमि पर तीन खण्डों में वृहद उपन्यास लिखने की योजना है। पुत्री स्व. अपर्णा की स्मृतियों पर आधारित 'अनघा' की योजना है लेकिन उसे लिखने के लिए मुझे स्वयं से ही बहुत संघर्ष करना पडेगा अत: लिखने में अवकाश लगेगा।

•••

Chitra Mudgal

300-D, Pocket-2, Mayur Vihar, Phase-I, Delhi-110 091. Residence Phone : 2241371

16/3/91

प्रिय मीना जी,

आपका पत्र पाकर प्रसन्नता हुयी. आप मेरी कथा-यात्रा पर विश्लेषणात्मक अध्ययन करना चाहती है यह जानकारी सुखद है. मेरा सम्पूर्ण सहयोग – जैसा भी और जिस रूप में भी आप चाहेंगी – सदैव होगा. अपने कथा संग्रहों के बारे में बताने से पूर्व मैं एक और खुशी आपसे बाँटना चाहती हूँ. आप महाराष्ट्र की है, मैं भी महाराष्ट्र की ही हूँ. मुंबई की. अत: हम एक मुलुक वाले हैं. मेरी कथा रचनाओं में मुंबई की धड़कने समोई हुयी है... मुंबई मेरी नसों में प्रवाहित है.....

संग्रह इस प्रकार है –

(1) 'जहर ठहरा हुआ' [1981 में]
प्रकाशक
अनन्य प्रकाशन
हौजकाजी
दिल्ली
(अनुपलब्ध)

(2) 'लाक्षागृह' [1982 में]
प्रकाशक
'पराग प्रकाशन'
3/114, कर्णगली
विश्वास नगर
शाहदरा - दिल्ली-32

(3) 'अपनी वापसी' – [1984 में]

प्रकाशक
'संभावना प्रकाशन'
हापुड़, उत्तर प्रदेश

(4) 'इस हमाम में' [1987]

- हिन्दी अकादमी दिल्ली द्वारा 'साहित्यिक कृति' पुरस्कार से पुरस्कृत
- प्रकाशक
'प्रभात प्रकाशन'
चावड़ी बाजार
दिल्ली - 110006

(5) 'ग्यारह लम्बी कहानियाँ' [1987 में]

- राजभाषा बिहार द्वारा नामित – राजा राधिकारमण 'पुरस्कार से सम्मानित.

प्रकाशक
- प्रभात प्रकाशन
चावड़ी बाजार
दिल्ली -6

(6) 'जगदंबा बाबू गाँव आ रहे हैं'

'शीघ्र प्रकाश्य'
'नेशनल पब्लिशिंग हाउस से'

'उपन्यास'

(7) 'एक ज़मीन अपनी' – – > [1990]
प्रभात प्रकाशन
चावड़ी बाजार
दिल्ली -6

~~[illegible] कथा संग्रह~~
~~कथा सम्पादित प्रतिक~~

प्रिय मीना, आशीष।

बम्बई की). बेटे बहू के पास। पत्र लौट कर मिला।
तुम दोनों दिल्ली आओ। स्वागत है।

'एक ज़मीन अपनी' अच्छा लगा
खुशी हुई। अन्य युवतियों को भी पढ़वाओ। इस
संघर्ष से गुज़रना ज़रूरी है कि वास्तव में
स्त्री को कैसी सामाजिक छवि की आवश्यकता है।
मेरी इच्छा है कि मराठी में भी यह उपन्यास
किसी महिला पत्रिका में विशेष रूप से धारावाहिक
प्रकाशित हो तो उन पाठिकाओं तक भी पहुँच
सकेगा। जो तक भाषागत सीमाओं के चलते सम-
प्रेषित होने से वंचित हैं। इस संदर्भ में तुम किसी
पत्रिका और अनुवादक या अनुवादिका का सुझाव
दे सकती हो?

शेष मिलने पर।

तुम्हारी दी [signature] 19/10/95

मंजिल है मेरी दूर अभी

कुमारी चित्रा ठाकुर
११ 'ब'

जीवन के शूल भरे पथ पर चलते चलते—
आ जाये ना प्राणों की अन्तिम शाम कहीं—
मंजिल है मेरी दूर अभी !

अरमानों की कलियाँ मुरझाईं, शाखों पर खिलने से पहले—
आँखोंसे आँसू ढुलक गये, दो क्षण मुस्काने के पहले—
मेरे अन्तर की अतुल व्यथा, तिल तिल कर मुझको जला रही—
जग की निर्मम बाधाएँ भी-मकड़ी सा जाला बिछा रहीं !

इन विषम विघ्न बाधाओं को सहते सहते—
आ जाये ना प्राणों की अन्तिम शाम कहीं—
मंजिल है मेरी दूर अभी

जो कुछ सोचा था मन ही मन होता न कभी वह भी पूरा—
हर बात अधूरी रह जाती-हर स्वप्न अधूरा है मेरा—
हो गई प्रेरणा भी कुण्ठित-कल्पना तिमिर में समा चुकी—
पीड़ा के झोंकों से डरकर आशा भी दामन छुड़ा चुकी !

उर की बेबस पीड़ाओं को सहते सहते—
आ जाये ना प्राणों की अन्तिम शाम कहीं—
मंजिल है मेरी दूर अभी !

हिन्दी हाई स्कूल घाटकोपर (बम्बई)

कैसे जियेंगे वे !

—चित्रा मुद्गल—

हम,
नयी पीढ़ी के तने हुए कन्धों पर
अन्धेरे में डूबे
उगे हुए कुछ पेड़
जिनकी फुनगियों तक को
टिड्डियाँ चुग गयी हैं ।
भयाबद्ध एहसास
हवाएँ जम गयी हैं
हमारे अन्दर—
आस पास
और,
गर्भ में, पलता हुआ
हमारा अंश
कहाँ से लेगा
कुछ साँसे उधार ?
उनके आने से पहले ही
जड़ देते हैं हमें
अपने खंडहर हुए मकानों में
संगीनों घिरे किवाड़
कैसे जियेंगे वे
हम से अलग होकर
बेघरबार ? ● ●

चित्रा मुद्गल

शक्लों के उभरने तक

लोना-लिपटी दीवारों पर
जड़ गये हैं
हमारे टूटे हुए, बदशक्ल चेहरे

बहुत अपने से लगे थे
वे क्षण
जो शक्लों के उभरने तक आये थे

आवाजें...
गंधलदी टहनियों-सी
झरा करती थीं
और अब,
आत्महत्या के लिए विवश
लटकी हैं
झुक आयी छत की कड़ियों से

न जाने कब से
बिना झाड़े ही टाँग दिया है
हवा में झूलती अलगनियों
और
उखड़ रही खूँटियों पर
बचा-खुचा अस्तित्व
जो मेरा नहीं लगता।

●

द्वारा : श्री अवधनारायण मुद्गल
सारिका, टाइम्स ऑफ़ इंडिया,
बंबई-१।

Chitra Mudgal

300-D, Pocket-2, Mayur Vihar, Phase-I, Delhi-110 091. Residence Phone : ~~2241371~~ 2251371

5 नवंबर 1977
'धर्मयुग'

तुम झूठी गवाही का
'सच'
बन गए हो
और मैं उस सच के
भयावह निर्णय सी
सज़ाए मौत कागज़ पर उतार देने के बाद
कलम सी
तोड़ दी गयी हूँ

5/11/77

परिशिष्ट – २

परिशिष्ट - २

चित्रा मुद्गल की मौलिक कृतियाँ

	कृतियाँ	प्रकाशन	संस्करण
अ)	**कहानी संग्रह**		
१.	जहर ठहरा हुआ	अनन्य प्रकाशन होजकाजी, दिल्ली.	प्रथम संस्करण १९८१
२.	लाक्षागृह	३/११८, पराग प्रकाशन, कर्णगल्ली, विश्वासनगर, शाहदरा, दिल्ली.	प्रथम संस्करण १९८२
३.	ग्यारह लम्बी कहानियाँ	प्रभात प्रकाशन, चावडी बाजार, दिल्ली-६.	प्रथम संस्करण- १९८६-८७
४.	इस हमाम में	प्रभात प्रकाशन चावडी बाजार , दिल्ली - ६	प्रथम संस्करण- १९८७
५.	जगदंबाबाबू गाँव आ रहें है	नेशनल पब्लिशिंग हाऊस, २३, दरियागंज, नई दिल्ली - २.	प्रथम संस्करण -१९८९
६.	चर्चित कहानियाँ	सामयिक प्रकाशन, ३५४३, जटवाडा,दरियागंज, नई दिल्ली - २.	प्रथम संस्करण- १९८९
७.	जिनावर	किताब घर, २४१८६५-५६, अंसारी रोड, दरियागंज, नई दिल्ली - २	प्रथम संस्करण -१९९०
आ)	**उपन्यास**		
१.	एक जमीन अपनी	प्रभात प्रकाशन, चावडी बाजार,दिल्ली- ६.	प्रथम संस्करण -१९९०
इ)	**बाल-उपन्यास**		
१.	माधवी-कन्नगी	किताब घर - २५, अंसारी रोड, दरियागंज, नयी दिल्ली - २.	प्रथम संस्करण -१९९३

	कृतियाँ	प्रकाशन	संस्करण
ई)	**बाल–कथासंग्रह**		
१.	जंगल का राज	प्रभात प्रकाशन, चावडी बाजार, दरिया गंज, दिल्ली-६.	प्रथम संस्करण -१९८७
२.	देश-देश की लोककथाएँ	प्रभात प्रकाशन, चावडी बाजार, दरियागंज, दिल्ली-६.	प्रथम संस्करण -१९८७
३.	नीति कथाएँ	एन.सी.ई.आर.टी प्रकाशन, अरविन्दो मार्ग, नयी दिल्ली-२.	प्रथम संस्करण -१९८८
उ)	**संपादित संकलन**		
१.	पुरस्कृत कहानियाँ	प्रभात प्रकाशन, चावडी बाजार, दरियागंज, दिल्ली-६.	प्रथम संस्करण -१९८७
२.	असफल दाम्पत्य की कहानियाँ	प्रभात प्रकाशन, चावडी बाजार, दरियागंज, दिल्ली-६.	प्रथम संस्करण -१९८८
३.	टुटते परिवारों की कहानियाँ	प्रभात प्रकाशन, चावडी बाजार, दरियागंज, दिल्ली-६.	प्रथम संस्करण -१९८८
४.	दुसरी औरत की कहानियाँ	प्रभात प्रकाशन, चावडी बाजार, दरियागंज, दिल्ली-६.	प्रथम संस्करण -१९८८

मौलिक कृतियाँ

अ.क्र.	नाम	रचना कृति	प्रकाशन	संस्करण
१.	उषा प्रियंवदा	१) एक कोई दूसरा	अक्षर प्रकाशन, दिल्ली	१९६१
		२) जिंदगी और गुलाब के फूल	ज्ञानपीठ प्रकाशन, दिल्ली	१९६७
		३) पचपन खम्बे लाल दिवारें	राजकमल प्रकाशन, दिल्ली	१९७९
		४) कितना बडा झूठ	राजकमल प्रकाशन, दिल्ली	१९६६
		५) रूकोगी नहीं राधिका	अक्षर प्रकाशन, दिल्ली	१९७६
२.	कृष्णा सोबती	१) मित्रो मरजानी	राजकमल प्रकाशन, दिल्ली	१९६७
		२) सूरजमुखी के अंधेरे	राजकमल प्रकाशन, दिल्ली	१९७४
		३) यारों के यार	राजकमल प्रकाशन, दिल्ली	१९८१
३.	कृष्णा अग्निहोत्री	१) टपरेवाले	पराग प्रकाशन, दिल्ली	१९७६
		२) कुमारिकाएँ	इंद्रप्रस्थ प्रकाशन, दिल्ली	१९७८
		३) गलियारे	अनादि प्रकाशन, इलाहाबाद	१९७४
		४) विरासत	कृष्णा ब्रदर्स, अजमेर	१९८२
४.	चंद्रकांता	१) चर्चित कहानियाँ	सामयिक प्रकाशन, दिल्ली	१९९६
		२) दहलीज पर न्याय	ज्ञानभारती प्रकाशन, दिल्ली	१९८९
		३) ऐलान गली जिन्दा है	नेशनल पब्लिशिंग हाऊस, दिल्ली	१९८४
५.	दिप्ती खण्डेलवाल	१) वह तिसरा	राजपाल एंड सन्स, दिल्ली	१९७६
		२) धुप के अहसास	पराग प्रकाशन, दिल्ली	१९७६
		३) सलीब पर	राजपाल एंड सन्स, दिल्ली	१९७७
		४) औरत और नाते	प्रगती प्रकाशन, आगरा	१९८०
६.	निरूपमा सोबती	१) खोमोशी को पीते हुए	नेशनल पब्लिशिंग हाऊस, दिल्ली	१९७२
		२) आतंक बीज	इंद्रप्रस्थ प्रकाशन, दिल्ली	१९७५
		३) पतझड की आवाजे	इंद्रप्रस्थ प्रकाशन, दिल्ली	१९७६
		४) मेरा नरक अपना है	संभावना प्रकाशन, दिल्ली	१९७७
		५) भीड में गुम	इंद्रप्रस्थ प्रकाशन, दिल्ली	१९८०
७.	नासीरा शर्मा	१) पत्थर गली	राजकमल प्रकाशन, दिल्ली	१९८६
		२) संगसार	प्रभात प्रकाशन, दिल्ली	१९९६
		३) इब्ने मरियम	किताब घर प्रकाशन, दिल्ली	१९९४
		४) शामी कागज	सतसाहित्य प्रकाशन, दिल्ली	१९९७

अ.क.	नाम	रचना कृति	प्रकाशन	संस्करण
	नासीरा शर्मा	५) सात नदियाँ एक समन्दर	प्रभात प्रकाशन, दिल्ली	१९९५
		६) शाल्मली	किताब घर प्रकाशन, दिल्ली	१९८७
		७) जिन्दा मुहावरे	वाणी प्रकाशन, दिल्ली	१९९४
		८) ठीकरे की मंगनी	किताब घर प्रकाशन, दिल्ली	१९८९
८.	मणिका मोहिनी	१) खत्म होने के बाद	ज्ञानभारती प्रकाशन, दिल्ली	१९७२
		२) अभी तलाश जारी है	निर्मला प्रकाशन, दिल्ली	१९७६
		३) ढाई अक्षर प्रेम का	राजधानी प्रकाशन, दिल्ली	१९८३
		४) पारू ने कहा था	साहित्यिकी प्रकाशन, दिल्ली	१९९६
९.	मन्नू भंडारी	१) मैं हार गई	अक्षर प्रकाशन, दिल्ली	१९५७
		२) यही सचहै	अक्षर प्रकाशन, दिल्ली	१९६६
		३) एक प्लेट सैलाब	अक्षर प्रकाशन, दिल्ली	१९६८
		४) आपका बंटी	अक्षर प्रकाशन, दिल्ली	१९८०
		५) प्रतिनिधी कहानियाँ	राजकमल प्रकाशन, दिल्ली	१९८४
१०.	मंजुल भगत	१) अनारो	पराग प्रकाशन, दिल्ली	१९७७
		२) आत्महत्या से पहले	इंद्रप्रस्थ प्रकाशन, दिल्ली	१९७९
		३) कितना छोटा सफर	नेशनल प्रकाशन, दिल्ली	१९७६
		४) बेगाने घर में	हिन्दी पॉकेट बुक्स प्रकाशन, दिल्ली	१९८१
११.	ममता कालिया	१) बेघर	रचना एण्ड सन्स प्रकाशन, इलाहाबाद	१९७१
		२) नरक दर नरक	रचना प्रकाशन, इलाहाबाद	१९७५
		३) प्रेम कहानी	राजपाल एण्ड सन्स प्रकाशन, दिल्ली	१९७७
		४) प्रतिदिन	राजकमल प्रकाशन, दिल्ली	१९७७
१२.	मृदुला गर्ग	१) टुकडा टुकडा आदमी	नेशनल प्रकाशन, दिल्ली	१९७२
		२) कितनी कैदे	इंद्रप्रस्थ प्रकाशन, दिल्ली	१९७५
		३) ग्लेशियर से	प्रभात प्रकाशन, दिल्ली	१९८०
		४) उसके हिस्से की धुप	राजकमल प्रकाशन, दिल्ली	१९८९
१३.	मेहरून्निसा परवेज	१) उसका घर	नेशनल प्रकाशन, दिल्ली	१९७२
		२) आदम और हव्वा	नेशनल प्रकाशन, दिल्ली	१९७२

अ.क.	नाम	रचना कृति	प्रकाशन	संस्करण
	मेहरून्निसा परवेज	३) गलत पुरूष	नेशनल प्रकाशन, दिल्ली	१९७८
		४) आँखो की दहलीज	हिंद पॉकेट बुक्स, दिल्ली	१९८१
		५) अकेला पलाश	वाणी प्रकाशन, दिल्ली	१९८१
१४.	मालती जोशी	१) समर्पण का सुख	पराग प्रकाशन, दिल्ली	१९७९
		२) मध्यांतर	पराग प्रकाशन, दिल्ली	१९७९
		३) पाषाण युग	पराग प्रकाशन, दिल्ली	१९८५
		४) एक घर सपनों का	पराग प्रकाशन, दिल्ली	१९८५
		५) राग विराग	पराग प्रकाशन, दिल्ली	१९८७
१५.	शिवानी	१) करिये छिमा	शब्दकार प्रकाशन, दिल्ली	१९७३
		२) चौदह फेरे	विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी	१९७६
		३) विषकन्या	विश्वविद्यालय प्रकाशन, दिल्ली	१९७८
		४) सुरंगमा	हिंद पॉकेट बुक्स, दिल्ली	१९८४
		५) कृष्णकली	ज्ञानपीट प्रकाशन, दिल्ली	१९८७
१६.	शशीप्रभा शास्त्री	१) नावें	राजकमल प्रकाशन, दिल्ली	१९७४
		२) सीढियाँ	नेशनल प्रकाशन, दिल्ली	१९७६
		३) कर्करेखा	राजकमल प्रकाशन, दिल्ली	१९८३
		४) पतझड	किताब घर प्रकाशन, दिल्ली	१९८८
१७.	सिम्मी हर्षिता	१) कमरे में बंद आभास	लिपि प्रकाशन, दिल्ली	१९७५
		२) धराशायी	अभिव्यंजना प्रकाशन, दिल्ली	१९८०
१८.	सुधा अरोडा	१) युद्ध विराम	पराग प्रकाशन, दिल्ली	१९७७
१९.	सुर्यबाला	१) मेरे सन्धिपत्र	पराग प्रकाशन, दिल्ली	१९७७
		२) सुबह के इंतजार तक	पराग प्रकाशन, दिल्ली	१९८०
		३) यामिनी कथा	ज्ञानगंगा प्रकाशन, दिल्ली	१९९१
		४) एक इंद्रधनुष जुबेदा के नाम	पराग प्रकाशन, दिल्ली	१९८१
२०.	राजी सेठ	१) तत्सम	राजकमल प्रकाशन, दिल्ली	१९८३
		२) अंधे मोड के आगे	राजकमल प्रकाशन, दिल्ली	१९८९
		३) तिसरी हथेली	राजकमल प्रकाशन, दिल्ली	१९८१

आलोचनात्मक कृतियाँ

	कृति	प्रकाशन संस्थान
१.	आधुनिक कहानी का परिपार्श्व	लक्ष्मीनारायण वार्ष्णेय साहित्य भवन, इलाहाबाद. १९९६
२.	कथान्तर	डॉ. परमानन्द श्रीवास्तव एवं डॉ.श्रीमति गिरीश रस्तोगी राजकमल प्रकाशन, दिल्ली. १९७६
३.	कहानी कला का विकास और इतिहास	डॉ. श्रीपति शर्मा त्रिपाठी नंदकिशोर एण्ड सन्स वाराणसी
४.	कहानी : पुरानी बनाम नयी	डॉ. साधना शहा, विचार प्रकाशन, औरंगाबाद १९९२
५.	काव्य के रुप	गुलाब राय, आत्माराम एण्ड सन्स, दिल्ली १९५८
६.	चर्चित महिला कथाकारों की कहानियाँ	सं. - दिनेश द्विवेदी, विद्या प्रकाशन मंदिर, दिल्ली. १९८५
७.	द्वितीय महायुध्दोत्तर हिन्दी साहित्य का इतिहास	डॉ. वार्ष्णेय, राजपाल एण्ड सन्स, काश्मिरी गेट, दिल्ली. १९७३
८.	नई कहानी : परिवेश और परिप्रेक्ष्य	मीरा सीकरी, पराग प्रकाशन, नई दिल्ली.
९.	नई कहानी : परिवेश और परिप्रेक्ष्य	डॉ. रामकली सराफ, वि.वि.प्रकाशन, वाराणसी.
१०.	नई कहानी की भूमिका	कमलेश्वर, शब्दाकार, गुरु अंगद नगर, दिल्ली १९७१
११.	नई कहानी : उपलब्धी और सीमाएँ	डॉ. गोरधन सिंह शेखावत, रमा पब्लिकेशन, जयपुर, १९६६

	कृति	प्रकाशन संस्थान
१२.	नई कहानी : संदर्भ और प्रकृति	डॉ. देवीशंकर अवस्थी, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली. १९७३
१३.	नई कहानी : दशा, दिशा और संभावनाएँ	श्री सुरेंद्र अपोलो पब्लिकेशन, जयपुर, १९६६
१४.	बकलम खुद	मोहन राकेश राजपाल एण्ड सन्स, काश्मिरी गेट, दिल्ली १९७४
१५.	मेरे प्रिय संभाषण	महादेवी वर्मा, नेशनल पब्लिशिंग हाऊस, दरियागंज, नई दिल्ली.
१६.	महिला कहानीकारों की कहानियों में प्रेम का स्वरूप	सरिता सूद, सूर्य प्रकाशन,दिल्ली
१७.	साहित्य शास्त्र	डॉ. नारायण शर्मा, सरस्वती प्रकाशन, औरंगाबाद १९९४
१८.	समकालीन कहानी - रचना मुद्रा	पुष्पपाल सिंह, राधाकृष्ण प्रकाशन, अंसारी रोड, दरियागंज, नई दिल्ली.
१९.	सक्रिय कहानी की भूमिका	राकेश वत्स मंच, अंबाला १९८०
२०.	समकालीन हिंदी कथा लेखिकाएँ	डॉ. राम्कली सराफ, अनुराग प्रकाशन, वाराणसी १९८८
२१.	समकालीन कहानी का रचना विधान	डॉ. गंगा प्रसाद विमल सुषमा प्रकाशन, दिल्ली-३१.
२२.	समकालीन कहानी - दिशा और दृष्टि	डॉ. धनंजय, अभिव्यक्ति प्रकाशन, इलाहाबाद १९७०
२३.	समकालीन कहानी की पहचान	डॉ. नरेन्द्र मोहन, प्रवीन प्रकाशन, दिल्ली १९७८
२४.	समकालीन हिन्दी कहानी	बलराम दिनमान प्रकाशन, ३०१४, चर्खेवालान, दिल्ली

	कृति	प्रकाशन संस्थान
२५.	समकालीन हिन्दी कहानी	वेदप्रकाश अमिताभ / प्रो. दिनेश पालीवाल धर्मसमाज महाविद्यालय, अलिगढ, १९७८
२६.	समांतर - १	सं. कमलेश्वर, उन्नतनगर, गोरेगांव, बंबई १९७२
२७.	साहित्यीक मुहावरा-लोकोक्ति कोश	हरिवशंराय शर्मा राजपाल एण्ड सन्स, काश्मिरी गेट, दिल्ली
२८.	साठोत्तरी हिन्दी कहानी और राजनीतिक चेतना	जितेन्द्र वत्स साहित्य रत्नाकर, रामबाग, कानपुर १९८९
२९.	साहित्य का उद्देश्य	प्रेमचंद हँस प्रकाशन, इलाहाबाद १९६७
३०.	साहित्यीक निबंध	डॉ. वेदप्रकाश अमिताभ जवाहर पुस्तकालय, सदर बाजार, मथुरा १९८८
३१.	स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी कहानी में मानव प्रतिमा	हेतु भारद्वाज पंचशील प्रकाशन, जयपुर १९८३
३२.	साहित्य का श्रेय और प्रेम	जैनेन्द्र, पूर्वोदय प्रकाशन, दरियागंज, नई दिल्ली - ११० ००२.
३३.	हिन्दी कहानी : एक अन्तर्यात्रा	वेद प्रकाश अमिताभ गिरनार प्रकाशन, मेहसाना(गुजरात) १९८१
३४.	हिंदी कहानी - समकालीन परिदृष्य	सुखबीर सिंह, अभ्वियनना, १०९/४८, पंजाबी बाग, नई दिल्ली. १९८५
३५.	हिंदी के मनोवैज्ञानिक उपन्यास	डॉ. धनराज मानधने, ग्रंथम, रामबाग, कानपुर. १९७१
३६.	हिंदी कहानी की रचना प्रक्रिया	डॉ. परमानंद श्रीवास्तव, ग्रन्थम, कानपुर.
३७.	हिंदी कहानियों की शिल्प विधि का विकास	डॉ. लक्ष्मीनारायण लाल, साहित्य भवन, प्रा. लि. इलाहाबाद. १९६९

	कृति	प्रकाशन संस्थान
३८.	हिंदी कहानी का शैली विधान	डॉ. बैकुण्ठनाथ ठाकुर बिहार हिंदी ग्रंथ अकादमी, पटना, १९७६
३९.	हिन्दी साहित्य का वैज्ञानिक इतिहास	डॉ. गणपति चंद्र गुप्त, भारतेन्दु प्रकाशन, इलाहाबाद.
४०.	हिन्दी कहानी का फिलहाल	डॉ. चन्द्रभान रावत और डॉ. रामकुमार खण्डेलवाल, राजपाल एण्ड सन्स, दिल्ली. १९८०
४१.	हिन्दी कहानी : आठवा दशक	सं. मधुर उप्रेती इन्द्र प्रकाशन, अलिगढ १९८४
४२.	हिन्दी कहानी : दो दशक की यात्रा	रामदरश मिश्र / नरेन्द्र मोहन नेशनल पब्लिशिंग हाऊस, दरियागंज, दिल्ली १९७०
४३.	हिन्दी कहानी कला	डॉ. प्रतापनारायण टंडन हिन्दी सीमित, सूचना विभाग, लखनऊ १९७०
४४.	हिन्दी उपन्यास कला	डॉ. प्रतापनारायण टंडन हिन्दी सीमित, सूचना विभाग, लखनऊ १९६५
४५.	हिन्दी कहानी के आंदोलन उपलब्धियाँ और सीमाएँ	रजनीशकुमार नेशनल पब्लिशिंग हाऊस, दिल्ली १९८६
४६.	हिन्दी कहानी पहचान और परख	सं. डॉ. इन्द्रनाथ मदान लिपी प्रकाशन, ई - १०, कृष्ण नगर, दिल्ली १९७३

शब्द कोश एवं व्याकरण ग्रंथ

१. हिन्दी साहित्य कोश भाग १ एवं २ — सं. डॉ. धीरेन्द्र वर्मा

२. हिन्दी शब्द कोश — सं. हरदेव बाहरी

३. वृहत हिन्दी कोश — सं. कालिकाप्रसाद, राजवल्लभ सहाय, मुकुन्दीलाल श्रीवास्तव

४. स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी कहानी कोश — सं. महेश बाहरी

५. हिन्दी मराठी कोश — सं. सुमेर जैन, प्रा. सौ. लीलावती जैन

६. व्यावहारीक हिन्दी व्याकरण — श्री श्यामचन्द्र कपूर

७. हिन्दी व्याकरण — श्री कामताप्रसाद गुरु

पत्र एवं पत्रिकाएँ

अ) पत्र

१.	नव भारत टाईम्स्	१ अगस्त १९९३, १८ दिसम्बर १९९४, १४ जनवरी १९९५
२.	लोकशासन	१९ जुलाई १९९५
३.	पाञ्चजन्य	२३ जुलाई १९८९
४.	राष्ट्रीय सहारा	२३ सितम्बर १९९३, ८ जनवरी १९९५
५.	हिन्दुस्तान टाईम्स्	१२ फरवरी १९९५
६.	सन्डे ऑब्जर्वर	३० दिसम्बर १९९०
७.	दै. ट्रिब्यून	५ मार्च १९९५
८.	दै. जागरण	६ जनवरी १९९५
९.	जनधर्म	३१ अगस्त १९९०
१०.	दै. हिन्दी मिलाप	१८ दिसम्बर १९९०

आ) पत्रिकाएँ

१.	आलोचना	जुलाई - सितम्बर १९७६
२.	आधार	नवम्बर १९६४
३.	इतवारी पत्रिका	५ अगस्त १९८४
४.	इन्डिया कॉलिंग	अक्तूबर १९९३
५.	दस्तावेज	अक्तूबर - दिसम्बर १९९४
६.	ट्रेजर	अगस्त १९८७
७.	बिन्दू	अक्तूबर - दिसम्बर १९६७, जुलाई १९६७
८.	कल्पना	अगस्त १९६८
९.	मंच	१९७३
१०.	मनोरमा	जुलाई १९९४
११.	नई कहानियाँ	मार्च १९६८, एप्रिल १९६८
१२.	धर्मयुग	२८ मई, ४ जून, ११ जून, २ जुलाई १९६७, ७ नवम्बर १९८२
१३.	सारिका	सितम्बर १९७०, नवम्बर १९७२
१४.	सुजाता	सितम्बर १९९३
१५.	सानुबन्ध	दिसम्बर १९८९